ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

श्याम किशोर प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Cr. Revision No. 68 of 2011. Decided on 1st February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 419, 420, 468, 471, 406, 409 एवं 120B सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 13 (2) एवं 13(1)(d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—छल, न्यास का दांडिक भंग, कूटरचना एवं षडयंत्र–उन्मोचन आवेदन अस्वीकार–याची के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक मामला इस आधार पर अभिखंडित नहीं किया जा सकता है कि याची को इन्हीं आरोप के लिए विभागीय कार्यवाही में विमुक्त कर दिया गया है–अन्वेषण में याची के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री आयी है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैरा 11)

निर्णयज विधि.–(1996)9 SCC 1—Distinguished; (2012) 9 SCC 685—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Kumar, For the Petitioner; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the C.B.I..

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने इस पुनरीक्षण आवेदन को आर॰ सी॰ केस सं॰ 5A/1999 (P), विशेष केस सं॰ 5 वर्ष 1999 के तत्सम, में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰-सह-अपर सत्र न्यायाधीश-I, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 14.12.2010 के आदेश को अपास्त करवाने के लिए दाखिल किया है जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 419/420/468/471/406/409/120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2) सह-पठित 13 (1) (d) के अधीन अपराध से उसको उन्मोचित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227 के अधीन दाखिल याची का आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पहले याची दिनांक 14.9.2004 के संज्ञान लेने वाले आदेश के अभिखंडन के लिए इस न्यायालय के समक्ष आया और संपूर्ण दांडिक कार्यवाही जिसे डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 406 वर्ष 2005 के रूप में दर्ज किया गया था। दोनों पक्षों को सुनने के बाद, माननीय न्यायालय ने दिनांक 16.5.2006 के अपने आदेश के तहत याची को अपना आवेदन वापस लेने की अनुमति दी और तद्नुसार, उक्त आवेदन वापस ले लिए गए के रूप में खारिज कर दिया गया था। उक्त डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 406 वर्ष 2005 में पारित आदेश का पठन निम्नलिखित है:–

> *^^dN rd d ckn ;kph d fo}ku vfèkoDrk vkjki fojfpr fd, tku d pj.k ij Lo; fopkj.k U;k;ky; d le{k leLr fcnvk dk mBku d fy, bl vkonu dk okil y yu dh çkFkuk djr gA çkFkuk vuKkr dh tkrh gA*
>
> *rnulkj] ;g vkonu okil y fy, x, d :i e [kkfjt fd;k tkrk gA*
>
> *;fn ;kph }kjk , lk vkonu nkf[ky fd;k tkrk g] bl ij fopkj.k U;k;ky; }kjk fofèk d vu:i vkj rkfdd vkn'k }kjk fopkj fd;k tk,xkA***

4. तत्पश्चात्, याची ने अपने उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन आवेदन दाखिल किया किंतु अवर न्यायालय ने उसके द्वारा उठाए गए बिंदुओं पर विचार किए बिना और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों जो उसके पक्ष में थी पर विचार किए बिना दिनांक 25.9.2006 के अपने आदेश द्वारा

याची का उन्मोचन अस्वीकार करते हुए पूर्वोक्त आवेदन अस्वीकार कर दिया। उक्त आदेश के विरुद्ध, याची ने इस माननीय न्यायालय में दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 1049 वर्ष 2006 दाखिल किया था। दोनों पक्षों को सुनने के बाद और जैसा पहले डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 406 वर्ष 2005 में माननीय उच्च न्यायालय ने निर्देश दिया था कि यदि याची द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन कोई आवेदन दाखिल किया जाता है, इस पर विचारण न्यायालय विधि के अनुरूप विचार करेगा और तार्किक आदेश पारित करेगा किंतु अवर न्यायालय ने याची द्वारा उठाए गए बिंदुओं पर अथवा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार नहीं किया था। अत:, इस न्यायालय द्वारा दिनांक 5.3.2009 के आदेश के तहत उक्त आदेश अपास्त कर दिया गया था और याची के मामले पर नए सिरे से विचार करने के लिए और विधि के अनुरूप तार्किक आदेश पारित करने के लिए मामला विचारण न्यायालय के पास वापस भेजा गया था। याची के याचिका पर नए सिरे से विचार करने के बाद विचारण न्यायालय ने दिनांक 14.12.2010 को उन्मोचन के लिए याची की याचिका अस्वीकार कर दिया है जिसके विरुद्ध याची ने वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन (अर्थात् दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 68 वर्ष 2011) दाखिल किया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि उसे प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है और वह राजमहल प्रखंड से उधवा प्रखंड गठित किए जाने के बाद उधवा प्रखंड का बी॰ डी॰ ओ॰ नहीं था। राधे श्याम साह ने दिनांक 17.10.95 से उधवा प्रखंड के बी॰ डी॰ ओ॰ का पदभार संभाला था जिनके अधीन योजना सं॰ 08/93-94 चलायी जा रही थी और प्रासंगिक समय पर तत्कालीन बी॰ डी॰ ओ॰ राधेश्याम साह के अधीन योजना पूरी की गयी थी और इसके निबंधनानुसार बिलों को अंतिम रूप दिया गया था और तद्नुसार उसके द्वारा अंतिम भुगतान किया गया था किंतु उसे वर्तमान मामले में अभियुक्त नहीं बनाया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि वित्तीय वर्ष 1999-2000 में उस क्षेत्र में भारी प्राकृतिक विपदा आयी थी और सरकार तथा गाँव वालों के समस्त निर्मित भवन गंगा की बाढ़ में बह गए थे और गंगा ने गाँव के बड़े भू-भाग को निगल लिया था और इस प्रकार 3 किलो मीटर का क्षेत्र गंगा में गायब हो गया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया है कि याची के विरुद्ध इन्हीं आरोपों पर, जिन पर वर्तमान मामले में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी, विभागीय कार्यवाही की गयी थी। उक्त विभागीय कार्यवाही में, याची को इन्हीं आरोपों से विमुक्त कर दिया गया था। अत:, याची के विरुद्ध संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण अभियोजन मामला अभिखंडित कर देना चाहिए था और अवर न्यायालय ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन दाखिल याची के आवेदन को अस्वीकार करने में पूरी गलती की है। अपने तर्क के समर्थन में, याची के अधिवक्ता ने **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य, (1996)9 SCC 1,** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:-

> *"17. vkjHk e gh ge bfxr dj ldr g fd çR;Fkh d fo}ku vfèkoDrk dk bl voLFkk dk Lohdkj djuk gh Fkk fd nkfMd ekey e nk"k LFkkfir dju d fy, vko';d çek.k dk Lrj foHkkxh; dk;okgh e nk"k] LFkkfir dju d fy, vko';d çek.k d Lrj dh ryuk e mPprj gA mUgku ;g Hkh Lohdkj fd;k fd oreku ekey e foHkkxh; dk;okgh e vkj nkfMd dk;okgh e Hkh ,d vkj ogh vkjki gA mUgku foHkkxh; dk;okgh e fn, x, fu"d"k vkj bld vfre ifj.kke ij fookn ugh fd;k FkkA bu vkèkkjk ij] ;fn ge vkx vxlj gkr g] rc vihykFkh dk ekeyk Lohdkj dju e ef'dy ugh gA D;kfd ;fn vkjki tk ln'k g dk foHkkxh; dk;okgh e LFkkfir ugh fd;k tk ldrk Fkk vkj eY;kdd }kjk nkf[ky fjikV e*

*LohÑr vrjk dh nf"V e vk'p; gkrk g fd nkfMd dk;okgh e vihykFkh d fo#) vxlj gku d fy, vkj vkx D;k gA***

7. याची के अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि पूर्वोक्त निर्णय के आधार वह इस न्यायालय की एक अन्य पीठ ने दांडिक विविध सं॰ 749 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 3 मई, 2012 के आदेश के तहत एक अन्य मामले की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को भी अभिखंडित कर दिया है।

8. सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता श्री खान ने इंगित किया है कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने आरोप–पत्र दाखिल किया है और इस मामले में याची की अंतर्ग्रस्तता के संबंध में पर्याप्त सामग्री आयी है। यह निवेदन भी किया गया है कि वर्तमान याची अर्थात् श्याम किशोर प्रसाद प्रासंगिक अवधि पर राजमहल/उधवा प्रखंड में बी॰ डी॰ ओ॰ के रूप में पद स्थापित था जो राजमहल/उधवा प्रखंड में निष्पादन के अधीन सुनिश्चित रोजगार योजना के एजेंट द्वारा तैयार किए गए मास्टर रॉल के समुचित देखभाल के लिए और काम के समुचित निष्पादन का प्रभारी था। यह भी आया है कि उसने समस्त मास्टर रॉल पर हस्ताक्षर नहीं किया था किंतु मास्टर रॉल की अनुपस्थिति में चालू खाता बिलों के विरुद्ध भुगतान किया था।

9. यह भी निवेदन किया गया है कि अन्वेषण ने प्रकट किया है, योजना सं॰ 08/93-94 में माप पुस्तिका के मुताबिक 10,349.57 रुपयों के मूल्य की 21' x 14' 8" x 1'2" अर्थात् 10.24 क्यूबिक मीटर के आकार के डेस्क लैब से संबंधित कार्य माप पुस्तिका में निर्मित दर्शाया गया है यद्यपि अन्वेषण के दौरान स्थल के भौतिक निरीक्षण के बाद टेक्निकल कमिटि ने रिपोर्ट दिया कि उन्होंने 7520/- रुपए मूल्य के 21' x 12'6 " x 1'O" अर्थात् 7.44 क्यूबिक मीटर के आकार के डेस्कस्लैब का काम भौतिक रूप से पाया था। किंतु परमानंद यादव, कनीय अभियंता ने निर्मित वास्तविक डेस्कस्लैब की तुलना में माप पुस्तिका में अधिक दर्शाया है और स्थल का भौतिक निरीक्षण किए बिना तत्कालीन बी॰ डी॰ ओ॰ वर्तमान याची श्याम किशोर प्रसाद के आदेशों के अधीन भुगतान किया गया था जिस कारण विभाग को विपुल राशि की दोषपूर्ण हानि पहुँचायी गयी थी।

10. श्री खान ने आगे प्रतिवाद किया कि **राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) बनाम अजय कुमार त्यागी, (2012)9 SCC 685,** मामले में **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य** (जिसे इस मामले में याची द्वारा उद्धृत किया गया है) पर विचार करने के बाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया है:–

"23. lh0 ch0 vkb0 cuke oh0 d0 HkfV;kuh e bl U;k;ky; dk fu.k; Hkh vrxLr ç'u ij çdk'k Mkyrk gA mDr ekey e] vfHk;Dr ftld fo#) foHkkxh; dk;okgh vkj nkfMd dk;okgh py jgh Fkh] dk dnh; fuxjkuh vk;kx }kjk foHkkxh; dk;okgh e foeDr fd;k x;k FkkA vfHk;Dr u ih0 ,l0 jkT; e bl U;k;ky; d fu.k; ij fo'okl djrs g, mPp U;k;ky; d le{k viu vfHk;ktu dk pukrh fn;k vkj mPp U;k;ky; u vfHk;ktu vfHk[kfMr dj fn;kA dnh; tkp C;jk }kjk pukrh fn, tku ij fu.k; myVk x;k Fkk vkj ,e0 Ñ".k ekgu e fu.k; ij fo'okl djus d ckn ;g U;k;ky; bl fu"d"k ij vk;k fd vfHk;ktu dk vfHk[kMu voèk Fkk vkj ,lk djrs g, fuEufyf[kr lçf{kr fd;k ¼oh0 d0 HkfV;kuh ekeyk] SCC P 678, Para 6)

*"6. .....gekj er e] ih0 ,l0 jkT; d fu.k; ij mPp U;k;ky; }kjk fo'okl fcYdy vuif{kr Fkk D;kfd ml ekey dh rkfF;d fLFkfr bl ekey e çpfyr fLFkfr l fcYdy fHkUu FkhA***

*24. vr%] gekj er e] mPp U;k;ky; u ihO ,lO jkT;] ekey e fu.k; d li.k vi&iBu ij vfHk;ktu vfHk[kfMr dj fn;kA oLrr%] io fu.k; g ftUg geu Åij fufn"V fd;k g tk foijhr nf"Vdk.k d ckj e [kydj ckyrh g vFkkr foHkkxh; dk;okgh e foefDr Loeo nkfMd ekey e foefDr vFkok nk"kefDr dh vkj ugh y tk,xhA fl)kr% ij Hkh ge bl nf"Vdk.k l lger gA ;g lfuf'pr g fd foHkkxh; dk;okgh e çek.k dk Lrj nkfMd dk;okgh e çek.k d Lrj dh ryuk e fuEurj gA ;g Hkh leku :i l lfuf'pr g fd foHkkxh; dk;okgh vFkok nkfMd ekey dk Hkh doy mle fn, x, lk{; d vkèkkj ij gh fofuf'pr djuk gkxkA nkfMd ekey e lk{; dh lR;rk doy mle fn, x, lk{; d ckn gh tkph tk ldrh g vkj nkfMd ekeyk foHkkxh; dk;okgh e lk{; vFkok mu lk{;k ij vkèkkfjr tkp vfèkdkjh dh fjikV d vkèkkj ij vLohdkj ugh fd;k tk ldrk gA**

11. दोनों पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों और **राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) बनाम अजय कुमार त्यागी (ऊपर)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांत पर विचार करते हुए हमारे मत में **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य** में याची के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले पर बिल्कुल प्रयोज्य नहीं है और याची के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक मामला केवल इस आधार पर अभिखंडित नहीं किया जा सकता है कि याची को इन्हीं आरोपों से विभागीय कार्यवाही में विमुक्त कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त, अन्वेषण में याची के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री आयी है और विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में इस पर पूरी चर्चा की है। मैं इस पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, दांडिक पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,p॰ lh॰ feJk] U;k;efr

मिथलेश कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision Nos. 84 of 2012 with I.A No. 398 of 2013 and I.A. No. 399 of 2012. Decided on 7th February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 320—क्रूरता–दोषसिद्धि–अपराधों का शमन–दोनों पक्षों ने न्यायालय के बाहर मामले में सुलह कर लिया है और अब वे साथ रह रहे हैं–यद्यपि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति का नहीं है, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में याची और परिवादी के बीच सुलह स्वीकार किया जाता है–पक्षों के बीच सुलह के आधार पर आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है–याची को आरोप से दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 4 से 7)

निर्णयज विधि.–2003(2) Crimes 284 (SC); (2011) 10 SCC 705—Followed.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajen Sahay, For the Petitioner; A.P.P., For the State; M/s K.P. Deo, Ashish Kumar, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 22.3.2012 के आदेश द्वारा ग्रहण किया गया था और अवर न्यायालय के अभिलेख मंगाए गए थे।

3. याची C-1 केस सं॰ 956 वर्ष 2006/टी॰ आर॰ सं॰ 367 वर्ष 2010 में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 25.2.2010 के निर्णय और आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा याची को भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध का दोषी पाया गया था और उसे इसके लिए दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया था और याची द्वारा दाखिल अपील दांडिक अपील सं॰ 93 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-1, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 1.12.2011 के निर्णय द्वारा अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी।

4. याची द्वारा और वि॰ प॰ सं॰ 2 द्वारा भी यह कथन करते हुए अंतर्वर्ती आवेदन दाखिल किए गए हैं कि दोनों पक्षों ने न्यायालय के बाहर अपने मामले में सुलह कर लिया है और अब वे दोनों साथ रह रहे हैं, और तद्नुसार, यह निवेदन किया गया था कि पक्षों के बीच सुलह को स्वीकार किया जाए और याची को आरोप से दोषमुक्त किया जाए। अंतर्वर्ती आवेदन में, परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 जो याची की पत्नी है द्वारा शपथ पत्र भी दाखिल किया गया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि पक्षों के बीच मामले में सुलह हो गया है और सूचक को याची की दोषमुक्ति पर आपत्ति नहीं है। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता भी पक्षों के बीच सुलह स्वीकार करते हैं और निवेदन करते हैं कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को याची की दोषमुक्ति पर आपत्ति नहीं है।

6. यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध शमनीय नहीं है, किंतु **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, 2003 (2) Crimes 284 (SC)** और **शिजी उर्फ पप्पू बनाम राधिका एवं एक अन्य, (2011)10 SCC 705** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर विश्वास करते हुए याची और परिवादी के बीच सुलह को एतद् द्वारा स्वीकार किया जाता है।

7. तद्नुसार, C-1 केस सं॰ 956 वर्ष 2006/टी॰ आर॰ सं॰ 367 वर्ष 2010 में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 25.2.2010 के आक्षेपित निर्णय और आदेश तथा दांडिक अपील सं॰ 93 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-1 जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 1.12.2011 के निर्णय को एतद् द्वारा पक्षों के बीच सुलह के आधार पर अपास्त किया गया है। परिणामस्वरुप, याची को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। याची को अपने जमानत बंधपत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है। यह पुनरीक्षण आवेदन और दोनों अंतर्वर्ती आवेदनों को एतद् द्वारा अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

चंद्र बली शर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1681 of 2012. Decided on 23rd January, 2013.

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954—धारा 16 (1) (a)—खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955—नियम 32—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—मिसब्रैंडेड सरसों तेल का विक्रय–संज्ञान–नियम 32 के आवश्यकता के अनुरुप नमूना लेबल नहीं किया गया था–जब्त पैकेटों के ऊपर बैच नंबर और पैकिंग की तिथि भी थी–उन प्रावधानों जिनके अधीन संज्ञान लिया गया था का पर्याप्त अनुपालन प्रतीत होता है–दांडिक अभियोजन अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Moti Gope, For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. दिनांक 7.6.2011 को खाद्य निरीक्षक ने मेसर्स सेल कर्मचारी उपभोक्ता सहकारी सोसाइटी से दिनांक 20.5.2011 को पैक किया गया बैच सं॰ NR/3/M/A, 2011C वाला सरसों तेल (हाथी ब्रांड) का नमूना संग्रहित किया और खनिज क्षेत्र विकास प्राधिकरण (एम॰ ए॰ डी॰ ए॰) के समक्ष रासायनिक विश्लेषण के लिए भेजा। लोक विश्लेषक ने अपने रिपोर्ट सं॰ 391/2011 के तहत रिपोर्ट किया कि हाथी ब्रांड सरसों तेल का नमूना खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली के नियम 32 (cf) की आवश्यकता के अनुरूप लेबल नहीं किया गया है और, इसलिए, यह खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धारा 2 (ix) (k) के निबंधनानुसार मिसब्रैंडेड है। रिपोर्ट दाखिल किए जाने पर, परिवाद दर्ज किया गया था जिसे परिवाद केस सं॰ C IV 22/11 के रूप में दर्ज किया गया था। जिस पर दिनांक 8.8.2011 के आदेश के तहत याची के विरुद्ध खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धारा 16 (1) (a) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री निलेश कुमार निवेदन करते हैं कि विश्लेषक की रिपोर्ट के अनुसार पैकेट के ऊपर पैकेज के ऊपरी अंश पर उल्लिखित 114/20 मई, 2011 जैसे लिखे गए शब्दों अनिश्चयात्मक थे और, इसलिए इसे मिसब्रैंडेड माना गया था। किंतु, अभिग्रहण सूची, जिसे परिशिष्ट–1A के रूप में संलग्न किया गया है, से यह प्रतीत होगा कि पैकेट पर बैच नंबर था जिसे खाद्य निरीक्षक द्वारा NR/3/M/A/2011C के रूप में पाया गया था। इसी प्रकार से, पैकिंग की तिथि भी दिनांक 20 मई, 2011 के रूप में उल्लिखित की गयी थी और तद्द्वारा यह कहा जा सकता है कि पूर्वोक्त प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन हुआ था और, इसलिए, याची जो निर्माता कंपनी का एक प्रतिनिधि था, के विरुद्ध अभियोजन अनपेक्षित है।

4. निवेदन के संदर्भ में नियम 32(1) (e) (f) में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लिया जा सकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

^^iR;d igy l id fd, x, [kk| inkFk e ,d ycy dk gkuk (a) lkekU; ckr (i) igy l id fd, x, [kk| inkFk dk fdlh ycy ij ;k ,lh fdlh ycfyx dh jhfr l of.kr ;k iLrr ugh fd;k tk,xk] tk feF;k] Hkked ;k iopuki.k gk ;k ftld fdlh Hkh idkj l bldh iÑfr d lEcUèk e feF;k èkkj.kk lftr dju dh lHkkouk gkA

(2) l (4)

(b) l (d)

(e) ykV@dkM@cp igpku

ycy ij ,d cp ucj ;k dkM ;k ykV ucj fn;k tk,xk tk ,d igpku fpUg g ft ld }kjk [kk] inkFk d fuek.k d ckj e irk yxk;k rFkk forj.k dh igpku dh tk ldrh gA

[ijUr ;g fd thok.kjfgr nèk lfgr cM rFkk nèk vrfo"V dju oky idVk d ekey e bl [kM dh fof'kf"V;k ycy ij nh tkuh vif{kr ugh gkxhA]

(f) fuek.k ;k ifdx dh frfFk

ycy ij ml frfFk ekg ,o o"k dk ftØ fd;k tk,xk ft le lkexh dk fuek.k id ;k ihid fd;k x;k gA

*ijUr ;g fd fuek.k] ifdx ;k ihifdx dh ekg ,o frfFk nh tk,xh vxj mRikn d ^^bl frfFk d igy lokÙke** rhu ekg l vfèkd dh vofèk dk gA*

*ijUr ;g Hkh fd fdlh idVe ,lh lkexh vrfo"V gku dh n'kk e tk rhu ekg l de le; rd mi;Dr jgrk g] og frfFk] ekg rFkk o"k ft le lkexh dk fuek.k] r;kj ;k ihid fd;k x;k gA***

5. इसके परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि नियम 32 के उपनियम (c) के निबंधनानुसार पैकेटों के ऊपर बैच नंबर, लॉट नंबर अथवा कोड नंबर मुद्रित किया जाए। इसी प्रकार, माह और वर्ष जिसमें वस्तु निर्मित अथवा पैक की गयी थी, को भी पैकेटों के ऊपर होना चाहिए था। अभिग्रहण सूची के मुताबिक, बैच नंबर और पैकिंग की तिथि पैकेटों के ऊपर छपी प्रतीत होती है, जिन्हें जब्त किया गया है। किंतु, इसे मिसब्रैंडेड के रूप में माना गया है क्योकि लोक विश्लेषक के अनुसार, वे शब्द समुचित स्थान पर छापे गए प्रतीत नहीं होते हैं और, इसलिए, इसे अनिश्चयात्मक कहा गया है। किंतु, इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए जैसा अभिग्रहण सूची से प्रतीत होता है कि बैच नं॰ और पैकिंग की तिथि भी पैकेटों पर है, अत: उक्त प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन प्रतीत होता है और, इसलिए, याची का अभियोजन अनपेक्षणीय प्रतीत होता है।

6. तद्नुसार, दिनांक 6.8.2011 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राँची के न्यायालय में लंबित C-IV-22/11 का संपूर्ण दांडिक अभियोजन एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

7. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

दिनेश दास

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 567 of 2012. Decided on 4th February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149 एवं 307/149 सह-पठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–अनेक चश्मदीद गवाहों जो घायल गवाह हैं ने स्पष्ट तौर पर अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका का कथन किया है–चश्मदीद गवाहों का साक्ष्य अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला गठित करता है–इस

अभिवचन पर दंडादेश निलंबित नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थी हमलावर नहीं है–अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की दृष्टि में, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तगण हमलावर हैं–इस चरण पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 389 के अधीन त्रुटिपूर्ण अन्वेषण का लाभ नहीं दिया जा सकता है–प्रार्थना अस्वीकार की गयी। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Rishi Pallava, For the Appellant; Mr. Dilip Kumar Chakraverty, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपील दिनांक 17 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत ग्रहण की गयी है। दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 430 वर्ष 2012 में सत्र विचारण सं॰ 47 वर्ष 2009 के अभिलेख और कार्यवाही को पहले ही प्राप्त किया जा चुका है।

2. हमने सत्र विचारण सं॰ 47 वर्ष 2009 के अभिलेख और कार्यवाही का परिशीलन किया है और दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुना है।

3. वर्तमान अपील अपीलार्थी दिनेश दास द्वारा दाखिल की गयी है जो सत्र विचारण सं॰ 47 वर्ष 2009 में मूल अभियुक्त सं॰ 1 है। अपीलार्थी ने सत्र विचारण सं॰ 47 वर्ष 2009 में प्रथम सत्र न्यायाधीश, चतरा द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए भी प्रार्थना किया है। अपीलार्थी को मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए और भारतीय दंड संहिता की धारा 307 सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और उसे पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन दंडित किया गया है और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 323 सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया है और, इस प्रकार, उसे आजीवन कारावास के साथ दंडित किया गया है और अन्य दंडादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश दिया गया है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 14, अ॰ सा॰ 19 और अ॰ सा॰ 20 हैं। ये समस्त चश्मदीद गवाह घायल गवाह हैं और उनके अभिसाक्ष्य को देखते हुए, उन्होंने वर्तमान अपीलार्थी दिनेश दास द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इन चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला गठित कर रहे हैं। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं, किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि चश्मदीद गवाहों का अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 11 डॉ॰ भुनेश्वर प्रसाद सिंह जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया है द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से आगे संपुष्टि पा रहा है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 14, अ॰ सा॰ 19 और अ॰ सा॰ 20 की उपहतियाँ अ॰ सा॰ 12 डॉ॰ तुषान प्रसाद द्वारा सिद्ध की गयी है। अ॰ सा॰ 12 ने इन चश्मदीद गवाहों और दो अन्य का उपहति प्रमाण पत्र सिद्ध किया है। अभिलेख पर इन साक्ष्यों को देखते हुए वर्तमान अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और, इसलिए, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें वर्तमान अपीलार्थी अपराध में अंतर्ग्रस्त है, जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है और निवेदन किया है कि उनके तर्कों पर इस न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि वर्तमान अपीलार्थी हमलावर नहीं है जबकि, दूसरे पक्ष के गवाह हमलावर हैं और, इसलिए, उन्होंने प्रति मामला दाखिल किया है जिसे सत्र विचारण सं॰ 14 वर्ष 2009 के रूप में

दर्ज किया गया है और, इस प्रकार, वर्तमान अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया जा सकता है। हम वर्तमान अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक इस कारण से नहीं हैं क्योंकि विचारण न्यायालय द्वारा सत्र विचारण सं॰ 14 वर्ष 2009 का विचारण अभी किया जाना है। इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी और सह-अभियुक्तगण हमलावर हैं।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 19 और अ॰ सा॰ 20 ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अपना बयान नहीं दिया है और, इसलिए, इस अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया जा सकता है। हम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन अपीलार्थी के दंडादेश के निलंबन के इस प्रतिवाद को मुख्यत: इस कारण से स्वीकार नहीं कर रहे हैं कि त्रुटिपूर्ण पुलिस अन्वेषण अभियुक्त की मदद नहीं कर सकता है। अन्वेषण में गलती इस अपीलार्थी-अभियुक्त का सद्गुण मुख्यत: इस कारण से नहीं है क्योंकि अ॰ सा॰ 19 और अ॰ सा॰ 20 के उपहति प्रमाण पत्रों को अ॰ सा॰ 12 डॉ॰ तुषाण प्रसाद द्वारा सिद्ध किया गया है। इस प्रकार, अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए वे घायल चश्मदीद गवाह हैं और, इसलिए, त्रुटिपूर्ण अन्वेषण का लाभ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन इस चरण पर नहीं दिया जा सकता है।

7. इस चरण पर, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस न्यायालय द्वारा उनके शेष तर्कों पर विचार नहीं किया जा सकता है, अत:, वह वर्तमान अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के शेष तर्कों पर जोर नहीं दे रहे हैं।

8. पूर्वोक्त कारणों और अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए, विचारण न्यायालय द्वारा वर्तमान अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना में सार नहीं है और, इसलिए, दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना एतद् द्वारा अस्वीकार की जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

उषा कुमारी शर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1640 of 2010. Decided on 5th February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—क्रूरता–अभियुक्त का उन्मोचन–दहेज मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण यातना-वैवाहिक वाद के अधीन कार्यवाही में विरोधी पक्षकारों को भरण-पोषण राशि का भुगतान करने और मुकदमा के खर्च का भी भुगतान करने का निर्देश दिया गया था किंतु उस राशि का भुगतान नहीं किया गया था–छह तिथियों पर आरोप के पहले गवाहों को प्रस्तुत नहीं करने के लिए परिवादी की ओर से कोई औचित्य नहीं है और केवल तब जब परिवादी उन समस्त तिथियों पर आरोप के पहले साक्ष्य देने में विफल रहा, आदेश दर्ज किया गया था जिसके द्वारा अभियुक्तगण/विरोधी पक्षकारों को उन्मोचित किया गया था–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट किया गया–आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–M/s V.P. Singh, Rashmi Kumar, For the Petitioner; Mr. A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन परिवाद केस सं॰ 340/2007 में पारित दिनांक 5.10.2010 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, राँची ने अभियुक्तगण/विरोधी पक्षकारों को अभियोग से उन्मोचित कर दिया।

3. यह प्रतीत होता है कि उसमें कथन करते हुए परिवाद दाखिल किया गया था कि विरोधी पक्षकारों ने दहेज मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण परिवादी को यातना के अध्यधीन किया। इस पर, परिवाद केस सं॰ 340/2007 दर्ज किया गया था जिसमें विरोधी पक्षकारों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया था। इस पर, समन जारी किया गया था। समन प्राप्त करने पर विरोधी पक्षकार अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने में विफल रहे और तब गैर जमानती वारन्ट जारी किया गया था। उसके अनुसरण में, विरोधी पक्षकारों ने अवर न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण किया और उन्हें जमानत प्रदान किया गया था। तत्पश्चात्, आरोप के पहले साक्ष्य के लिए मामला दिनांक 10.2.2010 को नियत किया गया था, किंतु परिवादी/याची ने कोई गवाह प्रस्तुत नहीं किया था। तत्पश्चात्, समय-समय पर मामला स्थगित किया गया था और परिवादी/याची को आरोप के पहले गवाह प्रस्तुत करने के कम से कम छह अवसर दिए गए थे। जब परिवादी आरोप के पहले एक भी गवाह प्रस्तुत करने में विफल रहा, न्यायालय ने विरोधी पक्षकारों को उन्मोचित करते हुए आदेश पारित किया। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

4. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री सिंह निवेदन करते हैं कि परिवाद मामले के अतिरिक्त दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही और हिंदू विवाह अधिनियम के अधीन भी कार्यवाही पक्षों के बीच चल रही है। वैवाहिक वाद के अधीन कार्यवाही में विरोधी पक्षकारों को भरण-पोषण की राशि और मुकदमा के खर्च का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था किंतु उस राशि का भुगतान नहीं किया गया था और, इसलिए, परिवादी न्यायालय के समक्ष गवाह प्रस्तुत करने में असहाय थी।

5. याची की ओर से किए गए निवेदन में कुछ सार हो सकता था यदि परिवाद में उद्धृत गवाह परिवार के सदस्यों से भिन्न गवाह होते। इसके अतिरिक्त, आरोप के पहले न केवल एक तिथि पर बल्कि छह तिथियों पर गवाहों को पेश नहीं करने के लिए परिवादी की ओर से कोई औचित्यता प्रतीत नहीं होती है और केवल तब जब परिवादी उन समस्त तिथियों पर आरोप के पहले साक्ष्य देने में विफल रहा, आदेश दर्ज किया गया था, जिसके द्वारा अभियुक्तगण/विरोधी पक्षकारों को उन्मोचित किया गया था।

6. ऐसी स्थिति में, मैं आक्षेपित आदेश को किसी अवैधता से पीड़ित नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ जिसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

जनार्दन साव एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

I.A. No. 1161 of 2012 In Cr.A(DB) No. 167 of 2004. Decided on 4th February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389 (1)—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–अभियोजन मामला अनेक चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य पर आधारित है जो चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टिकरण पा रहा है–पहले, दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना उच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दी गयी थी और परिस्थितियों में परिवर्तन नहीं हुआ है–अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और दांडिक अपील लंबित है–अपराध की गंभीरता और दंड की मात्रा की दृष्टि में न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–प्रार्थना अस्वीकार की गयी। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–None, For the Appellants; Mr. Ravi Prakash, For the State.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–राज्य के अधिवक्ता-ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन अपीलार्थी सं॰ 1 जनार्दन साव, जो सत्र विचारण सं॰ 595 वर्ष 1993 में मूल अभियुक्त सं॰ 1 है, को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389(1) के अधीन दाखिल की गयी है।

2. जब मामला सुनवाई के लिए बुलाया गया था, अपीलार्थी (मूल अभियुक्त सं॰ 1) के अधिवक्ता अनुपस्थित हैं। पहले भी अपीलार्थी के अधिवक्ता अनुपस्थित थे अथवा विगत चार बार स्थगन लिया था।

3. हमने राज्य के अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने मुख्यत: निवेदन किया है कि अभियोजन का मामला चश्मदीद गवाहों पर आधारित है। इस अपीलार्थी द्वारा हाथ में लिया गया अभिकथित हथियार लाठी है और अ॰ सा॰ 2 का अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 8, जो डॉ॰ रामसेवक साहू है जिन्होंने मृतक रामलखन साव के मृत शरीर का शव परीक्षण किया है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य सहित अभिलेख पर मौजूद अन्य साक्ष्यों से पर्याप्त संपुष्टिकरण पा रहा है। अ॰ सा॰ 2 चश्मदीद गवाह है जो इस मामले का सूचक भी है।

4. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि इस अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं; किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभिलेख पर उपलब्ध चिकित्सीय साक्ष्य सहित चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अभियोजन मामला अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 6 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य सहित अनेक चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य पर आधारित है। उनके अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ रामसेवक साहू द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टिकरण पा रहा है। उनके अभिसाक्ष्य को देखते हुए, यह प्रतीत होता है कि उन्होंने मृतक के शरीर पर उपहतियाँ कारित करने में अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट कथन किया है। इसके अतिरिक्त, पहले भी दिनांक 9.3.2004 और दिनांक 23.2.2006 को विचारण न्यायालय द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा अस्वीकार कर दी गयी थी और दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना की पूर्व अस्वीकृति के बाद परिस्थिति में परिवर्तन नहीं हुआ है।

5. इन तथ्यों की दृष्टि में और अभिलेख पर मॉजूद साक्ष्य, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें वर्तमान अपीलार्थी अपराध में अंतर्ग्रस्त है जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम सत्र विचारण सं॰ 595 वर्ष 1993 में अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ VII, हजारीबाग

द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। आई॰ ए॰ सं॰ 1161 वर्ष 2012 में सार नहीं है। अत:, दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना अस्वीकार की जाती है।

6. अंतर्वर्ती आवेदन सं॰ 1161 वर्ष 2012 निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

पूर्णिमा कुमारी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 684 of 2009. Decided on 23rd January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 375 एवं 417—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 227 एवं 482—छल एवं बलात्संग–विवाह के झूठे वादे पर यौन संभोग–यदि तथ्यों पर यह स्थापित किया जाता है कि अभियुक्त का पीड़िता के साथ विवाह करने का आशय नहीं था और उसके द्वारा विवाह करने का वादा चकमा था, पीड़िता द्वारा प्रकट रूप से दी गयी सहमति भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 375 की परिधि से उसको विमुक्त करने के लिए अभियुक्त को लाभ नहीं देगा–अवर न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में सही नहीं है कि विरोधी पक्षकार के साथ संभोग करने की याची द्वारा दी गयी सहमति तथ्य के भ्रम से मुक्त है–आक्षेपित आदेश का वह भाग जिसके द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध नहीं बनता है, अभिखंडित किया जाता है–अवर न्यायालय को धाराओं 376 एवं 417 के अधीन आरोप विरचित करने का निर्देश दिया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 21 से 25)

निर्णयज विधि.–1984 Cr.LJ 1535; (2003) 4 SCC 46; (2007) 7 SCC 413—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Ramesh Kumar Singh, For the Petitioner; Mr. Amitabh, For the State; Mr. Anil Kumar, For the O.P. No. 2.

आदेश

यह आवेदन सत्र विचारण सं॰ 303 वर्ष 2008 में तत्कालीन तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 27.3.2009 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन दाखिल आवेदन पर सुनवाई के बाद अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन मामला नहीं बनता है बल्कि भारतीय दंड संहिता की धारा 417 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला बनता है।

2. याची का मामला यह है कि पड़ोस में निवास करने वाला विरोधी पक्षकार सं॰ 2 उसके घर अक्सर आया-जाया करता था, जिसके परिणामस्वरुप उसने उसके साथ मित्रता कर ली। उस दौरान, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 उसको प्रेमपत्र लिखने लगा। वर्ष 2003 में, जब उसने हजारीबाग में बी॰ ए॰ में प्रवेश लिया, वह किसी नरेश प्रजापति के घर में किराए पर अपने भाई के साथ रहने लगी। वहाँ भी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 आने-जाने लगा। कभी-कभी वह उसे जमशेदपुर ले जाया करता था। इस अवधि के दौरान, वह सदैव उससे कहा करता था कि वह नौकरी पाने के बाद उससे विवाह करेगा। नवंबर-दिसंबर, 2004 में

विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने यह वादा करके कि वह उसके साथ विवाह करेगा उसके साथ संभोग किया। वर्ष 2005 में, उसे सहायक स्टेशन मास्टर के रूप में नियोजित किया गया था और धनबाद तथा महरेल में पदस्थापित किया गया था। धनबाद में वह उसे होटल ले जाया करता जहाँ वह उसके साथ संभोग करता था। महरेल में वे अपने घर में उसके साथ संभोग करता था।

3. याची का मामला यह भी है कि जब विरोधी पक्षकार सं॰ 2 नियोजित हुआ, याची ने उसे विवाह करने के लिए कहा जिस पर विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने उसे प्रतीक्षा करने के लिए कहा क्योंकि वह प्रशिक्षण ले रहा है। प्रशिक्षण लेते हुए जब उसने पदग्रहण किया, उसने उससे अपने साथ विवाह करने के लिए कहा किंतु उसने इनकार कर दिया, यद्यपि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के बहन–बहनोई उसे कहा करते थे कि वे विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ उसका विवाह करवाएँगे। जब विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने विवाह करने से इनकार किया, याची ने इसके बारे में अपने माता–पिता को सूचित किया जिस पर जब याची के माता–पिता इस संबंध में विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के माता–पिता से बात करने गए, उन्हें फटकारा गया था और घर से बाहर निकाल दिया गया था।

4. ऐसे अभिकथन पर, प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जो विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बरही पी॰ एस॰ केस सं॰ 300 वर्ष 2006 के रूप में दर्ज की गयी थी।

5. पुलिस ने मामले का अन्वेषण करने के बाद बलात्संग का अभिकथन सत्य नहीं पाया था और, इसलिए, फाइनल फॉर्म दाखिल किया। उस पर, अभ्यापत्ति याचिका दाखिल की गयी थी जिसे परिवाद के रूप में माना गया था जिसे परिवाद केस सं॰ 478 वर्ष 2007 के रूप में दर्ज किया गया था। जाँच करने के बाद, न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था।

6. इस पर विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उसको अभियोग से उन्मोचित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था।

7. न्यायालय ने पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों को ध्यान में लेते हुए और **प्रदीप कुमार उर्फ प्रदीप कुमार वर्मा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (2007)7 SCC 413,** मामले में दिए गए निर्णय को भी ध्यान में रखते हुए अभिनिर्धारित किया कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध याची द्वारा किया गया अभिकथन कि उसने उसके साथ विवाह करने के बहाने उसके साथ संभोग किया और तब उसके साथ विवाह करने से इनकार कर दिया, भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध गठित नहीं करेंगे क्योंकि यह सहमति के साथ दिया गया था जिसे तथ्य के भ्रम के अधीन दिया गया है। किन्तु, न्यायालय ने पाया कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 417 के अधीन अपराध गठित करने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है।

8. उस आदेश से व्यथित होकर, यह आवेदन दाखिल किया गया है।

9. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह निवेदन करते हैं कि यद्यपि न्यायालय ने **प्रदीप कुमार उर्फ प्रदीप कुमार वर्मा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (2007)7 SCC 413,** और **जयन्ती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1984 Cr. L.J. 1535,** मामलों में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए अभिनिर्धारित किया कि जब 16 वर्ष से अधिक आयु की लड़की उसको किए गए वादा पर कि वह पुरुष उसके साथ विवाह करेगा, पुरुष के साथ यौन संभोग करने की सहमति देती है, बाद में उसके साथ विवाह से इनकार करने का कृत्य न तो छल द्वारा उसकी

सहमति पाने के तुल्य होगा और न ही उसे बलात्संग के अपराध के लिए अभियोजित किए जाने का दायी बनाएगा किंतु न्यायालय ने **प्रदीप कुमार उर्फ प्रदीप कुमार वर्मा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय के सच्चे महत्व को नहीं समझा था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उसके साथ विवाह करने के किसी आशय अथवा इच्छा के बिना पीड़िता की सहमति पाने की दृष्टि से अभियुक्त द्वारा जानबूझकर किया गया व्यपदेशन सहमति को दूषित करेगा।

10. न्यायालय ने आगे कहा है कि यदि तथ्यों पर यह स्थापित किया जाता है कि वादा करने के आरंभ में ही अभियुक्त को उसके साथ विवाह करने का आशय नहीं था और उसके द्वारा किया गया विवाह का वादा चकमा मात्र था पीड़िता द्वारा प्रकट रूप से दी गयी सहमति धारा 375 की परिधि से उसको दोषमुक्त करने के लिए अभियुक्त को लाभ नहीं देगी और इस स्थिति के अधीन, न्यायालय को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोप विरचित करना चाहिए था ताकि अभियोक्त्री विचारण के दौरान यह स्थापित करने के लिए साक्ष्य दे सके कि आरंभ से ही अभियुक्त का उसके साथ विवाह करने का आशय नहीं था और यदि अभियोक्त्री उक्त तथ्य को स्थापित करने में विफल रहती, अभियुक्त बेलाग छूट सकता था।

11. इन परिस्थितियों के अधीन, न्यायालय को विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को धारा 376 के अभियोग से उन्मोचित करने पर निश्चय ही अवैधता करता हुआ कहा जा सकता है क्योंकि न्यायालय ने अभियोक्त्री को यह स्थापित करने से निवारित किया कि आरंभ से ही अभियुक्त का उसके साथ विवाह करने का आशय नहीं था और वह अभियोक्त्री के साथ संभोग करता था। अत:, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

12. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल कुमार निवेदन करते हैं कि अभियोक्त्री द्वारा सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दिए गए बयान से प्रतीत होगा कि वह विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ गहन प्रेम करती थी और इस प्रकार कोई भी आसानी से समझ सकता है कि उसने अभिकथित कृत्य के लिए सहमति दी और भले ही यह स्वीकार किया जाता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 याची से उसके साथ विवाह करने के वादा पर संभोग किया, याची को भारतीय दंड संहिता की धारा 90 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार तथ्य के भ्रम के अधीन अपनी सहमति देते हुए नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यदि पूर्ण वयस्क लड़की विवाह के वादा पर यौन संभोग का कृत्य करने की सहमति देती है और ऐसी गतिविधि में लिप्त बनी रहती है, यह उसकी ओर से व्यभिचारिता का कृत्य है और न कि तथ्य के भ्रम द्वारा प्रेरित कृत्य और अवर न्यायालय ने पूर्वोक्त सिद्धांत को ध्यान में लेते हुए पाया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन मामला नहीं बनता है और तद्द्वारा आक्षेपित आदेश का अभिखंडन कभी नहीं अपेक्षणीय है।

13. इस प्रकार, एक ओर, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि यदि पूर्ण वयस्क महिला विवाह के वादा पर यौन संभोग का कृत्य करने की सहमति देती है और ऐसी गतिविधि में लिप्त बनी रहती है, यह उसकी ओर से व्यभिचारिता का कृत्य है और न कि तथ्य के भ्रम द्वारा प्रेरित कृत्य जबकि याची की ओर से अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि यदि अभियुक्त का आरंभ से ही विवाह करने का आशय नहीं था और उसने विवाह का वादा करके यौन संभोग की सहमति प्राप्त की थी और यौन कृत्य में लिप्त हुआ था, सहमति तथ्य के भ्रम पर दी गयी मानी जा सकती है।

14. इस संदर्भ में, भारतीय दंड संहिता की धारा 90 के प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"90. **lEefr] ftlds lcèk e ;g Kkr gk fd og Hk; ;k Hke d vèkhu nh xb g&**&dkb lEefr ,lh ugh g tlh bl lfgrk dh fdlh èkkjk l vk'kf;r g] ;fn og lEefr fdlh O;fDr u {kfr] Hk; d vèkhu] ;k rF; d Hke d vèkhu nh gk] vkj ;fn dk; dju okyk O;fDr ;g tkurk gk ;k mld ikl fo'okl dju dk dkj.k gk fd ,l Hk; ;k Hke d ifj.kkeLo#i og lEefr nh xb FkhA***

15. विवाह के वादा पर सहमति प्राप्त करके यौन संभोग के कृत्य में लिप्त होने से संबंधित मामला **जयन्ती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (ऊपर)** के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया कि क्या उस तरीके से प्राप्त सहमति तथ्य के भ्रम के अधीन दी गयी सहमति कही जा सकती है। माननीय न्यायाधीशों ने तथ्य और परिस्थिति और विधि के प्रावधान पर सम्यक रूप से विचार करने के बाद निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

*^^fdfpr dkj.kk] tk lk{; ij vfrLi"V ugh g] l Hkkoh vfuf'pr frfFk ij oknk ijk dju e foQyrk lno Lo; ÑR; d vkjHk ij rF; d Hke d rY; ugh gkrh gA rF; d Hke d vFk d vrxr vku d fy, rF; dh vklUu çkIfxdrk gkuh gkxhA ekeyk fHkUu gkrk ;fn lgefr ;g fo'okl lftr djd çkIr dh x;h Fkh fd o igy l gh fookfgr FkA ,l ekey e lgefr dk rF; d Hke l ifj.kr gkrk dgk tk ldrk FkkA fdr ;gk vfHkdfFkr rF; fookg dk oknk g tk dc dk g] ge ugh tkur gA ;fn i.k fodfIr yMdh fookg d oknk ij ;ku lHkkx dk ÑR; dju dh lgefr nrh g vkj ,lh xfr fofèk e rc rd fylr cuh jgrh g tc rd og xHkorh ugh gk tkrh g] ;g mldh vkj l O;fHkpkfjrk dk ÑR; g vkj u fd rF; d Hke }kjk çfjr ÑR;A Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 90 dh lgk;rk ,l ekey e yMdh d ÑR; dk {kek dju d fy, vkj nlj ij nkfMd nkf;Ro Mkyu d fy, ugh fy;k tk ldrk g tc rd U;k;ky; dk vk'oklu ugh fn;k tk; fd vkjHk l gh vfHk;Dr dk mld lkFk fookg dju dk vk'k; ugh FkkA***

16. माननीय न्यायाधीशों ने आगे संप्रेक्षित किया:–

*^^fo|eku rF; dk vidFku gkuk pkfg,A vr%] rF; d vidFku d rY; gku d fy, phtk dh fo|eku voLFkk vkj mld çfr vidFku çkIfxd cu tkrk gA ,l lk{; dh vuifLFkfr e èkkjk 90 dh bl çfrokn d leFku e lgk;rk ugh fy;k tk ldrk g fd ifjoknh dh lgefr rF; d Hke d vèkhu çkIr dh x;h FkhA***

17. बाद में, जब **उदय बनाम कर्नाटक राज्य, (2003)4 SCC 46,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष लगभग समरुप मामला विचारार्थ आया, माननीय न्यायाधीशों ने **जयन्ती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (ऊपर)** के निर्णय पर विश्वास करते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

^^vr% ;g çrhr gkrk g fd U;kf;d er dk erD; bl nf"Vdk.k d i{k e g fd bl oknk ij fd og ckn dh frfFk ij mld lkFk fookg djxk] O;fDr ftld lkFk og xgu çe djrh g d lkFk ;ku lHkkx d fy, vfHk;kD=h }kjk nh x;h lgefr rF; d Hke d vèkhu nh x;h lgefr ugh crk;h tk ldrh gA >Bk oknk lfgrk d vFk d vrxr rF; ugh gA ge bl nf"Vdk.k d lkFk lger gku d bPNd g fdr ge ;g dguk gkxk fd ;g fofuf'pr dju d fy, fd D;k ;ku lHkkx d fy, vfHk;kD=h }kjk nh x;h lgefr LofPNd g] vFkok ;g rF; d Hke d vèkhu nh x;h g] dkb loekU; lfUu;e ugh gA vfre fo'y"k.k e U;k;ky;k

*}kjk vfèkdfFkr ijh{kk, vfèkdkfèkd U;k;ky;k dk lgefr d ç'u ij fopkj djr g, ekxn'ku n ldrh g fdr U;k;ky; dk çR;d ekey e fu"d"k ij igpu d igy viu le{k lk{; vkj bn&fxn dh ifjfLFkfr;k ij fopkj djuk gkxk D;kfd çR;d ekey d viu fofp= rF; gkr g ftudk çHkko bl ç'u ij gk ldrk g fd D;k lgefr LofPNd Fkh vFkok rF; d Hke d vèkhu nh x;h FkhA bl bl rF; fd vijkèk d çR;d ?kVd] lgefr dh vuifLFkfr mue l ,d g] dk fl) dju dk Hkkj vfHk;ktu ij g] dk nf"V e j[kr g, lk{; dk eY;kdu djuk gkxkA***

18. प्रकटत: माननीय सर्वोच्च न्यायालय के संप्रेक्षण से यह प्रतीत होता है कि वादा कि वह उसके साथ बाद की तिथि पर विवाह करेगा, पर व्यक्ति जिसके साथ वह गहन प्रेम करती है के साथ यौन संभोग के लिए अभियोक्त्री द्वारा दी गयी सहमति तथ्य के भ्रम के अधीन दी गयी सहमति नहीं कही जा सकती है।

19. किंतु, जब बाद में **प्रदीप कुमार उर्फ प्रदीप कुमार वर्मा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** में समरुप मामला माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विचारार्थ आया, माननीय न्यायाधीशों ने **उदय बनाम कर्नाटक राज्य (ऊपर)** में किए गए संप्रेक्षण को ध्यान में लेने के बाद संप्रेक्षित किया कि एकमात्र ऐसे संप्रेक्षण द्वारा कि ''झूठा वादा संहिता के अर्थ के अंतर्गत तथ्य नहीं है'' यह नहीं कहा जा सकता है कि इस न्यायालय ने भिन्न रूप से विधि अधिकथित किया है।

20. माननीय न्यायाधीशों ने **उदय बनाम कर्नाटक राज्य (ऊपर)** के मामले में किए गए प्रासंगिक संप्रेक्षण को ध्यान में लेने के बाद निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था:–

^^mDr m)j.k e çFke nk okD;k dk Li"V dju dh vko';drk gA ;|fi ge nkgjkr g fd fdlh vkj pht d fcuk fookg dk oknk èkkjk 90 d vFk d vrxr rF; d Hke dk mnHkr ugh djxk] ;g Li"V dju dh vko';drk g fd mld lkFk fookg dju dk vk'k; vFkok bPNk j[k fcuk ihfMr dh lgefr çklr dju dh nf"V l vfHk;Dr }kjk tkuc>dj fd;k x;k 0;in'ku lgefr dk nf"kr djxkA ;fn rF;k ij ;g LFkkfir fd;k tkrk g fd oknk dju d vkjHk l gh vfHk;Dr mld lkFk fookg dju dk vk'k; ugh j[krk Fkk vkj mld }kjk fd;k x;k oknk pdek ek= Fkk] ihfMrk }kjk çdV :i l nh x;h lgefr èkkjk 375 [kM f}rh; dh ifjfèk l mldk nk"keDr dju d fy, vfHk;Dr dh enn ugh djxhA oLrr% bl ij gh dydÙkk mPp U;k;ky; dh [kMihB }kjk t;Urh jkuh ikMk ekey e tkj fn;k x;k Fkk ftl mn; ekey e vueknu d lkFk fufn"V fd;k x;k FkkA dydÙkk mPp U;k;ky; u lgh çdkj l bl çfriknuk dk vfgr fd;k ftl blu vr e vgrk tkMdj Cri LJ i"B 1538 Para 7) ^^tc rd U;k;ky; dk vk'okfLr ugh fd;k tkrk g fd vkjHk l gh vfHk;Dr dk mld lkFk fookg ugh dju dk vk'k; Fkk** ¼ey e tkj fn;k x;k½ dfFkr fd;k FkkA vxy ijk e] mPp U;k;ky; u pkljh U;k;ky; d foVt fu.k; dk fufn"V fd;k ftlu vfèkdfFkr fd;k fd ÑR; fo'k"k dk dju e çfroknh d vk'k; dk vidFku rF; d vidFku d rY; gkxk vkj bl ij çopuk dh dkjokb vèkkfjr dh tk ldrh gA tykn ekey ¼Åij m)r m)j.k n[k½ e enkl mPp U;k;ky; }kjk Hkh ;gh nf"Vdk.k viuk;k x;k gA ;g ,dek= lEijh{k.k djd fd >Bk oknk lfgrk d vFk d vrxr rF; ugh g] ;g ugh dgk tk ldrk g fd bl U;k;ky; u fHkUu :i l fofèk vfèkdfFkr fd;k gA iokDr okD; d ckn fd;k x;k lç{k.k Hkh leku :i l egRoi.k gA U;k;ky; ;g vgrk tkMu e i;klr :i l pkdl Fkk fd ;g fofuf'pr dju d fy, fd D;k*

*lgefr rF; d Hke d vèkhu nh x;h Fkh] dkb loekU; Qkeyk fodfl r ugh fd;k tk ldrk FkkA mn; ekey e fn, x, fu.k; dk l i.k :i l iBu djr g, ge U;k;ky; dk 0;kid rkj ij ;g çfrikfnr djrk gvk ugh le>r g fd fookg dk oknk dHkh rF; d Hke d rY; ugh gk ldrk FkkA gekj le> e] ;g fu.k; dk fu.k;kèkkj ugh gA oLrr%] m l ekey e fofufn"V fu"d"k Fkk fd vkjHk e vfHk;Dr d fookg dju d vk'k; l budkj ugh fd;k tk ldrk gA***

21. अंततः यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि तथ्यों पर यह स्थापित किया जाता है कि वादा करने के आरंभ से ही अभियुक्त उसके साथ विवाह करने का आशय नहीं रखता था और उसके द्वारा किया गया वादा चकमा मात्र था, पीड़िता द्वारा प्रकट रूप से दी गयी सहमति धारा 375 की परिधि से उसको दोषमुक्त करने के लिए अभियुक्त को लाभ नहीं पहुँचाएगी।

22. ऐसी स्थिति में, अवर न्यायालय समय के उस बिंदु पर यह अभिनिर्धारित करने में सही प्रतीत नहीं होता है कि यह वादा किए जाने पर कि वह उसके साथ विवाह करेगा, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ संभोग करने के लिए दी गयी सहमति तथ्य के भ्रम से मुक्त है क्योंकि केवल तब जब न्यायालय के समक्ष साक्ष्य दिया जाता है, यह अभिनिश्चित किया जा सकता है कि क्या आरंभ से ही अभियुक्त का उसके साथ विवाह नहीं करने का आशय था।

23. इन परिस्थितियों के अधीन दिनांक 27.3.2009 के आदेश का वह भाग जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध नहीं बनता है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

24. परिमाणस्वरुप, न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन और धारा 417 के अधीन भी आरोप विरचित करने के बाद विचारण हेतु अग्रसर होगा।

25. इस प्रकार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

गोपाल मचुआ

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision Nos. 978 of 2012 with I.A. No. 226 of 2013 . Decided on 1st February, 2013.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धाराएँ 138 एवं 147—चेक का अनादर–अपराध का शमन–पक्षों के बीच सुलह–परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति का है–पक्षों के बीच सुलह स्वीकार किया गया और अपराध का शमन किया गया–पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Chaturvedi, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. K.P. Choudhary, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और परिवादी के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक अपील सं॰ 142 वर्ष 2010 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 14.9.2012 के निर्णय से व्यथित है, जिसके द्वारा परिवाद केस सं॰ सी॰/1-962 वर्ष 2008/टी॰ आर॰ सं॰ 605 वर्ष 2010 में श्री उत्तम आनन्द, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा याचीगण को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादेशित करते हुए दिनांक 23.4.2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध दाखिल अपील विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी है।

3. आई॰ ए॰ सं॰ 226 वर्ष 2013 पक्षों द्वारा संयुक्त रूप से यह कथन करते हुए दाखिल की गयी है कि पक्षों ने न्यायालय के बाहर मामले में सुलह कर लिया है और परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को संपूर्ण राशि का भुगतान कर दिया गया है। उक्त आवेदन में यह प्रार्थना भी की गयी है कि सुलह की दृष्टि में याची को आत्मसमर्पण प्रमाण पत्र दाखिल करने से छूट दिया जाए। उसमें के विषय वस्तुओं को स्वीकार करते हुए परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा शपथ पर उक्त अंतर्वर्ती आवेदन में शपथ पत्र दाखिल किया गया है।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पक्षों के बीच मामले में सुलह हो गया है और इस प्रकार, परिवादी को याची के विरुद्ध शिकायत नहीं है और उसे अपराध के शमन पर आपत्ति नहीं है।

5. पक्षों के बीच सुलह की दृष्टि में और इस तथ्य की दृष्टि में कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति का है, पक्षों के बीच सुलह एतद् द्वारा स्वीकार किया जाता है और अपराध के शमन की अनुमति दी जाती है। तद्नुसार, परिवाद केस सं॰ सी॰ 1/-962 वर्ष 2008/टी॰ आर॰ सं॰ 605 वर्ष 2010 में श्री उत्तम आनन्द, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 23.4.2010 का निर्णय और आदेश तथा दांडिक अपील सं॰ 142 वर्ष 2010 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 14.9.2012 का निर्णय एतद् द्वारा अपराध के शमन के आधार पर अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरुप, याची को अभियोग से दोषमुक्त किया जाता है। याची जमानत पर है और उसे अपने जमानत बंध पत्र के दायित्वों से उन्मोचित किया जाता है।

6. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन और अंतर्वर्ती आवेदन अनुज्ञात किए जाते हैं।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

आधुनिक एल्वाय एण्ड पावर लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (T) No. 479 of 2013. Decided on 24th January, 2013.

झारखंड वैल्यू एडेड टैक्स एक्ट, 2005—धारा 46—मांग नोटिस–बैंक खाता की कुर्की–याची के बैंक खाता की कुर्की के कारण अनेक कर्मचारीगण प्रभावित हुए हैं–राजस्व और अपीलीय प्राधिकारी सुनवाई की तिथि नियत नहीं कर रहे हैं और अनेक वर्षों के बाद भी कोई वसूली प्रभावित नहीं की गयी है और अचानक पुराने मामलों में कुर्की आदेश जारी किए गए हैं–मामले

को शीघ्रातिशीघ्र सुनने के लिए अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी को निर्देश के साथ आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Sumeet Gadodia, For the Petitioner; Mr. Rajesh Shankar, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. चूँकि झारखंड वैल्यू ऐडेड टैक्स एक्ट, 2005 की धारा 46 के अधीन मांग नोटिस की दृष्टि में पारित दिनांक 21 जनवरी, 2013 के आदेश द्वारा याची का बैंक खाता कुर्क कर दिया गया है, अंतरिम अनुतोष की प्रार्थना के साथ याची के अधिवक्ता द्वारा इप्सित अनुमति की दृष्टि में मामला सूचीबद्ध किया गया है।

3. याची का प्रतिवाद यह है कि याची ने 28, 46,913/- रुपयों और 18,05,932/- रुपयों की राशि के लिए याची के विरुद्ध मांग को चुनौती देते हुए दो भिन्न मामलों में अपील और पुनरीक्षण दाखिल किया। याची के अपील और पुनरीक्षण में कोई तिथि नियत नहीं की गयी है और जहाँ तक याची के आचरण का संबंध है, पहले मामले में दिनांक 29 नवंबर, 2012 का आदेश पारित किया गया था और दिनांक 7 दिसंबर, 2012 को उस आदेश को याची पर तामील किया गया था और याची ने दिनांक 7 जनवरी, 2013 को अपील दाखिल किया और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा कोई तिथि नियत नहीं की गयी थी और दिनांक 19 जनवरी, 2013 तक 28,46,913/- रुपयों की मांग का भुगतान करने के लिए याची को कहते हुए दिनांक 23 दिसंबर, 2012 को नोटिस जारी की गयी थी। इसी प्रकार, एक अन्य मांग के लिए नोटिस जारी की गयी थी। याची ने दिनांक 12 जनवरी, 2013 को स्थगन आवेदन और पुनरीक्षण याचिका की सुनवाई के लिए जल्द तिथि नियत करने के लिए वाणिज्य कर आयुक्त, झारखंड और पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष आवेदन दिया। इन मामलों में पुनरीक्षण प्राधिकारी अथवा अपीलीय प्राधिकारी द्वारा कोई तिथि नियत नहीं की गयी थी और दिनांक 21 जनवरी, 2013 को 46,52,845/- रुपयों की मांग के कारण याची का बैंक खाता कुर्क कर दिया गया है। याची द्वारा निवेदन किया गया है कि याची के पास उसकी समस्त इकाईयों में लगभग एक हजार कर्मचारी हैं और याची किसी तरीके से राजस्व के चंगुल से भाग नहीं रहा है।

4. याची के स्थापना को देखते हुए, अनेक कर्मचारियों को प्रभावित करते हुए इस तरीके से याची का बैंक खाता कुर्क कर दिया गया है। यह निवेदन किया गया है कि अन्य मामलों में भी इस न्यायालय ने पहले ही इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि राजस्व और अपीलीय प्राधिकारी सुनवाई की तिथि नियत नहीं कर रहे हैं और अनेक वर्षों बाद भी वसूली प्रभावित नहीं की गयी है और अचानक पुराने मामलों में कुर्की आदेश जारी किए गए हैं।

5. चाहे जो भी हो, प्रत्यर्थीगण–राजस्व के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अंतर्ग्रस्त राशि याची के लिए बड़ी राशि नहीं है और, इसलिए, उसे उक्त राशि जमा करने के लिए कहा जा सकता है और तत्पश्चात्, उस न्यायालय द्वारा नियत तिथि पर पुनरीक्षण और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा अपील और पुनरीक्षण विनिश्चित किया जा सकता है।

6. हमारा सुविचारित मत है कि यह ऐसा मामला है जहाँ अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी को मामले की शीघ्रातिशीघ्र सुनवाई करने का निर्देश दिया जा सकता है और पुनरीक्षण तथा अपीलीय प्राधिकारी दिनांक 28 फरवरी, 2013 तक अथवा इसके पहले याची की अपील सुन और विनिश्चित कर सकते हैं और यदि पुनरीक्षण अथवा अपील को विनिश्चित करना संभव नहीं है, अंतरिम प्रार्थना पर विचार किया जा सकता है और दिनांक 28 फरवरी, 2013 के पहले वह आदेश पारित किया जा सकता है।

7. उक्त कारणों की दृष्टि में, दिनांक 21 जनवरी, 2013 का आदेश उसी प्राधिकारी को अधिकरण के समक्ष पुनरीक्षण सांविधिक अवधि की प्रतीक्षा करने के बाद यथास्थिति उक्त याचिकाओं अथवा पुनरीक्षण अथवा अपील के निर्णय के बाद समुचित आदेश पारित करने की स्वतंत्रता के साथ अभिखंडित और अपास्त किया जाता है।

8. तद्नुसार, याची की रिट याचिका निपटायी जाती है।

9. आदेश की प्रति पक्षों के अधिवक्ता को दी जाए।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

तपेन्द्र कुमार सिंह उर्फ लड्डू सिंह

cuke

झारखंड राज्य

I.A. Nos. 1739 of 2012 in Cr. Appeal (D.B.) No. 319 of 2012. Decided on 7th January, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389 (2)—दंडादेश का निलंबन–अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सहपठित धारा 34 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन भी दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है–दांडिक अपील लंबित है–अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है–केवल आपवादिक मामलों में दंडादेश के निलंबन का लाभ दिया जा सकता है–चश्मदीद गवाहों का साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टिकरण पा रहा है–अपराध की गंभीरता और दंड की मात्रा और आवेदक की सह-अपराधिता की दृष्टि में न्यायालय दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–आवेदन खारिज किया गया।

(पैराएँ 9 से 15)

निर्णयज विधि.–AIR 2008 SC 1882; (2002) 9 SCC 366; (2004) 6 SCC 175; (2008) 11 SCC 180—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s S.S. Choudhary, For the Appellant; A.P.P., For the Respondent.

आदेश

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन सत्र विचारण सं॰ 35 वर्ष 1998 में जिला एवं सत्र न्यायाधीश-II, गोड्डा द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 389(2) के अधीन दाखिल किया गया है जिसमें आवेदक, जो एकमात्र अपीलार्थी (मूल अभियुक्त सं॰ 1) है, को दोषसिद्ध किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और आगे आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने और 500/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करने और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में छह माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं, किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन का मामला अनेक गवाहों के साक्ष्य पर आधारित है। इन चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 3, 4, 5, 7 और 10 के साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उन्होंने वर्तमान आवेदक द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इन चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य के मुताबिक और डॉ॰ विजय कुमार भगत (अ॰ सा॰ 11) द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य को देखते हुए मृतक द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियाँ निम्नलिखित है:–

"(i) vud fonh.k t[e] dy l[;k 16, vkdkj 1/8" bn&fxn d Ropk d dkykiu vkj >ylu d lkFk] [kkiMh d lkeu oky ,o ijkbVy Hkkx d Åij mèo ekftu] iyV d lkFk pgj dk nkuk fgLlk vkj nkuk vk[kk d ukd oky Hkkx d fudVA

(ii) rhu fonh.k t[e] vkdkj 1/8" bn&fxn dh Ropk dk dkykiu rFkk >ylu] Ropk ekftu ck, dèk vkj Nkrh d ck, fgLl d mijh Hkkx d mij mèo] jDr cgrk gvkA

*phj QkM dju ij % mlu LdkYi vkj pgj d eyk;e fV'k ij [ku dk FkDdk ik;kA LdkYi vkj pgj l Ng iyV fudkyk x;k] dN iyV LdkYi dh dfoVh e ?kl vkj cu eVl dk fonh.k dj jg cu lcLVkl e [ku ekt n FkkA Fkkjdl vkj dèkk d phjQkM ij mlu lk¶V fV'k e [ku mifLFkr ik;k] QQMk èkfey vkj lkekU; FkkA ifjdkfM;u buVDV FkkA ân; d lkj pcj [kkyh vkj lkekU; FkA vkx phM&QkM dju ij mlu Llyhu] fyoj] fdMuh] vfn e vlkekU; rk ugh ik;kA mldh nf"V e iokDr migfr xkyh yxu l gb migfr Fkh vkj erd }kjk lgh x;h eLrd migfr çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr FkhA***

3. इस प्रकार, चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से और अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 13 द्वारा दिए गए साक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टिकरण पाते हैं।

4. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने जोर दिया कि चूँकि उन्होंने विस्तारपूर्वक तर्क किया है और दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना के इस चरण पर उनके तर्कों पर विचार किया जा सकता है।

5. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन वर्तमान अपीलार्थी के बयान को निर्दिष्ट किया क्योंकि बयान में निर्दिष्ट घटना की तिथि गलत है और इसने अपीलार्थी पर अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव डाला है।

6. हम इस प्रतिवाद को मुख्यत: इस कारण से स्वीकार करने के इच्छुक नहीं हैं क्योंकि अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि प्रत्येक चश्मदीद गवाह द्वारा घटना की सही तिथि निर्दिष्ट की गयी है। किंतु, हम दांडिक अपील लंबित रहने के कारण दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना के इस चरण पर उक्त तर्क का विश्लेषण नहीं कर रहे हैं।

7. अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि दो प्राथमिकियाँ हैं। यह प्रतिवाद भी इस न्यायालय द्वारा मुख्यत: इसलिए स्वीकार नहीं किया जा रहा है क्योंकि अ॰ सा॰ 10 जिसने सूचना दिया है भी एक चश्मदीद गवाह है और उसके साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि प्रदर्श 6 के रूप में चिन्हित प्राथमिकी के सिवाए कोई अन्य प्राथमिकी नहीं है जबकि फर्दबयान प्रदर्श 2 है। इस प्रकार, औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 6 है और इसलिए, विस्तार में गए बिना इस चरण पर यह प्रतिवाद इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया जा रहा है क्योंकि दांडिक अपील लंबित है।

8. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मृतक की हत्या के लिए इस अपीलार्थी के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है क्योंकि सत्र विचारण में दो अभियुक्त हैं और अभिग्रहण सूची गवाहों के मुताबिक एक से अधिक आग्नेयास्त्र का उपयोग किया गया है। इस प्रतिवाद को भी दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना के इस चरण पर इस न्यायालय द्वारा मुख्यत: इस कारण से स्वीकार नहीं किया जा रहा है क्योंकि अपीलार्थी आग्नेयास्त्र के साथ था। चश्मदीद गवाहों के मुताबिक आग्नेयास्त्र का उपयोग किया गया था और चिकित्सीय साक्ष्य के मुताबिक (शव परीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक) मृतक के शरीर पर

आग्नेयास्त्र उपहतियाँ हैं। आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन भी आरोप है। अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह पठित धारा 34 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन भी दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है।

9. खिलारी बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 1882, विशेषत: पैराग्राफ 10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"10. vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU;] (2005)7 SCC 326, e vU; ckrk d lkFk lkFk fuEufyf[kr lçf{kr fd;k x;k Fkk%

"7. ljljh rkj ij ifj'khyu dju ij Hkh mPp U;k;ky; dk vkn'k food dk i.kr% xj bLreky n'kkrk gA ;|fi lk{; dk foLrr ijh{k.k vkj ekey d x.kkx.kk d foLrr nLrkotthdj.k l tekur vkonuk ij vkn'kk dk ikfjr djr g, U;k;ky; dk cpuk gkxk] fQj Hkh tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk lr"V gkuk pkfg, fd D;k çFke n"V;k ekeyk curk g fdr ekey d x.kkx.kk dh lokxh.k tkp vko';d ugh gA tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk U;k;kfpr rjhd l vkj u fd LokHkkfodr% viu Lofood dk ç;kx dju dh vko';drk gA

8. ;g çFke n"V;k fu"df"kr dju d fy, fd D;k tekur çnku fd;k tk jgk Fkk fo'k"kr% tgk vfHk;Dr dk xHkhj vijkèk dju d fy, vkjkfir fd;k tkrk g] vkn'k e dkj.kk dk minf'kr dju dh vko';drk gA tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky;k d fy, tekur çnku dju d igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk&lkFk fuEufyf[kr dkjdk ij fopkj dju dh vko';drk g tk fuEufyf[kr g(

1. vfHk;kx dh çÑfr vkj nk"kflf) dh fLFkfr e nM dh dBkjrk vkj lefFkr lk{; dh çÑfr(

2. xokgk d lkFk NMNkM dju dh ;fDr;Dr vk'kdk vFkok ifjoknh dk èkedk, tku dh vk'kdk(

3. vkjki d leFku e U;k;ky; dh çFke n"V;k lrf"V(

*,l dkj.kk l vlc) dkb vkn'k food d xj bLreky l ihfMr gkrk g tl k bl U;k;ky; }kjk jke xkfoUn mikè;k; cuke ln'ku flg ,o vU;] (2002)3 SCC 598, iju vkfn cuke jkefoyk l ,o ,d vU;] vkfn] (2001)6 SCC 338; vkj dY;k.k pn lj dkj cuke jkt'k jtu mQ ili ;kno ,o ,d vU;] JT 2004 (3) SCC 442 e xkj fd;k x;k FkkA** (tkj fn;k x;k)*

10. रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जायसवाल एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 366, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 3 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"3. ,l ekey e] tgk vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k Fkk] ,lk vkiokfnd jkLrk viuku d fy, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k n'kk;k ugh x;k gA ,l ekeyk e lkekU; ifjikVh nMkn'k dk fuycu ugh g vkj doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA** (tkj fn;k x;k)*

11. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, (2004)6 SCC 175, में पैराग्राफ 6 से 9 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"6. lfgrk dh èkkjk 389 vihy yfcr jgrs g, nMkn'k ds fu"iknu ds fuycu vkj vihykFkh dh tekur ij fuefDr ij fopkj djrh gA tekur vkj nMkn'k ds fuycu ds chp lfHkUurk gA èkkjk *389* *ds vko';d vo;oksa esa ls ,d nMkn'k ds fu"iknu vFkok vihy fd, x, vkns'k ds fuycu ds fy, vkns'k nus ds fy, fyf[kr esa dkj.kksa dk nt djuk vihyh; U;k;ky; ds fy, vko';d gA ;fn og ifjjkèkksa esa g] mDr U;k;ky; fun'k n ldrk g fd mls tekur ij vFkok Lo;a viu cèkk ij fueDr fd;k tk,A fyf[kr esa dkj.kksa dk nt djus dh vko';drk Li"Vr% mn~nsf'kr djrh g fd çklfxd igyvksa ij lkoèkkuhiwod fopkj djuk gkxk vkj nMkn'k ds fuycu dk fun'k nus okyk vkns'k rFkk tekur dh eatjh fu;fer rjhds ls ikfjr ugha fd;k tkuk pkfg,A*

7. vihyh; U;k;ky; ekeys dk oLrqijd fuèkkj.k djus vkj blls fu"d"kZ fd ekeyk nMkn'k ds fu"iknu dk fuycu vkj tekur çnku djus dh vi{kk djrk g] ds fy, dkj.k nt djus ds fy, drO;; ckè; gA orekku ekeys esa] nMkn'k ds fuycu vkj tekur çnku djus dk fun'k nus ds fy, mPp U;k;ky; ij vfèkekuh ,dek= dkjd çnku fd, x, ijkys dh vofèk ds nkjku vfHk;Dr&çR;FkhZ }kjk Lor=rk ds n#i;kx ds vfHkdFku dh vuifLFkfr çrhr gkrk gA

8. fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko us fnukd 24.10.2001 ds fu.k; }kjk vfHk;Dr çR;FkhZ dk nk"kh ik;k FkkA çR;FkhZ }kjk nkfMd vihy lå 100DB o"k 2002 nkf[ky fd;k x;k FkkA ;g rF; fd vihy yfcr jgus ds nkjku vfHk;Dr çR;FkhZ ijky ij Fkk] ;g n'kkrk g fd vkjHk esa vfHk;Dr çR;FkhZ dk nMkn'k ds fu"iknu ds fuycu dk ykHk ugha fn;k x;k FkkA ;g rF; ek= fd ijky dh vofèk ds nkjku vfHk;Dr us Lor=rk dk n#i;kx ugha fd;k Fkk] nMkn'k ds fu"iknu ds fuycu vkj tekur ds çnku dk vfuok;r% vko';d ugha cukrk gA mPp U;k;ky; }kjk oLrqr% tks fopkj djuk vko';d Fkk] ;g Fkk fd D;k nMkn'k ds fu"iknu ds fuycu vkj rRi'pkr tekur çnku djus dk dkj.k fo|eku FkkA mPp U;k;ky; lgh fl)kr dk nf"V esa j[krk çrhr ugha gkrk gA

*9. fot; dekj cuke ujUnz vkj jketh çlkn cuke jru dekj tk;loky esa blls U;k;ky; }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 ds vèkhu nk"kflf) vrxLr djus okys ekeyksa esa doy vioknfd ekeyksa esa nMkn'k ds fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkns'k blls vko';drk dk ijk ugha djrk gA fot; dekj ekeys esa] ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 ds vèkhu nMuh; gR;k tls xHkhj vijkèk dk vrxLr djus okys ekeyksa esa tekur dh çkFkuk ij fopkj djus esa U;k;ky; dk çklfxd dkjdksa tls rjhdk ftlls vfHkdfFkr :i ls vijkèk fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk] vkj gR;k ds xHkhj vijkèk dk djus ds fy, mudh nk"kflf) ds ckn tekur ij vfHk;Dr dk fueDr djus dh okNuh;rk ij fopkj djuk pkfg,A vk{kfir vkns'k ikfjr djrs g, mPp U;k;ky; }kjk bu igyvksa ij fopkj ugha fd;k x;k gA***
(tkj fn;k x;k)

12. खिलारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, (2008)11 SCC 180 में, पैराग्राफ 4, 6, 12 और 13 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

^M----------------

----

4. viuk;k x;k ,dek= nf"Vdk.k ;g Fkk fd erd d 'kjhj ij 'koio migfr;k u 'kjhj d vud Hkkx ij rhu dV; tuk] ,d ,cMM dV; tu vkj fofHkUu vk;kek d pkj fonh.k t[ek dk lfEefyr fd;k tk ykg dh NM l dkfjr ugh dh tk ldrh FkhA mudk nf"Vdk.k Fkk fd dN vKkr geykojk u erd dk migfr;k dkfjr fd;k FkkA

6. ijLij fojkèkh nf"Vdk.kk ij xkj dju d ckn mPp U;k;ky; u vk{kfir vkn'k }kjk fuEufyf[kr fu"d"kk d lkFk tekur çnku fd;k%

12. m)r v'k vkj mPp U;k;ky; dk vkn'k n'kkrk g fd food dk i.k : i l xj&bLreky gvk Fkk vkj çkIfxd igyvk ij fcYdy Hkh fopkj ugh fd;k x;k FkkA

---

*13. vr%] vk{kfir vkn'k lik"k.kh; ugh g vkj bl [kkfjt fd;k tkrk gA çR;Fkh l0 2 dk çnku fd;k x;k tekur jí fd;k tkrk gA fofèk d vu#i ekey ij iufopkj dju d fy, ekeyk mPp U;k;ky; dk okil Hktk tkrk gA***

13. अत:, पूर्वोक्त निर्णयों के आलोक में भी यह न्यायालय अपीलार्थी के अधिवक्ता के प्रतिवाद को स्वीकार नहीं कर सकता है कि अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश के निष्पादन को निर्लंबित किया जा सकता है क्योंकि मृतक की हत्या के लिए इस अपीलार्थी के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है क्योंकि सत्र विचारण में दो अभियुक्त है और अभिग्रहण सूची गवाहों के मुताबिक एक से अधिक आग्नेयास्त्र का उपयोग किया गया है।

14. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को पढ़कर सुनाया है और इंगित किया है कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में मुख्य लोप और विरोधाभास हैं। हम इस तर्क को स्वीकार करने के इच्छुक नहीं हैं क्योंकि यह दंडादेश के निलंबन का चरण है अन्यथा इस चरण पर पूरी अपील विनिश्चित की जाएगी। किंतु, इतना कहना पर्याप्त है कि चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य को देखते हुए, जो चिकित्सीय साक्ष्य से भी पर्याप्त संपुष्टिकरण पाते हैं, इस अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है।

15. अत:, पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों, निर्णयों और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों के समेकित प्रभाव के कारण और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें वर्तमान आवेदक अपराध में अंतर्ग्रस्त है, जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को निर्लंबित करने के इच्छुक नहीं हैं।

16. अंतर्वर्ती आवेदन में सार नहीं है अत:, इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राम चंदर पांडे

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (S) No. 5560 of 2006. Decided on 12th December, 2012.

नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995—धारा 47—सीमा सुरक्षा बल नियमावली, 1969—नियम 25—अनिवार्य सेवानिवृत्ति–बी॰ एस॰ एफ॰ में सेवा के दौरान शारीरिक नि:शक्तता उपगत की गयी–याची 60% नि:शक्तता से पीड़ित होने के बाद स्वयं प्रत्यर्थी संगठन द्वारा ऑफिस कार्य पर पहले से ही लगाया गया था और ऐसी नि:शक्तता के कारण उसकी सेवाएँ अभिमुक्त नहीं की गयी थी–याची की नि:शक्तता मेडिकल बोर्ड द्वारा संचालित पुनर्परीक्षण में बढ़ी नहीं थी–प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई को तार्किकता और वेडनेसबरी युक्तियुक्तता की कसौटी पर आँकना होगा–याची ऐसी उपहति प्राप्त करने के बाद वर्ष 1995 से किसी अधिक नि:शक्तता से पीड़ित नहीं हुआ है और प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की संतुष्टि के प्रति ऑफिस कार्य का निर्वहन करता रहा है–अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–समस्त पारिणामिक लाभों के साथ याची को सेवा में पुनर्बहाल किया गया। (पैराएँ 8 से 10)

निर्णयज विधि.–2006 (2) JCR 353 (Jhr)—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Sujit Narayan Prasad, Saurabh Shekhar, Ranjeet Kumar Singh, Sheshank Shekhar, For the Petitioners; Mr. J. P. Gupta, For the Respondents.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 2897 वर्ष 2006

आई॰ ए॰ सं॰ 1950 वर्ष 2007

याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 3, बी॰ एस॰ एफ॰ के उप महानिरीक्षक, 99 ए॰ पी॰ ओ॰, मेरू कैंप, हजारीबाग द्वारा जारी दिनांक 13.10.2006 के आदेश, जिसके द्वारा याची को सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त कर दिया गया है, को चुनौती इप्सित किया है। वर्तमान रिट आवेदन में याची दिनांक 5.8.2006 के आदेश सं॰ 17161 के अभिखंडन के लिए आया था जिसके द्वारा उसे सीमा सुरक्षा बल में आगे सेवा के लिए चिकित्सीय रूप से अयोग्य घोषित किया गया था। रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान उसको अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करते हुए दिनांक 13.10.2006 का आदेश पारित किया गया है जिसे वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन में संशोधन के रूप में सम्मिलित करना इप्सित किया गया है। चूँकि आक्षेपित आदेश, जिसका मूल रूप से रिट आवेदन में विरोध किया गया है, दिनांक 5.8.2006 के मूल आदेश का परिणाम प्रतीत होता है, आई॰ ए॰ सं॰ 2897 वर्ष 2006 अनुज्ञात की जाती है और मुख्य रिट आवेदन में प्रार्थना सम्मिलित करने की अनुमति याची को दी जाती है। अंतर्वर्ती आवेदन सं॰ 2898 वर्ष 2006 को अभिलेख के भाग के रूप में माना जाता है।

2. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 2897 वर्ष 2006 और आई॰ ए॰ सं॰ 1950 वर्ष 2007 निपटायी जाती है।

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5560 वर्ष 2006

3. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

4. यह रिट याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 3, उपमहानिरीक्षक, बी॰ एस॰ एफ॰, 99 ए॰ पी॰ ओ॰ मेरु कैंप, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 5.8.2006 के आदेश सं॰ 17161 (परिशिष्ट–12) के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची को सीमा सुरक्षा बल में आगे सेवा के लिए चिकित्सीय रूप से अयोग्य घोषित किया गया है। याची ने दिनांक 13.10.2006 के पारिणामिक आदेश का अभिखंडन भी इप्सित किया है जिसके द्वारा याची को सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त कर दिया गया है जिसे आई॰

ए॰ सं॰ 2897 वर्ष 2006 में की गयी प्रार्थना के अनुसरण में मुख्य रिट याचिका में सम्मिलित करने की अनुमति दी गयी है।

5. याची के अनुसार, इस मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि उसे सीमा सुरक्षा बल में नियुक्त किया गया था और मई, 1995 के प्रथम सप्ताह में काश्मीर घाटी के आतंकवाद प्रभावित क्षेत्र में लड़ाई लड़ने के काम पर लगाया था, जहाँ उसने दिनांक 4.4.1995 को बम विस्फोट के कारण उपहति प्राप्त किया। याची को तुरन्त दिनांक 6.5.1995 के निर्देश (परिशिष्ट–1) के तहत महानिदेशक, बी॰ एस॰ एफ॰ अस्पताल, नयी दिल्ली द्वारा अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (संक्षेप में 'एम्स') निर्दिष्ट किया गया था। एम्स के प्राधिकारियों ने दिनांक 8.1.1996 के परिशिष्ट–4 के तहत 60% की सीमा तक उसका नि:शक्त होना निर्धारित किया था। दिनांक 5.8.1997 के मूवमेंट आदेश द्वारा याची को सीमा सुरक्षा बल की पचीसवीं बटालियन से प्रशिक्षण केंद्र एवं विद्यालय, बी॰ एस॰ एफ॰, हजारीबाग स्थानांतरित किया गया था जहाँ उसे निर्वहन के लिए एक जगह बैठकर करने वाला कार्य अर्थात् अस्पताल में संदेशवाहक के रूप में और पब्लिक कॉल ऑफिस में भी काम दिया गया था। बाद में दिनांक 22.8.2001 को (परिशिष्ट–6) याची का मेडिकल बोर्ड, बी॰ एस॰ एफ॰ प्रशिक्षण केंद्र एवं विद्यालय, हजारीबाग द्वारा परीक्षण किया गया था और उसे 60% की सीमा तक नि:शक्तता से पीड़ित निर्धारित किया गया था। याची ने प्रशिक्षण केंद्र एवं विद्यालय, हजारीबाग के प्राधिकारियों द्वारा जारी दिनांक 22.9.2003 के प्रमाण पत्र पर विश्वास किया। मेडिकल बोर्ड ने उसे चेहरे पर स्पिलंटर उपहति और मैंडिबल पर अन्य मुख्य उपहति के मामले के रूप में डायग्नोज किया था और उसे 60% नि:शक्तता से पीड़ित घोषित किया था। तब से याची को प्रत्यर्थीगण द्वारा बी॰ एस॰ एफ॰ अस्पताल, मेरु कैंप, हजारीबाग में पब्लिक कॉल ऑफिस में और संदेशवाहक के रूप में ऑफिस कार्य पर लगाया गया था जहाँ अपने उच्चतरों से किसी शिकायत के बिना अपने कर्तव्यों का संतोषजनक रूप से निर्वहन कर रहा था। बाद में याची का मेडिकल बोर्ड द्वारा परीक्षण किया गया था और दिनांक 6.1.2004 के आदेश (परिशिष्ट–8) के तहत उसे दो वर्षों के लिए निम्न मेडिकल कोटि में रखा गया था। इस बीच याची को बी॰ एस॰ एफ॰ अस्पताल, कोलकाता, स्थानांतरित कर दिया गया था, किंतु, उक्त आदेश इस आधार पर प्रतिसंहृत कर दिया गया था कि याची ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1574 वर्ष 2006 में दिनांक 24.1.2006 के आदेश का विरोध किया था। याची को मेडिकल बोर्ड, हजारीबाग के समक्ष पुन: उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था जिसके विरुद्ध उसने विरोध किया कि उससे दिनांक 8.6.2006 को संचालित बतायी गयी मेडिकल बोर्ड द्वारा प्रस्तुत मेडिकल रिपोर्ट पर दिनांक 5.6.2006 को जबरन हस्ताक्षर करवाया गया था। मेडिकल बोर्ड ने याची को अयोग्य घोषित किया और अनुशंसा किया कि उसकी सेवा को अभिमुक्त किया जा सकता है। याची ने महानिदेशक, बी॰ एस॰ एफ॰, हजारीबाग के समक्ष अभ्यावेदन देकर इसके विरुद्ध विरोध किया किंतु उन्होंने इसके संबंध में प्रत्युत्तर कभी नहीं दिया। याची यह अभिकथन भी करता है कि सीमा सुरक्षा बल नियमावली, 1969 के नियम 25 के मुताबिक कोई निर्णय करने के पहले और इस पर कार्रवाई करने के पहले कर्मचारी को मेडिकल बोर्ड का मत प्रस्तुत किया जाना चाहिए था। याची दिनांक 13.10.2006 को सेवानिवृत्त हो गया है।

6. याची ने मुख्यत: निम्नलिखित आधारों पर प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्रवाई और आदेश का विरोध किया है:–

> *1. d'ehj ?kkVh e vfrokfn;k dk lkeuk djr g, dkEcV vkij'ku d nkjku fnukd 1.4.1995 dk ;kph u migfr;k ik;h vkj ml ,El] u;h fnYyh d çkfèkdkfj;k }kjk o"k 1996 e 60% fu%'kDrrk l ihfMr d :i e fuèkkfjr fd;k x;k Fkk vkj vkfQl dk; fn;k x;k Fkk ft ld fy, ml o"k 1997 e gtkjhckx LFkkukrfjr fd;k x;k FkkA o"k 2001 e Hkh] çR;Fkh ch0 ,l0 ,Q0 d efMdy ckM*

u ml fpfdRlh; fu%'kDrrk dh mlh lhek rd ihfMr ik;k vkj vkx çR;Fkhx.k u fnukd 22.9.2003 dk bl çHkko dk çek.k i= (ifjf'k"V&7) tkjh fd;k fd og mlh fu%'kDrrk l ihfMr FkkA vkx ml e# di] gtkjhckx d vLirky e vkj ifCyd dky vkfQl e Hkh ln'kokgd d :i e vkfQl dk; ij viu dr0;k dk fuogu djr g, ik;k x;k FkkA ; lxri.k rF; n'kkr g fd og fu;fer efMdy ijh{k.k ij 60% dh lhek rd mlh efMdy fu%'kDrrk l ihfMr ik;k x;k Fkk tk mlu dkEcV vkij'ku d le; ij gb migfr;k d dkj.k gb FkhA çR;Fkhx.k d ikl ;kph dk ckj&ckj ijh{k.k dju dk volj Fkk vkj iuijh{k.k ij ml mlh fu%'kDrrk l ihfMr ik;k x;k Fkk tk o"k 2004 e ik;k x;k Fkk vkj mud ikl ml fpfdRlh; :i l v;kX; ?kkf"kr dju dk volj FkkA

2. ;kph u fu%'kDr 0;fDr (leku volj] vfèkdkj lj{k.k ,o i.k Hkkxhnkjh) vfèkfu;e] 1995 dh èkkjk 47 d çkoèkkuk ij fo'okl fd;k g vkj fuonu djrk g fd dkb LFkkiu ml depkjh dk vfHkeDr ugh dj ldrk g vFkok jd e uhp ugh dj ldrk g ftlu viuh lok d nkjku fu%'Drrk vftr fd;k gA mldk çkoèkku ;g Hkh minf'kr djrk g fd ;fn depkjh fu%'kDrrk vftr dju d ckn in tk og èkkj.k dj jgk Fkk d fy, mi;Dr ugh g] ml mlh orueku vkj lok ykHk d lkFk fdlh vU; in ij f'k¶V fd;k tk ldrk FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk u fuonu fd;k g fd ;|fi lxBu dk fnukd 10.9.2002 dh vfèklpuk d rgr lkekftd U;k; ,o l'kfDrdj.k e=ky; }kjk tkjh vfèklpuk }kjk NV fn;k x;k g] mlh vfèklpuk dk mu ykHkk l xj gdnkj cuku d fy, Hkry{kh çHkko dk gkrk gvk ugh dgk tk ldrk g ftUg igy gh mDr vfèkfu;e d vèkhu dkEcV vkij'ku d nkjku 60% fu%'kDrrk dh vkj y tku oky migfr;k dk çkIr dju d ckn çnku fd;k x;k FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk u Hkkyk dekj >k cuke Hkkjr l?k ,o vU; d ekey e] MCY;0 ih0 (,l0) l0 3199 o"k 2006 e bl U;k;ky; dh ,dy ihB d fnukd 29.7.2011 d fu.k; ij fo'okl fd;k ftl ;kph d vulkj le#i ifjfLFkfr;k e çR;Fkh d vkn'k] ftld }kjk mDr ;kph] tk Hkh ch0 ,l0 ,Q0 dk lnL; Fkk] dk 'kkjhfjd v;kX;rk d vfHkdfFkr vkèkkj ij lok l lokfuoÙk gku d fy, etcj fd;k x;k Fkk] dk vfHk[kfMr djr g, fn;k x;k FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk fuonu djr g fd fu.k; dk ,y0 ih0 ,0 l0 345 o"k 2011, ftl çR;Fkh Hkkjr l?k }kjk nkf[ky fd;k x;k Fkk] e ekU; Bgjk;k x;k Fkk vkj fnukd 31.10.2012 d vkn'k d rgr bl U;k;ky; dh [kM ihB }kjk [kkfjt dj fn;k x;k FkkA ;kph d vfèkoDrk u miUn dekj mQ miUn dekj flg cuke Hkkjr l?k ,o vU;] ,y0 ih0 ,0 l0 277 o"k 2011 e ikfjr fnukd 17.4.2012 d fu.k; ij Hkh fo'okl fd;k g ftle fuEu efMdy dkfV d ekey e Hkh çR;Fkhx.k dk fu%'kDrrk vfèkfu;e] 1995 dh èkkjk 47 dk è;ku e yr g, mDr ;kph dh çkUufr d ekey ij fopkj dju dk fun'k fn;k x;k FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk u 'kyUn flg cuke Hkkjr l?k ,o vU;] ,y0 ih0 ,0 l0 415 o"k 2008 e ikfjr ,d vU; fu.k; ij Hkh fo'okl fd;k g ftle ,y0 ih0 ,0 l0 415 o"k 2008 e vrfje vkn'k ikfjr fd;k x;k Fkk ftld }kjk lcfèkr 0;fDr tk ch0 ,l0 ,Q0 e dkLVcy g] dh lok lekfIr d vkn'k dk LFkfxr dj fn;k x;k g tc ml tEe d'ehj e vkrdokn l gb migfr d dkj.k gVk;k tkuk bfllr fd;k x;k FkkA

7. प्रत्यर्थी भारत संघ उपस्थित हुआ है और प्रति शपथपत्र दाखिल किया है। प्रत्यर्थी भारत संघ के अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया है कि व्यक्ति जिसने 40% से अधिक नि:शक्तता पाया है, संगठन

से पृथक कर दिए जाने का दायी है और दिनांक 10.9.2002 की छूट अधिसूचना की दृष्टि में जो प्रत्यर्थी बी॰ एस॰ एफ॰ संगठन के संबंध में भी प्रवर्तित होती है, नि:शक्तता अधिनियम, 1995 के संरक्षण का हकदार नहीं है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची नि:शक्तता अधिनियम की धारा 47 के अधीन संरक्षण का दावा नहीं कर सकता है और **दारोगा यादव बनाम भारत संघ एवं अन्य, 2006 (2) JCR 353 (Jhr.),** मामले में इस प्रश्न का उत्तर प्रत्यर्थी बी॰ एस॰ एफ॰ के पक्ष में दिया गया था। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने पूर्वोक्त निर्णयों पर विश्वास किया और निवेदन दिया कि इस न्यायालय की खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया था कि उक्त याची का प्रतिवाद कि छूट की अधिसूचना भविष्यलक्षी प्रभाव की है, संपोषित नहीं किया था क्योंकि विद्वान न्यायालय के अनुसार उक्त याची को सेवा में विस्तारण जैसे लाभ की अनुमति कभी नहीं दी गयी थी।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता विस्तारपूर्वक सुने गए और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परिशीलन किया गया। यहाँ ऊपर वर्णित तथ्यों से, जो विवादित नहीं हैं, यह प्रकट है कि याची ने कश्मीर घाटी ने कॉम्बैट ऑपरेशन के दौरान, जब वह प्रत्यर्थी संगठन बी॰ एस॰ एफ॰ में काम कर रहा था, दिनांक 4.4.1995 को उपहतियाँ प्राप्त किया। तत्पश्चात, महानिदेशक, बी॰ एस॰ एफ॰, अस्पताल, नयी दिल्ली के निर्देश पर याची का एम्स, नयी दिल्ली में इलाज किया गया था और एम्स के प्राधिकारियों ने स्वयं वर्ष 1996 में 60% की सीमा तक नि:शक्तता के आधार पर वर्तमान याची को बी॰ एस॰ एफ॰ के मेरु कैंप में अस्पताल में संदेशवाहक के रूप में पब्लिक कॉल ऑफिस में ऑफिस कार्य का निर्वहन करने के लिए प्रशिक्षण केंद्र एवं विद्यालय, बी॰ एस॰ एफ॰, मेरु कैंप, हजारीबाग स्थानांतरित किया गया था। पुन: वर्ष 2001 में, याची का मेडिकल बोर्ड द्वारा परीक्षण किया गया था और उसे 60% की नि:शक्तता की उसी सीमा तक पीड़ित पाया गया था। वस्तुत:, वर्ष 2003 में चेहरे पर स्पिलंटर उपहति और मैंडिबल के फ्रैक्चर के रूप में 60% की सीमा तक उसकी उपहति का वर्णन दर्शाता हुआ बी॰ एस॰ एफ॰ प्रशिक्षण केंद्र एवं विद्यालय, मेरु कैंप, हजारीबाग के प्राधिकारियों द्वारा प्रमाण पत्र (परिशिष्ट–7) जारी किया गया था। उक्त प्रमाण पत्र भी परिलक्षित करता है कि प्राधिकारियों ने पब्लिक कॉल ऑफिस में और मेरु कैंप, हजारीबाग के बी॰ एस॰ एफ॰ अस्पताल में संदेशवाहक के रूप में संतोषजनक रूप से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता हुआ पाया। यह अनुशंसा भी की गयी थी कि ऑफिस कार्य में उसे नियोजित करके बल द्वारा उसकी सेवा लाभदायी रूप से उपयोगित की जा सकती थी। पूर्वोक्त तथ्यों से, यह प्रतीत होता है कि नि:शक्तता अधिनियम, 1995 के प्रभाव में आने के बाद याची ने उक्त अधिनियम की धारा 47 के अधीन प्रदान किए गए संरक्षण के लाभ का आनन्द लिया जिसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"47. **ljdkjh fu;ktu e xj&HknHkko-**&(1) dkb LFkkiu fdlh depkjh] tk viuh lok d nkjku fu%'kDrrk vftr djrk g dk vfHkeDr ugh djxk vFkok mldk jd ugh ?kVk,xk%*

ijUr ;g fd ;fn depkjh fu%'kDrrk vftr dju d ckn in] tl og èkkj.k dj jgk Fkk] d fy, mi;Dr ugh g] mlh orueku vkj lok ykHk d lkFk fdlh vU; in ij f'k¶V fd;k tk ldrk gA

ijUr vkx ;g fd ;fn depkjh dk fdlh in d fo#) lek;kftr djuk lHko ugh g] ml mi;Dr in miyCèk gku rd vFkok vfèkof"krk dh vk; çkIr dju rd tk Hkh igy gk ijd in ij j[kk tk ldrk gA

> *(2) mldh fu%'kDrrk d vkèkkj ek= ij fdlh 0;fDr dk çkUufr l budkj ugh fd;k tk,xk%*
>
> *ijUr ;g fd lefpr ljdkj fdlh LFkkiu e fd, tku okyy dke d çdkj dk è;ku e j[kr g, vfèklpuk }kjk vkj ,lh 'krk] ;fn gk] ftUg vfèklpuk }kjk fofufn"V fd;k tk ldrk g] d vè;èkhu fdlh LFkkiu dk bl èkkjk d çkoèkkuk l NV n ldrk gA**

9. सामाजिक न्याय एवं सशक्तिकरण मंत्रालय द्वारा दिनांक 10.9.2002 की अधिसूचना के तहत उक्त धारा 47 के परन्तुक के अधीन उक्त अधिनियम की कठोरता से बी॰ एस॰ एफ॰ संगठन को छूट जारी की गयी थी। **दरोगा यादव (ऊपर)** के मामले में निर्णय पर विश्वास करते हुए प्रत्यर्थीगण का तर्क कि अधिसूचना का भूतलक्षी प्रभाव होगा, शायद वर्तमान मामले में विवाद नहीं हैं क्योंकि यहाँ ऊपर वर्णित तथ्यों के मुताबिक याची पहले ही स्वयं प्रत्यर्थी संगठन द्वारा 60% नि:शक्तता से पीड़ित होने के बाद ऑफिस कार्य पर लगाया गया था और ऐसी नि:शक्तता के कारण उसकी सेवाएं त्यागी नहीं गयी थी। दिनांक 22.8.2001 को मेडिकल बोर्ड द्वारा संचालित पुनर्परीक्षण में और तत्पश्चात भी दिनांक 6.1.2004 के एक अन्य मेडिकल बोर्ड द्वारा संचालित पुनर्परीक्षण में जब उसे निम्न मेडिकल कोटि में रखा गया था, याची की नि:शक्तता में वृद्धि नहीं हुई थी। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची की सेवा का विस्तारण स्वयं मेडिकल बोर्ड की अनुशंसा पर प्रत्येक समय पर दो वर्ष के लिए किया गया था। वर्ष 2006 में उसी मेडिकल बोर्ड ने पुनर्परीक्षण पर उसको अयोग्य घोषित किया था।

किंतु, प्रत्यर्थी के अधिवक्ता इस अवस्था को विवादित करने में सक्षम नहीं हुए हैं कि स्वयं उक्त मेडिकल बोर्ड ने याची को 60% नि:शक्तता, जो उसने मूल रूप से वर्ष 1995 में अपनी उपहतियों के बाद प्राप्त किया था, की तुलना में किसी अधिक नि:शक्तता से पीड़ित नहीं पाया था और वर्ष 1996, 2001 और 2004 ने एम्स और बी॰ एस॰ एफ॰ मेडिकल बोर्ड के प्राधिकारियों द्वारा परीक्षण करने पर लगातार ऐसा ही पाया गया था। यह प्रतीत होता है कि समरुप परिस्थितियों में, **भोला कुमार झा (ऊपर)** के मामले में, जो भी बी॰ एस॰ एफ॰ में कांस्टेबल था और बी॰ एस॰ एफ॰ नियमावली, 1969 के नियम 25 के प्रावधान के अधीन शारीरिक अयोग्यता के आधार पर उसकी सेवाओं की अभिमुक्ति इप्सित की गयी थी, इस न्यायालय की खंडपीठ ने दिनांक 29.7.2011 के निर्णय के तहत प्रत्यर्थी की कार्रवाई को विधि में असंपोषणीय पाया और तद्नुसार, उसकी समयपूर्व सेवानिवृत्ति का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया था और रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी। उक्त निर्णय में, यह भी ध्यान में लिया गया था कि प्रत्यर्थीगण ने उसको ऑफिस कार्य पर काम करने की अनुमति दी थी और वह ऑफिस कार्य पर सिविल प्रकृति के कर्तव्य का निर्वहन कर रहा था। अत:, उसकी समयपूर्व सेवानिवृत्ति स्वयं उनके अपने दस्तावेजों के विपरीत अनुचित पाया गया था। उक्त निर्णय को आगे एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 345 वर्ष 2011 में मान्य ठहराया गया था जिसे प्रत्यर्थी भारत संघ द्वारा दाखिल किया गया था। दिनांक 31.10.2012 के निर्णय के तहत उक्त एल॰ पी॰ ए॰ खारिज कर दिया गया है। उपेन्द्र कुमार उर्फ उपेन्द्र कुमार सिंह, एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 277 वर्ष 2011, मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने निम्न मेडिकल कोटि के मामले में भी प्रोन्नति के लिए उक्त याची के मामले पर विचार करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देना समुचित समझा था यद्यपि वह S1H1A1P3E1 के मेडिकल कोटि से पीड़ित था, जो वर्तमान याची की मेडिकल कोटि भी है और यह कथन किया गया है कि उक्त व्यक्ति 75% की सीमा तक नि:शक्तता से पीड़ित हुआ। प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास किया गया निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य प्रतीत नहीं होता है क्योंकि प्रत्यर्थीगण

द्वारा याची को वर्ष 1995 के अधिनियम की धारा 47 का संरक्षण देते हुए उसे ऑफिस कार्य हेतु रखकर वर्ष 1997 से लाभ प्रदान किया गया है। प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई को तार्किकता और वेडनेसबरी युक्तियुक्तता की कसौटी पर आँकना होगा। यहाँ ऊपर वर्णित तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि वर्तमान मामले में याची ऐसी उपहति प्राप्त करने के बाद वर्ष 1995 से किसी अधिक नि:शक्तता से पीड़ित नहीं हुआ है और वह पूर्वोक्तानुसार प्रत्यर्थीगण की संतुष्टि के प्रति ऑफिस कार्य का निर्वहन करता रहा है। वर्ष 2006 में, उसे चिकित्सीय रूप से अयोग्य घोषित करने और इसके परिणाम स्वरुप उसे सेवा से अनिवार्य रूप से सेवा निवृत्त करने का कार्य वेडनेसबरी युक्तियुक्ता की कसौटी पर युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है। तद्नुसार, यहाँ ऊपर दिए गए निष्कर्ष और अन्य व्यक्तियों के मामले में समरुप परिस्थितियों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों की दृष्टि में, उसे दिनांक 5.8.2006 के आदेश (परिशिष्ट–12) के तहत चिकित्सीय रूप से अयोग्य घोषित करते हुए और दिनांक 13.10.2006 के आदेश (परिशिष्ट 13) के तहत उसे अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त होने के लिए मजबूर करते हुए आक्षेपित आदेशों को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

10. याची को समस्त पारिणामिक लाभों के साथ सेवा में पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

परमानंद कोइरी

cuke

गौरी शंकर गुप्ता

W.P. (C) No. 993 of 2011. Decided on 11th December, 2012.

झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982—धाराएँ 11(1)(C) एवं 14— निजी आवश्यकता के आधार पर दाखिल बेदखली याचिका की खारिजी–वाद संक्षिप्त प्रक्रिया द्वारा शासित होगा–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–प्रतिवादी को न्यायालय की अनुमति से शपथ पत्र दाखिल करने की स्वतंत्रता दी गयी और न्यायालय मामले पर संक्षिप्त तरीके से विचार करेगा जैसा धारा 14 के अधीन अनुबंधित किया गया है। (पैराएँ 14 से 18)

निर्णयज विधि.–1985 PLJR 490—Distinguished; (1992)2 PLJR 214; (1987)2 SCC 555—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Kaushik Sarkhel, For the Petitioner; Mr. Nityanand Prasad Choudhary, For the Respondent.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके हक बेदखली वाद सं॰ 1 वर्ष 2010 में विद्वान उप न्यायाधीश प्रथम, जामताड़ा द्वारा पारित दिनांक 20.1.2011 के आदेश (परिशिष्ट–5) जिसके द्वारा दिनांक 28.10.2010 को याची वादी की ओर से दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी थी, के अभिखंडन के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि इस मामले के याची ने झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम की धारा 11 सह पठित धारा 14 के अधीन उप न्यायाधीश, जामताड़ा के समक्ष बेदखली के लिए वाद दाखिल किया जिसमें इस मामले के प्रत्यर्थी ने लिखित कथन दाखिल किया।

तत्पश्चात्, याची ने प्रतिवादी/प्रत्यर्थी के लिखित कथन की अस्वीकृति के लिए याचिका दाखिल किया और पक्षों को सुनने के उपरांत अवर न्यायालय द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया गया था।

3. विद्वान अधिवक्ता ने वाद पत्र की प्रति जो परिशिष्ट 1 के तहत याचिका के साथ संलग्न है को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि याची वादी ने सारत: धारा 11 (1) (C) के अधीन वाद दाखिल किया है और उस सीमा तक वाद पत्र में प्रकथन किए गए हैं।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अवर न्यायालय अभिवचन पर इसकी संपूर्णता में विचार करने में विफल रहा क्योंकि अभिवचन स्पष्टत: उपदर्शित करते हैं कि इसे निजी आवश्यकता के आधार पर दाखिल किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि वादपत्र में किराया के गैर भुगतान के संबंध में प्रकथन किए गए हैं, याची ने निजी आवश्यकता के आधार पर अपना दावा सीमित रखा है। किंतु, अवर न्यायालय ने वाद के सार का अधिमूल्यन नहीं किया था।

5. आगे यह निवेदन किया गया है कि 1985 PLJR 490 में दिए गए निर्णय पर अवर न्यायालय द्वारा समुचित रूप से विचार नहीं किया गया है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों को निर्दिष्ट किया है:–

(1) (1992)2 PLJR P 214;

(2) (1987)2 SCC 555.

7. इसके विरुद्ध प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन करते हुए निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त आदेश पारित करते हुए कोई गलती नहीं की है और अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि के अनुरुप है। अत:, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

8. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भी अपने निवेदन के समर्थन में **रियाजुल हक बनाम मोस्मात मैमुन खातुन एवं एक अन्य,** 1985 PLJR Page 490, में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि अभिवचन और अधिक विशेषत: कॉज टाइटल स्पष्टत: सुझाता है कि वाद अधिनियम की धारा 11 के अधीन दाखिल किया गया है, अत:, संक्षिप्त मामले के रूप में इसका विचारण नहीं किया जा सकता है।

9. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर मौजूद अन्य सामग्रियों के परिशीलन पर यह पता चलता है कि अवर न्यायालय ने वर्तमान वादी द्वारा दाखिल आवेदन यह संप्रेक्षित करते हुए अस्वीकार कर दिया है कि वाद निजी आवश्यकता के आधार पर धारा 11 के अधीन और किराया के गैर भुगतान के आधार पर भी दाखिल किया गया था। वाद पत्र की प्रति जो याचिका के साथ संलग्न की गयी है, पर विचार करने की आवश्यकता है जो स्पष्टत: सुझाते हैं कि मुख्यत: निजी आवश्यकता के आधार पर वादी द्वारा प्रकथन किए गए हैं। वाद पत्र के अभिवचनों और अनुतोष अंश से यह भी प्रतीत होता है कि वादी/याची ने किराया के गैर भुगतान के आधार पर बेदखली के लिए प्रार्थना नहीं किया है बल्कि निजी आवश्यकता के आधार पर प्रतिवादी/प्रत्यर्थी की बेदखली के लिए प्रार्थना किया है। न्यायालय को अभिवचनों के सार को देखने की आवश्यकता है।

10. निश्चय ही, कॉज टाइटल में विनिर्दिष्ट प्रावधान का समुचित रूप से उल्लेख नहीं किया गया है। किंतु, वादपत्र को इसकी संपूर्णता में देखने की आवश्यकता है, जो स्पष्टत: उपदर्शित करती है कि वाद धारा 1 (1) (C) के अधीन दाखिल किया गया है।

11. मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट निर्णयों का परिशीलन किया है।

12. 1992 PLJR 214 के मामले में यह प्रतीत होता है कि उक्त निर्णय के पैराग्राफ 12 और 13 इस मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक हैं, अतः इन्हें नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*^^12. vfHkopu lfofèk ugh g vkj u gh bldk mí'; =fVi.k vfHkopu d fy, i{kk dk nfMr djuk gA bldk mí'; ,d&nlj d ekeyk d ckj e i{kk dk lfpr djuk g rkfd U;k;ky; dk ;g fofuf'pr dju d fy, l{ke cuk;k tk ld fd i{kk d chp oLrr% fook|d D;k g vkj i{kk d chp fookn dk ldfpr djuk gA ;g lfuf'pr g fd vfHkopu dk mnkjrkiod vFk yxkuk gkxk vkj U;k;ky; dk vfHkopu dk lkj vkj u fd :i n[kuk gkxkA dnkj yky lhy ,o vU; cuke gfjyky lhy] AIR 1952 SC 47, e lokPp U;k;ky; u fuEufyf[kr lçf{kr fd;k g% U;k;ky; vfHkopu dh ckjhdh ek= ij nkok vLohdkj dju e en gkxk tc phtk dk lkj ektn g vkj vU; i{k ij dkb çfrdy çHkko dkfjr ugh fd;k x;k g Hky gh fdru QgM vFkok Hkí <x l okn i= fy[kk x;k gkA fdlh Hkh fLFkfr e] U;k;ky; dk mlh lhek rd ,lk lekU; vFkok vU; vurk"k oknh dk nu dh NV g tlk ;g ekxk x;k Fkk ijUr ;g fd #i;k e tgk rd bldh {kfrifr dh tk ldrh g d ij vU; i{k ij çfrdy çHkko iMu dk volj ugh gkA**

13. pfd vfHkopu dk mí'; i{kk dk ,d&nlj d ekey d ckj e lfpr djuk g] i{k dk vfHkopu d ij tku dh vuefr lekU; r% ugh nh tkrh gA U;kf;d dfefV d ykM foLdkmV MuMhg u lkfnd ekgEen lkg cuke ekLekr lju] (1930 Privy Council 57) ekey e lçf{kr fd;k Fkk fd ,l vfHkopu ij lk{; dh fdlh ek=k dk n[kk ugh tk ldrk g ftl dHkh ugh fn;k x;k FkkA ukxckb vEey ,o vU; cuke ch0 'kek ,o vU;] (AIR 1956 SC 593), e lokPp U;k;ky; }kjk bl fu;e ij fopkj fd;k x;k Fkk vkj fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk%

^^bl fu;e dk okLrfod foLrkj ;g g fd fook|d] ftl ij i{kx.k u oLrr% fopkj.k dk lkeuk fd;k Fkk] ij fn;k x;k lk{; ,d vU; vkj fHkUu fook|d d fu.k; dk vkèkkj ugh cuk;k tkuk pkfg, tk i{kk d fnekx e ugh Fkk vkj ftl ij lk{; nu dk volj mud ikl ugh FkkA fdr og fu;e ,l ekey ij ç;kT; ugh g tgk i{kk u bl tkudkjh d lkFk fopkj.k dk lkeuk fd;k Fkk fd ç'u fo'k"k fook|d e g ;|fi dkb fofufn"V fook|d ml ij fojfpr ugh fd;k x;k g vkj ml lcfèkr lk{; ugh fn;k x;k gA

ekeyk d bl ox ij ç;kT; fu;e jkuh pn doj cuke ujir flg] 34 Ind. APP. 27(B), e vfèkdfFkr fd;k x;k gA ogk çfroknhx.k u fopkj.k d le; ij çfrokn fd;k fd oknh dk nÙkd e fn;k x;k Fkk vkj ifj.kkeLo#i og fojklr iku dk gdnkj ugh FkkA fyf[kr dFku e ,lk vfHkopu ugh fd;k x;k Fkk] u gh ml ij fook|d fojfpr fd;k x;k FkkA fçoh dkmfUly d le{k oknh dh vkj l çfrokn fd;k x;k Fkk fd vfHkopuk dh nf"V e nÙkd xg.k dk ç'u mBku dh NV çfroknhx.k dk ugh FkhA

bl vkifÙk dk uketj djr g, ykM ,Vfdlu }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd pfd nÙkd xg.k d ç'u ij nkuk i{kk u fopkj.k dk lkeuk fd;k Fkk vkj pfd oknh dk vk'p; pfdr ugh fd;k x;k Fkk] çfroknhx.k dk nÙkd xg.k d çfr

vfHkopu dh NV Fkh vkj oLrr% çfroknhx.k ml fook|d ij lQy g, FkA rnulkj] bl vkifÙk dk uketj djuk gkxkA**

iokDr ekeys e viuk;k x;k nf"Vdk.k lokPp U;k;ky; }kjk Hkxorh çlkn cuke pneyh] AIR 1966 SC 735, e fuEufyf[kr 'kCnk e nkgjk;k x;k g%

^^----- ;fn fofufn"Vr% vfHkopu ugh fd;k x;k g vkj fQj Hkh foo{kk }kjk fdlh fook|d l bl vkPNkfnr fd;k tkrk g vkj i{kx.k tkur Fk fd mDr vfHkopu fopkj.k e vrxLr Fkk] rc ;g rF; fd vfHkopu vfHk0;Dr :i l vfHkopuk e ugh fy;k x;k g] i{kk dk bl ij fo'okl dju l vko';dr% xj gdnkj ugh cuk,xk ;fn bl lk{; }kjk lrk"ktud :i l fl) fd;k tkrk gA fu%lng lekU; fu;e ;g g fd vurk"k i{kk }kjk fd, x, vfHkopuk ij vkèkkfjr gkuk pkfg,A fdr tgk nkuk i{kk d gd l lcfèkr lkjoku ekeyk dk fook|dk e mBk;k tkrk g] ;|fi vçR;{kr% vFkok vLi"V :i l vkj mud ckj e lk{; fn;k x;k g] rc ;g rd fd vfHkopuk e ekeyk fo'k"k vfHk0;Dr :i l ugh j[kk x;k Fkk] 'k) r% vkipkfjd vkj VfDudy gkrk vkj ;g çR;d ekey e lQy ugh gk ldrk gA ,lh vkifÙk ij fopkj djr g, U;k;ky; dk tk fopkj djuk gkxk] og ;g g fd D;k i{k tkur Fk fd ç'uxr ekeyk fopkj.k e vrxLr Fkk vkj D;k mUgku bld ckj e lk{; fn;k Fkk\ ;fn ;g çrhr gkrk g fd i{k ugh tkur Fk fd ekeyk fopkj.k e fookn e Fkk vkj mue l ,d d ikl bld lcèk e lk{; nu d volj ugh Fkk] og fu%lng fHkUu ekeyk gkxkA ekeyk] ftld lcèk e vU; i{k u lk{; ugh fn;k Fkk vkj mld ikl lk{; nu dk volj ugh Fkk] ij fo'okl dju d fy, ,d i{k dk vuefr nuk çfrdyrk dk fopkj ij% LFkkfir djxk vkj ,d i{k d lkFk U;k; djr g, U;k;y; nlj i{k d lkFk vU;k; ugh dj ldrk gA**

gky e] bl ç'u ij iu% jkeLo#i xlrk cuke fo'ku ukjk;.k bVj dkyt] AIR 1987 SC 1242, e lokPp U;k;ky; }kjk fo'okl fd;k x;k Fkk vkj ekuuh; U;k;kèkh'kk u fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k%

".....;g lfuf'pr g fd vfHkopu dh vuifLFkfr e] i{kk }kjk çLrr lk{; ;fn gk] ij fopkj ugh fd;k tk ldrk gA ;g Hkh leku :i l lfuf'pr g fd fdlh i{k dk viu vfHkopuk d ij tku dh vuefr ugh nh tk ldrh g vkj viu }kjk of.kr ekey d leFku e i{k }kjk leLr vko';d vkj rkfRod rF;k dk vfHkopu fd;k tkuk pkfg,A vfHkopu dk mí'; vkj ç;ktu foi{kh i{k dk ekeyk ftldk lkeuk bl djuk g l voxr gku d fy, l{ke cukuk gA

fu"i{k fopkj.k d fy, ;g vfuok; g fd i{k vko';d rkfRod rF;k dk dFku dj rkfd vU; i{k vk'p;pfdr u gkA fdr vfHkopu dk fofèkd vFkkUo;u djuk pkfg,] cky dh [kk fudkyu dh ckjhfd;k ij U;k; ijkftr dju d fy, ikfMR;i.k jkLrk ugh viuk;k tkuk pkfg,A dHkh&dHkh] vfHkopu ,l 'kCnk e vfHk0;Dr fd, tkr g tk vfHk0;Dr :i l fofèk dh dBkj 0;k[;k d vu:i ekeyk ugh cukr g] ,l ekey e ç'u fofuf'pr dju d fy, vfHkopuk d lkj dk vfHkfuf'pr djuk U;k;ky; dk dr0; gA ii= ij vufpr tkj nuk okNuh; ugh g] vfHkopuk d lkj ij fopkj fd;k tkuk pkfg,A tc dHkh Hkh vfHkopuk dh deh d ckj e ç'u mBk;k tkrk g] vfHkopuk d ii= d ckj e vfèkd tkp ugh gkuh pkfg,] cfYd U;k;ky; dk irk yxkuk gkxk fd D;k i{kx.k lkj e ekey vkj fook|dk l voxr Fk ftl ij mUgku fopkj.k dk lkeuk fd;kA tc ,d ckj ;g ik;k tkrk g fd vfHkopuk e deh d ckotn i{kx.k

ekey l voxr Fk vkj o lk{; ndj mu fook|dk ij fopkj.k e vxlj g,] ml fLFkfr e vihy e i{kk dk vfHkopuk dh vuifLFkfr dk ç'u mBku dh NV ugh gkxhA (tkj fn;k x;k)

*bl çdkj] iokDr fu.k; l fofèk dh fuEufyf[kr çfriknuk, lkeu vkrh gA lkekU;r% i{kk dk viu vfHkopuk d ij tku dh vuefr ugh nh tkuh pkfg,A fdr vfHkopuk dk mnkjrkiod vFk yxk;k tkuk pkfg, vkj U;k;ky; dk ikfMR;i.k #[k ugh viukuk pkfg,A ;fn vurk"k çnku dju d fy, vko';d rkfRod rF;k dk lkj vfHkopu e dfFkr fd;k x;k g] U;k;ky; dk =fVi.k :i e vFkok vfHkopu e =fV d vkèkkj ij bl [kkfjt ugh djuk pkfg,A Hky gh vfHkopu e vfHkokd ugh fd;k x;k g] rc Hkh i{k d nkok dk ijkftr ugh fd;k tk ldrk g ;fn i{kx.k mDr vfHkopu ij ,d nlj d ijLij ekeyk l voxr Fk vkj viu ekeyk d leFku e lk{; fn;k FkkA***

13. रामस्वरुप गुप्ता (मृत) एल॰ आर॰ द्वारा बनाम बिशुन नारायण इंटर कॉलेज, (1987)2 SCC 555, में निर्णय के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि उक्त निर्णय का पैरा 6 इस मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक है, अत: इसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*^^fdr vfHkopuk dk mnkj vFkkUo;u djuk pkfg,(cky dh [kky fudkyu dh ckjhfd;k ij U;k; ijkftr dju d fy, ikfMR;i.k jo;k viuk;k ugh tkuk pkfg,A dHkh&dHkh vfHkopuk dk ,l 'kCnk e vfHk0;Dr fd;k tkrk g tk vfHk0;Dr :i l fofèk dh dBkj 0;k[;k d vu:i ekeyk ugh cukr gA ,l ekey e] ç'u fofuf'pr dju d fy, vfHkopuk d lkj dk vfHkfuf'pr djuk U;k;ky; dk dr0; gA***

14. मैंने प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किए गए **रियाजुल हक बनाम मोस्मात मैमुन खातून एवं अन्य,** 1985 PLJR 490 में निर्णय का भी परिशीलन किया है जिसमें मकानमालिक ने इस आधार पर मामले का प्रतिवाद किया कि धारा 14 की उपधारा (1) के खंडों (c) और (e) द्वारा अनाच्छादित बेदखली के आधार का न्यायनिर्णयन सामान्य प्रक्रिया द्वारा शासित होगा। पटना उच्च न्यायालय की विद्वान एकल पीठ ने इस मामले में अभिनिर्धारित किया कि ''सद्भावपूर्ण निजी आवश्यकता के आधार और पट्टा जो विनिर्दिष्ट अवधि के लिए है के अवसान के बाद भी किराएदार के बने रहने का आधार बेदखली वाद में मिश्रित किया जा सकता है जैसा अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (1) में अंतर्विष्ट है। किंतु, ऐसे वाद पर अधिनियम की धारा 14 प्रयोज्य नहीं होगी और इसे सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा विहित साधारण प्रक्रिया के अनुरुप निपटाया जाना होगा।''

15. वर्तमान मामले के तथ्य प्रत्यर्थी द्वारा उद्धृत मामले से भिन्न है क्योंकि वर्तमान मामले में स्वयं मकानमालिक ने स्वीकार किया कि उसने केवल निजी आवश्यकता के आधार पर मामला दाखिल किया है जबकि प्रत्यर्थी द्वारा उद्धृत मामले में मकान मालिक का आधार यह था कि यदि न्याय निर्णयन धारा 14 की उपधारा (1) के खंडों (c) और (e) द्वारा आच्छादित नहीं था, तब वाद साधारण प्रक्रिया द्वारा शासित होगा। ऊपर दिए गए कारण से, **रियाजुल हक (ऊपर)** में अधिकथित सिद्धांत वर्तमान मामले पर लागू नहीं होगा।

16. वर्तमान मामले के पूर्वोक्त तथ्य और परिस्थिति की दृष्टि में और अधिक विशेषत: **रामस्वरुप गुप्ता (मृत) एल॰ आर॰ द्वारा बनाम बिशुन नारायण इंटर कॉलेज (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया निवेदन स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

17. इन तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में, हक बेदखली वाद सं॰ 1 वर्ष 2010 में विद्वान प्रथम उप–न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 20.12.2011 का आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–5) अपास्त किया जाता है।

18. किंतु, प्रतिवादी न्यायालय की अनुमति के लिए शपथ पत्र दाखिल करने के लिए स्वतंत्र होगा जैसा अधिनियम की धारा 14 द्वारा प्रावधानित किया गया है और न्यायालय संक्षिप्त तरीके से मामले पर विचार करेगा जैसा अधिनियम की धारा 14 में अनुबंधित किया गया है। इस बीच, अनुमति आवेदन अनुज्ञात किए जाने तक प्रतिवादी का लिखित कथन अभिलेख पर रखा जाएगा।

19. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ,p lhm feJk] U;k;efr

रियाजुर रहमान

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 591 of 2009. Decided on 3rd January, 2013.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धारा 138 सह–पठित भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 245—चेक का अनादर–छल–उन्मोचन याचिका की खारिजी–याची ने अच्छी तरह जानते हुए कि उसके द्वारा खाता पहले ही बंद कर दिया गया था, चेक जारी किया था–इस चरण पर, यह नहीं कहा जा सकता है कि याची का आरंभिक चरण पर कपट करने का आशय नहीं था–पहली नोटिस इस पृष्ठांकन के साथ वापस कर दी गयी थी कि याची उक्त पता पर नहीं रह रहा था और दूसरी नोटिस याची को उसके स्थायी पता पर जारी की गयी थी–यह नहीं कहा जा सकता है कि याची द्वारा दाखिल परिवाद याचिका समय वर्जित है–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट किया गया–पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया।

(पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–2007(1) East Cr. C. 112 (Pat)—Distinguished; (2012) 7 SCC 621—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr.Mahesh Tewari, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Pandey Niraj Rai, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता तथा परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची C-1 केस सं॰ 583 वर्ष 2006 में श्री वी॰ के॰ श्रीवास्तव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 20.5.2009 के आदेश से व्यथित है जिसे C-1 केस सं॰ 583 वर्ष 2006 के तौर पर दर्ज किया गया था, जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 245 के अधीन उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा यह पाते हुए खारिज कर दिया गया है कि अभियुक्त याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री है।

3. मामले के तथ्य संक्षिप्त हैं। परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष इस अभिकथन के साथ परिवाद याचिका दाखिल किया कि अभियुक्त ने दिनांक 15.2.2004 को परिवादी से

70,000/- रुपयों का मित्रवत कर्ज लिया था और इसके प्रमाण के रूप में प्रॉमिसरी नोट निष्पादित किया था। अभियुक्त द्वारा राशि लौटायी नहीं गयी थी और अंततः, लगभग दो वर्ष बाद अभियुक्त ने सिंहभूम क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, परडीह शाखा, जमशेदपुर का चेक सं॰ 685714 दिनांक 11.2.2006 परिवादी के पक्ष में 70,000/- रुपयों के लिए जारी किया था। परिवादी द्वारा उक्त चेक बैंक में दिया गया था और इसे चेक मेमो पर टिप्पणी ''खाता बंद'' के साथ भुगतान किए बिना परिवादी को लौटा दिया गया था। दिनांक 25.2.2006 को चेक रिटर्न मेमो परिवादी को सौंपा गया था। तत्पश्चात्, परिवादी ने दिनांक 3.3.2006 को ए॰ डी॰ के साथ रजिस्टर्ड डाक के माध्यम से अभियुक्त को कानूनी नोटिस दिया था और उक्त नोटिस डाक पियन के पृष्ठांकन ''ऐसा कोई व्यक्ति इस पता पर नहीं रहता है, अतः प्रेषक को लौटाया गया'' के साथ डिलीवरी के बिना लौटा दिया गया था। पुनः याची को उसके स्थायी पता पर नोटिस भेजा गया था जिसे भी लौटा दिया गया था। परिवादी का मामला यह है कि अभियुक्त को व्यक्तिगत रूप से भी सूचित किया गया था किंतु उसने धन वापस करने से इनकार कर दिया और परिवादी को पता चला कि अभियुक्त ने पहले ही स्वयं दिनांक 29.8.2005 को बैंक खाता बंद कर दिया था और यह अच्छी तरह जानते हुए दिनांक 11.2.2006 को परिवादी को चेक जारी किया गया था और तद्नुसार परिवादी ने दावा किया कि याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 और 420 के अधीन और एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी अपराध बनता है। दिनांक 5.5.2006 को परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी।

4. यह प्रतीत होता है कि जाँच करने पर याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाने के बाद परिवादी द्वारा आरोप के पहले चार गवाहों का परीक्षण किया गया था। तत्पश्चात् याची ने उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 245 के अधीन अपना आवेदन दाखिल किया जिसे अवर न्यायालय द्वारा यह पाते हुए खारिज कर दिया गया था कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन और एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के अधीन याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश बिल्कुल अवैध है क्योंकि स्वीकृत रूप से दिनांक 3.3.2006 को परिवादी द्वारा याची को नोटिस दी गयी थी और तत्पश्चात् दिनांक 5.5.2006 को परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद याचिका, जहाँ तक यह एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के अधीन अपराध से संबंधित है, स्पष्टतः समयवर्जित है, अतः याची को उक्त अपराध के लिए उन्मोचित कर दिया जाना चाहिए था। जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 का संबंध है, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि जब एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध नहीं बनाता है, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध की गुंजाइश नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने **लक्ष्मीकांत बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, 2007 (1) East Cr. C. 112 (Pat)** में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय में विश्वास किया जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"(c) nM lfgrk] 1860, èkkjk 420–ijØkE; fy[kr vfèkfu;e d vèkhu ekeyk vkjHk fd;k x;k&Lo; e li.k lfgrk&HkkO n0 l0 dh èkkjk 420 d çkoèkku dh xtkb'k ugh&doy xjbekunkj vk'k; vkj Ny d çek.k d fo#) HkkO n0 l0 dh èkkjk 420 vkÑ"V gkrh g&, lk dkb lk{; çLrr ugh fd;k x;k&èkkjk 420 ç;kT; ugh gA (ijk 5)" mDr fu.k; d ijkxkQ 5 dk iBu fuEufyf[kr gS

"5. vkx ;g fuonu fd;k x;k g fd fdlh Hkh fLFkfr e vuknj fd, x, fy[kr dk eY; 15000/- #i;k gku d ukr ckn e ifjoknh dk igy gh bldk

*Hkxrku dj fn;k x;k gkxkA fo}ku vfèkoDrk fuonu djr g fd ijØkE; fy[kr l'kkèku ,o çdh.k micèk vfèkfu;e] 2002 d l'kkèku vfèkfu;e dh èkkjk 147 d QyLo#i vc vijkèk dk 'keuh; cuk fn;k x;k gA vr e mUgku fuonu fd;k fd ,uO vkbO ,DV dh èkkjk 138 d vèkhu vkjHk fd; x; vfHk;ktu e nM lfgrk dh èkkjk 420 d çkoèkku dh ç;kT;rk dk dkb lkj ugh gkxkA ifjokn vkjHk e Ny dju d fdlh xjbekunkj vk'k; dk vfHkdfFkr ugh djxk tc pd fn;k x;k FkkA ;g fuonu fd;k x;k g fd ekey d rF;k vkj ifjfLFkfr;k e ;kph u oLrr% vuknj fd, x, fy[kr d li.k eY; dk n fn;k gkxk vkj blfy, nM lfgrk dh èkkjk 420 dh ç;kT;rk ugh gkxhA mUgku bl ç;ktu l uehpn l:ipn lkgk cuke ell VhO ,pO jk;Hkkxh Qe] 2002 DCR 18, e idkf'kr fu.k; ij fo'okl fd;kA***

6. उक्त निर्णय के पैराग्राफ 5 के सादे पठन से यह प्रकट है कि संपूर्ण पैराग्राफ केवल विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है। इस पैराग्राफ में कोई भी विधि अधिकथित नहीं की गयी है। इस पैराग्राफ में न तो निर्णयाधार है और न ही इतरोक्ति है। फिर भी लॉ जरनल ने केवल विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों से प्लेसिटम बनाया है। जितना कम कहा जाए उतना ही बेहतर।

7. न्यायालय का निष्कर्ष निर्णय के पैराग्राफ 8 में दर्ज किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"8. ;g U;k;ky; ;g Hkh nt djxk fd vfHkdFkuk dh çÑfr vkj ;kph }kjk fd, x, i'pkrorh Hkxrku dh nf"V e nM lfgrk dh èkkjk 420 d vèkhu vfHkdFku vç;kT; vkj vydkj dh çÑfr d gA***

इस प्रकार, यह प्रकट है कि उक्त मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में पटना उच्च न्यायालय ने पाया कि उक्त मामले में याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध नहीं बनता है क्योंकि याची द्वारा पहले ही भुगतान कर दिया गया था। हमें परीक्षण करना होगा कि क्या वर्तमान मामले के तथ्यों में याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध बनता है।

8. दूसरी ओर, परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथनों के आधार पर और अभिलेख पर लायी गयी सामग्रियों के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन और एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के अधीन भी दोनों अपराधों के लिए याची के विरुद्ध अपराध बनता है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 का संबंध है, याची ने अच्छी तरह जानते हुए कि उसके द्वारा पहले ही खाता बंद कर दिया गया था, चेक जारी किया था जिस तथ्य को अवर न्यायालय में परिवादी द्वारा परीक्षित गवाहों के बयान द्वारा भी स्थापित किया गया है। इस चरण पर, नहीं कहा जा सकता है कि आरंभिक चरण पर याची का कपट करने का आशय नहीं था, क्योंकि परिवादी का मामला यह है कि धन प्राप्त करने के बाद भी याची परिवादी को धन का भुगतान नहीं कर रहा था, बल्कि काफी समझाने के बाद लगभग दो वर्ष बाद चेक जारी किया गया था और वह भी याची द्वारा खाता बंद कर दिए जाने के बाद। विद्वान अधिवक्ता ने **संगीताबेन महेन्द्रभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2012)7 SCC 621,** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दिए गए मामले में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन और एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के

अधीन भी अपराध पोषणीय हो सकता है क्योंकि यद्यपि दोनों मामलों में तथ्यों का अतिव्यापन है किंतु दोनों अपराधों के अवयव बिल्कुल भिन्न हैं।

9. वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के अधीन दाखिल परिवाद याचिका परिसीमा द्वारा वर्जित बिल्कुल नहीं है, क्योंकि याची को पहली नोटिस दिनांक 3.3.2006 को जारी की गयी थी और जब बिना तामील हुए इसे लौटा दिया गया था, दिनांक 23.3.2006 को याची को उसके स्थायी पता पर एक अन्य नोटिस जारी की गयी थी जिसे सिद्ध किया गया था और अवर न्यायालय में प्रदर्श के रूप में चिन्हित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि याची इसी पता पर रह रहा है जो इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि याची ने यही पता देते हुए वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण को दाखिल किया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि तत्पश्चात परिवाद याचिका बिल्कुल समय के भीतर है और तद्नुसार, यह नहीं कहा जा सकता है कि यह समय वर्जित था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

10. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि वर्तमान मामले में यह तथ्य बना रहता है कि इस तथ्य कि उसने पहले ही अपना खाता बंद कर दिया था, के बावजूद याची द्वारा चेक जारी किया गया था। मामले के तथ्य याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए **लक्ष्मीकांत मामले (ऊपर)** के तथ्यों से बिल्कुल भिन्न है क्योंकि उक्त मामले में अभियुक्त द्वारा पहले ही भुगतान कर दिया गया था। इस मामले के तथ्य ये हैं कि यद्यपि याची द्वारा वर्ष 2004 में कर्ज लिया गया था, इसे समझाने-बुझाने पर भी लौटाया नहीं गया था और अंतत:, यह अच्छी तरह जानते हुए कि स्वयं वर्ष 2005 में खाता बंद कर दिया गया था, वर्ष 2006 में चेक जारी किया गया था। इस प्रकार, इस चरण पर यह नहीं कहा जा सकता है कि याची का आरंभ से ही कपट करने का आशय नहीं था। इसी प्रकार से, मैंने यह भी पाया कि पहली नोटिस इस पृष्ठांकन के साथ लौटा दी गयी थी कि याची उक्त पता पर नहीं रह रहा है और तत्पश्चात दूसरी नोटिस याची को उसके स्थायी पता पर जारी की गयी थी जो वही पता है जिसका स्वयं याची द्वारा इस पुनरीक्षण आवेदन में उल्लेख किया गया है और तद्नुसार, इस चरण पर यह नहीं कहा जा सकता है कि याची द्वारा दाखिल परिवाद याचिका समय वर्जित है।

11. तद्नुसार, मैं अवर न्यायालय द्वारा यह पाते हुए कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन और एन॰ आई॰ एक्ट की धारा 138 के अधीन भी आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री है, पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है। एल॰ सी॰ आर॰ तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

ब्रज गोपाल घोष

cuke

सेन्ट्रल कोल फिल्डस लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 5388 of 2006. Decided on 8th February, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

श्रम एवं औद्योगिक विधि–स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति–मानसिक रोग–प्राधिकारियों ने त्यागपत्र स्वीकार नहीं करने के याची की पत्नी के अनुरोध को अनदेखा किया–याची त्यागपत्र देने के पहले मानसिक रोग से पीड़ित था जिस तथ्य को चिकित्सीय नुस्खा द्वारा समर्थित किया गया है–सरकारी सेवक, जिसने सेवा से निवृत्त होने की इच्छा अभिव्यक्त किया है और अध्यपेक्षित अनुमति देने के लिए अपने उच्चतर अधिकारी के समक्ष आवेदन दिया है, को बाद में अपना विचार बदलने और इस प्रकार प्राप्त की गयी अनुमति के रद्दकरण के लिए कहने की छूट है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 14 एवं 15)

निर्णयज विधि.–AIR 1978 SC 694; (1987) Suppl SCC 228; (1989) Suppl 2 SCC 175; (2001) 1 SCC 158; (2002) 3 SCC 437—Referred; (1968) 3 SCR 857; AIR 1954 SC 584; AIR 1978 SC 694; (1987) Supp SCC 228; (2002) 3 SCC 437—Relied; (1981) 3 SC 317; (2006) 1 SCC 407; (2004) 9 SCC 204—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s. P.K. Sinha, Pandey Niraj Rai, For the Petitioners; Mr. Ananda Sen, For the Respondents.

आदेश

याची इस न्यायालय के पास आया है क्योंकि अपने त्यागपत्र को वापस लेने के लिए उसके अनुरोध को प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है।

2. याची को दिनांक 13.11.1993 को नियुक्त किया गया था और उसे प्रशिक्षु कोटि-I के रूप में पदस्थापित किया गया था। याची का मामला यह है कि वह अवसाद, अधीरता, मानसिक समस्या, आदि से पीड़ित था और इसलिए, वह डॉ॰ अशोक कुमार नाग से इलाज करवा रहा था। दिनांक 17.7.2003 को डॉ॰ अशोक कुमार नाग द्वारा याची का परीक्षण किया गया था और डायग्नोज किया गया था कि वह अति अवसाद मनोरोग से पीड़ित था। जब याची ऐसे मानसिक रोग से पीड़ित था, उसने दिनांक 16.7.2003 को पत्र लिखकर अपना त्यागपत्र दिया। दिनांक 14.10.2003 को प्राधिकारियों द्वारा याची का उक्त अनुरोध स्वीकार किया गया था।

3. इस बीच, याची की पत्नी ने निदेशक (कार्मिक), सेंट्रल कोलफील्डस लि॰ को यह सूचित करते हुए दिनांक 11.8.2003 को पत्र लिखा कि उसका पति मानसिक रोग से पीड़ित है, अतः उसके त्यागपत्र को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ऐसा पत्र पोस्टिंग प्रमाण पत्र के अधीन भेजा गया था और डाक रसीद भी रिट याचिका के साथ दाखिल की गयी है। पुनः दिनांक 3.10.2003 को याची की पत्नी ने निदेशक (कार्मिक) से समरुप अनुरोध किया और प्राधिकारी को पुनः सूचित किया कि काँके मानसिक अस्पताल, राँची में उसके पति का इलाज हो रहा था। तत्पश्चात, याची की पत्नी ने और याची ने भी दिनांक 15.1.2004, 28.1.2004 और 15.3.2004 का अभ्यावेदन किया।

4. दिनांक 15.4.2004 के पत्र द्वारा याची के त्यागपत्र पर पुनर्विचार के संबंध में मामला सक्षम प्राधिकारी के समक्ष रखा गया था और उक्त आवेदन को सारहीन होने के कारण अस्वीकार किया गया था। याची ने पुनः दिनांक 2.1.2006 को अभ्यावेदन दिया जिसका कंपनी स्तर पर परीक्षण किया गया था और दिनांक 15.4.2004 की अस्वीकृति की दृष्टि में याची के अभ्यावेदन को पुनः अस्वीकार किया गया था और दिनांक 26.6.2006 के पत्र द्वारा याची को संसूचित किया गया था।

5. प्रत्यर्थीगण के उन निर्णयों को चुनौती देते हुए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है। एक प्रति शपथपत्र भी दाखिल किया गया है जिसमें यह स्वीकार किया गया है कि याची दिनांक 25.6.2003

से दिनांक 4.7.2003 तक बीमार था और तत्पश्चात उसने दिनांक 5.7.2007 को कर्तव्य ग्रहण किया था। उसका दिनांक 16.7.2003 का त्यागपत्र स्वैच्छिक था और इसे दिनांक 16.10.2003 के प्रभाव से स्वीकार किया गया है और इसलिए, अपने त्यागपत्र को वापस लेने के लिए उसका त्यागपत्र पश्चातवर्ती प्राधिकारी द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि संविदा अधिनियम की धारा 12 की दृष्टि में याची द्वारा लिखा गया दिनांक 16.7.2003 का त्यागपत्र वैध संसूचना नहीं है और, इसलिए, यह पक्षों के बीच बाध्यकारी संविदा की ओर नहीं ले जा सकता है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि प्राधिकारियों द्वारा इसको स्वीकार किए जाने के पहले कर्मचारी त्यागपत्र वापस लेने का हकदार है। वह **AIR 1978 SC 694; (1987) Suppl. SCC 228; (1989)Suppl 2. SCC 175; (2001)1 SCC 158** और **(2002)3 SCC 437** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास करते हैं। वह आगे प्रतिवाद करते हैं कि चूँकि याची की बीमारी प्रत्यर्थीगण की जानकारी में थी, उसका त्यागपत्र स्वीकार करने के पहले याची का चिकित्सीय परीक्षण करवाना प्रत्यर्थीगण का कर्तव्य था।

7. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता प्रतिवाद करते हैं कि चूँकि पक्षों के बीच तथ्य का गंभीर विवाद है, वर्तमान रिट याचिका ग्रहण नहीं की जा सकती है। याची के अधिवक्ता को तर्क का स्मरण करते हुए वह निवेदन करते हैं कि दिनांक 16.7.2003 के त्यागपत्र में याची के मानसिक रोग के बारे में कोई चर्चा नहीं है और इसलिए, यदि वह त्यागपत्र देने के समय पर स्वस्थ मानसिक दशा में था, याची को अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है। याची के निवेदन का विरोध करते हुए प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि संविदा अधिनियम की धारा 12 भी परिकल्पित करती है कि कोई व्यक्ति उस अवधि जब वह मानसिक अस्थिरता से पीड़ित होता है के बीच स्वस्थ चित्त का हो सकता है। प्रति शपथपत्र में दिए गए बयान पर विश्वास करते हुए वह निवेदन करते हैं कि याची दिनांक 25.6.2003 और दिनांक 4.7.2003 के बीच इलाज में था और उसने दिनांक 5.7.2003 को पदग्रहण किया था और याची के दावा को सिद्ध करने के लिए ऐसा कुछ भी नहीं है कि दिनांक 16.7.2003 को जब उसने अपना त्यागपत्र दिया, वह मानसिक रोग से पीड़ित था।

8. मैं पाता हूँ कि जहाँ तक त्यागपत्र देने के पहले याची की बीमारी का संबंध है, इस तथ्य को प्रत्यर्थीगण द्वारा स्वीकार किया गया है। याची का त्यागपत्र दिनांक 16.10.2003 के प्रभाव से स्वीकार किया गया था, किंतु उसके पहले याची की पत्नी ने दिनांक 11.8.2003 और दिनांक 3.10.2003 का पत्र लिखा और निदेशक (कार्मिक) सेंट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड से याची का त्यागपत्र स्वीकार नहीं करने का अनुरोध किया। उन पत्रों को पोस्टिंग सर्टिफिकेट के अधीन लिखा गया था और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने स्वीकार किया है कि डाक रसीद पर दिया गया पता जो डाक मुहर धारण करता है, भी सही है। मामले के ऐसे दृष्टिकोण में उन पत्रों को प्रत्यर्थीगण पर तामील किया गया समझा जाता है।

9. जयराम बनाम भारत संघ, AIR 1954 SC 584, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है.–

> *^^;g Lohdkj fd;k tk ldrk g fd lod ft lu lok l fuoÙk gku dh bPNk vfHk0;Dr fd;k g vkj vè; if{kr vuefr nu d fy, viu mPprj vfèkdkjh dk vkonu fn;k g] ckn e viuk fopkj cnyu vkj bl çdkj çkIr dh x;h vuefr d jídj.k d fy, dgu dh NV g] fdr] ml rc rd , lk dju dh vuefr nh tk ldrh g tc rd og lok e cuk jgrk g vkj u fd mldh lok lekIr dj fn, tku d cknA***

10. राजकुमार बनाम भारत संघ, (1968)3 SCR 857; (AIR 1969 SC 180) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त प्रतिपादित नियम निम्नलिखित शब्दों में दोहराया है;–

*^^tc ykd lod u viuR;kxi= }kjk viu fu;ktu d fofu'p;dj.k dk vkef=r fd;k g] mldh lok lkekU;r% ml frfFk l lekIr gk tkrh g ftl frfFk ij mldk R;kx i= lefpr çkfèkdkjh }kjk Lohdkj fd;k tkrk g vkj mldh lok dk 'kkfIr dju oky fdlh fofèk vFkok fu;e dh vuifLFkfr e] lefpr çkfèkdkjh }kjk mldk R;kxi= Lohdkj dj fy, tku d ckn ykd lod dk bl okil yu dh NV ugh gA LohÑfr ij 'kkfIr fu;ek d vu:i lefpr çkfèkdkjh }kjk R;kxi= Lohdkj fd, tku rd lcfèkr ykd lod dk locus poenitentiae g fdr rRi'pkr ughA***

;g Hkh lçf{kr fd;k x;k Fkk fd lod (tk vkb0 ,l0 dk lnL; Fkk) d R;kxi= d lkn fucèkuk ij mldk R;kxi= çHkkodkjh cu tkrk g T;kgh bl lefpr çkfèkdkjh }kjk Lohdkj fd;k tkrk gA

11. भारत संघ, आदि बनाम गोपाल चंद्र मिश्रा एवं अन्य, AIR 1978 SC 694, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की पंच-न्यायाधीश पीठ द्वारा निश्चयात्मक रूप से निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*^^;g nkgjkuk ek= gkxk fd lkekU; fl)kr ;g g fd fofèkd] lfonkRed vFkok loèkkfud otuk dh vuifLFkfr e ^^Hkfo";y{kh** R;kx i= bld çHkko'khy gku d igy fdlh le; ij okil fy;k tk ldrk g vkj ;g çHkko'khy rc curk g tc ;g R;kxi= nkrk d fu;ktu vFkok inkofèk dk lekIr dju d fy, çofrr gkrk gA ;g lkekU; fu;e leku :i l ljdkjh lodk vkj loèkkfud ÑR;dkfj;k ij ç;kT; gA ljdkjh lod vFkok ÑR;dkjh d ekey e] tk viuh lok@vFkok in d 'krk d vèkhu R;kxi= nu d Lo; viu ,di{kh; ÑR; }kjk viuh lok@vFkok in ugh NkM ldrk g] lkekU;r% R;kxi= çHkko'khy cu tkrk g vkj mldh lok@vFkok inkofèk lekIr gk tkrh g tc l{ke çkfèkdkjh }kjk bl Lohdkj fd;k tkrk gA mPp U;k;ky; d U;k;kèkh'k d ekey e] tk loèkkfud ÑR;dkjh g vkj ftldk vuPNn 217(1) d ijUrd (a) d vèkhu viu in l R;kxi= nu dk ,di{kh; vfèkdkj vFkok fo'k"kkfèkdkj g] mldk R;kxi= ml frfFk ij çHkko'khy cu tkrk g vkj mldh inkofèk lekIr gk tkrh g ftl frfFk l mlu LoPNkulkj viu in dk NkMuk pukA ;fn og jk"Vifr dk lckfèkr mld gLry[ku d fucèkukulkj rjUr R;kxi= nrk g] mldh inkofèk rjUr lekIr gk tkrh g vkj rRi'pkr bl okil ugh fy;k tk ldrk g vFkok çfrlgr ugh fd;k tk ldrk gA fdr] ;fn og ,l y[ku }kjk Hkkoh frfFk l R;kxi= nuk purk g] in l R;kxi= nu dk ÑR; ijk ugh gkrk g D;kfd ;g ,lh frfFk d igy mldh inkofèk lekIr ugh djrk g vkj U;k;kèkh'k bl Hkfo";y{kh frfFk ftl ij ;g çHkko'khy gku d fy, vk'kf;r g] d vku d igy bl okil y ldrk g D;kfd lfoèkku ,l okil fy, tku dk oftr ugh djrk gA***

12. स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति से संबंधित मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसी नियम को लागू किया है। **[(1987)Supp SCC 228; (2002)3 SCC 437]**

13. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रतिवाद करने के लिए कि दिनांक 11.8.2003 और दिनांक 3.10.2003 के पत्रों को प्रत्यर्थीगण के कार्यालय में तामील किया गया नहीं समझा जा सकता

है, **(1881)3 SCC 317; (2006)1 SCC 407; (2004)9 SCC 204** में प्रकाशित सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर विश्वास किया है।

14. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णयों का परिशीलन करने के बाद, मैं पाता हूँ कि वर्तमान मामले के तथ्यों में वे निर्णय प्रयोज्य नहीं है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने स्वीकार किया है कि डाक रसीद पर लिखा पता सही है। वे डाक रसीदें तिथियों के अंकन के साथ डाक मुहर धारण करती हैं। अत:, वे पत्र, जिन्हें सम्यक रूप से स्टांपित किया गया है और सही रूप से पता लिखा गया है, प्रत्यर्थीगण पर तामील किए गए समझे जाते हैं। याची का दिनांक 16.7.2003 का त्यागपत्र दिनांक 16.10.2003 के प्रभाव से स्वीकार किया गया है किंतु उसके पहले दिनांक 16.7.2003 का त्याग पत्र वापस लेते हुए दिनांक 11.8.2003 और दिनांक 3.10.2003 के पत्रों को लिखा गया है। यह भी स्वीकृत तथ्य है कि अपना त्यागपत्र देने के पहले याची मानसिक रोग से पीड़ित था और अभिलेख पर दिनांक 17.7.2003 का चिकित्सा नुस्खा है जो उपदर्शित करता है कि याची गंभीर मानसिक अवसाद से पीड़ित था। मेरा भी मत है कि याची की पत्नी द्वारा लिखे गए दिनांक 11.8.2003 और दिनांक 3.10.2003 के पत्र याची के दृष्टिकोण को संपुष्ट करते हैं कि वह मानसिक रोग से पीड़ित था। यदि ऐसा नहीं होता, त्यागपत्र वापस लेने का पत्र स्वयं याची द्वारा लिखा गया होता।

15. पूर्वोक्त तथ्यों और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित विधि की दृष्टि में आक्षेपित आदेशों को अपास्त किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

16. किंतु, व्यय को लेकर आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

जयतुन पूर्ति एवं अन्य (6142 में)

कुंदन कुमार एवं अन्य (6402 में)

अरुण कुमार साहू एवं अन्य (6404 में)

संतोष कुमार पासवान एवं अन्य (6447 में)

जेमिमा लकरा एवं अन्य (6482 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (सभी में)

W.P. (C) Nos. 6142, 6402, 6404, 6447, 6482 of 2012. Decided on 3rd January, 2013.

नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009—धारा 23—शिक्षक के रूप में नियुक्ति–टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र जारी करने के लिए निर्देश इप्सित करने वाली याचिका चयन के मानकों और प्रक्रिया को परिवर्तित करने की छूट एकेडेमिक काउन्सिल को नहीं है–यदि राज्य सरकार अथवा एकेडेमिक काउन्सिल नयी टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा संचालित करना चाहते हैं, उन्हें समस्त पात्र उम्मीदवारों से नए आवेदनों को मांगते हुए नया विज्ञापन जारी करना चाहिए था–परीक्षा को केवल उन तक जिन्होंने आरंभिक विज्ञापन के अनुसरण में आवेदन किया था, सीमित रखना निष्पक्ष व्यवहार नहीं है–परमादेश रिट उनके पक्ष में जारी किया जा सकता है जिनके पास प्रवर्तित किया जाने वाला विधिक अधिकार है–समस्त पात्र उम्मीदवारों से आवेदन

आमंत्रित नहीं करके एकेडेमिक काउन्सिल द्वारा अपनायी गयी प्रक्रिया लोक नियोजन के मूल सिद्धांतों के विरुद्ध है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.–(1977) SCC 145; (2012) CR 291—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s V. P. Singh, Binod Singh, For the Petitioners; M/s B. N. Tiwary, Nehala Sharmin, For the State; Mr. Rajesh Kumar, For the J.A.C..

आदेश

याचीगण ने दिनांक 20.7.2011 को ली गयी परीक्षा के अनुसरण में याचीगण के पक्ष में टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाणपत्र जारी करने के लिए प्रत्यर्थीगण को आदेश देने वाला परमादेश रिट इप्सित करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लिया है।

2. चूँकि समस्त रिट याचिकाएँ तथ्य और विधि के सदृश प्रश्नों को अंतर्ग्रस्त करती हैं, समस्त रिट याचिकाओं को एक साथ सुना जा रहा है। डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 6142 वर्ष 2012 (जयतुन पूर्ति एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य) को लीडिंग केस के रूप में सुना जा रहा है।

3. वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य अन्य बातों के साथ साथ ये हैं कि झारखंड एकेडेमिक काउन्सिल ने विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 के तहत, रिट याचिका का परिशिष्ट–1, जिलावार रिक्तियों के विरुद्ध सहायक शिक्षक के पद के लिए आवेदन आमंत्रित किया। विज्ञापन के मुताबिक प्रत्येक उम्मीदवार को भाषा, समाज विज्ञान और सामान्य ज्ञान के तीन विषयों से गठित आरंभिक परीक्षा में उपस्थित होना था और आगे अनुबंधित किया गया था कि मुख्य परीक्षा के लिए पात्र होने के लिए सामान्य उम्मीदवारों को न्यूनतम 50% अंक जबकि आरक्षित कोटि उम्मीदवारों के 35% अंक सुरक्षित करना था।

4. वस्तुत: नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 की धारा 23 के मुताबिक ऐसी न्यूनतम अर्हता, जैसा केंद्र सरकार द्वारा प्राधिकृत एकेडेमिक प्राधिकारी द्वारा अधिकथित किया गया है, रखने वाला व्यक्ति शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने का पात्र होगा। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् ने दिनांक 23 अगस्त, 2010 की अधिसूचना के तहत, रिट याचिका का परिशिष्ट–8, वर्ग I से V के लिए सहायक शिक्षक की अर्हता को विहित किया है:–

"1. U;wure vgZrk,¡&

(I) oxZ I ls V

(a) de ls de 50% vadksa ds lkFk mPprj ek/;fed (vFkok fdlh Hkh uke ls Kkr) nks o"khZ; fMIyksek ds lkFk mPprj ek/;fed (vFkok bldk led{k;)

vFkok

,u0 lh0 Vh0 bZ0 (ekU;rk] ekud ,oa çfØ;k) fofu;eu] 2002 ds vuq#i (fdlh Hkh uke ls Kkr) çkjfHkd f'k{kk esa 2 o"khZ; fMIyksek vkSj de ls de 45% vadksa ds lkFk lhfu;j lsdsaMjh (vFkok bldk lerqY;)

vFkok

de ls de 50% vadksa vkSj pkj o"khZ; cpyj vkWQ ,fyesaVjh ,Mds'ku (ch0 by0 ,M0) ds lkFk lhfu;j lsdsaMjh (vFkok bldk lerqY;)

vFkok

de l de 50% vd vkj f'k{kk (fo'k"k f'k{kk) e nk o"k d fMIykek d lkFk lhfu;j ldMjh (vFkok bld ler Y;)

*(b) bl ç;ktu l ,u0 lh0 Vh0 b0 }kjk fojfpr ekxn'kd fl)krk d vu#i lefpr ljdkj }kjk lpkfyr fd, tku oky f'k{kd ik=rk ijh{kk (Vh0 b0 Vh0) e mÙkh.kA***

5. विहित अर्हता के मुताबिक वर्ग I से V के लिए सहायक शिक्षक के पद के लिए आवेदन देने वाले उम्मीदवार के पास प्रारंभिक शिक्षा में दो वर्ष का डिप्लोमा अथवा चार वर्ष का स्नातक प्रारंभिक शिक्षा के साथ सीनियर सेकेंडरी अथवा इसके समतुल्य डिग्री होनी ही चाहिए और उसे इस प्रयोजन से एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ द्वारा विरचित मार्गदर्शक सिद्धांत के अनुरुप समुचित सरकार द्वारा संचालित की जाने वाली शिक्षक पात्रता परीक्षा (इसके बाद 'टी॰ ई॰ टी॰' के रूप में निर्दिष्ट) में उत्तीर्ण होना ही चाहिए।

6. निर्विवादत:, सहायक शिक्षक के पद के लिए आवेदन आमंत्रित करने वाला विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 सहायक शिक्षक के पद के लिए एन॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र को आवश्यक अर्हता के रूप में प्रावधानित नहीं करता है। गलती का पता चलने पर झारखंड एकेडेमिक काउन्सिल ने एक अन्य विज्ञापन सं॰ 46 वर्ष 2011 जारी किया था और प्रावधानित किया था कि मूल विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 के अनुसरण में आरंभिक परीक्षा को टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा समझा जाएगा और यह पाँच विषयों अर्थात् सामान्य ज्ञान/पर्यावरण अध्ययन, गणित, स्थानीय भाषा, यथास्थिति हिंदी या उर्दू और बाल विकास एवं शिक्षा शास्त्र से गठित होगा। समस्त याचीगण आरंभिक परीक्षा में उपस्थित हुए हैं और उत्तीर्णांक प्राप्त किया है, याचीगण की शिकायत यह है कि **अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू बनाम झारखंड राज्य, (2012)JCR 291,** में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 22.11.2011 के निर्णय के तहत विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 के अनुसरण में चयन/नियुक्ति की संपूर्ण प्रक्रिया को अभिखंडित किए जाने के बावजूद याचीगण टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र, प्राप्त करने के हकदार हैं क्योंकि वे सब आरंभिक परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं जिसे टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा के रूप में समझा जाना था।

7. जैसा यहाँ ऊपर संप्रेक्षित किया गया है आरंभ में विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 के मुताबिक टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र को आवश्यक अर्हता में से एक के रूप में विहित नहीं किया गया था और आरंभिक परीक्षा केवल तीन विषयों से गठित थी। गलती का पता चलने पर कि टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र सहायक शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए आवश्यक अर्हताओं में से एक है, इस प्रावधान के साथ कि इसे टी॰ ई॰ टी॰ के रूप में परीक्षा समझा जाएगा, पाँच विषयों से गठित आरंभिक परीक्षा के लिए द्वितीय विज्ञापन सं॰ 46 वर्ष 2011 जारी किया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय की सूक्ति की दृष्टि में, जैसा **अंजुमन तरक्की-ए॰-उर्दू (ऊपर)** के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा विश्वास किया गया है, एकेडेमिक काउन्सिल को चयन के मानकों तथा प्रक्रिया को परिवर्तित करने की छूट नहीं थी। केवल यही नहीं, यदि राज्य सरकार अथवा एकेडेमिक काउन्सिल नयी टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा संचालित करना चाहते थे, उन्हें समस्त पात्र उम्मीदवारों से नया आवेदन आमंत्रित करते हुए नया विज्ञापन जारी करना चाहिए था और केवल उन तक, जिन्होंने आरंभिक विज्ञापन सं॰ 27 वर्ष 2011 के अनुसरण में आवेदन दिया है, परीक्षा को सीमित रखने को उचित व्यवहार नहीं कहा जा सकता है और यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघन में है। इसके अतिरिक्त, चूँकि **अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू (ऊपर)** मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा संपूर्ण प्रक्रिया पहले ही अभिखंडित कर दी गयी है, याचीगण को आरंभिक परीक्षा के अनुसरण में टी॰ ई॰ टी॰ प्रमाण पत्र प्राप्त करने का कोई अधिकार प्रोद्भूत होता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

8. बिहार इस्टर्न गैंजेटिक फिशरमेन कोऑपरेटिव सोसाइटी लि॰ बनाम सिपाही सिंह एवं अन्य, (1977)SCC 145, मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*^^[A] ijekn'k fjV doy ,l ekey e çnku fd;k tk ldrk g tgk lcfèkr vfèkdkjh ij lkfofèkd dr0; vfèkjkfir fd;k x;k g vkj lkfofèkd ckè;rk dk fuogu dju e ml vfèkdkjh dh vkj l foQyrk gvk gA fjV dk e[; dk; lfofèk }kjk fofgr ykd dr0;k dk ikyu vfuok;; cukuk g vkj ykd dk;k dk ç;kx dju oky vèkhuLFk vfèkdj.kk vkj vfèkdkfj;k dk mudh vfèkdkfjrk dh lhek d vrxr j[kuk gA vr%] ;g vulfjr gkrk g fd çkfèkdkfj;k dk dN dju d fy, etcj dju d fy, ijekn'k tkjh dju gr ;g n'kkuk gkxk fd lfofèk g tk fofèkd dr0; vfèkjkfir djrh g vkj lfofèk d vèkhu bldk ikyu çofrr dju d fy, 0;fFkr i{k dk fofèkd vfèkdkj gA***

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय की सूक्ति की दृष्टि में, परमादेश रिट उनके पक्ष में जारी किया जा सकता है जिनके पास प्रवर्तित किए जाने के लिए विधिक अधिकार है। चूँकि समस्त पात्र उम्मीदवारों से आवेदन आमंत्रित नहीं करके एकेडेमिक काउन्सिल द्वारा अपनायी गयी प्रक्रिया लोक नियोजन के मूल सिद्धांतों के विरुद्ध है, ऐकेडेमिक काउन्सिल द्वारा अपनायी गयी अवैध प्रक्रिया, जिसे भी इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था, के अनुसरण में याचीगण के पक्ष में कोई अधिकार प्रोद्भूत नहीं होता है, अत: याचीगण किसी परमादेश के हकदार नहीं हैं।

10. परिणामस्वरुप, यह रिट याचिका विफल होती है और एतद् द्वारा खारिज की जाती है। किंतु, यह उम्मीद की जाती है कि राज्य सरकार टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा संचालित करेगी और याचीगण भावी टी॰ ई॰ टी॰ परीक्षा के लिए नए सिरे से आवेदन दे सकते हैं।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सुरेश कुमार साव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1426 of 2007. Decided on 29th November, 2012.

जन वितरण प्रणाली–पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस का रद्दकरण–कर्तव्य की उपेक्षा तथा कालाबाजारी में साँठ-गाँठ के आरोप–न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और याची को पर्याप्त अवसर दिए बिना और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किए बिना यांत्रिक तरीके से आक्षेपित आदेश पारित किया गया–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–रिट आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Birendra Kumar, For the Petitioner; JC to GP-IV, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण ने ज्ञापन सं॰ 276 दिनांक 13.3.2006 (परिशिष्ट–1) में अंतर्विष्ट आदेश जिसके द्वारा उसकी जन वितरण प्रणाली दुकान (संक्षेप में पी॰ डी॰ एस॰) के लाइसेंस को निलंबित किया गया था और मेमो सं॰ 13.6.2006 (परिशिष्ट–4) जिसके द्वारा जाँच अधिकारी, झरिया अधिसूचित क्षेत्र द्वारा दाखिल जाँच रिपोर्ट के आधार पर उचित मूल्य दुकान सं॰ 44/JRA/1985 के लाइसेंस को रद्द किया गया था, का अभिखंडन इप्सित किया है।

3. याची के अनुसार, उसे खाद्य तेल, वस्त्र, चीनी, अनाज, किरासन तेल और वनस्पति तेल का खुदरा विक्रय करने के लिए बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एवं एकीकरण) आदेश, 1984 के अधीन वार्ड सं॰ 12, पश्चिमी कोरीबंध, झरिया, अवस्थित जन वितरण प्रणाली दुकान का लाइसेंस दिया गया था। याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 4, विपणन अधिकारी, झरिया, धनबाद ने 32 कार्डधारकों के परिवाद पर कि याची की अभिकथित पी॰ डी॰ एस॰ दुकान विगत दो वर्षों से बंद पड़ी है, राशन दुकान का निरीक्षण किया और जाँच के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 3, अपर कलक्टर (आपूर्ति), धनबाद के समक्ष दिनांक 30.6.2006 को अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया था। तत्पश्चात् दिनांक 13.3.2003 के आदेश के तहत अपर कलक्टर (आपूर्ति) धनबाद के आदेश द्वारा पी॰ डी॰ एस॰ दुकान का लाइसेंस निलंबित किया गया था और याची को 15 दिन के भीतर अपना कारण बताओ दाखिल करने के लिए कहा गया था। याची की ओर से निवेदन किया गया है कि याची ने अपने कारण बताओ (परिशिष्ट–2) के तहत अपना सद्भाव दर्शाया और कथन किया कि उसने लाइसेंस के किसी निबंधन और शर्त का उल्लंघन नहीं किया था और उसने वर्ष 2004-05 के लिए स्टॉक और सेल रजिस्टरों और कैश मेमो आदि को भी जमा किया था जैसा प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा आवश्यक बनाया गया था। किंतु, प्रत्यर्थीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा जारी दिनांक 13.6.2006 के आक्षेपित आदेश द्वारा स्वयं पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस को रद्द करना चुना है। याची का प्रतिवाद यह है कि याची को जाँच रिपोर्ट की प्रति दिए बिना प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा रद्दकरण का आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश विवेक का इस्तेमाल किए बिना अकारण और यांत्रिक आदेश है। वह आगे निवेदन करते हैं कि यदि अभिकथन को सत्य माना भी जाता है, यह केवल किरासन और गेहूँ से संबंधित है किंतु अभिकथित अभिकथन पर दुकान का संपूर्ण पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस रद्द कर दिया गया है।

4. प्रत्यर्थी राज्य उपस्थित हुआ है और अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 4 विपणन अधिकारी की रिपोर्ट पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि कतिपय कार्ड धारकों द्वारा याची की दुकान के विरुद्ध परिवाद किया गया था कि सेल रजिस्टर/कैश मेमो पर कूटरचित एल॰ टी॰ आई॰ और हस्ताक्षर करके याची/लाइसेंसी ने दर्शाया है कि उसने कार्डधारकों के बीच आवश्यक वस्तुओं का वितरण किया है। प्रत्यर्थी आगे कथन करता है कि झरिया अधिसूचित क्षेत्र के विपणन अधिकारी की रिपोर्ट के बाद अपर जिला मजिस्ट्रेट (आपूर्ति) ने भी उक्त दुकान के संबंध में विस्तृत जाँच किया था। ऐसा करने के बाद याची को कारण बताने के लिए कहा गया था कि क्यों नहीं उसका लाइसेंस रद्द किया जाए और इस बीच तुरन्त के प्रभाव से लाइसेंस के निलंबन के अधीन किया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि याची का कारण बताओ का उत्तर पाने के बाद आक्षेपित आदेश पारित किया गया है जो विधि की दृष्टि में वैध और समुचित है। इसके लिए, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए कारण बताने के लिए याची को अवसर दिया गया है।

5. याची ने प्रत्युत्तर शपथपत्र दाखिल किया है जिसमें उसने प्रतिशपथ पत्र में जाँच रिपोर्ट की प्रति संलग्न करके ऐसे आरोपों, जिन पर प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास किया गया है, से इनकार किया है। याची के अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि स्वयं उक्त विपणन अधिकारी को बाद में स्थानीय विधायक के परिवाद पर दिनांक 22.6.2007 के परिशिष्ट–7 द्वारा कर्तव्य की उपेक्षा और कालाबाजारी में साँठ–गाँठ के गंभीर आरोप के लिए निलंबन के अधीन किया गया था। याची के अधिवक्ता ने दोहराया कि जाँच रिपोर्ट जिसे प्रतिशपथपत्र के रूप में अभिलेख पर लाया गया है को उस पर तामील नहीं किया गया था और रिट याचिका के पैरा 17 पर उस प्रभाव के स्पष्ट कथन से प्रत्यर्थी ने इनकार नहीं किया है।

6. मैंने विस्तारपूर्वक पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। पक्षों के निवेदन और अभिलेख पर लाए गए सामग्रियों से प्रतीत होता है कि दिनांक 13.3.2006 के आदेश के तहत उसको यह कारण बताने के लिए कहते हुए कि क्यों नहीं इसे रद्द कर दिया जाना चाहिए याची के नाम में पी॰ डी॰ एस॰ दुकान को निलंबन के अधीन किया गया था। किंतु, आक्षेपित कारण बताओ यह प्रकट नहीं करता है कि याची को इसका उत्तर देने के लिए सक्षम बनाने के लिए उक्त कारण बताओ नोटिस में विपणन अधिकारी की रिपोर्ट के प्रति निर्देश है अथवा इसे संलग्न किया गया है। आगे यह प्रतीत होता है कि अपर कलक्टर (आपूर्ति), धनबाद ने कारण बताओ जारी करने के पहले एक अन्य जाँच संचालित किया जिसे भी अभिकथनों का सामना करने के लिए याची को सक्षम बनाने के लिए याची को नहीं दिया गया है यद्यपि अभिकथन गंभीर प्रकृति के हैं जो कालाबाजारी के कृत्यों और स्टॉक एवं सेल रजिस्टर तथा कैशमेमो, आदि में कूटरचना का अभिकथन करते हैं। इस प्रकार, याची को जाँच रिपोर्ट, जिसने अभिकथन अंतर्विष्ट किया और आक्षेपित कारण बताओ और रद्दकरण के आदेश का आधार निर्मित किया, की अनुपस्थिति में स्वयं का बचाव करने से याची को अपवर्जित किया गया था। स्वयं रद्दकरण आदेश किसी कारण को अंतर्विष्ट नहीं करता है क्योंकि यह विपणन अधिकारी के दिनांक 13.3.2006 के जाँच रिपोर्ट और दिनांक 13.6.2006 के पश्चातवर्ती रिपोर्ट जिन्हें याची पर तामील नहीं किया गया था, पर विश्वास करता है। आक्षेपित रद्दकरण आदेश पारित करने में प्रत्यर्थी द्वारा विश्वास की गयी जाँच रिपोर्ट की प्रति उसे प्रदान नहीं करके आक्षेपित आदेश विवेक का इस्तेमाल किए बिना और याची को पर्याप्त अवसर दिए बिना और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुसरण किए बिना यांत्रिक रूप से पारित किया गया प्रतीत होता है।

7. यहाँ ऊपर वर्णित पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में यह प्रतीत होता है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया दुर्बलता से पीड़ित है क्योंकि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है और आदेश यांत्रिक तरीके से पारित आदेश अकारण आदेश है, जिसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है।

8. किंतु, प्रत्यर्थीगण उसके विरुद्ध अभिकथन अंतर्विष्ट करने वाले प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास किए गए रिपोर्ट के साथ याची को अवसर देने के बाद नया आदेश पारित करने के लिए स्वतंत्र हैं।

9. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1004 of 2005. Decided on 8th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 420, 467, 368—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं कूटरचना–संज्ञान–जब किसी संपत्ति, यद्यपि यह उसकी संपत्ति नहीं है, का दावा करते हुए किसी व्यक्ति द्वारा दस्तावेज निष्पादित किया जाता है किंतु जब वह यह दावा नहीं कर रहा है कि उसे किसी अन्य द्वारा प्राधिकृत किया गया है, ऐसे दस्तावेज के निष्पादन को झूठा दस्तावेज नहीं कहा जा सकता है–भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 467

और 468 के अधीन अपराध करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है–कोई अभिकथन नहीं है कि याचीगण सहित अभियुक्तगण में से किसी ने झूठा अथवा भ्रामक व्यपदेशन करके उसको प्रवंचित करने का प्रयास किया–छल का अपराध नहीं बनता है–संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–(2009) 8 SCC 751—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajeeva Sharma, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

पक्ष सुने गए।

2. यह आवेदन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 249 वर्ष 2004 में पारित दिनांक 1.3.2005 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राजमहल ने निर्मल केडिया (अभियुक्त सं॰ 9) और पियूष केडिया (अभियुक्त सं॰ 8) सहित याचीगण और अन्य के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467 और 368 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया।

3. परिवादी के मामले के अनुसार, जैसा परिवाद यचिका से प्रतीत होता है कि परिवादी द्वारा अपने नाम में अथवा अपने भाई के नाम में किसी बैजनाथ केडिया से भूमि का कतिपय टुकड़ा खरीदा/अर्जित किया गया था किंतु इसी भूमि को बैजनाथ केडिया के पुत्र निर्मल केडिया (अभियुक्त सं॰ 9) और बैजनाथ केडिया के पौत्र पियूष केडिया (अभियुक्त सं॰ 10) द्वारा इन याचीगण को बेचा गया था यद्यपि बैजनाथ केडिया द्वारा बेचे जाने के बाद भूमि उनकी कभी नहीं थी।

4. ऐसे अभिकथन पर परिवाद पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 249 वर्ष 2004 संस्थापित किया गया था जिसमें निर्मल केडिया (अभियुक्त सं॰ 9) और पियूष केडिया (अभियुक्त सं॰ 8) सहित याचीगण और अन्य के विरुद्ध भरतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467 और 368 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया था। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव शर्मा निवेदन करते हैं कि परिवाद में किए गए संपूर्ण अभिकथन को सत्य स्वीकार करते हुए भी भारतीय दंड संहिता की धारा 420 अथवा धाराएँ 467 और 368 के अधीन कोई भी अपराध याचीगण के विरुद्ध नहीं बनता है और जहाँ तक अभियुक्तगण अर्थात् निर्मल केडिया और पियूष केडिया का संबंध है, इस न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने वाले आदेश को इस कारण अभिखंडित पहले ही कर दिया गया है कि परिवादी का मामला सिविल विवाद का मामला है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि निर्मल केडिया और पियूष केडिया ने स्वयं भूमि का स्वामी होने का दावा करते हुए इन याचीगण को भूमि बेचा था जो परिवादी के अनुसर उनकी थी। ऐसी स्थिति में, **मोहम्मद इब्राहिम एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (2009)8 SCC 751** = 2009 (4) JLJR (SC) 75, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय की दृष्टि में कूटरचना का अपराध नहीं बनता है जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने धारा 470 में अंतर्विष्ट प्रावधान और कूटरचना से संबंधित अन्य प्रावधान को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

^^èkkjk vk 467 vkj 471 d vèkhu vijkèk dh ijkHkk0; 'kr dVjpuk gA dVjpuk dh ijkHkk0; 'kr >Bk nLrkot (vFkok >Bk byDVkfud fjdkM vFkok

*mldk Hkkx) cukuk gA ;g ekeyk fdlh >B byDVkfud fjdkM l lcfèkr ugh gA vr%] ç'u ;g g fd D;k lifÙk (;fn ;g mièkkfjr Hkh fd;k tkrk g fd ;g mldh ugh Fkh) dk cpu dk rkRi;] j[kr g, nk foØ; foy[kk dk fu"ikfnr vkj jftLVj dju e çFke vfHk;Dr dk vU; vfHk;Drx.k d lkFk njfHklfèk e >B nLrkotk dk cukrk vkj fu"ikfnr djrk dgk tk ldrk gA***

7. न्यायालय ने आगे संप्रेक्षित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 464 का विश्लेषण दर्शाता है कि यह झूठे दस्तावेजों को निम्नलिखित तीन कोटियों में विभक्त करता है:–

^^igyh dkfV og g tgk 0;fDr ;g fo'okl dkfjr fd, tku d vk'k; d lkFk fd , lk nLrkot fdlh vU; 0;fDr }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr d çkfèkdkj }kjk ftld }kjk vFkok ftld çkfèkdkj }kjk og tkurk g fd bl cuk;k vFkok fu"ikfnr ugh fd;k x;k Fkk] xj bekunkj :i l vFkok diViod nLrkot curk ;k fu"ikfnr djrk gA

nljh dkfV og g tgk 0;fDr xjbekunkj :i l vFkok diViod fofèki.k çkfèkdkj d fcuk jídj.k }kjk vFkok vU;Fkk }kjk nLrkot d fdlh rkfRod Hkkx e Lo; }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr }kjk cuk, tku vFkok fu"ikfnr fd, tku d ckn ifjofrr djrk gA

rhljh dkfV og g tgk 0;fDr ;g tkur g, fd , lk 0;fDr (a) food dh vfLFkjrk] (b) u'kk] vFkok (c) ml ij dh x;h çopuk d dkj.k nLrkot dh fo"k;oLr vFkok ifjoru dh çÑfr dk ugh tku ldrk Fkk] xj bekunkj :i l vFkok diViod fdlh 0;fDr dk nLrkot ij gLrk{kj dju] fu"ikfnr dju vFkok ifjofrr dju d fy, etcj djrk gA

l{ki e] 0;fDr dk ^>Bk c;ku nrk gvk dgk tkrk g ;fn (i) mlu dkb vkj gku vFkok fdlh vU; }kjk çkfèkÑr fd, tku dk nkok djr g, nLrkot cuk;k vFkok fu"ikfnr fd;k gk vFkok (ii) mlu nLrkot dk ifjofrr fd;k vFkok bld lkFk NMNkM fd;k gk(vFkok (iii) mlu çopuk djd vFkok 0;fDr tk viuh bfn;k d fu;=.k e ugh g l nLrkot çkIr fd;kA*

*çFke vihykFkh }kjk fu"ikfnr foØ; foy[k Li"Vr% ^^>B c;ku** dh nljh vkj rhljh dkfV e ugh vkr gA vr%] ;g n[kk tkuk 'k"k g fd D;k ifjoknh dk nkok fd çFke vfHk;Dr tk fdlh :i e Hkkfe l lcfèkr ugh Fkk] }kjk foØ; foy[kk dk fu"iknu ifjoknh dh Hkkfe dk dCtk yu d vk'k; d lkFk nLrkotk dh dVjpuk d rY; Fkk (vkj fd vfHk;Drx.k l0 2 l 5u [kjhnnkj] xokg] LØkbc vkj LVki foØrk d :i e mDr foØ; foy[kk d fu"iknu vkj jftLV'ku e çFke vfHk;Dr d lkFk njfHklfèk fd;k) tk ekey dk igyh dkfV d vèkhu yk,xkA*

*;g nkok djr g, fd gLrkrfjr lifÙk mldh lifÙk g] foØ; foy[k fu"ikfnr dju oky 0;fDr vkj Loleh dk çfr#i.k djd vFkok Loleh dh vkj l foy[k fu"ikfnr dju d fy, Loleh }kjk çkfèkÑr vFkok l'kDr fd, tku dk >Bk nkok djd foØ; foy[k fu"ikfnr dju oky 0;fDr d chp ey vrj gA tc 0;fDr bld viu gku d :i e of.kr djr g, lifÙk gLrkrfjr djr g, nLrkot fu"ifnr djrk g] nk lHkkouk, g% igyk fd og lnHkkoi.k :i l fo'okl djrk g fd lifÙk oLrr% mldh gA nljh fd og xjbekunkj :i l vFkok diViod bldk viuk gku dk nkok dj ldrk g ;fi og tkurk g fd ;g mldh lifÙk ugh gA fdr ^^>B nLrkot** dh igyh dkfV d vèkhu vku d fy, ;g i;kIr ugh g fd nLrkot xj bekunkj :i l vFkok diViod fu"ikfnr fd;k x;k gkA*

vkx vko';drk g fd bl ;g fo'okl dkfjr fd, tku d vk'k; d lkFk cuk;k tkuk pkfg, Fkk fd ,l k nLrkot fdlh vU; 0;fDr }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr d çkfèkdkj }kjk ftld }kjk vFkok ftld çkfèkdkj }kjk og tkurk g fd bl cuk;k vFkok fu"ikfnr ugh fd;k x;k Fkk] cuk;k vFkok fu"ikfnr fd;k x;k gA

*tc lifÙk tkmldh ugh g dk nkok djr g, 0;fDr }kjk nLrkot fu"ikfnr fd;k tkrk g] og ;g nkok ugh dj jgk g fd og dkb vkj g vkj u gh og ;g nkok dj jgk g fd ml fdlh vU; }kjk çkfèkÑr fd;k x;k gA vr% lifÙk ftldk og Lokeh ugh g dk gLrkrfjr dju dk rkRi;Z j[kr g, ,l nLrkot dk fu"iknu >B nLrkot dk fu"iknu ugh g tl k lfgrk dh èkkjk 464 d vèkhu ifjHkkf"kr fd;k x;k gA ;fn tk fu"ikfnr fd;k x;k g] >Bk nLrkot ugh g] dkb dVjpuk ugh gA ;fn dVjpuk ugh g] u rk lfgrk dh èkkjk 467 vFkok u gh èkkjk 471 vkÑ"V gkrh gA***

8. इस प्रकार, यह स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि जब संपत्ति, यद्यपि यह उसकी संपत्ति नहीं है, का दावा करते हुए व्यक्ति द्वारा दस्तावेज निष्पादित किया जाता है किंतु जब वह दावा नहीं कर रहा है कि उसे किसी अन्य द्वारा प्राधिकृत किया गया है, ऐसे दस्तावेज का निष्पादन भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 464 के निबंधनानुसार झूठा दस्तावेज नहीं कहा जा सकता है और यदि यह झूठा दस्तावेज नहीं है, तब भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 467 और 468 के अधीन अपराध करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

9. जहाँ तक छल के अपराध का संबंध है, परिवादी का मामला यह नहीं है कि याचीगण सहित किसी अभियुक्तगण ने झूठा अथवा भ्रामक व्यपदेशन करके उसको प्रवंचित करने का प्रयास किया और न ही उसका मामला यह है कि उसे किसी संपत्ति को देने अथवा किसी व्यक्ति द्वारा इसे अपने पास रखने की सहमति देने के लिए अथवा किसी चीज को जो वह नहीं करेगा अथवा करेगा यदि उसे इस प्रकार प्रवंचित नहीं किया गया होता, करने अथवा नहीं करने के लिए आशयपूर्वक उत्प्रेरित किया गया था। अत: भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420 अथवा 467 और 468 के अधीन भी अपराध नहीं बनता है।

10. तद्नुसार, भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 120B, 420, 467, 368 के अधीन दण्डनीय अपराधों का संज्ञान लेने वाले दिनांक 1.3.2005 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 249 वर्ष 2004 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

11. परिणामत:, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

रविन्द्र प्रसाद उर्फ रविन्द्र साव

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 149 of 2008. Decided on 10th January, 2013.

विविध केस सं॰ 32 वर्ष 1999/टी॰ आर॰ सं॰ 1336 वर्ष 2007 में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 17.12.2007 के आदेश के विरुद्ध।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–पत्नी को 800/- रुपया प्रतिमाह भरण-पोषण भुगतान करने का निर्देश–तात्विक विरोधाभास हैं और विवाह के बिंदु पर गवाहों

के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है–विरोधी पक्षकार पत्नी अवर न्यायालय में पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने में विफल रही है–यह निष्कर्ष दर्ज करते हुए कि पक्षों के बीच वैध विवाह था और याची को भरण-पोषण का भुगतान करने का निर्देश देते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को संपोषित नहीं किया जा सकता है–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 7 से 11)

अधिवक्तागण.–M/s. A.K. Kashyap, Lina Shakti, For the Petitioner; Mr. V.S. Sahay, For the State; Mr. S.P. Sinha, For the Opp. Party No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और विरोधी पक्षकार जिसने स्वयं का याची की विधिवत ब्याहता पत्नी होने का दावा करते हुए अवर न्यायालय में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किया था, के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची विविध केस सं॰ 32 वर्ष 1999/टी॰ आर॰ सं॰ 1336 वर्ष 2007 में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 17.12.2007 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा याची को विवाह से उत्पन्न पुत्र विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का पति अभिनिर्धारित किया गया है और उसे भरण-पोषण के लिए विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को 800/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

3. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल आवेदन के आधार पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसमें उसने याची की विधिवत व्याहता पत्नी होने का दावा किया था। याचिका में कथन किया गया है कि लगभग बीस वर्ष पहले हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार उसका विवाह याची के साथ हुआ था और विवाह से उसे पुत्र की प्राप्ति हुई थी जो लगभग 15 वर्ष का है। याचिका में अभिकथित किया गया है कि उसे क्रूरता और यातना के अध्यधीन किया जाता था और अंतत: उसे दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था। बाद में, याची ने एक अन्य महिला से विवाह किया और वह उसके साथ रह रहा है। उसने आगे दावा किया कि अपना भरण-पोषण करने के लिए उसके पास साधन नहीं है जबकि उसके पति के पास पर्याप्त साधन हैं और तद्नुसार, याची से भरण-पोषण का दावा करते हुए अवर न्यायालय में आवेदन दाखिल किया गया था।

4. याची अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ और अपना कारण बताओ दाखिल किया, जिसमें पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया गया है। याची का मामला है कि उसने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ कभी विवाह नहीं किया था और उसका उसके साथ सरोकार नहीं है। अपने कारण बताओ में याची ने कथन किया है कि स्वयं वर्ष 1964 में उसका विवाह वास्तविक रूप से किसी गौरी देवी के साथ हुआ था जिससे याची को 10 वर्ष से 35 वर्ष तक के बीच की आयु वाले तीन पुत्र और दो पुत्रियाँ है। स्वयं याची की आयु 70 वर्ष है और वह सेवानिवृत्त जीवन व्यतीत कर रहा है। अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद उसने एक अन्य महिला अर्थात् पार्वती गुप्ता से विवाह किया जिससे भी उसको एक पुत्र और एक पुत्री है। याची का विनिर्दिष्ट मामला है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का विवाह एक अन्य पुरुष अर्थात् रामचंद्र साव के पुत्र रामेश्वर साव के साथ हुआ था और तद्नुसार, पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया गया था।

5. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 मीना देवी जो अवर न्यायालय में याची थी की ओर से स्वयं सहित पाँच गवाहों का परीक्षण किया गया था जबकि याची की ओर से चार गवाहों का परीक्षण किया गया था। मीना देवी की ओर से परीक्षित गवाहों ने पक्षों के बीच विवाह

और विवाह से पुत्र के जन्म के बारे में कथन किया है जबकि याची की ओर से परीक्षित गवाहों ने पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया है और यह अभिसाक्ष्य भी दिया है कि मीना देवी का विवाह एक अन्य पुरुष के साथ हुआ था।

6. अवर न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों के आधार पर निर्णय के बिंदुओं का निरुपण किया जिनमें से एक यह था कि क्या पक्षों के बीच विधिवत विवाह हुआ था। इस विवाद्यक का परीक्षण करने के लिए अवर न्यायालय ने मुख्यत: मीना देवी की ओर से परीक्षित गवाहों के साक्ष्य को विचार में लिया है जिन्होंने यह कथन करते हुए कि 20-22 वर्ष पहले पक्षों के बीच विवाह हुआ था, मीना देवी के मामले का समर्थन किया है।

7. इस संदर्भ में, मैंने अभिलेख का परिशीलन किया है। अभिलेख के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन भरण–पोषण के लिए मीना देवी द्वारा दाखिल आवेदन में याची के किसी पूर्व विवाह का कोई उल्लेख नहीं है बल्कि यह अभिकथित करते हुए कि लगभग बीस वर्ष पहले पक्षों के बीच विवाह हुआ था और विवाह से एक पुत्र जन्म हुआ था और बाद में उसे दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था और याची ने एक अन्य महिला से विवाह किया था, आवेदन दाखिल किया गया है मानो वह याची की पहली पत्नी थी। मीना देवी द्वारा अवर न्यायालय में दिए गए साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि स्वयं उसका ए॰ डब्ल्यू॰ 1 के रूप में परीक्षण किया गया था और अपने प्रति परीक्षण में उसने याची के प्रथम विवाह के बारे में स्वीकार किया है और कथन किया है कि उसकी पहली पत्नी गौरी देवी जिससे याची को पाँच संतानें थी, की मृत्यु के बाद याची के साथ उसका विवाह हुआ था। उसे विवाह की तिथि तथा वर्ष याद नहीं है, पर उसने कहा है कि विवाह 20-25 वर्ष पहले हुआ था तथा विवाह के समय उसकी माँ जीवित थी तथा पिता की मृत्यु हो चुकी थी। उसने यह कथन भी किया है कि उसकी माता और उसके भाई त्रिवेणी साव द्वारा उसका विवाह किया गया था। इस मामले में इस त्रिवेणी साव का परीक्षण नहीं किया गया है। उसके साक्ष्य से यह भी प्रतीत होता है कि उसने अपने प्रति–परीक्षण में कथन किया है कि लगभग बीस वर्ष पहले उसके पिता की मृत्यु हो गयी थी और लगभग आठ वर्ष पहले उसकी माता की भी मृत्यु हो गयी थी। यह स्पष्टत: गवाहों के बयानों को झुठलाता है जिन्होंने दावा किया कि लगभग 20-25 वर्ष पहले याची के साथ उसका विवाह हुआ था और उस समय पर उसके पिता की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी। इस गवाह ने अपने प्रति–परीक्षण में यह भी स्वीकार किया है कि उसे याद नहीं था कि विवाह संपन्न कराने वाला पुजारी कौन था। इस बिंदु पर, एक अन्य गवाह ए॰ डब्ल्यू॰ 2 कुलदीप भूइयाँ का परीक्षण अवर न्यायालय में मीना देवी की ओर से किया गया है जिसने कथन किया है कि विवाह संपन्न कराने वाले पुजारी का नाम ब्रज किशोर पंडित था। पुन:, मीना देवी की ओर से ए॰ डब्ल्यू॰ 3 का परीक्षण किया गया है जो राधा कृष्ण मिश्रा है और उसने पक्षों के बीच विवाह कराने वाला पुजारी होने का दावा किया है और मीना देवी का पारिवारिक पुजारी होने का दावा किया है। पुन: मीना देवी के चाचा ए॰ डब्ल्यू॰ 5 हजारी साव ने अपने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि विवाह संपन्न कराने वाले पुजारी की मृत्यु पहले ही हो गयी थी।

8. विवाह के बिंदु पर साक्ष्य में पूर्वोक्त विरोधाभास मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में तात्विक विरोधाभास हैं और इस बिंदु पर गवाहों के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। मेरा सुविचारित मत है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 मीना देवी अवर न्यायालय में पक्षों के बीच विवााह सिद्ध करने में बुरी तरह विफल हुई है।

9. मामले का एक अन्य पहलू भी है। याची का दावा है कि याची का विवाह गौरी देवी के साथ हुआ था जिससे उसकी पाँच संतानें हैं और गौरी देवी की मृत्यु के बाद उसने एक अन्य महिला से विवाह

किया था जिससे उसको दो संताने हैं। याची ने स्वयं को ओ॰ पी॰ 4 के रूप में परीक्षण किया है जिसमें उसने कथन किया है कि उसकी पहली पत्नी की मृत्यु वर्ष 1985 में हुई थी और उसने वर्ष 1986 में एक अन्य महिला से विवाह किया। इस बिंदु पर इस गवाह का परीक्षण बिल्कुल नहीं किया गया है। मामले के उस दृष्टिकोण में यदि याची की पहली पत्नी वर्ष 1978-79 के आसपास जीवित थी, जो पक्षों के बीच विवाह की अवधि है जैसा मीना देवी ने दावा किया है, याची और मीना देवी के बीच विवाह का प्रश्न नहीं था।

10. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, मैं पाता हूँ कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 मीना देवी पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने में बुरी तरह विफल हुई है और तद्नुसार, यह निष्कर्ष दर्ज करते हुए कि पक्षों के बीच विवाह हुआ था और उसके भरण-पोषण के लिए विरोधी पक्षकार सं॰ 2 मीना देवी को 800/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने के लिए याची को निर्देश देते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

11. इस प्रकार, विविध केस सं॰ 32 वर्ष 1999/टी॰ आर॰ सं॰ 1336 वर्ष 2007 में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 17.12.2007 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ i lkn] U;k;efr

तारा प्रसन्ना दत्ता

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M. P. No. 1180 of 2008. Decided on 14th January, 2013.

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955—धारा 7 सह-पठित एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 के खंड 7 का उपखंड (c)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—अवैध एल॰ पी॰ जी॰ सिलेंडर रखना-संज्ञान-वितरक अथवा उपभोक्ता हुए बिना भरा हुआ या खाली सिलेंडर, गैस सिलेंडर वाल्व और प्रेशर रेगुलेटर रखने वाले व्यक्ति को आदेश 2000 के खंड 7 (c) में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 17 के अधीन अभियोजित किया जा सकता है-तलाशी और जब्ती को प्रभावकारी बनाने के लिए केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार द्वारा विपणन अधिकारी को प्राधिकृत कभी नहीं किया गया था-तलाशी और जब्ती, जिसे विधि के अधीन प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा प्रभावकारी बनाया गया है, के आधार पर आरंभ किया गया अभियोजन दूषित हो जाता है-संज्ञान आदेश अभिखंडित किया गया-आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 8 से 11)

अधिवक्तागण.-Mr. A. K. Sahani, For the Petitioner; Mr. P. P. Roy, For the O.P. No. 2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन जी॰ आर॰ सं॰ 1740 वर्ष 2008 में तत्कालीन सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 13.6.2008 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और

जिसके अधीन एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 के खंड 7 के उपखंड (c) में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है।

3. अभियोजन का मामला यह है कि जब अपर जिला मजिस्ट्रेट (विधि व्यवस्था), राँची के आदेश पर विपणन अधिकारी (राशनिंग) द्वारा इस याची के होटल परिसर में तलाशी की गयी थी, तीन सिलेंडर पाए गए थे। वहाँ पाया गया एक सिलेंडर खाली था, दूसरे पर रेगुलेटर लगा हुआ था और तीसरा भरा हुआ था। होटल प्रबंधक ने स्पष्ट किया कि उपभोक्ता होने के नाते उन्हें दो सिलेंडर रखने का अधिकार है। किंतु एक सिलेंडर के संबंध में समय के उस बिंदु पर स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था और तद्द्वारा विपणन अधिकारी (राशनिंग) राँची द्वारा मामला दर्ज किया गया था जिसे आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन और एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 की धारा 3 (1-C) के अधीन कोतवाली पी॰ एस॰ केस सं॰ 312 वर्ष 2008 के रूप में दर्ज किया गया था।

4. अन्वेषण पूरा करने के बाद, आरोप–पत्र दाखिल किया गया था जिस पर दिनांक 13.6.2008 के आदेश के तहत आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संज्ञान लेने वाले आदेश को संपोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि अप्राधिकृत रूप से एक सिलेंडर रखने के लिए एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 की धारा 7 (c) में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन संज्ञान लिया गया है किंतु अधिकारी, जो तलाशी और जब्ती को प्रभावकारी बनाने के लिए केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत नहीं था, द्वारा किए गए तलाशी एवं जब्ती के आधार पर मामला दर्ज किया गया था।

6. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 उपस्थित हुआ है किंतु कोई प्रति शपथ पत्र दाखिल नहीं किया गया है।

7. निवेदन के संदर्भ में, एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 के खंड 7 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित हैं:–

*"7. **rjyhÑr iVkfy;e xl midj.kk dk dCtk@vkifr vFkok foØ;-**&(1) dkb 0;fDr*

(a) ljdkjh ry diuh vFkok lekukrj foØrk l fHkUu fdlh 0;fDr dk Hkjk ;k [kkyh flyMj] xl flyMj okYo vkj ç'kj jxyVj dh vkifr vFkok foØ; ugh djxkA

(b) tc rd ml miHkkDrk l fHkUu fdlh 0;fDr dk Hkjk ;k [kkyh flyMj] xl flyMj okYc vkj ç'kj jxyVj dh vkifr vFkok foØ; d fy, ljdkjh ry diuh vFkok lekukrj foØrk }kjk çkfèkÑr ugh fd;k tkrk gA

(c) [kkyh ;k Hkjk flyMj] xl flyMj okYo vkj ç'kj jxyVj ugh j[kxk tc rd og forjd vFkok miHkkDrk ugh gA

*(2) flyMj] xl flyMj okYo vkj ç'kj jxyVj dk çR;d fuekrk mu flyMjk] flyMj okYok vkj ç'kj jxyVjk dk dpy dj fou"V djxk tk bfM;u LVMM Lif'kfQd'ku d lkFk lxr ugh gA**

8. इस प्रकार, प्रावधान के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यदि कोई व्यक्ति वितरक अथवा उपभोक्ता हुए बिना भरे या खाली सिलेंडर, गैस सिलेंडर वाल्व और प्रेशर रेगुलेटर को रखता है तो उसे उक्त आदेश के खंड (c) में अंतर्विष्ट प्रावधान का उल्लंघन करने के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अभियोजित किया जा सकता है। किंतु, तलाशी एवं जब्ती प्रभावकारी बनाने के लिए आदेश का अनुपालन सुरक्षित करने की दृष्टि से केंद्र सरकार द्वारा प्राधिकृत विक्रय अधिकारी से अन्यून दर्जे का सरकारी तेल कंपनी का कोई अधिकारी अथवा केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत अधिकारी ही तलाशी और जब्ती को प्रभाव दे सकता है। उक्त प्रावधान आदेश के खंड 13 में प्रतिष्ठापित है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"13. **ços'k] ryk'kh vkj tCrh dh 'kfDr**-&;FkkfLFkfr] dsn lsjdkj vFkok jkT; ljdkj }kjk] lkekU; vFkok fo'ks"k vkns'k }kjk] lE;d :i ls çkfèkÑr dsn ljdkj vFkok jkT; ljdkj dk dksbZ vfèkdkjh tks bLiDVj ds J.kh ds uhps dk ugha g] vFkok dsn ljdkj }kjk çkfèkÑr ljdkjh ry dEiuh dk dksbZ vfèkdkjh tks foØ; vfèkdkjh ds J.kh ds uhps dk ugha g] bl vkns'k vFkok mlds vèkhu fn, x, fdlh vU; vkns'k dk lE;d vuikyu lqfuf'pr djus dh nf"V ls*

(a) fdlh iVkfy;e mRikn ds ifjogu vFkok HkaMkj.k ds fy, mi;kx fd, tkus e lfke vFkok mi;kfxr fdlh ty;ku vFkok okgu dk jksd ldrk g vkj mldh ryk'kh y ldrk gA

(b) fdlh LFkku e ços'k dj ldrk g vkj ryk'kh dj ldrk gA

*(c) dVujk vkj@vFkok midj.kk tl flyMj] xl flyMj okYok] ç'kj jxyVjk vkj lhyk ds lkFk rjyhÑr iVkfy;e xl ds LVkd dk tCr dj ldrk g ftlds lca/k e mlds ikl ;g fo'okl djus dk dkj.k g fd bl vkns'k dk mYya?ku fd;k x;k g] vFkok fd;k tk jgk g] vFkok fd;k tkuk gA**

9. आवेदन में बयान दिया गया है कि विपणन अधिकारी को केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार द्वारा तलाशी एवं जब्ती प्रभावकारी बनाने के लिए कभी प्राधिकृत नहीं किया गया था किंतु अभियोजन की ओर से अपनाया गया दृष्टिकोण है कि विपणन अधिकारी को अपर जिला दंडाधिकारी (विधि व्यवस्था) राँची द्वारा तलाशी और जब्ती प्रभावकारी बनाने के लिए प्राधिकृत किया गया था किंतु वह प्राधिकरण विधि के अनुरुप नहीं है जैसा ऊपर कहा गया है। तद्नुसार, तलाशी एवं जब्ती, जिसे उस व्यक्ति द्वारा प्रभावकारी बनाया गया है जो विधि के अधीन प्राधिकृत नहीं है, के आधार पर आरंभ किया गया अभियोजन दूषित बन जाता है।

10. ऐसी स्थिति में, आदेश, जिसके अधीन याची के विरुद्ध संज्ञान लिया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

11. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ih0 ih0 HkVV] U;k;efr

निर्मला किसपोत्ता

cuke

ननकी टिग्गा

W.P. (C) No. 4358 of 2009. Decided on 7th January, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VI, नियम 17—वादपत्र का संशोधन–बेदखली वाद–आवेदन अनुज्ञात–पक्षों के बीच वास्तविक विवाद विनिश्चित करने के प्रयोजन से इप्सित किए गए संशोधन पर विचार करने की आवश्यकता है–प्रत्यर्थी वादी द्वारा दाखिल वाद का हक के नियमित सिविल वाद के रूप में विचार करने अैर विचारण करने की आवश्यकता है–वादी अध्यपेक्षित मूल्यानुसार न्यायालय शुल्क का भुगतान करके बेदखली वाद को हक के नियमित सिविल वाद में संपरिवर्तित करने के लिए स्वतंत्र होगा। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.–1989 PLJR 381—Since overruled; 2002 (1) J.C.R. 1, (S.C);—Distinguished; 2006 (4) SCC 385—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Dilip Kumar Prasad, For the Petitioner; Mr. Pahul Gupta, For the Respondent.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन दाखिल वर्तमान रिट याचिका के रूप में बेदखली वाद सं॰ 36 वर्ष 2006 में अपर मुंसिफ–I, राँची द्वारा पारित दिनांक 12.8.2009 के आदेश, जिसके द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VI नियम 17 के अधीन प्रत्यर्थी/वादी द्वारा दाखिल संशोधन याचिका अनुज्ञात की गयी थी, को अपास्त करने के लिए समुचित रिट, आदेश और निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय यह अधिमूल्यन करने में विफल रहा है कि बिहार भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982 (इसके बाद अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) के प्रावधान के अधीन बेदखली के लिए वाद दाखिल किया गया था और संशोधन की प्रकृति प्रश्नगत संपत्ति में अधिकार, हक और हित के संबंध में है और इसलिए, **राजेन्द्र तिवारी बनाम बासुदेव प्रसाद एवं एक अन्य, 2002 (1) JCR 1 (SC),** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय की दृष्टि में उक्त संशोधन अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वाद की संपूर्ण प्रकृति के परिवर्तित हो जाने की संभावना है, अत: मूल वादी द्वारा इप्सित संशोधन अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए।

आगे निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय मामले में अंतर्ग्रस्त इस निर्णायक बिंदु का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है और वादी द्वारा दाखिल संशोधन आवेदन अनुज्ञात किया है।

3. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन करते हुए निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने उक्त आदेश पारित करके कोई गलती नहीं की है और प्रतिवाद के समर्थन में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **राजेश कुमार अग्रवाल बनाम के॰ के॰ मोदी एवं अन्य, 2006 (4) SCC 385,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने मुख्यत: उक्त निर्णय के पैराग्राफों 14 से 19 तक को निर्दिष्ट किया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **चंपा लाल शर्मा बनाम श्रीमती सुमित्रा मैत्रा,** 1989 PLJR 381, मामले में दिए गए निर्णय, विशेषत: पैरा 18, को भी निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है।

4. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और आक्षेपित आदेश के परिशीलन पर यह पता चलता है कि प्रत्यर्थी/वादी ने बेदखली के प्रयोजन से बिहार भवन (पट्टा किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982 के प्रावधानों के अधीन वाद दाखिल किया है और वाद के लंबित रहने के दौरान वाद पत्र में संशोधन इप्सित करते हुए सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VI नियम 17 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था और अवर न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए उक्त आवेदन अनुज्ञात किया

कि संशोधन औपचारिक प्रकृति का है और उक्त संशोधन को अनुज्ञात करने से याची–प्रतिवादी पर किसी तरीके से प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है क्योंकि प्रतिवादी अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने का अवसर पाएगा।

5. इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थी (मूल वादी) के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क के दौरान निवेदन किया कि वादी वर्तमान वाद को अभिधान वाद के रूप में संपरिवर्तित करना चाहता है और अवर न्यायालय द्वारा अनुज्ञात संशोधन की दृष्टि में वाद तद्नुसार अभिधान के नियमित वाद के रूप में संपरिवर्तित कर दिया जाएगा और दूसरा पक्ष, यदि आवश्यक हो, लिखित कथन दाखिल करने का अवसर पाएगा ताकि संशोधित वाद का प्रतिवाद कर सके। मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा **राजेन्द्र तिवारी बनाम बासुदेव प्रसाद एवं एक अन्य (ऊपर)** के मामले में उद्धृत निर्णय का भी परिशीलन किया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मामले पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि प्रश्नगत संपत्ति के संबंध में वादी के हक के संबंध में बेदखली कार्यवाही में जाँच नहीं की जा सकती है। किंतु उक्त अवस्था की दृष्टि में वाद की प्रकृति परिवर्तित हो जाएगी और यह बेदखली वाद के रूप में बना नहीं रहेगा। अतः, उक्त निर्दिष्ट निर्णय याची की मदद नहीं करेगा।

6. राजेश कुमार अग्रवाल (ऊपर) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि पक्षों के बीच वास्तविक विवाद विनिश्चित करने के प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए इप्सित संशोधन पर विचार करने की आवश्यकता होती है, तथा यदि पक्षों के बीच वास्तविक विवाद को सुलझाने के लिए यह आवश्यक है, तब ऐसे संशोधन को अनुज्ञात करने की आवश्यकता है। वर्तमान मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से उक्त निर्णय के पैराग्राफ 18 और 19 प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। अतः, इन्हें उद्धृत किया जाता है:–

> *"18. tlh ppk Åij dh x;h g] okLrfod fookn ijh{kk ey ijh{kk g vkj ;g fofuf'pr djuk U;k;ky; dk e[; drO; g fd D;k i{kk d chp fookn fofuf'pr dju d fy, ,lk l'kkèku vko';d gA ;fn ,lk g] l'kkèku vuKkr fd;k tk,xk] ;fn ,lk ugh g] l'kkèku vLohdkj fd;k tk,xkA blds foijhr] mPp U;k;ky; d fo}ku U;k;kèkh'k u ;g fofuf'pr fd, fcuk fd D;k ,lk l'kkèku vko';d g] dfri; nf"Vdk.kk dk vfHkO;Dr fd;k g vkj l'kkèku d x.kkx.k ij ppk fd;k gA bl rjg d ekeyk e] ednek dk lf{kIr cuku d fy,] nkuk i{kk d vfèkdkjk dk ljf{kr vkj ljf{kr dju d fy, vkj U;k; dk mí'; ijk dju d fy, i'pkrorh ?kVukvk dk Hkh U;k;ky; dk è;ku e yuk pkfg,A bl U;k;ky; d fu.k;k dh J[kyk }kjk ;g lfuf'pr fd;k x;k g fd l'kkèku dk fu;e vko';dr% U;k;] lkE;k vkj 'k) vrjkRek dk fu;e g vkj U;k;ky; d le{k i{kk d lkFk i.k U;k; dju d 0;kid fgr e l'kkèku dh 'kfDr dk ç;kx fd;k tkuk pkfg,A*
>
> *19. ;g fopkj djr g, fd D;k l'kkèku dk vkonu vuKkr fd;k tkuk pkfg,] U;k;ky; dk l'kkèku ekey dh lR;rk vFkok vlR;rk ij fopkj ugh djuk pkfg,A blh çdkj l] bl l'kkèku d x.kkx.k ij fu"d"k nt ugh djuk pkfg, vkj l'kkèku d :i e lfEefyr fd, tku d fy, bfllr l'kkèku d x.kk&x.k ij l'kkèku dh çkFkuk vuKkr dju d pj.k ij U;k; fu.k;u ugh djuk gkxkA oreku ekey e mPp U;k;ky; }kjk bl ey fl)kr dk vulj.k ugh fd;k x;k gA**

जहाँ तक प्रत्यर्थी–वादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **चंपा लाल शर्मा बनाम श्रीमती सुमिता**

मैत्रा, 1989 PLJR 381, के निर्णय का संबंध है, इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसे उलट दिया गया है और इसलिए यह वर्तमान मामले पर लागू नहीं होगा।

7. जैसी चर्चा यहाँ ऊपर की गयी है, प्रत्यर्थी वादी द्वारा दाखिल वाद पर हक के लिए नियमित सिविल वाद के रूप में विचार करने और विचारण करने की आवश्यकता है। याची बेदखली वाद को नियमित सिविल वाद में संपरिवर्तित करने के लिए स्वतंत्र होगा और उस प्रयोजन से वादी को इसे नियमित सिविल वाद में संपरिवर्तित करने के लिए अवर न्यायालय के पास जाना होगा। इस प्रयोजन से वादी को अध्यपेक्षित मूल्यानुसार न्यायालय शुल्क का भुगतान करने की भी आवश्यकता है।

8. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों के साथ, यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

ननकू महतो एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 335 of 2004. Decided on 9th January, 2013.

भारतीय वन अधिनियम, 1927—धारा 33—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—वन अपराध–संज्ञान–याचीगण के पूर्वज के पक्ष में वन विभाग द्वारा पहले ही भूमि निर्मुक्त की गयी थी और याचीगण भूमि के ऊपर अधिकार, हक और हित की घोषणा के लिए सिविल न्यायालय के पास भी गए हैं और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही याचीगण के पक्ष में विनिश्चित की गयी है–याचीगण के विरुद्ध आरंभ किया गया अभियोजन बिल्कुल दोषपूर्ण है–संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 10 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. B. K. Dubey, For the Petitioners; APP., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 18.3.1999 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, चतरा ने याचीगण के विरुद्ध भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया सहित यू॰ सी॰ केस सं॰ 22 वर्ष 1999 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

3. अभियोजन का मामला जैसा अभियोजन रिपोर्ट से प्रतीत होता है यह है कि इन चार याचीगण को गाँव बकचुंबा, पी॰ एस॰ चतरा, जिला-चतरा अवस्थित खाता सं॰ 75 से संबंधित भूखंड सं॰ 1189 के ऊपर मिट्टी खोदने में लिप्त पाया गया था और तद्द्वारा उन्होंने भूमि का अतिक्रमण किया था जिसे वर्ष 1955 में जारी अधिसूचना के फलस्वरुप संरक्षित वन घोषित किया गया था और तद्द्वारा याचीगण को भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन अपराध करता अभिकथित किया गया है।

4. अभियोजन रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर याचीगण के विरुद्ध भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन दिनांक 18.3.1999 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री बी॰ के॰ दूबे ने निवेदन किया कि याचीगण प्रश्नगत भूमि के विधिपूर्ण स्वामी हैं जिसके ऊपर उनका वैध अधिकार, हक और हित है और कि वे लंबे अरसे से भूमि के ऊपर काबिज हैं और उनके नामों को भी राजस्व अभिलेखों में नामांतरित किया गया है और वे राज्य को भूमि के किराया का भुगतान कर रहे हैं जबकि वन विभाग का प्रश्नगत भूमि के साथ कोई सरोकार नहीं है, फिर भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन वन विभाग की प्रेरणा पर कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसे याचीगण के पक्ष में विनिश्चित किया गया था और कमोवेश उसी अभिकथन पर एक और मामला दर्ज किया गया था जिसमें याचीगण को विचारण के बाद दोषमुक्त किया गया था जब न्यायालय ने याचीगण को प्रश्नगत भूमि पर अधिकारपूर्ण रूप से काबिज पाया था।

6. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वस्तुत: वन विभाग ने प्रश्नगत भूमि को याचीगण के पूर्वज के पक्ष में निर्मुक्त किया था और तब से वे प्रश्नगत भूमि पर भौतिक रूप से काबिज बने हुए हैं।

7. आगे यह निवेदन किया गया था कि वन विभाग की प्रेरणा पर याचीगण के विरुद्ध अतिक्रमण मामला भी आरंभ किया गया था जिसे मूल न्यायालय द्वारा याचीगण के विरुद्ध विनिश्चित किया गया था। अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष उस आदेश को चुनौती दी गयी थी किंतु वह अपील खारिज कर दी गयी थी और उसके विरुद्ध याचीगण ने रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2020 वर्ष 2005 दाखिल किया जिसे ग्रहण किया गया है और यथास्थिति बनाए रखने के लिए आदेश पारित किया गया है और इस प्रकार, न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग प्रतीत होता है, अत: वर्तमान आवेदन अभिखंडित किए जाने योग्य है।

8. आगे यह निवेदन किया गया था कि वन विभाग वर्ष 1955 में जारी अधिसूचना के आधार पर प्रश्नगत भूमि का दावा कर रहा है किंतु 30 वर्ष बीत जाने के बाद आगे किसी अधिसूचना की अनुपस्थिति में भूमि ने संरक्षित वन के लक्षण खो दिया और ऐसी स्थिति में वन विभाग प्रश्नगत भूमि के ऊपर अपने स्वामित्व का दावा नहीं कर सकता है और इस आधार पर वर्तमान अभियोजन अभिखंडित किए जाने योग्य है।

9. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें कथन किया गया है कि वर्ष 1955 में जारी अधिसूचना के फलस्वरुप प्रश्नगत भूमि की प्रकृति वन भूमि की है जिसे याचीगण द्वारा अतिक्रमित किया गया है और तद्द्वारा याचीगण ने निश्चय ही भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन अपराध किया है।

10. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद यह प्रतीत होता है कि प्रश्नगत भूमि जिसके वन भूमि होने का दावा किया गया है, याचीगण द्वारा अपनी भूमि होने का दावा किया जा रहा है जो याचीगण के अनुसार पहले ही वन विभाग द्वारा याचीगण के पूर्वज के पक्ष में निर्मुक्त की गयी थी और कि याचीगण प्रश्नगत भूमि के ऊपर अधिकार, हक और हित की घोषणा के लिए सक्षम सिविल अधिकारिता के न्यायालय के पास भी गए हैं और कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन कार्यवाही याचीगण के पक्ष में विनिश्चित की गयी है।

11. इस स्थिति के अधीन, याचीगण के विरुद्ध आरंभ किया गया कोई भी अभियोजन बिल्कुल

दोषपूर्ण प्रतीत होता है। तद्नुसार, संज्ञान लेने वाले आदेश सहित यू॰ सी॰ केस सं॰ 22 वर्ष 1999 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है जहाँ तक याचीगण का संबंध है।

12. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

किशुन गोप

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) Nos. 75 of 2011 with I.A. No. 1952 of 2012 with 586 of 2013. Decided on 8th February, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—रिट याचिका–याची ने इंदिरा आवास के वितरण के संबंध में और अभिलेख के साथ छेड़छाड़ करने और अभियुक्तगण को लाभ देने के लिए याची को मजबूर करने के बारे में भी पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी के विरुद्ध कतिपय अभिकथन किया था–यदि याची को आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के संबंध में कोई शिकायत थी, उसे अवर न्यायालय में विरोध याचिका दाखिल करना चाहिए था–छल साधन अथवा अभिलेख के साथ छेड़छाड़ करने के संबंध में याची को प्रभारी-अधिकारी के विरुद्ध पृथक मामला दाखिल करना चाहिए था–मुख्य रिट आवेदन को निष्फल के रूप में निपटाया गया। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–M/s. Ramkishore Prasad, Praful Jojo, For the Petitioner; Mr. Jallsur Rahman, For the Respondent.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 1952 वर्ष 2012 निम्नलिखित पैराग्राफों को अंत: स्थापित करके मुख्य रिट आवेदन के प्रार्थना अंश में संशोधन के लिए दाखिल की गयी है:–

(a) ;kph u fouerkiod bl U;k;ky; d le{k fuonu fd;k fd vU; Lor= ,tfl;k tl lh0 ch0 vkb0] lh0 vkb0 Mh0 vFkok fuxjkuh }kjk ekey dk vUo"k.k fd;k tk;A djnx ifyl Fkkuk d çHkkjh&vfèkdkjh u çkFkfedh d dkxtkr d lkFk NMNkM fd;k gA mlu ,uDyktj l0 2 d i"B l0 06 dk ckgj fudkyk g tk xke lHkk d jftLVj d fo"k; oLr dk vrfo"V djrk g vkj çkFkfedh ntdju d fy, ej i= d lkFk lyXu fd;k x;k g vkj i"B l0 13 ij ftyk fofèkd lok çkfèkdkj] fleMxk d lfpo dh çekf.kr çfr dk Hkkx Hkh g tk vfèkd çklfxd vkj egRoi.k dkxt g ftl ij ifyl u vUo"k.k ugh fd;k g vkj ifyl u vfHk;Drx.k dk ykHk nu dk ç;kl fd;k gA

(b) dl Mk;jh d ijk 68 vkj 71 d ifj'khyu l] tlk ekey d vkb0 vk0 }kjk dkV tku d ckj e mPprj vfèkdkjh dk fjikV fd;k x;k g] vkj çHkkjh&vfèkdkjh ujUn ekgu flUgk }kjk ekey d vkb0 vk0 ij vfHky[k d lkFk NMNkM dju d fy, vkj vfHk;Drx.k dk ykHk nu d fy, mldk etcj dju d fy, ncko Mkyk x;k g tk ifyl d fo#) xHkhj vfHkdFku g] vr% U;k; d fgr e vUo"k.k vU; ,tfl;k dk lkik tk ldrk gA

(c) fd ;kph fouerkiod çkFkuk djrk g fd vUo"k.k d ckn mu 0;fDr;k] tk vfHky[k d lkFk Ny lkèku@NMNkM d fy, ftEenkj g] d fo#) dkjokb dh tk ldrh gA

2. पूर्वोक्त प्रस्तावित प्रार्थना के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि याची ने कुरदेग पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी के विरुद्ध कतिपय अभिकथन किया है कि इंदिरा आवास के वितरण के संबंध में उसने मामले का समुचित अन्वेषण नहीं किया है। यह भी अभिकथित किया गया है कि उक्त प्रभारी-अधिकारी ने अभिलेख के साथ छेड़छाड़ किया है और अभियुक्तगण को लाभ देने के लिए याची को मजबूर किया है। यह स्वीकृत अवस्था है कि याची कुरदेग पी॰ एस॰ केस सं॰ 2 वर्ष 2011 का सूचक है। उक्त परिस्थितियों के अधीन, यदि याची को आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के संबंध में शिकायत थी, उसे अवर न्यायालय में अभ्यापत्ति याचिका दाखिल करनी चाहिए थी। इस आई॰ ए॰ में यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि याची ने कोई अभ्यापत्ति याचिका दाखिल किया है। इसके अतिरिक्त, यदि याची को कुरदेग पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी के संबंध में कोई शिकायत है कि उसने अभिलेख के साथ छल साधन अथवा छेड़छाड़ किया है, तब याची को समुचित फोरम के समक्ष उसके विरुद्ध पृथक मामला दाखिल करना चाहिए था।

3. उक्त परिस्थिति के अधीन, मैं आई॰ ए॰ सं॰ 1952 वर्ष 2012 में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे निपटाया जाता है।

4. इस रिट आवेदन में याची ने प्रार्थना किया है कि कुरदेगा पी॰ एस॰ केस सं॰ 2 वर्ष 2011 में फाइनल फॉर्म दाखिल करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाए। दिनांक 21.6.2011 के प्रति शपथ पत्र में पैराग्राफ सं॰ 12 पर कथन किया गया है कि कुरदेग पी॰ एस॰ केस सं॰ 2 वर्ष 2011 में पहले ही आरोप-पत्र दाखिल किया जा चुका है। उक्त परिस्थिति के अधीन, कुरदेग पी॰ एस॰ केस सं॰ 2 वर्ष 2011 में फाइनल फॉर्म पहले ही दाखिल किया जा चुका है। अतः, मुख्य रिट आवेदन निष्फल बन जाता है। उक्त परिस्थिति के अधीन, मुख्य रिट आवेदन और आई॰ ए॰ सं॰ 586 वर्ष 2013 भी निष्फल के रूप में निपटायी जाती है।

5. यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि याची को कोई सुरक्षा समस्या है, वह समुचित प्राधिकारी के पास जा सकता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

विनोद कुमार उर्फ विनोद कुमार सिन्हा उर्फ विनोद सिन्हा (800 में)

मधु कोड़ा उर्फ मधु कोरा (1029 में)

cuke

झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से (दोनों में)

Cr. Revision Nos. 800 with 1029 of 2012. Decided on 7th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 239 एवं 240—उन्मोचन–भ्रष्टाचार का आरोप–यदि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री मजबूत संदेह उत्पन्न करती है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न्यायालय आरोप विरचित करने में न्यायोचित होगा–अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि याचीगण द्वारा षडयंत्र किया गया था–संसदीय चुनाव में खर्च करने के लिए याचीगण में से एक सहित दो व्यक्तियों द्वारा धन दिए जाने के तथ्य के बीच कोई संबंध नहीं

है–अभियोजन याचीगण के विरुद्ध मजबूत संदेह उत्पन्न करने के लिए भी सामग्री संग्रहित करने में विफल रहा है कि अभियुक्त ने अपराध किया है जिसके अधीन आरोप विरचित किए गए हैं–न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने में अवैधता किया–आदेशों, जिनके अधीन याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए हैं, अभिखंडित किए जाते हैं– पुनरीक्षण आवेदनों को अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 12 से 17)

निर्णयज विधि.–1997 Cr. L.J. 2259—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. Anshuman Sinha, Bishwanath Mukherjee, For the Petitioners; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

चूँकि दोनों पुनरीक्षण आवेदन एक ही आदेश से उद्‌भूत होते हैं, उन्हें साथ सुना जा रहा है और इस एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 800 वर्ष 2012 आरंभ में विशेष केस सं॰ 69/2010 निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 52 वर्ष 2010) में पारित दिनांक 3.9.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया था जिसके द्वारा और जिसके अधीन यह अभिनिर्धारित करने के बाद कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467, 468, 471 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 8, 9 और 10 के अधीन भी आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री है, उन्मोचन के लिए प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी। बाद में, इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान, जब पूर्वोक्त अपराधों के अधीन आरोप विरचित किए गए थे, अंतर्वर्ती आवेदन के रूप में दिनांक 21.11.2012 के उस आदेश को भी चुनौती दी गयी थी।

3. जहाँ तक दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 1029 वर्ष 2012 का संबंध है, यह दिनांक 21.11.2012 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 471, 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (1) (c)/13(1) (d) सहपठित धारा 13 (2) के अधीन भी आरोप विरचित किए गए थे।

4. अभियोजन का मामला, जैसा प्राथमिकी में बनाया गया है, यह है कि जब तत्कालीन सदस्य सचिव झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड राज कुमार सिन्हा के घर पर और अन्य स्थानों पर भी आयकर छापा मारा गया था, अनेक दस्तावेज जब्त किए गए थे। किसी सुबोध कुमार दूबे द्वारा दिए गए बयान के साथ उन दस्तावेजों को निगरानी विभाग को उपलब्ध कराया गया था। उन सामग्रियों के संवीक्षण पर यह पाया गया था कि उक्त आर॰ के॰ सिन्हा, जब वह झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सदस्य सचिव के रूप में पदस्थापित था, ने अवैध परितोषण स्वीकार करके उन क्रशर मशीनों जिन्हें अवैध रूप से चलाया जा रहा था, को चलाने की अनुमति दी थी। कोई सुबोध कुमार दूबे जो आर॰ के॰ सिन्हा के एजेंट के रूप में कृत्य कर रहा था, अवैध रूप से आर॰ के॰ सिन्हा द्वारा जारी एन॰ ओ॰ सी॰ पाने में सहायक था। उक्त सुबोध कुमार दूबे ने आयकर प्राधिकारी द्वारा किए गए पूछताछ के क्रम में स्वीकार किया था कि उसने संसदीय चुनाव में मधु कोड़ा के लिए काम किया था। उस क्रम में, मेसर्स क्वांटम पावर टेक के स्वत्वधारी किसी रोहितास कृष्णन ने चुनाव में इसे खर्च करने के प्रयोजन से मधु कोड़ा के लिए काम करने वाले किसी संजय पोद्दार और अन्य राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं को देने के लिए उसको 40 लाख रुपयों की राशि दी थी। उसने आगे प्रकट किया था कि विनोद कुमार सिन्हा (याची) ने चुनाव में इसे खर्च करने के लिए संजय पोद्दार को दिए जाने के लिए उसको 50 लाख रुपयों की राशि दी थी। उसने यह भी प्रकट किया था कि अनेक अनुज्ञप्ति धारियों ने नयी अनुज्ञप्ति पाने के लिए अथवा अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए आर॰ के॰ सिन्हा को अवैध परितोषण दिया था। केवल यही नहीं नयी अनुज्ञप्ति पाने के लिए अथवा अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए व्यक्तियों पर कृपा करने के लिए बोर्ड के स्टाफ और अधिकारियों को

भी अवैध परितोषण दिया गया था। इस प्रकार, यह अभिकथित किया गया है कि उक्त आर॰ के॰ सिन्हा, जिसे प्रदूषण बोर्ड के सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किया गया था, ने इन दोनों याचीगण के कहने पर क्रशर मशीन के स्वामियों पर और विनोद कुमार सिन्हा की कंपनियों पर कृपा दर्शाया था और तद्द्वारा अभियुक्तगण ने एक-दूसरे के साथ षडयंत्र करके अवैध कृत्य किया था, जिसके द्वारा राज्य कोष को भारी हानि कारित की गयी थी और यह झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सदस्य सचिव के पद का दुरुपयोग करके किया गया था।

5. ऐसे अभिकथन पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 406, 420, 423, 467, 468, 471, 109, 120B/34 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7, 13(2) सहपठित धारा 13 (1) (c) (d) के अधीन भी निगरानी केस सं॰ 52/2010 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण पूरा करने के बाद, इन दोनों याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर अपराध का संज्ञान लिया गया था। बाद में, जब भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467, 468, 471 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 8, 9 और 10 के अधीन भी याची विनोद कुमार सिन्हा के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे, आरोप विरचित करने वाले उक्त आदेश को भी चुनौती दी गयी थी।

6. इसी प्रकार से, जब याची मधु कोड़ा के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 471, 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (1) (C) सह-पठित धारा 13 (1) (c) (d) के अधीन भी आरोप विरचित किए गए थे, उस आदेश को भी चुनौती दी गयी थी।

7. याचीगण क्रमश: बिनोद कुमार सिन्हा और मधु कोड़ा के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री विश्वजीत मुखर्जी और श्री अंशुमन सिन्हा ने निवेदन किया कि इन दोनों याचीगण को इस अभिकथन पर अभियोजित किया जा रहा है कि याची बिनोद कुमार सिन्हा और किसी रोहितास कृष्णन ने क्रमश: 50 लाख रुपया और 40 लाख रुपया सुबोध कुमार को दिया जिसने आयकर प्राधिकारी के समक्ष कथन किया कि याची मधु कोड़ा के चुनाव में इसे खर्च करने के लिए उनके द्वारा धन दिया गया था, जबकि अभियोजन का मामला इस अभिकथन के इर्द-गिर्द केंद्रित है कि कोई आर॰ के॰ सिन्हा, सदस्य सचिव, झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, ने क्रशर के स्वामियों से अवैध परितोषण लेने के बाद नयी अनुज्ञप्ति के लिए अथवा अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए एन॰ ओ॰ सी॰ प्रदान किया करता था किंतु सुबोध कुमार दूबे को विनोद कुमार सिन्हा अथवा रोहितास कृष्णन द्वारा धन दिए जाने के तथ्य का कूटरचित एन॰ ओ॰ सी॰ के जारी किए जाने के साथ संबंध नहीं है और यदि कोई संबंध नहीं है, याचीगण को छल, कूटरचना के अपराधों के लिए और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराधों के लिए भी अभियोजित नहीं किया जा सकता है जो आर॰ के॰ सिन्हा और अन्य के विरुद्ध आकृष्ट होता है जो अवैध परितोषण प्राप्त करने पर एन॰ ओ॰ सी॰ जारी करने में लिप्त हुए थे।

8. आगे यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि इन दोनों याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 120B की मदद से अभियोजित किया जा रहा है किंतु संपूर्ण केस डायरी में यह दर्शाने के लिए सामग्री बिल्कुल नहीं है कि इन दोनों याचीगण का एन॰ ओ॰ सी॰ जारी किए जाने के मामले के साथ कोई सरोकार था। यह दर्शाने के लिए कोई सामग्री-परिस्थितिजन्य अथवा प्रत्यक्ष-नहीं है कि एक ओर इन दोनों याचीगण और दूसरी ओर आर॰ के॰ सिन्हा अथवा उसके एजेंट के बीच अवैध परितोषण प्राप्त करने के बाद आर॰ के॰ सिन्हा द्वारा एन॰ ओ॰ सी॰ जारी करने के लिए षडयंत्र रचने के लिए मतैक्य था। अत:, इस स्थिति में, यदि सह-अभियुक्त सुबोध कुमार दूबे के बयान को स्वीकार किया जाता है कि विनोद कुमार सिन्हा

और रोहितास कृष्णन ने क्रमशः याची मधु कोड़ा के चुनाव कार्य में इसे खर्च करने के लिए 40 लाख रुपया और 50 लाख रुपया दिया, यह शायद ही कोई अपराध गठित करता है जिसके अधीन आरोप विरचित किए गए हैं किंतु अवर न्यायालय ने इस महत्वपूर्ण पहलू को ध्यान में लिए बिना यह अभिनिर्धारित करने के बाद कि आरोप विरचित करने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है, आरोप विरचित किया, अतः आरोप विरचित करने वाला आदेश अभिखंडन योग्य है।

9. इसके विरुद्ध, निगरानी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री शैलेश निवेदन करते हैं कि आर॰ के॰ सिन्हा इन दोनों याचीगण का निकट सहयोगी है क्योंकि आयकर प्राधिकारी के समक्ष आर॰ के॰ सिन्हा द्वारा दिए गए बयान से आया है कि संबंधित मंत्री ने झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए उसका नाम अनुशंसित किया था जिसे मधु कोड़ा द्वारा अनुमोदित किया गया था और, इसलिए, यह प्रकट है कि याचीगण के कहने पर उसे सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किया गया था। आगे, अन्वेषण के दौरान एकत्रित किया गया है, जैसा संतोष प्रसाद और संजय कुमार शारदा के बयान से यह प्रतीत होता है, कि केवल अवैध परितोषण प्राप्त करने के बाद आर॰ के॰ सिन्हा एन॰ ओ॰ सी॰ अथवा अनुज्ञप्ति प्रदान किया करता था। आगे संजय पोद्दार और सुबोध कुमार दूबे द्वारा दिए गए बयानों के अनुसार मधु कोड़ा के संसदीय चुनाव कार्य में इसे खर्च करने के लिए बिनोद कुमार सिन्हा द्वारा 50 लाख रुपया दिया गया था और 40 लाख रुपया रोहितास कृष्णन द्वारा दिया गया था और इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि याचीगण और आर॰ के॰ सिन्हा के बीच निकट सहयोगी था और कि आर॰ के॰ सिन्हा ने क्रशर के स्वामियों को एन॰ ओ॰ सी॰ जारी करवाने में भ्रष्ट आचरण किया था और, तद्द्वारा, यह कहा जा सकता है कि इन दोनों याचीगण ने भ्रष्ट आचरण में लिप्त होने के लिए आर॰ के॰ सिन्हा को सुकर बनाया और तद्द्वारा ये दोनों याचीगण भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध करने के लिए निश्चय ही जिम्मेदार हैं, अतः, आरोप विरचित करने वाले आदेश का अभिखंडन कभी नहीं अपेक्षणीय है।

10. इस निष्कर्ष पर आने के पहले कि क्या इन दोनों याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए सामग्री है, धारा 240 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है, जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^;fn ,l fopkj] ijh{kk] ;fn dkbZ gks] vkSj luokbZ dj yus ij eftLVsV dh ;g jk; gS fd ,sls mi/kkj.kk djus dk vk/kkj gS fd vfHk;qDr us ,sl vijk/k fd;k gS ftldk fopkj.k djus ds fy, og eftLVsV l{ke gS vkSj tks mldh jk; esa mlds }kjk i;kZIr :i ls nf.Mr fd;k tk ldrk gS rks og vfHk;qDr ds fo#) vkjksi fyf[kr :i esa fojfpr djsxkA**

11. एल॰ के॰ अडवाणी बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, 1997 Cr. L.J. 2559, मामले में माननीय न्यायाधीशों ने धारा 240 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने के बाद निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *"(52) mDr ls Li"V gS fd doy dN foofpr ekeyks esa vfHk;qDr ds fo#) vkjksi fojfpr fd;k tk ldrk gS tgka U;k;ky; bl fu"d"kZ ij vkrk gS fd vfHk;qDr us vfHk;qDr ds fo#) çFke n"V;k ekeyk n'kkZ;k gS vkSj U;k;ky; ds le{k lk{; gS tks vkjksi fojfpr fd, tkus ds cknk i'pkrorhZ dk;Zokgh ds nkSjku okn esa fofèkd lk{; esa lifjofrZr fd, tkus ;ksX; gSA vkjksi fojfpr djus ds lcèk esa ekeyk fu.kZ;k djh J[kyk esa fopkjkFkZ vk;k Fkk ftlesa ckj&ckj lçf{kr fd;k x;k Fkk fd vfHk;qDr dk mlds fo#) vkjksi fojfpr djus ds fy, U;k;ky; dks l{ke cuku ds fy, vfHk;qDr ds fo#) çFke n"V;k ekeyk n'kkZuk gh gksxkA ;fn U;k;ky;*

*d le{k lk{; bl çdkj d g] ftUg ;fn çfr ijh{k.k d tfj, [kfMr ugh fd;k tkrk g vFkok pukrh ugh nh tkrh g] fd o vfHk;Dr dk vrr% nk"kf l) dju d fy, i;kIr ugh gkx] rc U;k;ky; vfHk;Dr d fo#) vkjki fojfpr dju e U;k;kfpr ugh gkxkA bl pj.k ij U;k;ky; ;fDr&;Dr lng d ij vfHk;Dr d fo#) ekey dk irk yxku d fy, lkexh dk f[kldk vFkok rkydj foLrr tkp dju dh ckè;rk d vèkhu ugh g tl k bl vfre luokb d le; ij dju dh vko';drk gA ml vkjfHkd pj.k ij U;k;kèkh'k dk doy ;g irk yxku dh vko';drk g fd D;k lkexh Fkh tk bl fu"d"k dh vkj y tk ldrh g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k gA bl çdkj] vfHk;Dr d fo#) U;k;ky; }kjk vkjki fojfpr fd;k tk ldrk g ;fn bld le{k çLrr lkexh etcr lng mRiUu djrh g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k gA nlj 'kCnk e] U;k;ky; vfHk;Dr d fo#) vkjki fojfpr dju e U;k;kfpr gkxk ;fn vfHk;ktu u vijkèk e Qlku okyh lkexh d :i e cht ck;k g ftld ikl ckn e nk"kf lf) d o{k e fodfIr gku dh {kerk gA***

12. इस प्रकार, जो अभिनिर्धारित किया गया है यह है कि यदि इसके समक्ष प्रस्तुत सामग्री मजबूत संदेह उत्पन्न करती है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न्यायालय आरोप विरचित करने में न्यायोचित होगा।

13. अब, मामले के तथ्यों पर आते हुए, यह कथन किया जाए कि छल, कूटरचना और अवचार से संबंधित अभियोजन का मामला आर॰ के॰ सिन्हा के इर्द-गिर्द घूमता है जिसे क्रशर इकाईयों के स्वामियों को अवैध परितोषण लेने के बाद नयी अनुज्ञप्ति अथवा अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए एन॰ ओ॰ सी॰ जारी करने के लिए अपने पद का दुरुपयोग करने का अभिकथन किया गया है और कि वह अपने एजेंट सुबोध कुमार दूबे के माध्यम से क्रशर इकाईयों के विभिन्न स्वामियों से धन संग्रहित करता था। किंतु, जब इन दोनों याचीगण को इस अभिकथन पर अभियोजित किया जा रहा है कि मधु कोड़ा के संसदीय चुनाव कार्य में इसे खर्च करने के लिए संजय पोद्दार को दिए जाने के लिए सुबोध कुमार को विनोद कुमार सिन्हा और रोहितास कृष्णन ने क्रमश: 50 लाख रुपया और 40 लाख रुपया दिया था, इस अभिकथन का अवैध परितोषण प्राप्त करने के बाद क्रशर इकाईयों के विभिन्न स्वामियों को आर॰ के॰ सिन्हा द्वारा एन॰ ओ॰ सी॰ जारी किए जाने से संबंधित मामले के साथ कोई सरोकार नहीं है। ऐसी स्थिति में, धन देने का उक्त तथ्य आर॰ के॰ सिन्हा के अवैध कृत्य के साथ जोड़ा नहीं जा सकता है।

14. आगे, अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए कुछ भी प्रतीत नहीं होता है कि इन दोनों याचीगण द्वारा उक्त आर॰ के॰ सिन्हा के साथ षडयंत्र रचा गया था जिसके अनुसरण में आर॰ के॰ सिन्हा ने उक्त कथित अवैध गतिविधियों में स्वयं को लिप्त किया था। केवल यह प्रस्तुत किया गया है कि ये दोनों याचीगण आर॰ के॰ सिन्हा को झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त करवाने में सहायक थे किन्तु किसी अन्य अपराध में फँसाने वाली सामग्री की अनुपस्थिति में केवल उस तथ्य को षडयंत्र का कृत्य नहीं कहा जा सकता है।

15. इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि याचीगण में से एक सहित दो व्यक्तियों द्वारा सुबोध कुमार दूबे को मधु कोड़ा के संसदीय चुनाव में इसे खर्च करने के लिए धन देने के तथ्य और आर॰ के॰ सिन्हा द्वारा किए गए अवैध कृत्य के बीच कोई संबंध बिल्कुल नहीं है। ऐसी स्थिति में, मैं पाता हूँ कि याचीगण के विरुद्ध मजबूत संदेह उत्पन्न करने के लिए कि अभियुक्त ने अपराध किया है जिसके अधीन आरोप विरचित किए गए हैं, अभियोजन सामग्री संग्रहित करने में विफल रहा है। परिणामस्वरुप, मैं यह अभिनिर्धारित करने के लिए मजबूर हूँ कि बिल्कुल ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो इस निष्कर्ष की ओर ले जा सकती है कि अभियुक्त ने अपराध किया है जिसके अधीन आरोप विरचित किए गए हैं।

16. ऐसी स्थिति में, न्यायालय निश्चय ही इन दोनों याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने में अवैधता करता प्रतीत होता है। तद्नुसार, आदेशों जिनके अधीन इन दोनों याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए हैं, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

17. परिणामस्वरुप, दोनों पुनरीक्षण आवेदनों को अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

चार्ल्स ओराँव एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

I.A. Nos. 1212 with 2030 of 2010 In 1130 of 2012 and Cr. Appeal (DB) No. 476 of 2003.
Decided on 24th January, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–आवेदक के हाथ में अभिकथित हथियार तेज धारवाला हथियार है–पहले भी, दंडादेश के निलंबन के लिए उसके द्वारा की गयी प्रार्थना उच्च न्यायालय द्वारा दो बार अस्वीकार किया गया था और यह तीसरा प्रयास है–परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं है–गवाहों ने मृतक की हत्या कारित करने में आवेदक की भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है–गवाहों के साक्ष्य प्रथम दृष्टया मामला गठित करते हैं–न्यायालय दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar, For the Appellant No.3; Mr. Amaresh Kumar, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 1212 वर्ष 2010</u>

आई॰ ए॰ सं॰ 1212 वर्ष 2012 में आवेदक के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हैं और उन्होंने निवेदन किया है कि वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन विचारण न्यायालय द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन अपीलार्थी सं॰ 3 जो मूल अभियुक्त सं॰ 5 है द्वारा दाखिल किया गया है। आवेदक को मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास और जुर्माना के साथ दंडित किया गया है।

2. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 3 अर्थात् सुकरा ओराँव के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है, जो अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 है जिनमें से अ॰ सा॰ 3 और 4 पक्षद्रोही हो गए हैं। फिर भी, उन्होंने मामले के कतिपय पहलूओं को सिद्ध किया है। इन चश्मदीद गवाहों, विशेषत: अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए, उन्होंने वर्तमान आवेदक (मूल अभियुक्त सं॰ 5) की भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इन गवाहों के अभिसाक्ष्य प्रथम दृष्टया मामला गठित कर रहे हैं और उनके अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ निरंजन मिंज द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पा रहे हैं। कुल मिलाकर पाँच कटी हुई उपहतियाँ हैं। वर्तमान

आवेदक के हाथ में अभिकथित हथियार तेज धार वाला हथियार है। इन गवाहों के साक्ष्य प्रथम दृष्टया मामला गठित कर रहे हैं और इसलिए अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसने अपीलार्थी सं॰ 3 अर्थात् सुकरा ओराँव अन्य सह-अभियुक्त के साथ अपराध में अंतर्ग्रस्त है जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। पहले भी, दंडादेश के निलंबन के लिए उसके द्वारा दो बार की गयी प्रार्थना इस न्यायालय द्वारा प्रदान नहीं की गयी थी और यह तीसरा प्रयास है। दंडादेश के निलंबन के लिए पूर्विक प्रार्थनाओं की अस्वीकृति के बाद परिस्थिति में परिवर्तन नहीं हुआ हैं सिवाए समय के अवसान के।

3. पूर्वोक्त साक्ष्य की दृष्टि में, हम विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी सं॰ 3 को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं और, इसलिए, दंडादेश के निलंबन की उसकी प्रार्थना अस्वीकार की जाती है। अंतर्वर्ती आवेदन में सार नहीं है, अत: I.A. सं॰ 1212 वर्ष 2010 को एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

आई॰ ए॰ सं॰ 2030 वर्ष 2010

साथ में

आई॰ ए॰ सं॰ 1130 वर्ष 2012

1. जब मामला सुनवाई हेतु पुकारा गया था, अपीलार्थी सं॰ 2, अर्थात, बलवा ओराँव (मूल अभियुक्त सं॰ 4) की ओर से कोई उपस्थित नहीं होता है।

2. हमने राज्य की ओर से विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुना है जिन्होंने निवेदन किया कि दोनों अंतर्वर्ती आवेदन अपीलार्थी सं॰ 2 द्वारा उसको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अधिनिर्णीत आजीवन कारावास के दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल किए गए हैं।

3. राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 2 के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। अभियोजन का मामला एक से अधिक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है। अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उन्होंने मृतक की हत्या कारित करने में आवेदक की भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इसके अतिरिक्त, इन चश्मदीद गवाहों का अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ निरंजन मिंज द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पा रहा है।

4. अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों की दृष्टि में, हम विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी सं॰ 2 को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं और, इसलिए, दंडादेश के निलंबन की उसकी प्रार्थना अस्वीकार की जाती है। इन अंतर्वर्ती आवेदनों में सार नहीं है और इसलिए दोनों अंतर्वर्ती आवेदनों आई॰ ए॰ सं॰ 2030 वर्ष 2010 और आई॰ ए॰ सं॰ 1130 वर्ष 2012 खारिज किए जाते हैं।

दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 476 वर्ष 2003

वर्तमान अपीलार्थीगण की अभिरक्षा अवधि को देखते हुए हम इस न्यायालय की रजिस्ट्री को गवाहों के अभिसाक्ष्य की साफ टंकित प्रतियों और दस्तावेजों का पेपर बुक शीघ्रातिशीघ्र तैयार करने का निर्देश देते हैं जैसा झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 190 और 191 के अधीन आवश्यक है और इसके तुरन्त बाद इस दांडिक अपील को अभिरक्षा अवधि के मुताबिक अपनी क्रम संख्या में ''सुनवाई के लिए'' बोर्ड पर सूचीबद्ध किया जाएगा।

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vkykd flg] U;k;efr

दुर्गा ओराँव (4700 में)

अमन मुंडा (2252 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (4700 में)

भारत संघ एवं अन्य (2252 में)

W.P. (P.I.L) Nos. 4700 of 2008 with 2252 of 2009. Decided on 4th February, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–सी॰ बी॰ आई॰ अन्वेषण–अभिकथन कि सी॰ बी॰ आई॰ कुछ नौकरशाहों को नहीं छू रही है–सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा अन्वेषण की गुंजाइश को स्पष्ट करने के किसी प्रयोजन से न्यायालय को बार-बार किसी स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता नहीं है–पूरक शपथ पत्र पर आदेश की आवश्यकता नहीं है–पूर्व रिट याचिका में पारित आदेश सी॰ बी॰ आई॰ के लिए पर्याप्त संकेतक है और सी॰ बी॰ आई॰ को मामले का अन्वेषण करने और रिपोर्ट दाखिल करने की आवश्यकता है–प्रवर्तन निदेशालय फरार व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए प्रभावकारी कदम उठाएगा–और अधिक अन्वेषण करने के लिए सी॰ बी॰ आई॰ को समय प्रदान किया गया। (पैराएँ 5, 6 एवं 11)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajeev Kumar, For the Petitioner; Advocate General, For the State; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the C.B.I.; Mr. A.K. Das, For the E.D.; Mr. Mahesh Tewari, For the Res. No. 19; Mr. Indrajit Sinha, For the Res. No. 21.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. सी॰ बी॰ आई॰ ने रिपोर्ट दाखिल किया है। हमने सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा दिए गए रिपोर्ट का परिशीलन किया है। यह प्रतीत होता है कि यह स्पष्ट करते हुए आदेशों के बाद कि सी॰ बी॰ आई॰ को मामले के समस्त पहलूओं का अन्वेषण करने की आवश्यकता है और तब अभियुक्तगण का पता लगाना है, सी॰ बी॰ आई॰ ने मामले के तह में जाना शुरू किया और अन्वेषण केवल दो मामलों, जिन्हें सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा लिया गया है, तक सीमित नहीं है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि सी॰ बी॰ आई॰ अभी भी कुछ नौकरशाहों को नहीं छू रही है।

4. एम॰ एल॰ पाल जिसे पूरक शपथ पत्रों में से एक में नामित किया गया है के विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया है कि एक अन्य रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3352 वर्ष 2011 दाखिल की गयी है जिसे इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है। इस न्यायालय ने दिनांक 5 नवंबर, 2012 के आदेश के तहत निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *^^ge Li"V dj jg g fd vijkèk l lcfèkr vUo"k.k fd;k tkuk g vkj vUo"k.k , tlh }kjk vfHk;Drx.k dk irk yxk;k tkuk gA vr%] ge Li"V djr g fd lh0 ch0 vkb0 vfHk;Drx.k dk irk yxku d fy, Lo; viu fu"d"k d vu#i vxlj gku d fy, Lor= g tlk MCY;0 ih0 (ih0 vkb0 ,y0) l0 4700 o"k 2008 e vkn'k fn;k x;k gA***

5. हमें सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा अन्वेषण की गुंजाइश को स्पष्ट करने के किसी प्रयोजन से बार-बार किसी स्पष्टीकरण को देने की आवश्यकता नहीं है। अतः, पूरक शपथ पत्र पर किसी आदेश की

आवश्यकता नहीं है और इस रिट याचिका में पूर्विक अवसर पर हमारे द्वारा पारित आदेश सी॰ बी॰ आई॰ के लिए पर्याप्त संकेत हैं और सी॰ बी॰ आई॰ को मामले का अन्वेषण करने और रिपोर्ट दाखिल करने की आवश्यकता है। केवल अन्वेषण का रिपोर्ट पाने के बाद ही हम पता कर सकते हैं कि क्या किसी व्यक्ति को सी॰ बी॰ आई॰ ने छोड़ दिया है या नहीं।

6. प्रवर्तन निदेशालय फरार व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए प्रभावकारी कदम उठाएगा और फरार व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए प्रवर्तन निदेशालय द्वारा उठाए गए कदमों के बारे में रिपोर्ट करेगा जो न केवल रेड कार्नर वारन्ट का जारी किया जाना है बल्कि यह भी दर्शाना है कि व्यक्तियों का पता ठिकाना जानने के लिए सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा किन प्रभावकारी कदमों को उठाया गया है।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियुक्तगण में से एक शोविक चट्टोपाध्याय को स्वयं राँची शहर में पाया गया था।

8. प्रवर्तन निदेशालय इस अभिकथन की जाँच कर सकता है।

<u>डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 2252 वर्ष 2009</u>

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 2252 वर्ष 2009 में वही विवाद्यक है कि जिसे पहले ही डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 4700 वर्ष 2008 में लिया गया है, अत: इस याचिका पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

10. उक्त कारणों की दृष्टि में, डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 2252 वर्ष 2009 को निपटाया जाता है और याचिका में उठाए गए विवाद्यक पर डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 4700 वर्ष 2008 में विचार किया जा सकता है जिसे डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 4700 वर्ष 2008 में याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित किया जा सकता है।

11. सी॰ बी॰ आई॰ के अनुरोध की दृष्टि में सी॰ बी॰ आई॰ को और अधिक अन्वेषण करने के लिए समय प्रदान किया जाता है।

12. चार सप्ताह बाद मामला रखा जाए।

13. इस आदेश की प्रति सी॰ बी॰ आई॰ और प्रवर्तन निदेशालय के अधिवक्ता को दी जाए।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

राम पुकार पांडे

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 261 of 2012. Decided on 21st January, 2013.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धाराएँ 138 एवं 142—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—साधारण खंड अधिनियम, 1897—धारा 27—चेक का अनादर–संज्ञान–समुचित पता पर रजिस्टर्ड डाक के अधीन अभियुक्त को नोटिस भेजा गया–यह समझा जाएगा कि विरोधी पक्ष पर नोटिस तामील किया गया है–नोटिस के अभिकथित गैर तामील के कारण परिवाद पीड़ित नहीं है–साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 के फलस्वरुप उपधारणा की जा सकती है कि विरोधी पक्ष पर नोटिस तामील किया गया था–परिवाद समय के भीतर दाखिल किया गया था–यह नहीं कहा जा सकता है कि परिवाद पोषणीय नहीं है–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट किया गया–याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(2002) 9 SCC 415—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Tejo Singh, P. Mukhopadhyay, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. A.K. Das, For the O.p. No.2.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थिति होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 7.12.2007 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर ने याची के विरुद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया, सहित परिवाद मामला C-1 सं॰ 1807 वर्ष 2007 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. संज्ञान लेने वाले आदेश को चुनौती देने का आधार यह है कि परिवाद में याची पर नोटिस तामील किए जाने के संबंध में प्रकथन नहीं है और तद्द्वारा **शक्ति ट्रेवल एंड टूर बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 415,** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में परिवाद पोषित नहीं किया जा सकता है।

4. एक अन्य आधार जिस पर संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन इप्सित किया जा रहा है कि परिवाद नोटिस जारी किए जाने के डेढ़ माह से अधिक समय के बाद दाखिल किया गया है और तद्द्वारा परिवाद समय के भीतर दाखिल किया गया प्रतीत कभी नहीं होता है जैसा परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 (b) के अधीन अनुबंधित किया गया है।

5. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद में प्रकथन है कि दिनांक 25.9.2007 को रजिस्टर्ड डाक के अधीन समुचित पता पर अभियुक्त को नोटिस भेजा गया है और तद्द्वारा साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 के अधीन यह समझा जाएगा कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 पर नोटिस तामील किया गया है और तद्द्वारा यह नहीं कहा जा सकता है कि परिवादी पर नोटिस के तामीले के संबंध में प्रकथन नहीं है।

6. आगे यह निवेदन किया गया था कि याची की ओर से तर्क किया गया है कि इस अभिवचन पर कि नोटिस जारी किए जाने की तिथि से डेढ़ माह के भीतर परिवाद दाखिल नहीं किया गया था अत: परिवाद परिसीमा द्वारा वर्जित है, किंतु यह विधि की सही अवस्था नहीं है बल्कि नोटिस की तामीले की तिथि से डेढ़ माह के भीतर परिवाद दाखिल करने की आवश्यकता है और इस मामले में, चूँकि परिवाद में पहले ही प्रकथन किया गया है कि दिनांक 25.9.2007 को समुचित पता पर रजिस्टर्ड डाक के अधीन नोटिस भेजी गयी थी, उपधारित किया जा सकता है कि रजिस्टर्ड नोटिस केवल दिनांक 26.10.2007 को तामील की गयी है और तद्द्वारा परिवाद को सदैव डेढ़ माह के बिल्कुल भीतर दाखिल किया गया कहा जा सकता है क्योंकि इसे दिनांक 20.11.2007 को दाखिल किया गया है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश किसी अवैधता से पीड़ित नहीं है।

7. पक्षों की ओर से किए गए निवेदन के संदर्भ में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"142. **vijk\`kk dk çlKku-**&n.M çfØ;k lfgrk] 1973 (1974 dk 2) e fdlh ckr d gkr g, Hkh*

(a) èkkjk 138 d vèkhu fdlh vijkèk d fy,] dkb Hkh U;k;ky;] pd d vèkhu jkf'k çkIr djus okys vFkok lkekU; vuØe e pd d èkkjd d fy[kr ifjokn d flok;] çlKku ugh yxk]

(b) ,Slk ifjokn èkkjk 138 d ijUrd d [k.M (c) d vèkhu okn grd mRiUu gksus dh frfFk l ,d ekg d vUnj i'k dj fn;k tkuk pkfg,(

*ijUrq ;g rc tc fd ifjokn dk lKku U;k;ky; }kjk fofgr vofèk d i'pkr fy;k tk ldxk] ;fn ifjoknh U;k;ky; dk lrq"V djrk g fd ,lh vofèk d Hkhrj ifjokn nk;j ugh djus d fy; mld ikl i;kIr dkj.k FkA**"*

(c) eVkikfyVu n.Mkfèkdkjh ;k fdlh iFke J.kh d U;kf;d n.Mkfèkdkjh d vèkhuLFk dkb U;k;ky; èkkjk 138 d vèkhu n.Muh; fdlh vijkèk dk fopkj.k ugh djxkA

8. आगे, परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 (C) का पठन निम्नलिखित है:–

*"138(c) y[khoky mls lpuk dh çkfIr d iUng fnu d vUnj mls 0;fDr dk tk pd d vèkhu jkf'k çkIr djus okyk gk vFkok tk lkekU; vuØe e pd dk èkkjd gk] mls jkf'k dk lnk; djus e vlQy ugh jgrkA**"*

9. पूर्वोक्त प्रावधानों के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि नोटिस की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर लेखीवाल द्वारा चेक की राशि के गैर–भुगतान की स्थिति में पंद्रह दिनों के ऐसे अवसान के एक माह के भीतर परिवाद दाखिल करने की आवश्यकता है, तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि नोटिस की प्राप्ति की तिथि से डेढ़ माह के भीतर परिवाद दाखिल करने की आवश्यकता है।

10. यहाँ वर्तमान मामले में, जैसा विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से कथन किया गया है, परिवाद में प्रकथन किया गया है कि दिनांक 25.9.2007 को समुचित पता पर रजिस्टर्ड डाक के अधीन नोटिस भेजी गयी थी, साधारण खंड अधिनियम के खंड 27 के अधीन समझा जाएगा कि इसे दिनांक 25.10.2007 को तामील किया गया है और तद्द्वारा उस दिन अर्थात् दिनांक 25.10.2007 से डेढ़ माह के भीतर दिनांक 20.11.2007 को दाखिल परिवाद बिल्कुल समय के भीतर है।

11. जहाँ तक नोटिस के तामीले के तथ्य के गैर–उल्लेख के कारण परिवाद याचिका की अपोषणीयता के संबंध में अन्य निवेदन का संबंध है, कथन किया जाए कि निश्चय ही परिवाद में नोटिस के तामीले के संबंध में वहाँ कोई बयान दिया गया प्रतीत कभी नहीं होता है, किंतु निश्चय ही वहाँ बयान है कि दिनांक 25.9.2007 को समुचित पता पर रजिस्टर्ड डाक के अधीन अभियुक्त को नोटिस भेजी गयी है। ऐसी स्थिति में, साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 में अंतर्विष्ट प्रावधान के फलस्वरुप उपधारणा सदैव की जा सकती है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 पर नोटिस तामील की गयी थी। उस स्थिति में, परिवाद उस कारण पीड़ित नहीं होता है और तद्द्वारा यह नहीं कहा जा सकता है कि **शक्ति ट्रैवल एंड टूर बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में परिवाद पोषणीय नहीं है क्योंकि उस मामले में साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 के निबंधनानुसार नोटिस के तामीले की उपधारणा के संबंध में मामला सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष कभी नहीं था और तद्द्वारा वह मामला वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है।

12. तद्नुसार, मैं संज्ञान लेने वाले आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ और इसलिए, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

हनीफ मियाँ (780 में)

मुस्तकीम मियाँ (784 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (DB) Nos. 780 with 784 of 2012. Decided on 16th January, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टिकरण पा रहे हैं–इन साक्ष्यों के समेकित प्रभाव के कारण अभियुक्तगण-अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है–अपराध की गंभीरता और दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं की दृष्टि में, न्यायालय अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–अपील खारिज की गयी। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Choudhary, For the Appellants; Mr. A.P.P., For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–इन अपीलों को इस न्यायालय द्वारा ग्रहण किया गया है। अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए तर्कों का अधिमूल्यन करने के लिए विचारण न्यायालय से सत्र मामला सं॰ 181 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही को मंगाया गया था।

2. इस न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के अभिलेख और कार्यवाही प्राप्त की गयी है और हमने इसका परिशीलन किया है।

3. हमने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना पर दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। हमने सत्र मामला सं॰ 181 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही का भी परिशीलन किया है।

4. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए दोनों अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण जो क्रमशः मूल अभियुक्त सं॰ 1 और 5 हैं के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु हमारे लिए इतना कहना पर्याप्त होगा कि अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 7 और अ॰ सा॰ 8 हैं, जिनमें से अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 7 तथा अ॰ सा॰ 8 घायल चश्मदीद गवाह हैं। इन गवाहों द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए दोनों अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। इसके अतिरिक्त, उनका अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 9 और अ॰ सा॰ 9 *(sic)* जिन्होंने क्रमशः शव परीक्षण और घायल गवाहों का परीक्षण किया है, के चिकित्सीय साक्ष्य से आगे संपुष्टिकरण पा रहा है।

5. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह आत्मरक्षा का मामला है। हम इस प्रतिवाद से सहमत नहीं हैं। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम इस विवाद्यक पर यह कहने के लिए विचार कर रहे हैं कि यह सुझाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज बयान में निजी बचाव का कोई बयान है। इसके अतिरिक्त, घटना जो खेत में हुई थी की प्रकृति को देखते हुए वर्तमान अपीलार्थीगण हमलावर प्रकृति के हैं। अन्य कारण भी हैं किंतु हम दंडादेश के निलंबन के लिए केवल इन कारणों पर चर्चा करने तक स्वयं को सीमित रख रहे हैं।

6. इस प्रकार, चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य को देखते हुए जैसा यहाँ ऊपर कथित किया गया है और चिकित्सीय साक्ष्यों द्वारा किए गए इसके संपुष्टिकरण को देखते हुए, इन साक्ष्यों के समेकित प्रभाव के कारण अभियुक्तगण-अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। इसके अतिरिक्त, अपराध की गंभीरता और दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं को देखते हुए हम इस दांडिक अपील के लंबित रहने के दौरान उक्त नामित अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अत:, दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना में सार नहीं है और इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

राज कुमार साहू एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 2476 of 2012. Decided on 23rd January, 2013.

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955—धारा 7—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 227 एवं 482—चावल की कालाबाजारी–प्राथमिकी–चावल से संबंधित विक्रय, खरीद, कब्जा, परिवहन को विनियमित करने वाला आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 3 के अधीन निर्गत आदेश प्रभावी है–चावल के 391 बोरों का रखना भी आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध गठित नहीं करेगा–प्राथमिकी अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Deepak Kumar, For the Petitioners; Mr. APP., For the State.

आदेश

याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन याचीगण के विरुद्ध आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन दर्ज कोतवाली (सुखदेव नगर) पी॰ एस॰ केस सं॰ 958/12 (जी॰ आर॰ सं॰ 5254/2012) की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. अभियोजन का मामला यह है कि जब एक ट्रक सुखदेव नगर के निकट खड़ा पाया गया था, याची सं॰ 4 तारकेश्वर अग्रवाल के घर से ऑटो रिक्शा से चावल के बोरों को लाने के बाद उन्हें इस पर लादा जा रहा था। कुल मिलाकर चावल के 391 बोरों को रजिस्ट्रेशन सं॰ CG 10 C-4571 वाले ट्रक पर लदा पाया गया था। ऐसे अभिकथन पर, प्राथमिकी दर्ज की गयी थी, जिसे आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन इस अभिकथन पर कि याचीगण चावल की कालाबाजारी में लिप्त थे, कोतवाली (सुखदेव नगर) पी॰ एस॰ केस सं॰ 958/12 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त प्राथमिकी का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि उसमें किए गए अभिकथन कोई भी अपराध गठित नहीं करते हैं क्योंकि याचीगण ने आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन जारी किसी नियंत्रण आदेश का उल्लंघन नहीं किया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रचलित चावल के संबंध में विक्रय, खरीद,

कब्जा, परिवहन, आदि को विनियमित करने वाला आदेश प्रभावी नहीं है और तद्द्वारा याचीगण को आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

5. मेरे समक्ष कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है कि चावल से संबंधित विक्रय, खरीद, कब्जा, परिवहन, आदि को विनियमित करने वाला आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 3 के अधीन जारी आदेश प्रचलन में है।

6. मामले के उस दृष्टिकोण में, चावल के 391 बोरों का कब्जा आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध गठित नहीं करेगा।

7. तद्नुसार, जहाँ तक इन याचीगण का संबंध है, आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन दर्ज कोतवाली पी॰ एस॰ केस सं॰ 958/12 (जी॰ आर॰ सं॰ 5254/2012) की प्राथमिकी एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

8. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

महेश महतो

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 864 of 2012. Decided on 7th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–दांडिक अपील लंबित–अ॰ सा॰ जो अभियोजन के मुख्य गवाह हैं के अभिसाक्ष्यों को देखते हुए अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है–किंतु पहचान परीक्षा परेड में अभियुक्त की पहचान नहीं की गयी है–गवाह अपीलार्थी को जानते थे और संपूर्ण मामला संदेहास्पद है–अपीलार्थी अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश 10,000/- रुपयों की राशि का बंधपत्र और इतनी ही राशियों की दो प्रतिभूतियों के निष्पादन के शर्त पर निलंबित किया गया। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Ramawatar Choubey, For the Appellant; Mr. Sanjay Kumar Srivastava, A.P.P., For the State.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–दिनांक 11 फरवरी, 2013 के आदेश के तहत वर्तमान अपील ग्रहण की गयी है।

2. अपीलार्थी के दंडादेश के निलंबन के लिए तर्कों का अधिमूल्यन करने के लिए सत्र विचारण सं॰ 391 वर्ष 2005 और सत्र विचारण सं॰ 538 वर्ष 2005 के अभिलेख और कार्यवाही को विचारण न्यायालय (विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग) से मंगाया गया है।

3. सत्र विचारण सं॰ 391 वर्ष 2005 और सत्र विचारण सं॰ 538 वर्ष 2005 के अभिलेख और कार्यवाही को इस न्यायालय द्वारा प्राप्त किया गया है और हमने इसका परिशीलन किया है और दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुना है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए इस अपीलार्थी (जो सत्र विचारण में मूल अभियुक्त सं॰ 8 है) के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील

लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 7 और अ॰ सा॰ 9 जो अभियोजन के मुख्य गवाह हैं के अभिसाक्ष्यों को देखते हुए, विशेषत: उनके प्रति परीक्षण को देखते हुए, इस अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और दांडिक अपील लंबित रहने के कारण हम विस्तृत कारण प्रदान नहीं कर रहे हैं किंतु पहचान परीक्षा परेड में अभियुक्त की पहचान नहीं की गयी है और अन्यथा भी आगे प्रति परीक्षण को देखते हुए भी गवाह इस अभियुक्त को जानते थे, अत:, समस्त मामला संदेहपूर्ण है। उनके अभिसाक्ष्य में यह कथन भी किया गया है कि अभियुक्तगण अपना चेहरा छुपाए बिना आए थे। मूल अभियुक्त सं॰ 1 जो लखेश्वर महतो है, मूल अभियुक्त सं॰ 4 जो संतोष महतो है, मूल अभियुक्त सं॰ 9 जो सुरेश घाँसी है और मूल अभियुक्त सं॰ 10 जो बीरू महतो है को क्रमश: दांडिक अपील सं॰ 400 वर्ष 2012, दांडिक अपील सं॰ 448 वर्ष 2012, दांडिक अपील सं॰ 587 वर्ष 2012 और दांडिक अपील सं॰ 591 वर्ष 2012 में उसी सत्र विचारण से उद्भूत होने वाले दंडादेश के निलंबन द्वारा पहले ही जमानत पर रिहा किया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस अपीलार्थी को सत्र विचारण सं॰ 391 वर्ष 2005 में दोषसिद्ध किया गया है।

5. अभिलेख पर इन साक्ष्यों के आलोक में हम एतद् द्वारा सत्र विचारण सं॰ 391 वर्ष 2005 में विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा दिनांक 29.2.2012 को इस अपीलार्थी अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश विचारण न्यायालय की संतुष्टि पर 10,000/- रुपयों की राशि के बंध और इतनी ही राशियों के दो प्रतिभूतियों के निष्पादन के शर्त पर और इस शर्त पर भी कि जब न्यायालय को उसकी उपस्थिति की आवश्यकता हो, वह उपलब्ध रहेगा और इस शर्त पर भी कि वह न्यायालय की अनुमति के बिना अपना आवासीय पता नहीं बदलेगा, निलंबित करते हैं।

---

ekuuh; Jh pæ'k[kj] U;k;efr

बच्चू सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1636 of 2010. Decided on 18th February, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000—नियम 43(b)—झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन कोई दूसरी कार्यवाही प्रारंभ नहीं किया जा सकता—याची के पूरे पेंशन को रोक रखना विधि में अनुज्ञेय नहीं है क्योंकि याची को पूर्व में प्रारंभ की गयी एक विभागीय कार्यवाही में इसी कदाचार के लिए पहले ही दंडित किया जा चुका है—इसी कदाचार के लिए झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन दूसरी जांच अनुज्ञेय नहीं है–अन्यथा भी, याची को कोई कारणपृच्छा नोटिस दिये बिना पेंशन रोका नहीं जा सकता था—प्रत्यर्थी को पेंशन के बकाये के साथ याची को पेंशन विमुक्त करने का निर्देश दिया गया—रिट याचिका अनुज्ञात।

(पैराएँ 12 से 15)

निर्णयज विधि.–AIR 1971 SC 1449; (2006) 12 SCC 28; (2007) 11 SCC 517; (2002) 10 SCC 471; (2012) 3 SCC 580—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Sunil Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. S.C.-I., For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में अंतर्ग्रस्त एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या एक सरकारी सेवक के विरुद्ध झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन उस अभिकथित कदाचार के लिए एक दूसरी कार्यवाही प्रारंभ की जा सकती है जिसके लिए उसे पहले ही दंडित किया जा चुका है।

2. याची लेखापाल के पद से 1.8.1997 को सेवानिवृत्त हुआ था जब वह जमशेदपुर कोषागार में पदस्थापित था। आर॰ सी॰ केस सं॰ 23(A) वर्ष 1996 में याची को चार्जशीट किया गया था, तथापि, अन्वेषण के लंबित रहने के दौरान, उसकी अधिवर्षिता हो गयी थी। याची के विरुद्ध झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन एक कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी तथा जांच रिपोर्ट एवं याची के स्पष्टीकरण पर विचार करने के उपरांत, दिनांक 28.5.2001 का आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन याची की पेंशन की राशि के 25 प्रतिशत को रोक रखा गया था तथा बिहार सेवा संहिता के नियम 97 के अधीन एक और दंड दिया गया था जिसके द्वारा निलंबन की अवधि के दौरान याची की सेवा की गणना नहीं की जानी थी तथा ऐसी अवधि के दौरान यह आदेश दिया गया था कि वह केवल निर्वाह भत्ते का हकदार होगा। तदनुसार, महालेखाकार, रांची ने दिनांक 5.12.2001 के आदेश द्वारा याची का पेंशन निर्धारित किया था और तत्पश्चात्, उसे नियमित रूप से उसकी पेंशन का भुगतान किया गया था।

3. यह प्रतीत होता है कि आर॰ सी॰ केस सं॰ 23(A) वर्ष 1996 में दिनांक 23.4.2008 के आदेश द्वारा याची की दोषसिद्धि की गयी थी। याची ने दांडिक अपील सं॰ 563 वर्ष 2008 (S.J.) दाखिल किया था जिसे उच्च न्यायालय द्वारा ग्रहण किया गया था तथा याची को जमानत प्रदान कर दी गयी थी। याची को कोई नोटिस दिये बिना, दिसम्बर, 2009 से याची का पेंशन रोक दिया गया था और अतएव, याची ने कोषागार पदाधिकारी, जमशेदपुर के कार्यालय में पूछताछ किया था जहां याची को सूचित किया गया था कि प्रधान सचिव (वित्त) द्वारा निर्गत 10.11.2009 के आदेश के अनुपालन में याची की पेंशन रोक दी गयी थी। तत्पश्चात्, याची ने पेंशन विमुक्त करने के लिए 2.12.2009 को कोषागार पदाधिकारी, जमशेदपुर के पास अपना आग्रह प्रस्तुत किया था। जब याची को कोई जवाब प्राप्त नहीं हुआ था, उसने पूर्वोक्त तथ्यों में दिनांक 10.11.2009 के आदेश का अभिखंडन इप्सित करते हुए वर्तमान रिट याचिका दाखिल किया था।

4. याची की पेंशन को रोक रखने/समपहरण के आक्षेपित आदेश को न्यायसंगत ठहराते हुए प्रत्यर्थीगण की ओर से एक प्रति शपथ पत्र दाखिल किया गया है।

5. दोनों पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना तथा अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया। याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन याची के विरुद्ध एक कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी तथा विभागीय कार्यवाही में दंड अधिरोपित करनेवाला आदेश 28.5.2001 को पारित किया गया था और अतएव, दिनांक 10.11.2009 के पत्र के अनुसरण में याची की पेंशन का समपहरण नहीं किया जा सकता। वह यह भी निवेदन करते हैं कि याची की पेंशन को रोक रखने/समपहरण करने के लिए झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन एक दूसरी कार्यवाही भी याची के विरुद्ध भी प्रारंभ नहीं की जा सकती थी। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दांडिक मामले में याची की दोषसिद्धि की गयी है। याची के विरुद्ध आरोप गंभीर है और, अतएव, झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन उसका पेंशन वापस ले लिया गया है।

6. रिट याचिका के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि याची ने विनिर्दिष्टत: एक अभिवाक उठाया है कि उसकी पूरी पेंशन को रोक रखना दोहरे दंड के समतुल्य है क्योंकि झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन एक कार्यवाही में याची को पहले ही दंडित किया जा चुका है। याची ने यह भी अभिवाक

उठाया है कि याची की पूरी पेंशन को रोक रखना नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन है। प्रत्यर्थीगण ने विनिर्दिष्ट रूप से याची के उक्त अभिवाक का खंडन नहीं किया है। प्रत्यर्थी ने मात्र इतना कथन किया है कि याची ने आपूर्तिकर्त्ताओं को मौद्रिक लाभ पहुंचाते हुए एक लोकसेवक के तौर पर अपनी स्थिति का दुरुपयोग किया है और उसके लिए दांडिक मामले में उसकी दोषसिद्धि की गयी है। यह भी कथन किया गया है कि झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(a) के अधीन पेंशन प्रदान किये जाने के लिए भावी आचरण एक विवक्षित शर्त है और प्रांतीय सरकार के पास पेंशन या इसके किसी हिस्से को रोक रखने या वापस लेने का अधिकार सुरक्षित होता है अगर सरकारी सेवक किसी गंभीर अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है या गंभीर कदाचार का दोषी होता है।

7. केंद्रीय सिविल सेवाएं (स्पष्टीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 1957 के नियम 15 का निर्वचन करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की एक संवैधानिक पीठ ने अभिनिर्धारित किया है कि अगर अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा संचालित जांच में कोई दोष है, तब अनुशासनिक प्राधिकारी जांच पदाधिकारी को उस मामले के संबंध में और जांच संचालित करने का निर्देश दे सकता है परन्तु यह किसी अन्य पदाधिकारी द्वारा एक नयी जांच संचालित करने का निर्देश नहीं दे सकता। **के॰ आर॰ देब बनाम समाहर्ता, केंद्रीय उत्पाद कर, शिलांग, जो कि AIR 1971 SC 1449** में रिपोर्ट किया गया था, के उक्त मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है:–

> *^^13- ge ;g irhr gkrk g fd fu;e 15 idV :Ik l okLro e ,d gh tkp dk ikoèkku djrk g ijUr ;g lHko g fd vxj ,d fof'k"V ekey e dkb mi;Dr tkp ugh gb g D;kfd tkp e dN xHkhj nk"k vk x;k g ;k tkp d le; dN egRoi.k xokg miyCèk ugh Fk ;k fdlh vU; dkj.k l ijhf{kr ugh fd; x; Fk] vu'kklfud ikfèkdkjh tkp ikfèkdkjh dk vkj lk{; vfHkfyf[kr dju d fy, dg ldrk gA ijUr fu;e 15 e fiNyh tkp iMrky dk i.k :i l bl vkèkkj ij vikLr dju dk dkb ikoèkku ugh g fd tkp inkfèkdkjh ;k inkfèkdkfj;k d fjikV vu'kklfud ikfèkdkjh e fo'okl mRiUu ugh djr gA vu'kklfud ikfèkdkjh d ikl lk{; ij gh iufopkj dju dh rFkk fu;e 9 d vèkhu viu gh fu"d"k ij igpu dh i;kIr 'kfDr;k gA***

8. (2006) 12 SCC 28 में रिपोर्ट किये गये **भारत संघ एवं एक अन्य बनाम कुनी सेट्ठी सत्यनारायण** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पाया है कि:–

> *^^vxj ml vkjki] ftl fnukd 23-12-2003 d Kkikd d vèkhu yxk;k x;k g] fd ,d l{ke ikfèkdkj }kjk ,d fu;fer tkp e igy gh tkp iMrky dh tk pdh Fkh] vkj vxj iR;Fkh dk mlh vkjki ij cjh fd;k tk pdk Fkk] nljh tkp ik"k.kh; ugh gkxhA***

9. (2007) 11 SCC 517 में रिपोर्ट किये गये **कन्हाईलाल बेरा बनाम भारत संघ एवं अन्य** के मामले में केंद्रीय आरक्षित पुलिस बल नियमावली, 1955 का नियम 27 माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए आया था और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

> *^^bl l lcfèkr i'u fd flfoy ykbl e fu#) dj nu dk nM fufn"V fd;k tk ldrk Fkk ;k ugh] ij ge vo:) ugh gkuk pkfg, D;kfd ge vihykFkh d fo}ku vfèkoDrk }kjk mBk; x; rd l lger g fd vu'kklfud ikfèkdkjh dk fnukd 5-4-1995 dk rkRif;r vkn'k fofèk e v leFkuh; FkkA dnh; vkjf{kr ifyl cy fu;ekoyh] 1955 dk fu;e 27 vU; d lkFk&lkFk ,d foHkkxh; tkp lpkfyr dju dh ifØ;k vfèkdfFkr djrk gA ,d vu'kklfud dk;okgh ,d ckj ikjHk dj fn; tku ij] bl vko';d :i l bld rkfdd ifj.kke rd ykuk gkrk g bldk ;g vFk gvk fd bl lcèk e ,d fu"d"k ij igp tku dh vko';drk g fd vipkjh inkfèkdkjh mld fo#) yxk; x; vkjkik dk nk"kh g ;k ughA ,d nh x;h*

*ifjfLFkfr e vkj vfèkd lk{; iLrr dju dk fun'k fn;k tk ldrk gA ijUrq mldk ;g vFk ugh gkxk fd ,d vipkjh inkfèkdkjh dk mld fo#) yxk; x;s vkjkik dk vkf'kd :i l lnk"kh vfHkfuèkkfjr dju d ckotn mUgh vkjkik ij ,d vU; tkp ikjHk fd; tku dk fun'k fn;k tk,xk ftUg igyh tkp e fl) ugh fd;k tk ldk FkkA***

10. भारत संघ बनाम के॰ डी॰ पाण्डेय एवं एक अन्य के मामले [(2002) 10 SCC 471] में रिपोर्ट किया गया) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:–

*^^tgk iLrr tkp fjikV e iR;d vkjki d lcèk e fofufn"V fu"d"k vrfo"V g] rc ekey ij fopkj dju d mijkr vu'kklfud ikfèkdkj dk lekèkku u gku ij og vkj tkp d fy, ekey dk tkp inkfèkdkjh d ikl ugh Hkt ldrk gA vxj ,lk fd;k tkrk g] bldk vFk ,d nljh tkp gkxk vkj mlh ekey e vkj tkp ugh vkj bl idkj] ,lh ifjikVh vuKkr fd; tku ij fofèk dh vknf'kdk dk n#i;kx gkxhA***

11. ''नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य के मामले'' [जो (2012) 3 SCC 580 में रिपोर्ट किया गया] के मामले में हाल ही में दिये गये एक निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जिसकी मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के पद से मुंसिफ के पद पर अवनति कर दी गयी थी, के मामले की परीक्षा करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि, ''स्पष्टीकरण को स्वीकार करके तथा इसे अपीलार्थी को संसूचित करके, उच्च न्यायालय को विभागीय कार्यवाही प्रारंभ करने का आदेश पारित करने तथा मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के पद से अपीलार्थी को मुंसिफ के पद पर भेज देने की कार्यवाही नहीं करनी थी।' माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी संपरीक्षित किया था कि सामान्य सिद्धांतों पर, एक विशिष्ट कदाचार के लिए एक आरोप के संबंध में केवल एक ही जांच हो सकती है और नियमावली भी सामान्यत: इसी का प्रावधान करती है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है:–

*^^27- oreku ekey e] ,d vkjki Kkiu fuxr fd;k x;k Fkk rFkk vihykFkh dk rkfeyk djk;k x;k FkkA vkjki Kkiu dk ,d iBu LFkk;h lfefr d fdlh dk;okgh dk fufn"V ugh djrk gA bl lcèk e Hkh dN ugh ik;k tkrk g fd D;k ioh d k;okgh fofgr ifØ;k d vulkj iuthfor dh x;h gA oLrqr] vkjki Kkiu ikIr gku d mijkr] vihykFkh u viu tokch dFku e tkp inkfèkdkjh d è;ku e ;g yk;k Fkk fd vkjkik d blh leg ij] igy ,d ukfVl fuxr dh x;h Fkh rFkk fnukd 21-12-1994 d mld Li"Vhdj.k dh ikfIr d mijkr LFkk;h lfefr u mldk Li"Vhdj.k Lohdkj dj yu d ckn leph dk;okgh dk lekIr dj fn;k Fkk vkj ml mPp U;k;ky; d egkith;d }kjk fnukd 2-2-1995 d mud i= d ekè;e l ;g llfpr fd;k x;k FkkA nkf[ky fd; x; tokch dFku e mld Li"Vhdj.k d ckotn tkp inkfèkdkjh u tkp dh dk;okfg;k dh g vkj bud lekiu d mijkr] viuh fjikV iLrr dh g ftl vu'kklfud ikfèkdkjh }kjk Lohdkj fd;k x;k gA vr,o] bu ifjfLFkfr;k e] mUgh vkjkik ij ,d nljh tkp lpkfyr djku dk dkb vkfpR; ugh g ftUg igy gVk fy;k x;k gA ;|fi nkgjk nM nu dk fl)kr ykx ugh gkrk g] fofèk doy vu'kklfud dk;okgh dh vuefr nrh g rFkk mRihMu dju dh ughA ,lh ifjikVh dh vuefr nuk ykd lok d fgr e ugh gA bu ifjfLFkfr;k e] ge vihykFkh dk fupy in ij okil Hkrtu d vk{kfir vkn'k dk ik"k.k ugh dj ldrA***

12. मामले के अभिलेख से, मैं पाता हूँ कि याची को कोई कारणपृच्छा नोटिस निर्गत किये बिना दिनांक 10.11.2009 का पत्र निर्गत किया गया है। दिनांक 10.11.2009 के पत्र से यह भी प्रतीत नहीं

होता कि विधि के किस प्रावधान के अधीन याची के पेंशन को रोक रखने के लिए उक्त पत्र निर्गत किया गया है। मैं यह भी पाता हूँ कि झारखंड पेंशन नियमावली के अधीन नियम 43(b) के अधीन अन्य आज्ञापक अपेक्षाओं का अनुपालन किये बिना याची को कोई कारणपृच्छा नोटिस प्रदान किये बिना झारखंड पेंशन नियमावली के अधीन नियम 43(b) के अधीन याची की पेंशन वापस नहीं ली जा सकती थी जो नियम नीचे प्रस्तुत किया गया है:–

"43- (a) i'ku inku fd; tku d iR;d ekey d fy, Hkkoh lnkpkj ,d foof{kr 'kÙk gkrh gA ikrh; ljdkj d ikl i'ku ;k fdlh fgLl dk jkd j[ku ;k okil yu dk vf/kdkj ljf{kr jgrk g] vxj i'ku Hkkxh xHkhj vijk/k d fy, nk"kfl) fd;k tkrk g ;k xHkhj dnkpkj dk nk"kh gkrk gA bl fu;e d v/khu lepk i'ku ;k bld fdlh fgLl dk jkd j[ku ;k okil yu d fdlh i'u ij ikrh; ljdkj dk fu.k; vfre ,o fu'pk;h gkxkA

(b) jkT; ljdkj d ikl i'ku ;k fdlh fgLl dk jkd j[ku ;k okil yu dk vf/kdkj rc Hkh ljf{kr jgrk g] pkg LFkk;h : i l ;k fofufn"V vof/k d fy,] rFkk jkT; dk dkfjr fdlh ekfæd {kfr d lep fgLl ;k fdlh v'k dk i'ku l oly dju dk vkn'k dju dk vf/kdkj Hkh ljf{kr jgrk gA vxj i'ku Hkkxh dk U;kf;d ;k foHkkxh; dk;okgh e xHkhj dnkpkj dk nk"kh ik;k tkrk g(;k lokfuofÙk d mijkr iufu;ktu ij inÙk lok ler mldh lok d nkjku dnkpkj ;k ykijokgh l ljdkj dk vkfFkd {kfr dkfjr dju okyk ik;k tkrk g%

ijUrq ;g fd&

(a) ,lh foHkkxh; dk;okgh] vxj mlh le; lfLFkr ugh dh x;h Fkh tc ljdkjh lod ;k lokfuofÙk d igy ;k iufu;ktu d nkjku M;Vh ij Fkk(

(i) jkT; ljdkj dh LohÑfr d fcuk lfLFkr ugh dh tk,xh(

(ii) fdlh ,lh ?kVuk d lc/k e gkxh tk ,lh dk;okgh d lfLFkr fd; tku d pkj l vf/kd o"k igy ?kfVr u gb gk(vkj

(iii) ,l ikf/kdkj }kjk lpkfyr dh tk,xh ,o ,l LFkku ;k LFkkuk ij tlk jkT; ljdkj fun'k dj rFkk dk;okfg;k ij ykxw gku okyh ifØ;k d vulkj gkxh ftu ij lok l c[kkLrxh dk ,d vkn'k fd;k tk ldrk g(

(b) U;kf;d dk;okfg;k] vxj lokfuofÙk d igy ;k iufu;ktu d nkjku lfLFkr u dh x;h gk tc ljdkjh lod lokjr Fkk] [kM (a) d mi[kM (ii) d vulkj lfLFkr dh tk,xh(vkj

(c) vfre vkn'k ikfjr fd; tku d igy fcgkj ykd lok vk;kx l e=.kk dh tk,xhA

Li"Vhdj.k& *bl fu;e d mí';k d fy,&*

(a) foHkkxh; dk;okgh dk ikjHk dj fn;k x;k ekuk tk,xk tc ;kph d fo#) fojfpr vkjki mll fuxr dj fn; tkr g ;k] vxj ljdkjh lod dk ,lh frfFk ij ,d iohd frfFk l fuyfcr dj fn;k x;k g(vkj

(b) U;kf;d dk;okfg;k lfLFkr dh x;h ekuh tk,xh%

(i) nkfMd dk;okfg;k d ekey e] ml frfFk dk tc ,d nkfMd U;k;ky; e ifjokn fd;k tkrk g ;k vfHk;kx i= iLrr fd;k tkrk g(vkj

*(ii) flfoy dk;okfg;k d ekey e] ml frfFk dk tc ,d flfoy U;k;ky; d ikl ,d ifjokn iLrr fd;k tkrk g] ;k ,d vkonu fd;k tkrk g] tk Hkh fLFkfr gkA***

13. झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के एक कोरे पठन पर, मैं पाता हूँ कि झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन कोई दूसरी कार्यवाही प्रारंभ नहीं की जा सकती। याची को कारणपृच्छा नोटिस निर्गत किया गया था तथा झारखंड पेंशन नियमावली के 43(b) के अधीन उसके विरुद्ध एक विभागीय कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी तथा 28.5.2001 को दंड का एक आदेश पहले ही पारित किया जा चुका था और अतएव, अगर यह मान भी लिया जाता है (जैसा कि प्रति शपथ पत्र में अभिवाक किया गया है) कि दिनांक 10.11.2009 का आदेश झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(a) के अधीन पारित किया गया है, मेरी राय है कि यह विधि में अनुमान्य नहीं है। स्वीकार्यत:, याची की समूची पेंशन को वापस लेने के लिए दिनांक 10.11.2009 के पत्र के अधीन एक निर्देश निर्गत करने के पहले याची को कोई कारणपृच्छा नोटिस निर्गत नहीं की गयी थी और उस आधार पर भी आक्षेपित आदेश विधि में दोषपूर्ण है।

14. और अधिक विवरणों में जाए बिना मैं अभिनिर्धारित करता हूँ कि प्रधान सचिव, वित्त विभाग, झारखंड सरकार के दिनांक 10.11.2009 के पत्र के अनुसरण में याची की समूची पेंशन का वापस लिया जाना विधि में अनुज्ञेय नहीं है क्योंकि याची को पूर्व में प्रारंभ की गयी एक विभागीय कार्यवाही में इसी कदाचार के लिए पहले ही दंडित किया जा चुका है। इसी कदाचार के लिए झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन एक दूसरी जांच अनुज्ञेय नहीं है।

15. परिणामत:, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। प्रत्यर्थीगण को पेंशन के बकायों के साथ याची की पेंशन तत्काल विमुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

16. व्ययों को लेकर कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; Mhu ,u iVy ,o Jh pæ'k[kj] U;k;efrx.k

एटवा सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 411 of 2002. Decided on 21st January, 2013.

सत्र विचारण सं॰ 26 वर्ष 2000 में श्री महेश प्रसाद सिन्हा, विद्वान सत्र न्यायाधीश, गुमला द्वारा पारित दिनांक 8.7.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा 9.7.2002 के दंड के आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302, 354 एवं 201—हत्या एवं साक्ष्य का गायब होना—लज्जा भंग करने का प्रयास—आजीवन कारावास—विचारण न्यायालय ने उचित रूप से गवाहों के साक्ष्य तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का विश्लेषण किया है तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अभियोजन ने अभियुक्त के विरुद्ध भा॰दं॰सं॰ धाराओं 302 एवं 201 के अधीन आरोप सिद्ध कर दिया है—अभियुक्त को गवाहों द्वारा मृतका की गर्दन काटते तथा उसका शरीर कुँए में फेंकते हुए देखा था—गवाहों का साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा सम्पोषित—अभियुक्त की दोषसिद्धि करने तथा दंडादेश प्रदान करने वाले विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय तथा आदेश में कोई दुर्बलता नहीं—अपील खारिज। (पैराएँ 14, 18 से 22)

अधिवक्तागण.—Mr. Baleshwar Yadav, For the Appellant; Mr. Ravi Prakash, A.P.P., For the Respondent.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–सत्र विचारण सं॰ 26 वर्ष 2000 में सत्र न्यायाधीश, गुमला द्वारा पारित दिनांक 8/9 जुलाई, 2002 के निर्णय तथा दोषसिद्धि एवं दंड के आदेश के विरुद्ध वर्तमान दांडिक अपील दाखिल की गयी है।

2. एक मात्र अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए एवं भारतीय दंड संहिता की धारा 354 तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्धि की गयी तथा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए सश्रम आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश सुनाया गया है तथा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 354 एवं 201 के अधीन अपराध के लिए और दो वर्षों का सश्रम कारावास भुगतने का दंडादेश भी सुनाया गया है। सत्र विचारण सं॰ 26 वर्ष 2000 में सत्र न्यायाधीश, गुमला द्वारा पारित दिनांक 8/9 जुलाई, 2002 के दोषसिद्धि तथा दंडादेश के निर्णय एवं आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान दांडिक अपील दाखिल की गयी है।

3. 9.9.1999 को लगभग 8 बजे अपराह्न में, सूचनादाता राजेंद्र साहू ने पुलिस को फर्द बयान दिया था तथा उक्त फर्द बयान के आधार पर, अभियुक्त ऐटवा सिंह के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376, 302, 201 के अधीन गुमला पुलिस थाना केस सं॰ 169 वर्ष 199 दर्ज किया गया था।

4. अभियोजन का मामला संक्षेप में यह है कि 9.9.1999 को सूचनादाता की पुत्री सुनीता कुमारी 7 बजे पूर्वाह्न में भैंस को घास चराने के लिए गांव के उत्तर की ओर गयी थी। एक अन्य सह ग्रामीण रयमुनी देवी भी उसके साथ अपने पशु को घास चरा रही थी। बंधु लोहरा एवं अमीन पुजर भी अपने मवेशी के साथ निकट ही थे। सूचनादाता राजेंद्र साहू द्वारा यह भी कथन किया गया है कि लगभग 12 बजे दोपहर में जब उसकी पुत्री सुनीता कुमारी खेत में अवस्थित कुयें के चबूतरे पर बैठी हुई थी, एटवा सिंह पीछे से आया था तथा उसकी पुत्री को पकड़ लिया था। उसने बल पूर्वक उसकी पुत्री के साथ बलात्संग किया था जब उसकी पुत्री ने संत्रास किया था, एटवा सिंह ने हसुआ से उसकी पुत्री की गर्दन काट दी थी जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गयी थी। अभियुक्त एटवा सिंह उसकी पुत्री का शव कुयें में फेंक दिया था। रयमुनी देवी ने संत्रास किया था और जब सूचनादाता घटना स्थल की ओर दौड़ा था, सूचनादाता एवं अन्य लोगों को देखकर अभियुक्त ऐटवा सिंह भाग गया था। सूचनादाता ने दावा किया है कि सबूर साहू, बंधु लोहरा एवं अमीन मांझी ने भी घटना स्थल से अभियुक्त एटवा सिंह को भागते हुए देखा है। तत्पश्चात्, सूचनादाता एवं अन्य सहग्रामीणों ने अभियुक्त एटवा सिंह को खोजना प्रारंभ कर दिया था। सूचनादाता ने कथन किया है कि उसकी पुत्री के साथ बलात्संग कारित करने के उपरांत, अभियुक्त एटवा सिंह ने उसकी गर्दन काटकर उसकी पुत्री को मार डाला था तथा उसका शव कुयें में फेंक दिया था। अन्वेषण के उपरांत, पुलिस ने एकमात्र अभियुक्त के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया था। अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376, 302 एवं 201 के अधीन आरोप विरचित किये गये थे। विचारण के दौरान, अभियोजन ने 9 गवाहों को परीक्षित किया है।

5. अ॰सा॰ 1 रयमुनी देवी ने अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। वह घटना स्थल पर थी। उसने कथन किया है कि सुनीता कुमारी कुयें के चबुतरे पर बैठी हुई थी और वह वहां से भैंस को देख रही थी। इस गवाह ने घटना को देखा है। जब उसने संत्रास किया था, अन्य लोग वहां आ गये थे और तत्पश्चात् अभियुक्त घटना स्थल से भाग गया था। इस गवाह ने स्पष्टत: कथन किया है कि एटवा सिंह ने मृतक का शरीर कुयें में फेंक दिया था। इस गवाह की प्रति परीक्षा में, बचाव पक्ष ऐसा कुछ भी सामने लाने में सक्षम नहीं रहा है जो बचाव पक्ष का समर्थन कर सकता था।

6. अभियोजन ने अ०सा० 2 के तौर पर सबूर साहू की परीक्षा की है। उसने भी न्यायालय में अभिसाक्ष्य दिया है कि जब रयमुनी देवी ने संत्रास किया था, वह राजेंद्र साह, अमीन पुजर एवं बंधु लोहरा के साथ घटना स्थल पर दौड़ते हुए आया था और देखा था कि एटवा सिंह ने सुनीता कुमारी की गर्दन काटने के उपरांत उसे कुयें में फेंक दिया था। उन्होंने कुयें से सुनीता कुमारी को बाहर निकाला था परन्तु उसकी मृत्यु हो चुकी थी। इस गवाह ने कथन किया है कि अभियुक्त एटवा सिंह समशेरा बाजार में पूर्व में भी हत्या कारित कर चुका था। इस गवाह ने न्यायालय में अभियुक्त एटवा सिंह की शिनाख्त भी की है। इस गवाह ने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर अपना हस्ताक्षर किया है। वह मृतका सुनीता कुमारी का चाचा है। इस गवाह ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन अपना बयान भी दिया है तथा इस पर अपने हस्ताक्षर को स्वीकार किया है जो प्रदर्श-1 है। प्रति परीक्षा में भी, यह गवाह अपने बयान पर कायम रहा है कि उसने अभियुक्त को मृतका की गर्दन काटते हुए तथा मृतका का शव कुयें में फेंकते हुए देखा है।

7. एक अन्य गवाह अमीन पुजर की अ०सा०3 के तौर पर परीक्षा की गयी है। उसे सूचनादाता के फर्दबयान में एक गवाह के तौर पर नामजद किया गया है। वह घटना का एक चश्मदीद गवाह भी है। इस गवाह ने न्यायालय में यह भी कथन किया है कि एटवा सिंह झाड़ियों के पीछे से आया था तथा उसने सुनीता कुमारी को पकड़ लिया था तथा जब उसने उसे पकड़ा था, उसने संत्रास किया था। जब हम वहां दौड़ते हुए गए थे, अभियुक्त एटवा सिंह ने सुनीता कुमारी को मार दिया था तथा उसका शरीर कुयें में फेंक दिया था। उन्होंने एटवा सिंह को पकड़ने का प्रयास किया था परन्तु वह भाग गया। प्रति परीक्षा में, इस गवाह ने अभिसाक्ष्य दिया है कि कुआँ टोंगरी गक्ष से दिखाई पड़ता था। यद्यपि इस क्षेत्र में कुछ झाड़ियां है परन्तु इस गवाह ने घटना को देखा है। उसने प्रति परीक्षा में यह भी कथन किया है कि उसने सुनीता कुमारी की गर्दन पर कटने का निशान देखा था। उसने प्रति परीक्षा में यह भी कथन किया है कि वह भैरों खड़िया के कुयें के दक्षिण की ओर मवेशी चरा रहा था।

8. सीताराम साहू एक औपचारिक गवाह है जो मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट का एक गवाह है। इस गवाह ने भी अभिसाक्ष्य दिया है कि सुनीता कुमारी की हत्या कर दी गयी थी।

9. सूचनादाता के फर्दबयान में जिस एक अन्य गवाह का नाम लिया गया है वह बंधु लोहरा है। उसे अ०सा० 5 के तौर पर अभियोजन द्वारा परीक्षित किया गया है। उसने भी अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। उसने ऐटवा सिंह को सुनीता कुमारी की गर्दन काटते तथा उसका शरीर कुयें में फेंकते हुए देखा है। उसने अन्य के साथ कुयें से सुनीता कुमारी का शव बाहर निकाला था, तथापि उसकी मृत्यु हो चुकी थी। उसने भी न्यायालय में अभियुक्त ऐटवा सिंह की शिनाख्त की है।

10. अ०सा० 6 इस मामले का सूचनादाता है। वह मृतका सुनीता कुमारी का पिता है। उसने फर्दबयान पर अपने हस्ताक्षर की शिनाख्त की है जिसे प्रदर्श-2 के तौर पर अंकित किया गया है। वह एक चश्मदीद गवाह है। उसने पूर्ण रूप से अभियोजन मामले का समर्थन किया है। उसने न्यायालय में कथन किया है कि वह भी घास काटने के लिए वहां गया था। जब उसकी पुत्री रयमुनी देवी ने शोर मचाया था, वह उधर की ओर दौड़ पड़ा था। वह घटनास्थल के निकट था और उसने एटवा सिंह को उसकी पुत्री की गर्दन काटते तथा भैरों खड़िया के खेत में उसका शरीर फेंकते हुए देखा था। उसने यह भी कथन किया है कि ऐटवा सिंह ने उसकी पुत्री के साथ बलात्संग कारित करने का प्रयास किया था तथा जब उसकी पुत्री ने प्रतिरोध किया था तब एटवा सिंह ने उसे मार डाला था तथा उसका शरीर कुयें में फेंक दिया था। इस गवाह ने यह भी कथन किया है कि अन्य व्यक्तियों, अर्थात्, सबूर साहू, अमीन पुजर एवं बंधु लोहरा भी वहां दौड़ते हुए आये थे और उन्होंने भी घटना को देखा था। वे भी मवेशी को घास चरा रहे थे। उसने दरोगा को अपना बयान दिया था जिसने उसका कथन लिखित में दर्ज किया था तथा उसके बयान पर,

फर्दबयान अभिलिखित किया गया है जिसे प्रदर्श 2 के तौर पर अंकित किया गया है। उसने भी न्यायालय में, कठघरे में मौजूद अभियुक्त ऐटवा सिंह की शिनाख्त की है। यह गवाह भी प्रति परीक्षा के परीक्षण पर खरा उतरा है तथा इस गवाह से कुछ भी तात्विक सामने नहीं लाया जा सका है। प्रति परीक्षा में, उसने कथन किया है कि अभियुक्त एटवा सिंह के साथ इसकी पुरानी शत्रुता नहीं थी।

11. गणेश साहु की अ०सा० 7 के तौर पर परीक्षा की गयी है। घटना के समय, वह अपने घर पर था जब उसने सुना कि एटवा सिंह ने सुनीता कुमारी को मार दिया है, वह घटना स्थल पर दौड़ते हुए आया था और वहां उसने शव को देखा था। उसने मृतका की कटी गर्दन देखी है। उसने भी न्यायालय में अभियुक्त एटवा सिंह की शिनाख्त की है। इस गवाह ने यह भी कथन किया है कि एटवा सिंह पहले भी हत्या कारित कर चुका है।

12. डॉ० मानवेंद्र कुमार सिन्हा द्वारा शव का पोस्टमार्टम परीक्षण किया गया था। उन्होंने पोस्टमार्टम परीक्षण रिपोर्ट को सिद्ध किया है जिसे प्रदर्श 3 के तौर पर अंकित किया गया है। इस गवाह को अ०सा० 8 के तौर पर परीक्षित किया गया है। उन्होंने आंतरिक रूप से मध्य रेखा से प्रारंभ होने वाला तथा पिछले हिस्से से होकर गुजरने वाला 5"×1"/2"×3" का विदीर्ण घाव गर्दन के दायें हिस्से में पाया था। उपहति हसुआ जैसे तीक्ष्ण धारदार एवं कठोर उपकरण द्वारा कारित की गयी थी। उन्होंने यह भी कथन किया है कि गर्दन में हुई उपहति के कारण उत्पन्न सदमें एवं रक्तस्राव से मृत्यु कारित हुई थी। प्रति परीक्षा में भी उन्होंने कथन किया है कि तीक्ष्ण धारदार हथियार द्वारा उपहति संभव है।

13. अन्वेषण पदाधिकारी की अ०सा०9 के तौर पर परीक्षा की गयी है। उसने फर्दबयान पर अपने हस्ताक्षर की शिनाख्त किया है जिसे प्रदर्श 4 के तौर पर अंकित किया गया है। फर्दबयान लिखने के उपरांत, उसने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया है तथा घटना स्थल का निरीक्षण किया है। उसने कथन किया है कि उसने गवाहों के बयान लिये थे तथा अभियुक्त को गिरफ्तार करने का प्रयास किया था, तथापि, अभियुक्त को फरार पाया गया था।

14. विद्वान विचारण न्यायालय ने उपयुक्त रूप से गवाहों के साक्ष्य तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का विश्लेषण किया है तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अभियोजन ने युक्तिसंगत संदेह से परे अभियुक्त ऐटवा सिंह के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं 201 के अधीन आरोप सिद्ध किया है। विचारण न्यायालय ने यह भी पाया है कि अभियोजन भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोप सिद्ध करने में सक्षम नहीं रहा है, तथापि, अभियोजन भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन आरोप सिद्ध करने में सक्षम रहा है। तदनुसार, अभियुक्त ऐटवा सिंह की भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 302, 354 एवं 201 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि की गयी है।

15. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता तथा विद्वान अपर लोक अभियोजक को सुना है

16. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अभियोजन साक्षी अ०सा 2, अ०सा 3, अ०सा 5 एवं अ०सा 6 चश्मदीद गवाह नहीं हैं क्योंकि वे घटना के वास्तविक स्थल पर मौजूद नहीं थे। अभियोजन साक्ष्य विलोपों, तात्विक विरोधात्मकताओं एवं सुधारों से ग्रस्त है। अभियोजन साक्षियों पर भरोसा नहीं किया जा सकता तथा अपीलार्थी की दोषसिद्धि का आदेश तथा दंडादेश अपास्त किये जाने योग्य है।

17. दूसरी ओर, विद्वान अपर लोक अभियोजक ने निवेदन किया है कि अभियोजन का मामला अ०सा० 1, अ०सा 2, अ०सा 3, अ०सा 5 एवं अ०सा 6 के विश्वसनीय साक्ष्य पर आधारित है। चक्षुदर्शी साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा सम्पोषित है तथा अभियोजन गवाहों के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। उन्होंने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन किया है।

18. हम इन गवाहों के साक्ष्य से पाते हैं कि उन्होंने न्यायालय में स्पष्ट रूप से कथन किया है कि शोर सुनने के उपरांत वे घटना स्थल पर आये थे और उन्होंने अभियुक्त एटवा सिंह को मृतका की गर्दन काटते तथा उसका शरीर कुयें में फेंकते हुए देखा था। जब उन्होंने अभियुक्त ऐटवा सिंह को पकड़ने का प्रयास किया था, वह भाग गया था। प्रति परीक्षा में इन गवाहों ने अपने पिछले बयान को दोहराया है और ये गवाह प्रति परीक्षा की जांच में खरे उतरे हैं। इन गवाहों के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। इन गवाहों के साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा भी सम्पोषित हैं।

19. विद्वान विचारण न्यायालय ने सूक्ष्मतापूर्वक अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य की संवीक्षा की है और यह इस तथ्य से प्रकट है कि सूचनादाता के ही इस बयान को ध्यान में रखकर कि अभियुक्त ऐटवा सिंह ने उसकी पुत्री के साथ बलात्संग कारित करने का प्रयास किया था, विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोप को सिद्ध नहीं पाया है। हम विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त एटवा सिंह की दोषसिद्धि करते हुए तथा दंडादेश सुनाते हुए पारित आदेश तथा निर्णय में कोई दुर्बलता नहीं पाते।

20. अभिलेख पर मौजूद पूर्वोक्त साक्ष्यों की दृष्टि में अभियोजन ने मृतका सुनीता कुमारी के हत्या का अपराध युक्तिसंगत संदेह से परे सिद्ध किया है। यह हत्या वर्तमान अपीलार्थी द्वारा कारित की गयी है। अभियोजन ने भा॰दं॰सं॰ धाराएँ 302, 354 एवं 201 के अधीन आरोप सिद्ध किया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है।

21. हम एतद द्वारा सत्र विचारण सं॰ 26 वर्ष 2000 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दंडादेश के निर्णय को बरकरार रखते हैं।

22. इस अपील में कोई दम नहीं है।

23. अतएव, इसे एतद द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; idk'k rkfr;k] e[; U;k;k/kh'k ,o t ;k jk; U;k;efr

कृष्ण कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4511 of 2012. Decided on 21st January, 2013.

झारखंड चिकित्सीय परिचर्या नियमावली, 1947—नियम 27—चिकित्सीय प्रतिपूर्ति—यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया—याची का भाई याची के लिए दाता बन गया था—याची के भाई के चिकित्सीय खर्चों का दावा इस आधार पर अस्वीकृत कि याची का भाई आश्रित नहीं है—याची का भाई याची पर आश्रित था या नहीं, यह बिल्कुल ही अप्रसांगिक है—यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया में दो शल्य क्रियाएं होती हैं, एक दाता के शरीर पर तथा एक रोगी के शरीर पर—दाता के शरीर की शल्य क्रिया के बिना, स्वयं याची उपचार प्राप्त नहीं कर सकता था—ऐसी शल्य क्रिया में न केवल रोगी-कर्मचारी का एक परिवार का सदस्य चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार है बल्कि ऐसा व्यक्ति भी चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार होगा जिसका रोगी-कर्मचारी से कोई संबंध न हो—राज्य को सभी चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति करने का आदेश दिया गया। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.—M/s Anil Kumar, Shashi Kumar, For the Petitioner; J.C. to A.G., For the Respondents.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची ने न्यायिक पदाधिकारी का पद धारण करते हुए यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया करवाई थी जिसके लिए याची चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार था। तथापि, याची के यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया के लिए याची का भाई याची के लिए दाता बन गया था। याची को प्रारंभ में ईलाज के लिए 20,80,000/- रुपये मंजूर किये गये थे और याची ने सफल यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया के उपरांत विपत्र प्रस्तुत किये थे जिनमें याची के भाई के शरीर से याची के शरीर में यकृत के प्रत्यारोपण के उद्देश्य के लिए याची के भाई की शल्य क्रिया पर आया खर्च सम्मिलित था। राज्य सरकार ने दिनांक 13.7.2012 की अपनी अपनी संसूचना के माध्यम से याची के भाई के चिकित्सीय खर्चों का दावा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया था कि संकल्प 260(10) दिनांक 17.7.2007 के निबंधनों में याची का भाई आश्रित नहीं है जो कर्मचारियों एवं उनके आश्रितों के ही चिकित्सीय खर्चों की अनुमति देता है और याची का भाई याची पर आश्रित नहीं है। अतएव, उस चिकित्सीय विपत्र के खर्चे की मंजूरी के लिए प्रत्यर्थी-राज्य के विरुद्ध निर्देश की इप्सा करते हुए रिट याची द्वारा यह रिट याचिका दाखिल की गयी है जो याची के यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया के लिए याची के भाई पर हुआ है।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि अनुमण्डल न्यायिक दंडाधिकारी, बोकारो के तौर पर न्यायिक पदाधिकारी के पद पर रहते हुए याची को अपने कार्यालय में ही एक गंभीर बीमारी हुई थी जिसके परिणामत: 5.2.2009 को खुन की उल्टी हुई थी। याची के चिकित्सीय उपचार के लिए उसे बोकारो जेनरल अस्पताल ले जाया गया था। चिकित्सीय जांच-पड़ताल एवं इंडोस्कोपी परीक्षण के दौरान, यह पता चला था कि याची यकृत की बीमारी से ग्रस्त है। 6.2.2009 को, बोकारो जेनरल अस्पताल के चिकित्सकों ने याची के इलाज के लिए उसका मामला कोठारी चिकित्सा केंद्र, कोलकाता निर्दिष्ट कर दिया था जो याची की यकृत की समस्या के इलाज के लिए निकटतम बेहतर स्थान था। याची को उक्त अस्पताल तत्काल ले जाया गया था। वहां याची को एक पुरानी यकृत की बीमारी से ग्रस्त पाया गया था और, अतएव, यह सलाह दी गयी थी कि याची को यकृत प्रत्यारोपण कराना होगा। याची के शरीर में प्रत्यारोपण के लिए यकृत का एक हिस्सा उपलब्ध कराने हेतु वशिष्ठ नारायण गौतम नामक याची के भाई को उपयुक्त उम्मीदवार पाया गया था। याची एवं उसके भाई दोनों को ही 6.1.2011 को अस्पताल में भर्ती करा दिया गया था और HCV संबंधित (decompensated) यकृत की बीमारी का पता चलने के कारण 7.1.2011 को शल्य क्रिया पूरी की गयी थी। प्रत्यारोपण सफल हुआ था तथा याची के भाई को 18.1.2011 को अस्पताल से छुट्टी दे दी गयी थी तथा याची को 19.1.2011 को छुट्टी दे दी गयी थी। चूंकि ये आपातकालीन मामला था, अत: राज्य के बाहर इलाज के पश्चातवर्ती अनुमोदन के लिए तथा याची द्वारा किये गये खर्च की अनुशंसा के लिए भी मामला चिकित्सीय बोर्ड के समक्ष रखा गया था जिसके लिए 30.4.2011 को चिकित्सा बोर्ड द्वारा निर्णय लिया गया था। याची ने 28,47,169 रुपये के अपने कुल चिकित्सीय विपत्र की स्वीकृति का आग्रह करते हुए 7.4.2012 को प्रधान जिला न्यायाधीश, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम के यहां अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत किया था जिस राशि में से उसे पहले ही 20,80,000/- रुपये का भुगतान किया जा चुका था जो कि स्वाभाविक रूप से अत्यावश्यकता तथा आपात स्थिति के कारण भी इलाज के लिए एक अग्रिम भुगतान था। याची ने 2,72,737/- रुपये का भी एक विपत्र प्रस्तुत किया था जिसे शल्य क्रिया के पहले की अवधि का चिकित्सीय विपत्र बताया गया है।

4. चाहे स्थिति जो भी हो, हमें वर्तमान में याची के चिकित्सीय विपत्र की कुल राशि से लेना देना नहीं है। इस रिट याचिका में विवाद केवल इस मुद्दे तक सीमित है कि याची, जो एक यकृत के गंभीर समस्या से ग्रस्त था और जिसे अपना जीवन बचाने के लिए किसी दाता से यकृत का एक हिस्सा प्राप्त करके चिकित्सकों द्वारा यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया कराने की सलाह दी गयी थी, यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया की प्रक्रिया में आये सभी खर्चों का हकदार था या नहीं जिनमें दाता की शल्य क्रिया एवं चिकित्सीय खर्चें सम्मिलित हैं। अस्पताल द्वारा याची तथा याची के भाई के लिए दी गयी 'छुट्टी सारांश' के रूप में हमारे समक्ष उपलब्ध सामग्रियों की दृष्टि में यह स्पष्ट रूप से इंगित है कि याची एच॰ सी॰ वी॰ से संबंधित (de compensated) यकृत रोग की बीमारी से ग्रस्त था और इसका इलाज चला था। उसे 6.1.2011 को अस्पताल में भर्ती कराया गया था तथा उसके भाई को याची के सफल यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया के उद्देश्य के लिए उसके यकृत का एक हिस्सा प्रदान करने हेतु एक उपयुक्त व्यक्ति पाया गया था। 7.1.2011 को याची के भाई के शरीर से यकृत को बाहर निकालने के उपरांत इसे 7.1.2011 को याची के शरीर में प्रत्यारोपित कर दिया गया था। याची के भाई द्वारा यकृत के इस हिस्से के दान के बिना, याची वह इलाज नहीं करा सकता था जो उसके जीवन को बचाने के लिए अनिवार्य था। अतएव, याची के शरीर में यकृत के प्रत्यारोपण की पूरी प्रक्रिया में याची के भाई के शरीर की हुई शल्य चिकित्सा की प्रक्रिया सम्मिलित है और यह दोनों न केवल एक दूसरे से अपृथक्करणीय रूप से संबंधित हैं। याची के भाई की शल्य क्रिया याची के इलाज के लिए आधारभूत उपचार था। अतएव, याची का भाई याची पर निर्भर था या नहीं, यह बिल्कुल ही अप्रासांगिक है। यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया में दो शल्य क्रियाएं सम्मिलित होती हैं, एक दाता पर होती हैं तथा एक रोगी के शरीर पर होती है। दाता के शरीर की शल्य क्रिया के बिना, स्वयं याची का इलाज नहीं हो सकता था तथा इस प्रकार के मामले में अपनी जान बचाने के लिए ऐसा करना था। न केवल रोगी-कर्मचारी के परिवार का एक सदस्य ऐसी शल्य क्रिया के चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार है बल्कि कोई ऐसा भी व्यक्ति चिकित्सीय खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार होगा जिसका रोगी-कर्मचारी के साथ कोई संबंध न भी हो। अतएव, राज्य सरकार ने त्रुटिपूर्ण रूप से परिपत्र 260 (10) दिनांक 17.7.2007 पर भरोसा किया था।

5. यह विवादित नहीं है कि याची सरकार का एक कर्मचारी होने के नाते अपने सभी चिकित्सीय उपचार संबंधी खर्चों की प्रतिपूर्ति का हकदार था और चूंकि याची के भाई की शल्य क्रिया स्वयं याची के इलाज के लिए अनिवार्य थी, अत: यह याची के उपचार का एक चिकित्सीय विपत्र है यद्यपि यह याची के भाई, जो कि दाता है, के शरीर पर हुई शल्य क्रिया के कारण उद्‌भूत है।

6. अतएव, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है तथा प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा पारित दिनांक 13.7.2012 का आदेश अपास्त किया जाता है। प्रत्यर्थी-राज्य को याची द्वारा उठाये गये सभी चिकित्सीय खर्चों तथा साथ ही उन खर्चों की प्रतिपूर्ति करने का निर्देश दिया जाता है जो याची के यकृत प्रत्यारोपण शल्य क्रिया के उद्देश्य के लिए याची के वशिष्ठ नारायण गौतम नामक भाई के शरीर पर हुई शल्य क्रिया पर उपगत हुए हैं। चिकित्सीय विपत्र की मंजूरी की प्रक्रिया इस आदेश की एक प्रतिलिपि की प्राप्ति की तिथि से एक महीने की एक अवधि के भीतर पूरी कर ली जाएगी।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मो० कबीर (798 में)

संतोष कुमार सिंह (810 में)

cuke

भारत संघ एवं अन्य (दोनों में)

W.P. (C) Nos. 798 with 810 of 2013. Decided on 13th February, 2013.

सार्वजनिक परिसर (अनाधिकृत अधिभोगियों का निष्कासन) अधिनियम, 1971—धारा 3—निष्कासन नोटिस—याचीगण ने उन विक्रेताओं से निबंधित विक्रय विलेखों के अधीन भूमि खरीदने का दावा किया जिनके पक्ष में राज्य प्राधिकारों द्वारा पूर्व में इनका बंदोबस्त किया गया था—नोटिस में उस जमीन का उपयुक्त वर्णन अनुपस्थित है जिसका कथित रूप से याचीगण द्वारा अतिक्रमण किया गया है—यह एक उपयुक्त नोटिस की अपेक्षा होती है कि व्यथित पक्षों के विरुद्ध किसी प्रतिकूल आदेश के पारित किये जाने के पहले इसके विरुद्ध उन्हें अभ्यावेदन करने का उपयुक्त अवसर प्रदान करने के लिए इसमें आवश्यक विवरण अंतर्विष्ट हों—यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का एक पहलू है अन्यथा यह एक कोरी औपचारिकता है—आक्षेपित नोटिस एवं आदेश निरस्त। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.—M/s Shresth Gautam, Raja Ravi Shekhar, For the Petitioners; Mr. Ram Nivas Roy, For the Respondents.

आदेश

जैसा कि कार्यालय द्वारा निर्दिष्ट किया गया है, त्रुटियों का कथित रूप से उपचार कर लिया गया है, परन्तु आदेशों के लिए सुनवाई के अधीन रिट याचिका-W.P(C) सं० 798 वर्ष 2013 सूचीबद्ध की गयी है।

2. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

3. इन दोनों रिट याचिकाओं में, याचीगण परिशिष्ट 1 एवं 3 में अंतर्विष्ट परिसम्पदा पदाधिकारी, पूर्वी रेलवे, मालदा डिवीजन की नोटिस तथा आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा याचीगण को प्रश्नाधीन जमीन खाली करने के लिए कहा गया है।

4. याचीगण के अनुसार, प्रश्नाधीन जमीन उन विक्रेताओं से निबंधित विक्रय विलेखों के अधीन खरीदे जाने के कारण उनकी है जिनके पक्ष में इनका राज्य प्राधिकारों द्वारा पूर्व में बंदोबस्त किया गया था।

5. सम्पूरक शपथ पत्र के परिशिष्ट 4 को निर्दिष्ट करते हुए, यह निवेदन किया गया है कि बंदोबस्ती पदाधिकारी, दुमका ने अन्य व्यक्तियों के पक्ष में अतिरेक भूमि का बंदोबस्त कर दिया था, जिन्हें पहले रेलवे द्वारा अर्जित किया गया था। परिशिष्ट-5 निजी रैयतों के पक्ष में बंदोबस्त दर्शाने वाली खतियान पर्ची है, तत्पश्चात् परिशिष्ट-6 वह विक्रय विलेख है जिसके द्वारा याचीगण ने पहली रिट याचिका में याची की पत्नी के नाम से तथा दूसरी रिट याचिका में याची के पिता के नाम से उन विक्रेताओं से इसी जमीन को खरीदने का दावा किया था जिनकी जमीन का पूर्व में उनके पूर्वाधिकारियों के पक्ष में बंदोबस्त किया गया था।

6. आक्षेपित नोटिस तथा सार्वजनिक परिसर (अनाधिकृत अधिभोगियों का निष्कासन) अधिनियम, 1971 के अधीन शक्तियों के तात्पर्यित इस्तेमाल में पारित आदेशों को भी चुनौती देने का आधार यह

है कि जमीन के किसी विवरण के बिना नोटिस पूर्णत: अस्पष्ट है जिसके द्वारा उन्हें सीधे ही अपने अधिवासों से हटाये जाने के लिए कहा गया है।

7. परिशिष्ट-1 पर मौजूद नोटिस तथा परिशिष्ट-3 पर मौजूद आदेश के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि इसमें उस जमीन का उपयुक्त वर्णन नहीं है, जिसका कथित रूप से इन याचीगण द्वारा अतिक्रमण किया गया है, जिसको आधार बनाकर वे अपने बचाव में उपयुक्त जवाब प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हो सके। यह एक उपयुक्त नोटिस की अपेक्षा है कि व्यथित पक्षों के विरुद्ध कोई प्रतिकूल आदेश पारित किये जाने के पहले इसके विरुद्ध उन्हें अभ्यावेदन करने का उपयुक्त अवसर प्रदान करने के लिए इसमें आवश्यक विवरण अंतर्विष्ट होने चाहिए। यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का एक पहलू है अन्यथा यह एक कोरी औपचारिकता है।

8. इन परिस्थितियों में, परिशिष्ट-1 एवं 3 में अंतर्विष्ट आक्षेपित नोटिस एवं आदेश अभिखंडित किये जाते हैं।

9. तथापि, जमीन का उपयुक्त वर्णन अंतर्विष्ट करने वाली उपयुक्त नोटिस को निर्गत करने, जिसका कथित रूप से याचीगण द्वारा अतिक्रमण किया गया है, तथा 1971 के अधिनियम के निबंधनों में उपयुक्त अवसर प्रदान करने के उपरांत विधि के अनुसार आदेश पारित करने की कार्यवाही का विकल्प प्रत्यर्थीगण के लिए खुला होगा।

10. इसे यहां स्पष्ट किया जाए कि इसमें किया गया कोई भी संपरीक्षण मामले के गुणावगुणों पर की गयी टिप्पणी नहीं मानी जाएगी क्योंकि न्यायालय विवाद के गुणावगुणों में नहीं गया है।

11. तदनुसार, यें रिट याचिकाएं पूर्वोक्त निबंधनों में निस्तारित की जाती हैं।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

अश्विनी कुमार सृहन उर्फ् ए०के० सृहन

cuke

झारखंड राज्य

W.P. (C) No. 1630 of 2008. Decided on 24th January, 2013.

न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम, 1948—धारा 4—नीलाम-पत्र मामला—एकपक्षीय कार्यवाही समाप्त की गयी—याची ने अपीलीय प्राधिकार के समक्ष रूचि नहीं दिखायी है तथा लगातार तिथियों पर अनुपस्थित रहा है जबकि राज्य के अधिवक्ता मौजूद थे तथा व्यतिक्रम के कारण अपील खारिज कर दी गयी थी—बर्खास्तगी का आदेश वापस लेने के लिए कोई आवेदन नहीं दिया गया था—न्यूनतम पारिश्रमिक का पूरा मामला समाप्त हो चुका है तथा अपीलीय आदेश भी अंतिमता प्राप्त कर चुका है—रिट याचिका भी दो से अधिक वर्षों के उपरांत दाखिल की गयी थी—न्यायालय याची को कोई अनुतोष प्रदान करने का इच्छुक नहीं है। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. S.N. Das, For the Petitioner; J.C. to G.P.-I, For the State.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची ने न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम, 1948 के अधीन याची के विरुद्ध प्रारंभ की गयी समूची कार्यवाही, विविध अपील सं० 03/95-96 में पारित दिनांक 17.6.2005 के आदेश तथा नीलाम पत्र केस सं० 01/1995-96 के समूचे आदेशों को भी इन आधारों पर अवैधानिक बताकर चुनौती देते

हुए यह रिट याचिका दाखिल किया है कि निजी प्रत्यर्थीगण द्वारा अपने आपको ही कर्मचारी बताकर संस्थित न्यूनतम पारिश्रमिक मामला न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम के अधीन अंतर्विष्ट किसी अनुसूची के अंतर्गत आच्छादित नहीं था। निजी प्रत्यर्थीगण ने एक परिवाद किया है तथा उस परिवाद पर शास्ति के साथ न्यूनतम पारिश्रमिक की राशि की वसूली के लिए याची के विरुद्ध 31 मई, 1994 को श्रम प्रवर्तन पदाधिकारी की निशानदेही पर न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम के अधीन कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी। उक्त कार्यवाही का दिनांक 21 सितम्बर, 1995 के आदेश द्वारा याची को नोटिस के वैध रूप से तामिला कराये जाने को मानते हुए एकपक्षीय रूप से समापन हुआ था क्योंकि उसने नोटिस को स्वीकार करने से इंकार कर दिया था।

3. याची पहले राशि के पचास प्रतिशत के पूर्व भुगतान का अभित्यजन इप्सित करते हुए इस न्यायालय के समक्ष आया था जब इस न्यायालय ने CWJC सं० 4165/1996 (R) में अन्य मामलों में दिये गये निर्णय की दृष्टि में अपील ग्रहण करने के पहले राशि के 50 प्रतिशत को जमा करने पर अपीलार्थी को बाध्य किये बिना विधि के अनुसार विवाद की सुनवाई करने तथा निर्णय करने का अपीलीय प्राधिकार को निर्देश दिया था। तथापि, यह प्रतीत होता है कि अपीलीय प्राधिकार ने अपील की सुनवाई करने की कार्यवाही की थी तथा दिनांक 17.6.2005 के आदेश द्वारा इसे व्यतिक्रम के कारण खारिज कर दिया गया था।

4. पूर्वोक्त आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि याची ने अपीलीय प्राधिकार के समक्ष रूचि नहीं ली है और लगातार तिथियों तक अनुपस्थित रहा है जबकि राज्य के अधिवक्ता मौजूद थे। मामले की उस दृष्टि में, व्यतिक्रम के कारण अपील खारिज कर दी गयी थी। याची द्वारा दाखिल विविध अपील के प्रत्यास्थापन के लिए वह पुनः आवेदन की सुनवाई करने हेतु अपीलीय प्राधिकार को एक निर्देश देने के लिए पुनः इस न्यायालय के समक्ष आया था। इस न्यायालय ने WP(L) सं० 4927/2005 में दिनांक 22 नवम्बर, 2005 के आदेश से अपर समाहर्ता, रांची, अर्थात्, अपीलीय प्राधिकारी को प्रत्यास्थापन आवेदन 2 महीनों की एक अवधि के भीतर एक युक्तिसंगत आदेश पारित करके निस्तारित करने का निर्देश दिया था, अगर वह पहले ही निस्तारित नहीं किया गया हो। तत्पश्चात्, अपीलीय प्राधिकारी ने 20 दिसम्बर, 2005 का आदेश पारित किया है, इसके द्वारा वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि याची द्वारा किये गये दावानुसार विविध अपील सं० 3/1995-96 के प्रत्यास्थापन के लिए अभिलेख पर कोई प्रत्यास्थापन आवेदन नहीं था और, तदनुसार, पूर्व में पारित बर्खास्तगी के आदेश को वापस लेने के लिए कोई आवेदन नहीं दिया गया था। इस दौरान, जैसा कि पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन से यह प्रतीत होता है, नीलाम-पत्र कार्यवाही जारी रही थी तथा सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिनिर्णित राशि याची से वसूल ली गयी है। यह भी प्रतीत होता है कि यद्यपि अपीलीय प्राधिकार ने 20 दिसम्बर, 2005 को यह अभिनिर्धारित करते हुए एक आदेश पारित किया था कि अपील के प्रत्यास्थापन की इप्सा करते हुए अपीलार्थी की ओर से दाखिल कोई प्रत्यास्थापन आवेदन पहले से नहीं दिया गया था, फिर भी व्यतिक्रम के कारण खारिज कर दिया था और रिट याची न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम के अधीन समूची कार्यवाही तथा अपील में कार्यवाही एवं नीलाम वाद मामले को भी चुनौती देते हुए वर्ष 2008 में पुनः इस न्यायालय के पास आया है।

5. पूर्वोक्त तथ्यों से तथा आक्षेपित आदेशों के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि न्यूनतम पारिश्रमिक का समूचा मामला समाप्त हो गया है तथा अपीलीय आदेश भी अंतिमता प्राप्त कर चुका है। अपील के प्रत्यास्थापन की इप्सा करते हुए याची की ओर से कोई प्रत्यास्थापन आवेदन नहीं था और रिट याचिका भी समूची कार्यवाही, जिसे 1994 से ही प्रारंभ किया गया है, को चुनौती देते हुए दो से अधिक वर्षों के उल्लेखनीय विलम्ब के बाद दाखिल की गयी है, अतः मामले के उस दृष्टि में, मैं याची को कोई अनुतोष प्रदान करके इस न्यायालय की वैवेकिक अधिकारिता का इस्तेमाल करने का इच्छुक नहीं हूँ।

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

डॉ॰ अखौरी ब्रजेश कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2241 of 2010 with I.A. No. 1034 of 2013. Decided on 1st March, 2013.

विश्वविद्यालय विधि–वेतनमान–याची विश्वविद्यालय प्रोफेसर का पद धारण कर रहा है–याची की अस्थायी सेवा की अवधि रीडर के पद पर प्रोन्नति के प्रयोजन से अपवर्जित की गयी–चूँकि अपनी आरंभिक नियुक्ति की तिथि से याची की सेवा में रूकावट नहीं है, उस तिथि से सेवा की संपूर्ण अवधि उसकी सेवा की अवधि विनिश्चित करने के प्रयोजन से परिकलनीय होगी–याची उस आधार पर वेतनमान के नियतीकरण सहित समस्त पारिणामिक लाभों का हकदार है–रिट याचिका 10,000/- रुपयों के व्यय के साथ अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 19 से 24)

निर्णयज विधि.–(2009) 1 JCR 166 (Jhr.)—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. M.S. Anwar, For the Petitioner; Mr. A. Allam, For the State.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 1034 वर्ष 2013 को ''आदेश के लिए'' शीर्ष के अधीन आज सूचीबद्ध किया गया है। उक्त आवेदन में याची ने विश्वविद्यालय प्रोफेसर के वेतनमान में करेंट वेतन और बकाया का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने वाले अंतरिम आदेश के लिए प्रार्थना किया है।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि रिट याचिका में यही प्रार्थना की गयी है और स्वयं रिट याचिका को इस चरण पर सुना और निपटाया जा सकता है।

3. तद्नुसार, पक्षों को रिट याचिका और अंतर्वर्ती आवेदन के गुणागुण पर सुना गया है और इस आदेश द्वारा दोनों को निपटाया जा रहा है।

4. याची विनोबा भावे विश्वविद्यालय के अधीन घाटशिला महाविद्यालय में गणित में विश्वविद्यालय के प्रोफेसर का पद धारण कर रहा है।

5. याची अपने प्रतिकूल अपनी सेवा की अवधि की गणना में तिथि को आगे बढ़ाए जाने से व्यथित है। प्रत्यर्थीगण उसके अधिष्ठायी नियुक्ति की तिथि के प्रभाव से समयबद्ध प्रोन्नति के लिए उसकी सेवा की अवधि की गणना कर रहे हैं जबकि याची का दावा है कि अवधि उसकी आरंभिक नियुक्ति की तिथि अर्थात् 19 सितंबर, 1977 से गणनीय है।

6. प्रत्यर्थीगण ने अभिवचन किया है कि समयबद्ध प्रोन्नति देने के लिए उसकी विगत सेवा संगणित करने के लिए अस्थायी सेवा की अवधि को विचार में नहीं लिया जा सकता है। याची की सेवा का सारवान नियुक्ति की तिथि के प्रभाव से विधित: गणनीय है।

7. याची का मामला यह है कि याची को दिनांक 19 सितंबर, 1977 को चयन की सम्यक प्रक्रिया का अनुसरण करके घाटशिला महाविद्यालय, घाटशिला (इसके बाद 'महाविद्यालय' के रूप में निर्दिष्ट) में गणित में लेक्चरर के रूप में नियुक्त किया गया था। बिहार विश्वविद्यालय सेवा आयोग ने मूल पद के विरुद्ध याची की नियुक्ति की दृष्टि में सहमति प्रदान किया। महाविद्यालय को जुलाई, 1980 में राँची

विश्वविद्यालय का घटक इकाई बनाया गया था। विश्वविद्यालय चयन कमिटि ने दिनांक 7 जनवरी, 1982 को नियमित नियुक्ति के लिए याची के नाम की अनुशंसा की। इस बीच, उसकी आरंभिक नियुक्ति की तिथि (परिशिष्ट–4) से राँची विश्वविद्यालय द्वारा याची की सेवा संपुष्ट की गयी थी। दिनांक 18 अप्रिल, 1996 के आदेश द्वारा याची को दिनांक 19 सितंबर, 1987 के प्रभाव से बिहार राज्य विश्वविद्यालय सेवा आयोग की अनुशंसा पर नियमित आधार पर दस वर्ष की समयबद्ध संविधि के अधीन रीडर के पद पर प्रोन्नति दी गयी थी। आठ वर्ष की मेधा प्रोन्नति योजना के अधीन प्रोन्नति के लिए याची पर विचार किया गया था और बिहार राज्य विश्वविद्यालय सेवा आयोग की अनुशंसा पर दिनांक 22 दिसंबर, 1986 के प्रभाव से उक्त प्रावधान के अधीन प्रोन्नति दी गयी थी। याची को आगे दिनांक 19 सितंबर, 1993 के प्रभाव से नियमित आधार पर गणित में विश्वविद्यालय प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नत किया गया था। प्रत्यर्थी ने अचानक रीडर के रूप में उसकी प्रोन्नति की तिथि दिनांक 22 दिसंबर, 1986 के स्थान पर दिनांक 7 जनवरी, 1990 के रूप में प्रोन्नति की तिथि दर्शाते हुए शिफ्ट कर दिया। याची ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4683 वर्ष 2006 में उक्त आदेश को चुनौती दिया। इस न्यायालय ने उक्त रिट याचिका निपटाते हुए संबंधित प्रत्यर्थीगण को मामले का पुनर्परीक्षण करने का निर्देश दिया और **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा बनाम राँची विश्वविद्यालय एवं अन्य, 2009 (1) JCR 166 (Jhr.)** मामले में दिए गए निर्णय के आलोक में नया निर्णय करने का निर्देश दिया।

8. आक्षेपित आदेश द्वारा प्रत्यर्थीगण ने पहले के आदेश को दोहराया और अभिनिर्धारित किया कि रीडर के पद पर प्रोन्नति के प्रयोजन से याची की सेवा की अस्थायी अवधि की गणना नहीं की जा सकती है और उस प्रयोजन से प्रोन्नति के लिए गणनीय अवधि दिनांक 7 जनवरी, 1982 अर्थात् मूल नियुक्ति की तिथि होगी।

9. याची ने इस रिट याचिका में दिनांक 30 मार्च, 2010 के उक्त आदेश (परिशिष्ट–10) को चुनौती दिया है।

10. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4683 वर्ष 2006 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के उल्लंघन में पूर्विक आदेश को दोहराया है जिसके द्वारा उन्हें **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर)** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में पुनर्विचार करने और नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था।

11. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका का विरोध किया और उन्हीं आधारों, जिन्हें उक्त आदेश में उल्लिखित किया गया है, को दोहराते हुए आक्षेपित आदेश का समर्थन किया।

12. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों और दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

13. डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4683 वर्ष 2006 में याची ने प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित समरुप आदेश को चुनौती दिया है। उक्त रिट याचिका दिनांक 16 जुलाई, 2009 के आदेश द्वारा यह संप्रेक्षित करते हुए निपटायी गयी थी कि विवाद **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर)** में दिए गए निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है और निर्णय में राज्य सरकार द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर)** में इस न्यायालय के निर्णय के विपरीत है।

14. इस न्यायालय द्वारा आदेश अभिखंडित किया गया था और प्रत्यर्थीगण को मामले का पुनर्परीक्षण करने और उक्त निर्णय के अनुरुप नया निर्णय करने का निर्देश दिया गया था।

15. प्रत्यर्थीगण ने उक्त संप्रेक्षण और **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर)** में अधिकथित निर्णयाधार को विचार में लिए बिना उन्हीं निबंधनों को दोहराया है।

16. आक्षेपित आदेश न केवल **डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर)** में दिए गए निर्णय के प्रतिकूल है, बल्कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4683 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 16 जुलाई, 2009 के आदेश के भी विपरीत है और यह पूर्णत: अवैध तथा असंपोषणीय है।

17. डॉ॰ (श्रीमती) रफत आरा के मामले (ऊपर) को और **डॉ॰ अनंत कुमार अखौरी बनाम कुलपति, राँची विश्वविद्यालय, राँची एवं अन्य, (2012 (2) JCR 153 (Jhr.)** को अपील की विशेष अनुमति (सिविल) सं॰ सी॰ सी॰ 11707 वर्ष 2012 को खारिज करके सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विवक्षित रूप से मान्य ठहराया गया है।

18. उक्त निर्णय में, यह स्पष्ट अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि सेवा निरंतर है, समयबद्ध प्रोन्नति देने के प्रयोजन से और अन्य समस्त प्रयोजनों से सेवा की अवधि पर विचार करने के प्रयोजन से अस्थायी सेवा की भी गणना की जाएगी।

19. वर्तमान मामले में, स्वीकृत रूप से याची अपनी आरंभिक नियुक्ति की तिथि अर्थात् दिनांक 19 सितंबर, 1977 से निरंतर सेवा में है। उक्त नियुक्ति राँची विश्वविद्यालय द्वारा और बिहार राज्य विश्वविद्यालय सेवा आयोग द्वारा संपुष्ट की गयी थी।

20. उसकी दृष्टि में, याची की सेवा की अवधि संगणित करने में आरंभिक नियुक्ति की तिथि से उसकी अधिष्ठायी नियुक्ति तक सेवा की अवधि को अनदेखा करने की गुंजाइश प्रत्यर्थीगण के पास नहीं है।

21. उक्त निर्णय के विपरीत दिनांक 30 मार्च, 2010 का आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–10) पूर्णत: अवैध और असंपोषणीय है और एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

22. यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि चूँकि दिनांक 19 सितंबर 1977 को उसकी आरंभिक नियुक्ति की तिथि से याची की सेवा में रूकावट नहीं है, उस तिथि से सेवा की संपूर्ण अवधि सेवा की अवधि विनिश्चित करने के प्रयोजन से संगणीय है। तद्नुसार, याची समस्त पारिणामिक लाभों का उस आधार पर वेतनमान के नियतीकरण सहित हकदार है।

23. तद्नुसार, प्रत्यर्थीगण को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर उसकी प्रोन्नति की तिथि को सही करके याची के वेतनमान को नियत करने और तत्पश्चात चार सप्ताह के भीतर बकाया/वेतनमान के अंतर का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

24. यह रिट याचिका और आई॰ ए॰ सं॰ 1034 वर्ष 2013, 10,000/- रुपयों के व्यय के साथ अनुज्ञात की जाती है जिसका भुगतान याची को प्रत्यर्थीगण द्वारा इस आदेश की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर किया जाना होगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

संजय सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 7055 of 2012. Decided on 5th March, 2013.

सरकारी संविदा–निविदा–संविदा के अनुसरण में काम निष्पादित करने में अवरोध–याची को पी॰ डी॰ एस॰ अनुज्ञप्तिधारी होने के नाते उक्त निविदा में भाग लेने से उस समय पर अनर्हित किया गया था जब उसने निविदा के खंड के विरुद्ध निविदा में भाग लिया–याची दर्शा नहीं सका

था कि प्रत्यर्थी के पक्ष में जारी चरित्र प्रमाण पत्र निविदा के खंड के विरुद्ध था–प्रत्यर्थी को संविदा और संकर्म आदेश अधिनिर्णीत करने वाला आक्षेपित आदेश विधि में दूषित नहीं है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Navin Kumar, For the Petitioner; JC to AG, For the State; Mr. Rahul Kumar, For the Respondent No. 6

आदेश

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन प्रत्यर्थी सं॰ 6 द्वारा दिनांक 26 अक्टूबर, 2012 के रिट आवेदन के परिशिष्ट-5 के तहत उसके पक्ष में अधिनिर्णीत संविदा के अनुसरण में काम को निष्पादित करने से उसको अवरुद्ध करते हुए वर्तमान रिट आवेदन में पारित दिनांक 13 दिसंबर, 2012 के अंतरिम आदेश को रिक्त करने के लिए दाखिल किया गया है। संकर्म आदेश दिनांक 4 दिसंबर, 2012 के वर्तमान आई॰ ए॰ के परिशिष्ट IA-1 के तहत उसके अनुसरण में जारी किया गया था।

2. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची इस न्यायालय के पास आया है क्योंकि उसे काम आवंटित नहीं किया गया था और अंतरिम आदेश काम, जिसे पहले ही उसको आवंटित किया गया था, को निष्पादित करने से प्रत्यर्थी सं॰ 6 को अवरुद्ध करते हुए पारित किया गया था।

3. निजी प्रत्यर्थी की ओर से निवेदन किया गया है कि निविदा के निबंधनों और शर्तों के खंड 19 के अधीन याची अनुज्ञप्तिधारी होने के नाते उक्त निविदा में भाग नहीं ले सकता था जिसे एफ॰ सी॰ आई॰ गोदामों से जन वितरण प्रणाली के दुकानों के दरवाजे तक अनाज के परिवहन का काम अधिनिर्णीत करते हुए आरंभ किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि राज्य प्रत्यर्थी ने भी अपने प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 8 पर यही दृष्टिकोण अपनाया है कि याची को स्वयं उक्त संविदा नोटिस के खंड 19 के निबंधनानुसार अनर्हित किया गया था। निजी प्रत्यर्थी के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि निविदा नोटिस (परिशिष्ट-4) के खंड 2 के मुताबिक सक्षम पुलिस अधीक्षक अथवा पुलिस उप अधीक्षक द्वारा जारी चरित्र प्रमाण पत्र जो निविदा की तिथि से छह माह से अधिक पहले जारी नहीं किया गया हो इस प्रश्न पर प्रस्तुत करना है कि क्या निविदाकर्ता दोषसिद्ध व्यक्ति है अथवा क्या वह उसके विरुद्ध अनाज की आपूर्ति के लिए किसी अपराध से संबंधित लंबित दांडिक मामले में अंतर्ग्रस्त है अथवा क्या निविदाकर्ता को काली सूचीबद्ध किया गया है। प्रत्यर्थी सं॰ 6 के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उसके पक्ष में चरित्र प्रमाण पत्र जारी किया गया है और इसे प्रत्यर्थी राज्य प्राधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत किया गया था क्योंकि इन शर्तों में से कोई भी प्रत्यर्थी सं॰ 6 पर लागू नहीं होता है।

4. किंतु याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची द्वारा और प्रत्यर्थी सं॰ 6 द्वारा उद्धृत दर एक ही थे, किंतु काम प्रत्यर्थी सं॰ 6 को आवंटित किया गया था और न कि याची को यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341, 323, 504, 379 और 34 के अधीन दर्ज बाघमारा (महुदा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 71/12 वाला दांडिक मामला रिट आवेदन के परिशिष्ट 6 के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 6 के विरुद्ध लंबित था।

5. किंतु, प्राथमिकी का परिशीलन उपदर्शित करता है कि यह सरकारी अनाज के गबन अथवा दुर्विनियोग से संबंधित नहीं है बल्कि अन्य अपराधों से संबंधित है। आगे प्रत्यर्थी राज्य के प्रतिशपथ पत्र में किए गए प्रकथनों से यह प्रतीत होता है कि याची का पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस दिसंबर, 2012 तक वैध

था और इस प्रकार, वह उक्त निविदा के खंड 19 के मुताबिक निविदा में भाग लेने के लिए अपात्र था। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्वयं सितंबर, 2011 में अनुज्ञप्ति सरेंडर कर दी गयी थी। किंतु, प्रतिशपथ पत्र में दिए गए बयानों से यह स्पष्ट है कि यह दिसंबर, 2012 तक वैध थी और इसे पहले प्रतिसंहृत नहीं किया गया था।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुनने और अभिलेख पर लाए गए सामग्रियों के परिशीलन करने पर यह प्रकट है कि याची को पी॰ डी॰ एस॰ अनुज्ञप्तिधारी होने के नाते उक्त निविदा में भाग लेने से उस समय अनर्हित किया गया था जब उसने उक्त निविदा के खंड 19 के विरुद्ध निविदा में भाग लिया था। आगे यह प्रतीत होता है कि याची यह दर्शाने में सक्षम नहीं हुआ है कि प्रत्यर्थी सं॰ 6 के पक्ष में जारी चरित्र प्रमाण पत्र निविदा के खंड 2 के विरुद्ध था क्योंकि प्रत्यर्थी सं॰ 6 किसी दांडिक अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया अथवा सरकारी अनाज के दुर्विनियोग से संबंधित किसी अपराध से संबंधित अथवा काली सूचीबद्ध किया गया प्रतीत नहीं होता है।

7. वस्तुतः, प्रत्यर्थी सं॰ 6 द्वारा उद्धृत दर को न्यूनतम पाने पर और उसके अन्य शर्तों को परिपूर्ण करने पर परिशिष्ट-5 के तहत उसके पक्ष में संविदा निष्पादित की गयी थी और प्रत्यर्थी सं॰ 6 की ओर से दाखिल वर्तमान आई॰ ए॰ के परिशिष्ट आई॰ ए॰ 1 के तहत संकर्म आदेश भी जारी किया गया था।

8. इन परिस्थितियों में, याची रिट याचिका में हस्तक्षेप का कोई मामला बनाने में विफल रहा है और संविदा अधिनिर्णीत करने वाला आक्षेपित आदेश और प्रत्यर्थी सं॰ 6 को आवंटित संकर्म आदेश विधि में दूषित प्रतीत नहीं होता है। तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है। परिणामस्वरुप, अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है। आई॰ ए॰ भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

रोहित खेतान

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 36 of 2013. Decided on 12th March, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 380, 411, 467, 468, 471 एवं 120B—केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956—धारा 6A—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 4 एवं 482—चोरी, कूटरचना एवं षडयंत्र–संज्ञान–याची को प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत पर इस आधार पर अभियोजित किया जा रहा है कि याची प्रबंध निदेशक होने के नाते कंपनी द्वारा किए अपराध के लिए उत्तरदायी होगा–ऐसा कोई कथन नहीं है कि याची समय के प्रासंगिक बिंदु पर कंपनी के प्रति जिम्मेदार था अथवा उसके दैनिक कार्यकलाप के लिए प्रभारी था–उस अभिकथन की अनुपस्थिति में, याची कंपनी द्वारा किए गए अपराध के कारण अभियोजित किए जाने का दायी नहीं है–यह अभियोजन का विनिर्दिष्ट मामला है कि फॉर्म एफ, जिसे कूटरचित किया गया था, का कंपनी द्वारा उपयोग किया गया था–अभिकथन केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 10 के अधीन दंडनीय धारा 6A की रिष्टि के अंतर्गत आता है–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 4 में

अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में सामान्य विधि के अधीन याची को अभियोजित किए जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 12 से 19)

निर्णयज विधि.–[(2008) 5 SCC 662]; [(2012) 5 SCC 661]—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. Y.V. Giri, M.S. Mittal, For the Petitioner; Mrs. Reshmi Kumar, For the State.

आदेश

यह आवेदन चाईबासा सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 119 वर्ष 1991 (जी॰ आर॰ सं॰ 653 वर्ष 1991) के संबंध में पारित दिनांक 18.9.1998 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 380, 411, 120B, 467, 468, 471 एवं 120B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

2. मामले में अग्रसर होने के पहले दिनांक 15.1.2013 को पारित आदेश के दर्ज करने की आवश्यकता है।

^^;kph d fo}ku vfèkoDrk Jh okb0 oh0 fxjh fuonu djr g fd bl ;kph] tk diuh vFkkr ell ver ouLifr çk0 fy0 dk dk; ikyd mikè;{k gvk djrk Fkk] dk vU; 0;fDr;k vFkkr je'k pn tu vkj jktho iky flg] tk Hkh Øe'k% ojh; çcèkd] cfdx ,o djkèkku vkj ojh; mikè;{k (okf.kfT;d) gvk djr Fk] d lkFk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjkvk 380, 411, 120B, 467, 468, 471 vkj 420 d vèkhu vijkèk dju d fy, pkbckl k (lnj) ih0 ,l0 dl l0 119 o"k 1991 (th0 vkj0 l0 653 o"k 1991) d :i e nt ekey e vfHk;Dr cuk;k x;k gA

vkjki&i= nkf[ky fd, tku ij u doy bl ;kph d fo#) cfYd je'k pn tu vkj jktho iky flg d fo#) Hkh Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjkvk 380, 411, 120B, 467, 468, 471 vkj 420 d vèkhu nMuh; vijkèk dk lKku fy;k x;k FkkA tc mUekpu d fy, vkonu voj U;k;ky; }kjk vLohdkj dj fn;k x;k Fkk] o nkuk 0;fDr nk0 fo0 ;k0 l0 609 o"k 2005 e bl U;k;ky; d ikl vk, FkA bl U;k;ky; u rF;k vkj ifjfLFkfr;k d è;ku e j[kdj je'k pn tu vkj jktho iky flg d ekey (nk0 fo0 ;k0 l0 609 o"k 2005) e vfHkfuèkkfjr fd;k fd vfHkdFku dk n[kr g, ;kphx.k dk lkekU; fofèk d vèkhu vfHk;kftr ugh fd;k tk ldrk g D;kfd mDr vfHkdFku dnh; foØ; dj vfèkfu;e] 1956 dh èkkjk 10A d vèkhu vijkèk xfBr djr gA

bl le; ij] ekey d rF;k ij ;g Hkh vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd ml ekey (nk0 fo0 ;k0 l0 609 o"k 2005) d ;kphx.k dk fdl h fofufn"V vfHkdFku dh vuifLFkfr e çfrfufèkd nkf;Ro d fl)kr d vèkhu vfHk;kftr ugh fd;k tk ldrk g vkj rn}kjk vkn'k ft ld vèkhu mUekpu çkFkuk vLohdkj dj nh x;h Fkh] vfHk[kfMr dj fn;k x;k FkkA

;|fi ;kph u mUekpu d fy, vkonu dHkh ugh fn;k fdr ;fn ;kph dk mUekpu d fy, vkonu nkf[ky dju d fy, voj U;k;ky; dh vkj èkdyk tkrk g] ;g dkjh vkipkfjdrk gkxh] D;kfd bl U;k;ky; u igy gh bl çHkko dk fu"d"k fn;k g fd Hkkjrh; nM lfgrk d vèkhu je'k pn tu vkj jktho iky flg d fo#) dkb Hkh ekeyk ugh curk g ftudk ekeyk bl ;kph d ekey d lerY; Fkk vkj] blfy,] bl ;kph u lKku yu oky vkn'k dk pukrh fn;k gA

fuonu dh nf"V e] bl ekey dk fnukd 12.2.2013 dk j[kk tk, ftl chp jkT; çfr 'kiFki= nkf[ky dj ldrk gA

*rc rd] lc&fMfotuy U;kf;d nMkfèkdkjh] pkbcklk d U;k;ky; e yfcr pkbcklk (lnj) ih0 ,l0 dl l0 119 o"k 1991 (th0 vkj0 l0 653 o"k 1991) e vkx dh dk;okgh LFkfxr jgxh tgk rd ;kph jkfgr [krku dk lcèk gA***

3. अभियोजन का मामला यह है कि सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर, चाईबासा, श्री अशोक कुमार ने उसमें यह कथन करते हुए मामला दर्ज किया कि जब वह अवकाश के बाद कार्यालय वापस आए, चपरासी ने उनको सूचित किया कि तीन व्यक्ति जो उनके पास आए थे सहायक आयुक्त से मिलना चाहते थे जिनको उसने बताया कि वे उपलब्ध नहीं हैं। तत्पश्चात चपरासी ने उनकी आवभगत की और उन्हें सहायक आयुक्त के कार्यालय में सोने की अनुमति दी। किंतु चपरासी ने तुरन्त अनेक फॉर्मों जैसे फॉर्म सी॰, फॉर्म एफ॰ और अन्य फॉर्मों के बुकलेटों को कार्यालय से गायब पाया।

4. ऐसे अभिकथन पर, मामला दर्ज किया गया था जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 380, 411, 120B, 467, 468, 471 और 420 के अधीन सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 119 वर्ष 1991 के रूप में दर्ज किया गया था। जिला पुलिस द्वारा मामले का अन्वेषण किया गया था किंतु अन्वेषण अधिकारी ने दोषियों का कोई सुराग नहीं पाया था और तद्द्वारा फाइनल फॉर्म दाखिल किया।

5. बाद में, सी॰ आई॰ डी॰ ने आगे अन्वेषण के लिए मामला लिया और अन्वेषण के दौरान, यह पाया गया था कि 283 एफ॰ फॉर्मों को सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर, चाईबासा के कार्यालय से चुराया गया था और इन 283 फॉर्मों में से 26 फॉर्मों का याची की कंपनी अर्थात् मेसर्स अमृत वनस्पति प्रा॰ लि॰, अमृत नगर, गाजियाबाद द्वारा इस्तेमाल किया गया था जिसका याची, अभियोजन के मामले के मुताबिक, उपाध्यक्ष था जबकि, अभियोजन के मामले के अनुसार, वह कंपनी का प्रबंध निदेशक था।

6. ऐसे आरोपों पर, आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 380, 411, 120B, 467, 468, 471 और 420 के अधीन न केवल याची के विरुद्ध बल्कि रमेश चंद्र जैन और राजीव पाल सिंह जो क्रमशः वरीय प्रबंधक, बैंकिंग एवं कराधान और वरीय उपाध्यक्ष (वाणिज्यिक) हुआ करते थे के विरुद्ध भी अपराध का संज्ञान लिया गया था। बाद में, उन दोनों व्यक्तियों ने अवर न्यायालय के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल किया था जिसे पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी किंतु पुनरीक्षण न्यायालय ने उस आदेश में अवैधता नहीं पाया था, अतः पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया गया था।

7. उस आदेश से व्यथित होकर, दोनों व्यक्ति दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 609 वर्ष 2005 के तहत इस न्यायालय के पास आए थे जिनके आवेदन को यह अभिनिर्धारित करने के बाद अनुज्ञात किया गया था कि अभिकथन, जिन्हें इन याचीगण के विरुद्ध किया गया था, केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 के अधीन अभियोजन के विषय-वस्तु थे और इसलिए, जब अभिकथन विशेष विधान द्वारा आच्छादित है, सामान्य विधि के अधीन याचीगण को अभियोजित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। अन्य आधार जिस पर उन्मोचन अस्वीकार करने वाला आदेश अभिखंडित किया गया था यह है कि उन दोनों व्यक्तियों को किसी अभिकथन के बिना अभियोजित किया जा रहा था कि वे कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के लिए जिम्मेदार थे।

8. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री गिरी ने निवेदन किया कि याची का मामला दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 609 वर्ष 2005 में उन दोनों व्यक्तियों के मामले में दिए गए निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है क्योंकि यह याची कंपनी का उपाध्यक्ष हुआ करता था और जिसके विरुद्ध कोई भी अभिकथन नहीं है कि वह कंपनी के व्यवसाय अथवा इसके दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार था और इसलिए, न्यायालय ने याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने में निश्चय ही अवैधता किया है।

9. आगे यह निवेदन किया गया है कि अभिकथन के अनुसार कंपनी ने एफ॰ फॉर्मों का उपयोग किया था जो अभियोजन के मामले के अनुसार कूटरचित थे और उस स्थिति में किसी को केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 10A के अधीन अभियोजित किए जाने का दायी अभिनिर्धारित किया जा सकता है किंतु याची को कूटरचना से संबंधित अपराध के लिए अभियोजित किया जा रहा है जिसकी अनुमति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4 में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में नहीं दी जा सकती है और कि चोरी का अपराध करने के बारे में याची के विरुद्ध अभिकथन नहीं है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

10. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें अभिवचन किया गया है कि याची को पहले अवर न्यायालय के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल करना चाहिए था किंतु उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल करने के बजाय वह सीधा संज्ञान लेने वाले आदेश के विरुद्ध सीधा इस न्यायालय के पास आया है, अतः, इस चरण पर उसका आवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य है।

11. आगे, यह कथन किया गया है कि प्रबंध निदेशक निश्चय ही अपने अथवा अपनी कंपनी द्वारा किए गए वर्तमान अपराध के लिए जिम्मेदार है।

12. प्रतिशपथ पत्र में दिया गया बयान निश्चय ही सुझाता है कि याची को प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत पर अभियोजित किया जा रहा है क्योंकि प्रतिशपथ पत्र में बयान है कि याची प्रबंध निदेशक होने के नाते कंपनी द्वारा किए गए अपराध के लिए जिम्मेदार होगा। प्रतिशपथ पत्र में ऐसा कोई बयान प्रतीत नहीं होता है कि यह याची समय के प्रासंगिक बिंदु पर कंपनी के प्रति जिम्मेदार अथवा इसके दैनिक कार्यकलाप के प्रभार में था। उस अभिकथन की अनुपस्थिति में, याची **एस॰ के॰ अलघ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 662;** और **अनीता होदा बनाम गॉडफादर ट्रेवल्स एंड टूर्स प्रा॰ लि॰, (2012)5 SCC 661,** मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित प्रतिपादना की दृष्टि में कंपनी द्वारा कारित अपराध के कारण अभियोजित किए जाने का दायी नहीं है।

13. यह विचार करने के लिए मामले में आगे जाते हुए कि क्या अभिकथित अपराध केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम के प्रावधान की रिष्टि के अंतर्गत आते हैं, केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 6A को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"6A. ***foØ; l brj :i l nkok fd, x, oLrvk d vrj.k d ekey e çek.k dk Hkkj] vkfn-*** *&(1) tgk dkb Mhyj nkok djrk g fd og fdlh eky d lcèk e bl vkèkkj ij bl vfèkfu;e d vèkhu dj dk Hkxrku dju dk nk;h ugh g fd ,l eky dk ,d jkT; l nlj jkT; e Hktk tkuk mld }kjk mld 0;olk; d fdlh vU; LFkku ij vFkok mld ,tV ;k fçfl iy] ;FkkfLFkfr] dk ,l eky d vrj.k d dkj.k l vkj u fd foØ; d dkj.k l fd;k x;k Fkk] ;g fl) dju dk Hkkj fd mu ekyk dk eoeV fd;k x;k Fkk] ml Mhyj ij gkxk vkj ml ç;ktu l og ,l ekyk d ç"k.k d lk{; d lkFk fofgr çkfèkdkjh l çklr fofgr*

Qke e fofgr fof'kf"V;k dk vrfo"V dju oky 0;olk; d vU; LFkku ij e[; vfèkdkjh }kjk vFkok mld , tV ;k fçfliy }kjk] ;FkkfLFkfr] lE;d :i l Hkjk x;k vkj gLrk{kfjr ?kk"k.kk fofgr le; d Hkhrj vFkok , l vfrfjDr le; d Hkhrj ft ldh vuefr çkfèkdkjh i;kIr dkj.k d pyr n ldrk g] fuèkkj.k dju oky çkfèkdkjh dk çLrr dj ldrk g (vkj ;fn Mhyj , lh ?kk"k.kk çLrr dju e foQy gkrk g] rc , l ekeyk dk eoeV bl vfèkfu;e d leLr ç;ktu l foØ; d ifj.kkeLo#i fd;k x;k le>k tk,xk)

*(2) ;fn fuèkkj.k çkfèkdkjh , lh tkp tlk og vko';d le>rk g dju d ckn lr"V g fd mièkkjk (1) d vèkhu Mhyj }kjk çLrr ?kk"k.kk e vrfo"V çfof"V;k lR; g] og bl vfèkfu;e d vèkhu Mhyj }kjk Hkxrku ;kX; dj d fuèkkj.k d le; vFkok bld igy fdlh le; bl çHkko dk vkn'k n ldrk g vkj ml ij eyk d eoeV] ftll ?kk"k.kk lcfèkr g] dk bl vfèkfu;e d ç;ktu l foØ; l brj d ifj.kke d :i e fd;k x;k le>k tk,xkA***

14. इस प्रावधान के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यदि निर्माता कंपनी अभिवचन करती है कि निर्मित किए जाने के बाद मालों को इसके डीलर को परिवहित किया गया है, तब डीलर को इस पर कर का भुगतान करने की आवश्यकता है। किंतु, यदि ऐसा होता है कि निर्माता कंपनी अपने स्टॉक को अन्य राज्य में अपने डीलर को केवल अंतरित करता है, तब निर्माता कंपनी को मालों पर विक्रय कर का भुगतान करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि केवल डीलर को विक्रय कर का भुगतान करने की आवश्यकता है और निर्माता कंपनी को केवल यह स्थापित करना है कि मालों को डीलर को अंतरित किया गया है।

15. आगे, केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 10A में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"10. **'kkfLr;k-**&;fn dkbZ 0;fDr]*

(a) èkkjk 6 dh mièkkjk (2) vFkok èkkjk 6A dh mièkkjk (1) vFkok èkkjk 8 dh mièkkjk (4) vFkok mièkkjk (8) d vèkhu ?kk"k.kk vFkok çek.k i= çLrr djrk g tk og tkurk g vFkok mld ikl fo'okl dju dk dkj.k g fd ;g >Bk g(vFkok

16. धारा 10 की उपधारा (a) इस प्रकार विहित करती है कि यदि कोई धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन प्रमाण पत्र अथवा घोषणा प्रस्तुत करता है जो वह जानता है कि यह झूठा है अथवा उसके पास इसके झूठा होने का विश्वास करने का कारण है, दंडित किए जाने का दायी है।

17. यहाँ वर्तमान मामले में, अभियोजन का यह विनिर्दिष्ट मामला है कि फॉर्म एफ॰ जिसे कूटरचित किया गया था, का उपयोग कंपनी द्वारा किया गया है। ऐसी स्थिति में, अभिकथन निश्चय ही केंद्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 10 के अधीन दंडनीय धारा 6A की रिष्टि के अंतर्गत आता हुआ प्रतीत होता है।

18. उक्त कथित परिस्थितियों के अधीन, याची को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4 में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में सामान्य विधि के अधीन अभियोजित किए जाने की अनुमति नहीं की जा सकती है। तद्नुसार, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया जाता है।

19. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती कुमारी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 3344 of 2008. Decided on 12th March, 2013.

सेवा विधि–सेवा समाप्ति–याची की सेवा इस आधार पर समाप्त की गयी कि उसके द्वारा प्राप्त किया गया शिक्षक प्रशिक्षण डिप्लोमा ऐसे महाविद्यालय से था जिसे राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के अधीन मान्यता नहीं थी–तिथि जिस पर याची ने उक्त अर्हता प्राप्त किया था, एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1995 प्रयोज्य नहीं था–प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने महाविद्यालय के प्राचार्य से उसकी अर्हता और प्रमाण पत्र के सम्यक सत्यापन के बाद उक्त नियुक्ति को अनुमोदित किया था–वर्ष 1994 में जब उसने अपनी अर्हता प्राप्त किया के समय पर उक्त संस्थान के मान्यता पाने की आवश्यकता उसकी नियुक्ति के रद्दकरण के लिए प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए विचाराधीन विवाद्यक के प्रति पूर्णतः अनजान है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–याची पारिणामिक लाभों की हकदार है। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s Dhananjay Kumar Pathak, Rahul Kumar, For the Petitioner; J.C. to S.C. (Mines), For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 4, जिला शिक्षा अधीक्षक, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा जारी दिनांक 22 मई, 2008 के मेमो सं॰ 933 (परिशिष्ट–14) में अंतर्विष्ट कार्यालय आदेश का अभिखंडन इप्सित किया है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 3, क्षेत्रीय उपनिदेशक, शिक्षा विभाग, दक्षिण छोटानागपुर डिवीजन द्वारा जारी दिनांक 2 अप्रिल, 2008 के आदेश पर कार्रवाई करते हुए दो अन्य के साथ उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि एक ही आक्षेपित आदेश द्वारा अन्य के साथ वर्तमान याची की सेवा इस आधार पर समाप्त कर दी गयी थी कि उन्होंने अध्यापक प्रशिक्षण डिप्लोमा ऐसे संस्थान अर्थात् सिस्टर निवेदिता कॉलेज एवं अन्य ऐसे कॉलेज से प्राप्त किया था, जिन्हें राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् द्वारा मान्यता नहीं दी गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उक्त संस्थान सिस्टर निवेदिता कॉलेज, कलकत्ता द्वारा जारी दिनांक 20 जून, 1994 के प्रमाणपत्र परिशिष्ट–3 और परिशिष्ट–6 पर अंतर्विष्ट उक्त महाविद्यालय के प्राचार्य द्वारा दिए गए दिनांक 30 अप्रिल, 1997 के स्पष्टीकरण के परिशीलन से प्रकट होगा कि याची रजिस्ट्रेशन सं॰ NC/015038-93 वाले अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में उक्त संस्थान में छात्रा थी जिसके लिए उसने दिनांक 28 जनवरी, 1994 को परीक्षा दिया था और उसे परिशिष्ट–2 श्रृंखला के तहत सफल घोषित किया गया था और यह एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम के प्रभाव में आने के पहले किया गया था जो दिनांक 1 जुलाई, 1995 से प्रभावकारी हुआ था। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उसने प्रत्यर्थी विद्यालय अर्थात् सी॰ पी॰

समिति मध्य विद्यालय, केबल बस्ती, जमशेदपुर में मैट्रिक प्रशिक्षित अध्यापक के पद के लिए आवेदन दिया और साक्षात्कार के बाद उक्त नियुक्ति के लिए उसे चयनित किया गया था जिसमें अन्य अनेक व्यक्तियों ने भी भाग लिया था। तत्पश्चात दिनांक 2 जनवरी, 1997 को याची ने सहायक अध्यापक का पद ग्रहण किया और विद्यालय की प्रबंधन कमिटि की अनुशंसा पर उसके प्रमाणपत्र के समुचित सत्यापन पर प्रत्यर्थी जिला शिक्षा अधीक्षक ने दिनांक 3 जुलाई, 1997 के आदेश (परिशिष्ट–7) के तहत उसकी नियुक्ति को अनुमोदित किया। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि आश्चर्यजनक रूप से, याची और दो अन्य को अपने अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता की प्रामाणिकता और क्या इसे मान्यता प्राप्त संस्थान से प्राप्त किया गया था, के बारे में कारण बताने को कहा गया था? तद्नुसार, याची ने परिशिष्ट–10 के तहत विवरण देते हुए इसका प्रत्युत्तर दिया किंतु एक ही आक्षेपित आदेश द्वारा अन्य दो के साथ उसकी सेवा मेमो सं॰ 933 में अंतर्विष्ट दिनांक 22 मई, 2008 के आदेश के तहत, जो क्षेत्रीय उपनिदेशक, शिक्षा विभाग के तात्पर्यित निर्देश पर किया गया प्रतीत होता है, जिला शिक्षा अधीक्षक द्वारा समाप्त कर दी गयी है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता **डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5412 वर्ष 2005** में **सरबनी बोस बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य के मामले** में रिट आवेदन का (परिशिष्ट–15) में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए निवेदन करते हैं कि समरुप परिस्थितियों में उक्त व्यक्ति की नियुक्ति का रद्दकरण अभिखंडित कर दिया गया था क्योंकि उसने एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रभाव में आने के पहले अर्थात् दिनांक 1 जुलाई, 1995 के पहले संस्थान से अध्यापक प्रशिक्षण डिप्लोमा प्राप्त किया था। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेशों के विरुद्ध राज्य द्वारा दाखिल लेटर्स पेटेन्ट अपील एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 400/2006 भी खारिज कर दी गयी थी।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में याची की ओर से दाखिल आई॰ ए॰ सं॰ 3731 वर्ष 2012 द्वारा **कल्पना लोधिया बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य (डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2741 वर्ष 2008** दिनांक 17 दिसंबर, 2008) और **रविशंकर दूबे बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य (डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 3323 वर्ष 2008 दिनांक 29 मार्च, 2010)** जिनके तहत एक ही आक्षेपित आदेश द्वारा दो व्यक्तियों की सेवा समाप्त कर दी गयी थी, में दिए गए निर्णयों को अभिलेख पर लाया है। अत: याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम की कठोरता उक्त अधिनियम के प्रभाव में आने के पहले प्राप्त की गयी याची की अर्हता को भूतलक्षी प्रभाव से अपवर्जित करने के लिए प्रवर्तित नहीं होती थी, इस बहाने पर आक्षेपित आदेश द्वारा याची की नियुक्ति का रद्दकरण विधि में पूर्णत: असंपोषणीय और मनमाना है।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सहायक अध्यापक की नियुक्ति के मामले में प्रत्यर्थीगण ऐसी कार्रवाई करने में न्यायोचित थे। वह आगे निवेदन करते हैं कि याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय, जैसा आई॰ ए॰ में संलग्न किया गया है, वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है, क्योंकि उन मामलों में एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम के प्रभाव में आने के पहले अर्थात् दिनांक 1 जुलाई, 1995 के पहले नियुक्ति की गयी थी। वह आगे निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में याची को स्वीकृत रूप से वर्ष 1996 में नियुक्त किया गया है, अत:, उसे ऐसे संस्थान से अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त करने की आवश्यकता थी जिसे एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम के अधीन मान्यता दी गयी थी।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों और याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णयों का परिशीलन किया है। वर्तमान मामले में, याची को वर्ष 1996

में नियुक्त किया गया था, किंतु यह एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रभाव में आने के बाद अर्थात् दिनांक 1 जुलाई, 1995 के प्रभाव से प्राप्त अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता के आधार पर नहीं है क्योंकि जिस तिथि पर याची ने उस अर्हता को प्राप्त किया था, एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1995 प्रयोज्य नहीं था। प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने उसकी अर्हता और प्रमाण पत्र का उक्त कॉलेज के प्राचार्य से सम्यक सत्यापन के बाद उक्त नियुक्ति अनुमोदित किया। तत्पश्चात्, वर्ष 2004 में वे उस नियुक्ति को रद्द करने के लिए इस आधार पर अग्रसर हुए कि याची की अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता को एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम के अधीन मान्यता नहीं दी गयी और संस्थान पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं है। किंतु, वर्तमान मामले में याची द्वारा विश्वास किए गए मामले भी उसी विवाद से संबंधित है क्योंकि उक्त मामले में याची ने भी एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रभाव में आने के पहले संस्थान से अर्हता प्राप्त किया था और जुलाई, 2005 में पारित आदेश द्वारा उक्त व्यक्ति की नियुक्ति का रद्दकरण इप्सित किया जा रहा था। इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ द्वारा सिस्टर निवेदिता कॉलेज, कोलकाता को मान्यता देने की जरूरत नहीं है क्योंकि एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 दिनांक 1 जुलाई, 1995 से प्रभाव में आया था, अतः, उक्त व्यक्ति की नियुक्ति का रद्दकरण उक्त मामले के तथ्यों के साथ निकट रूप से संबद्ध नहीं था। वर्तमान मामले में भी, यह विवादित नहीं है कि याची ने एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1995 के प्रभाव में आने के पहले अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त किया था, अतः उसकी नियुक्ति के रद्दकरण के लिए प्रत्यथी-प्राधिकारीगण द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए वर्ष 1994 में उसके द्वारा प्राप्त की गयी अर्हता के समय पर उक्त संस्थान द्वारा मान्यता प्राप्त करने की आवश्यकता विचाराधीन विवाद्यक के प्रति पूर्णतः अनजान है। मामले के उस दृष्टिकोण में, यद्यपि याची को वर्ष 1997 में नियुक्त किया गया था जबकि अन्य को, जिनके मामलों में आक्षेपित आदेश अपास्त कर दिया गया है, समय के पूर्व बिंदु पर नियुक्त किया गया था, किंतु तथ्य बना रहता है कि याची ने समय के प्रासंगिक बिंदु पर अर्हता प्राप्त किया था जब स्वयं एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम प्रभाव में नहीं आया था। प्रत्यर्थीगण ने वर्ष 1997 में ही उसकी नियुक्ति अनुमोदित किया था, अतः, उसकी नियुक्ति रद्द करने की प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई पूर्णतः अन्यायोचित थी। तद्नुसार, परिशिष्ट 14 में अंतर्विष्ट दिनंक 22.5.2008 का आक्षेपित आदेश, जहाँ तक यह याची से संबंधित है, विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, अपास्त किया जाता है।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सूचित किया गया है कि प्रश्नगत विद्यालय प्रबंधन द्वारा याची को सेवा में बनाए रखा गया है। मामले के उस दृष्टिकोण में, याची दिनांक 22.5.2008 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने पर पारिणामिक लाभों का हकदार होगा।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

श्रीमती बसंती देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 3811 of 2001. Decided on 14th March, 2013.

कसमार पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2000 के संबंध में अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, बेरमो, तेनुघाट द्वारा पारित दिनांक 21.3.2001 के संज्ञान लेने वाले आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 465/468—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—दस्तावेज मिथ्याकरण और कूटरचना–संज्ञान–भूमि विक्रय के लिए करार–परिवादी ने अपना वास्तविक पहचान नहीं दिया है और उसने स्वयं परिवाद में इसका विरोध किया है–उसने यह दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि प्रश्नगत भूमि के ऊपर क्या अधिकार, हित, हक अथवा कब्जा है–किसी व्यक्ति को विधि को गतिशील बनाने का अधिकार है यदि संज्ञेय अपराध किया जाता है किंतु उसके लिए प्रथम दृष्टया सारवान साक्ष्य की आवश्यकता है–इस पर विचार नहीं किया जाएगा कि अभियुक्तगण ने परिवादी के साथ छल किया है–ऐसे द्वेषपूर्ण अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–दांडिक अभियोजन अभिखंडित किया गया–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Jai Prakash, For the Petitioenrs; A.P.P., For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह दांडिक विविध याचिका विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, तेनुघाट, बेरमो के न्यायालय में लम्बित भारतीय दंड संहिता की धाराओं 465/468 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दर्ज कसमार पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2000 से उद्भूत होने वाले संपूर्ण दांडिक अभियोजन और दिनांक 21.3.2001 के आदेश जिसके द्वारा विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ ने याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया है के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

2. परिवाद से सामने आने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि परिवादी स्वयं का लक्ष्मण महतो का पौत्र होने का दावा करता है। आगे यह कथन किया गया है कि लक्ष्मण महतो के दो पुत्र अर्थात् जीतू महतो और सोनाराम महतो और एक पुत्री नन्ही बाला देवी थे। नन्ही बाला देवी का विवाह अकलू महतो के साथ हुआ था और उसके तीन पुत्र अर्थात् चुनुआ कुर्मी, भदरुआ कुर्मी और बैनी कुर्मी थे। अकलू महतो के पूर्वोक्त तीनो पुत्रों ने सर्वेक्षण और बंदोबस्ती ऑपरेशन के पहले गाँव रघुनाथपुर में 42 डिसमिल भूमि अर्जित की थी और वे उक्त भूमि पर शांतिपूर्ण रूप से काबिज बने हुए थे। आगे पुनः यह प्रतिवाद किया गया है कि अभियुक्तगण ने षडयंत्र करके विक्रेता श्याम लाल महतो के माध्यम से अभियुक्त सं॰ 1 से 7 के नाम पर उक्त भूमि अंतरित करवाया। श्यामलाल महतो स्वयं का चुनुआ कुर्मी का पौत्र होने का दावा करता है। उक्त श्याम लाल महतो द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख शुद्धतः कूटरचित दस्तावेज है और उस भूमि पर दावा करने के लिए सृजित किया गया है जिस पर परिवादी और उसके भ्रातागण काबिज बने हुए हैं। जब परिवादी को अभियुक्तगण द्वारा की गयी कूटरचना की जानकारी हुई, उसने परिवाद दाखिल किया जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) के अधीन संबंधित पुलिस थाना भेजा गया था और उसके बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/465/468/34/120B के अधीन दिनांक 16.12.2000 को कसमार पी॰ एस॰ केस सं॰ 62/2000 दर्ज किया गया था। अन्वेषण पूरा करने के बाद पुलिस ने फाइनल फॉर्म दाखिल किया किंतु विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ ने केस डायरी और उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के बाद दिनांक 21.3.2001 का आक्षेपित आदेश पारित किया।

3. संपूर्ण परिवाद में यह निवेदन किया गया है कि परिवादी ने कहीं पर भी यह कथन नहीं किया है कि वह किस प्रकार और कब प्रश्नगत भूमि पर काबिज हुआ। पैरा 1 में परिवादी स्वयं को लक्ष्मण

महतो का पौत्र होने का दावा करता है और पुनः पैरा 12 में उसने लक्ष्मण महतो के दो पुत्रों अर्थात् जित्ती महतो और सोना राम महतो का नाम प्रकट किया किंतु उक्त दोनों नाम परिवाद में दिए गए इस याची के पिता के नाम के साथ मेल नहीं खाते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्वयं परिवादी ने इस परिवाद के दाखिले के समय पर अपना सही पहचान नहीं दिया है। केवल यही नहीं, वह कोई भी विवरण देने में विफल रहा है कि वह किस प्रकार और कब प्रश्नगत भूमि पर काबिज हुआ और परिवाद याचिका के साथ कोई दस्तावेज संलग्न नहीं किया गया है अथवा अन्वेषण के दौरान आई॰ ओ॰ के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने अंतिम रिपोर्ट दाखिल किया अैर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 182 और 211 के अधीन परिवादी का अभियोजन करने की अनुशंसा भी किया।

विद्वान अधिवक्ता ने मेरा ध्यान दिनांक 21.3.2001 के आक्षेपित आदेश की ओर आकृष्ट किया है और निवेदन किया है कि विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ ने संज्ञान लेने के लिए कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं दिया है। यह प्रतीत होता है कि मामला अन्वेषण के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 156 (3) के अधीन पुलिस को भेजा गया था किंतु अंतिम रिपोर्ट के दाखिले ने विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ को कुछ असुविधा कारित किया और इसलिए सनकी आधार पर संज्ञान लिया गया है। वस्तुतः, परिवादी ने प्रश्नगत भूमि पर अपना कोई दावा सृजित करने के आशय से याचीगण के विरुद्ध इस द्वेषपूर्ण अभियोजन को आरंभ किया है। आज की तिथि तक यह अज्ञात है कि क्यों याची सं॰ 8 से 15 को अभियुक्त बनाया गया है और उनकी भूमिका क्या है।

4. दूसरी ओर, परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का विरोध किया और निवेदन किया कि किसी व्यक्ति को विधि गतिशील करने का अधिकार है यदि कोई संज्ञेय अपराध किया जाता है। परिवाद के पैरा 6 में यह स्पष्ट किया गया है कि परिवादी अकलू महतो के तीनों पुत्रों की मृत्यु के बाद प्रश्नगत भूमि पर काबिज बना हुआ है। केस डायरी में परीक्षित गवाहों ने स्पष्टतः कथन किया है कि श्याम लाल महतो जिसने अभियुक्तगण के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया था, के रूप में कोई व्यक्ति गाँव में कभी भी उपलब्ध था अथवा गाँववालों को ज्ञात था। आगे इंगित किया गया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन दाखिल याचिका में इस चरण पर याची–अभियुक्त के प्रतिवाद पर विचार नहीं किया जा सकता है।

5. मैंने परिवाद याचिका, आक्षेपित आदेश और मेरे समक्ष प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया है। आरंभ में ही, मुझे यह संप्रेक्षित करने में संकोच नहीं है कि परिवादी ने अपना वास्तविक पहचान नहीं दिया है और उसने स्वयं परिवाद में इसका विरोध किया है। इसके अतिरिक्त, उसने यह दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि प्रश्नगत भूमि पर उसका क्या अधिकार, हक, हित अथवा कब्जा था। मैं सहमत हूँ कि किसी व्यक्ति को विधि गतिशील बनाने का अधिकार है यदि संज्ञेय अपराध किया जाता है किंतु उसके लिए प्रथम दृष्टया सारवान साक्ष्य की आवश्यकता होती है। परिवाद से यह प्रकट है कि अकलू महतो के वंशज याची सं॰ 1 से 7 के पक्ष में भूमि के अंतरण के विरुद्ध किसी आपत्ति को करने के लिए आगे नहीं आए हैं और अकलू महतो के तीनों पुत्रों का अधिकार, हक, हित अथवा कब्जा विवादित नहीं है। मात्र इसलिए कि आई॰ ओ॰ गाँव में श्याम लाल महतो की पहचान रखने वाले किसी व्यक्ति का पता लगाने में विफल रहा है, यह नहीं कहा जा सकता है कि विक्रय विलेख किसी छद्मवेषी द्वारा निष्पादित किया गया था। मैंने दिनांक 21.3.2001 के आक्षेपित आदेश का परिशीलन भी किया है किंतु मैं नहीं पाता हूँ कि विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/465/

468 के अवयवों को आकृष्ट करने के लिए केस डायरी में संग्रहित साक्ष्य पर चर्चा किया है। इस तथ्य की दृष्टि में कि परिवादी अपने वास्तविक पहचान के साथ आगे नहीं आया है और वह यह दर्शाने के लिए कि उसका प्रश्नगत भूमि पर कोई अधिकार, हक, हित अथवा कब्जा था, किसी दस्तावेज को प्रस्तुत करने में विफल रहा है, यह विचार नहीं किया जाएगा कि अभियुक्तगण द्वारा किसी तरीके से उसके साथ छल किया गया था। इसके अतिरिक्त, अकलू महतो का वंशज यह दर्शाने आगे नहीं आया है कि विक्रय विलेख गलत था और इसका प्रतिरुपण किया गया था।

6. मामले के इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए मैं याचीगण के विरुद्ध ऐसे द्वेषपूर्ण अभियोजन की अनुमति देने का इच्छुक नहीं हूँ और इसलिए कसमार पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2001 के संबंध में अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 21.3.2001 का संज्ञान लेने वाला आदेश और उक्त पी॰ सी॰ केस से उद्भूत होने वाला याचीगण का संपूर्ण दांडिक अभियोजन अभिखंडित किया जाता है। तद्नुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

सुमन उर्फ छोटू रजक

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 06 of 2013. Decided on 15th March, 2013.

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2005—नियम 22—किशोरता का विनिश्चयकरण–मेडिकल बोर्ड द्वारा आयु के विनिश्चयकरण के लिए आवेदन की अस्वीकृति–सिविल सर्जन द्वारा गठित मेडिकल बोर्ड द्वारा याची की आयु 19 वर्ष पायी गयी–याची ने विद्यालय में अध्ययन नहीं किया है और जन्म प्रमाण पत्र नहीं होने के कारण अवर न्यायालय ने मामला मेडिकल बोर्ड के समक्ष निर्दिष्ट किया है–यह अत्यंत हाशियाकृत मामला है और केवल कुछ दिनों का अंतर है–यदि कोई संदेह है, संदेह का लाभ अभियुक्त याची के पक्ष में जाना चाहिए–याची किशोर घोषित किया गया–आक्षेपित आदेश अपास्त–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 10)

निर्णयज विधि.–(2002) 2 SCC 287; 2011(3) JLJR 355—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Pratiush Lala, For the Petitioner; Mrs. Niki Sinha, For the State.

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने इस पुनरीक्षण आवेदन के चिरकुंडा (गलफरबारी) पी॰ एस॰ केस सं॰ 259 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ केस सं॰ 4320 वर्ष 2012 के तत्सम के संबंध में श्री एस॰ के॰ दूबे, न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 3.12.2012 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया है जिसके द्वारा मेडिकल बोर्ड द्वारा उसका परीक्षण करने और उक्त बोर्ड द्वारा उसकी आयु का विनिश्चयकरण करने के बाद उसको किशोर घोषित करने के लिए याची द्वारा दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है।

3. अवर न्यायालय ने दिनांक 10.11.2012 को उसका आवेदन अंशतः अनुज्ञात किया है और तद्नुसार, याची का परीक्षण करने के लिए सिविल सर्जन द्वारा मेडिकल बोर्ड गठित किया गया था। उक्त बोर्ड ने दिनांक 22.11.2012 को उसका परीक्षण किया और रिपोर्ट प्रस्तुत किया। दिनांक 22.11.2012 की उक्त रिपोर्ट दर्शाती है कि याची की आयु 19 वर्ष पायी गयी थी। उक्त रिपोर्ट पर विचार करने के

बाद अवर न्यायालय ने वर्तमान याची (अभियुक्त) के किशोर होने का अभिवचन अस्वीकार कर दिया। अत: यह पुनरीक्षण दाखिल किया गया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सिविल सर्जन द्वारा गठित मेडिकल बोर्ड ने याची का परीक्षण करने के बाद उसकी आयु 19 वर्ष पाया था। अत: उक्त रिपोर्ट के अनुसार, दिनांक 22.11.2012 को याची की आयु 19 वर्ष थी। स्वीकृत रूप से, घटना की अभिकथित तिथि दिनांक 31.10.2012 है और मेडिकल बोर्ड ने दिनांक 22.11.2012 (परीक्षण की तिथि) को याची की आयु 19 वर्ष निर्धारित किया है। याची के अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि झारखंड किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2003 के नियम 22 का उपनियम (5) जाँच करने के लिए और आयु का विनिश्चयकरण करने के लिए अनुसरित की जानेवाली प्रक्रिया भी अधिकथित करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"5. ckyd dh fd'kkjrk l l cfèkr çR;d ekey e ckM (i) fuxe vFkok uxjikfydk çkfèkdkjh }kjk fn;k x;k tUe çek.k i=] (ii) nkf[kyk fy, x, igy fo|ky; l tUefrfFk çek.k i=(vFkok (iii) efVd ;k lerY; iek.k i=] vxj miyCèk gk] ,o (iv) (i) l (iii) dh vuifLFfr e mldh vk; d lcèk e ,l efMdy ckM }kjk nt fd, tku oky dkj.kk l l;kX; ekey e ,d o"k d ekftu d vè;èkhu lE;d :i l xfBr efMdy ckM dk efMdy er çkIr djxk vkj ,l ekey e vkn'k ikfjr djr g, ,lk lk{; tk miyCèk gk ldr g vFkok efMdy er] ;FkkfLFkfr] dk fopkj e yu d ckn mldh vk; d lcèk e fu"d"k nt djxkA**

5. याची के अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया है कि यदि पूर्वोक्त नियम के अनुसार एक वर्ष का मार्जिन अनुज्ञात किया जाता है, दिनांक 22.11.2012 को याची की आयु 18 वर्ष हो सकती थी। अत:, घटना की अभिकथित तिथि अर्थात् दिनांक 10.11.2012 पर याची निश्चय ही 18 वर्ष से कम आयु का है। अत:, याची को किशोर घोषित किया जाना चाहिए। अपने प्रतिवाद के समर्थन में उन्होंने **रजिंदर चंद्रा बनाम छत्तीसगढ़ राज्य एवं एक अन्य, (2002)2 Supreme Court Cases 287** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और **गोविंद उर्फ गोविंद तुरी बनाम झारखंड राज्य,** 2011 (3) JLJR, 355 में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वर्तमान मामले में याची के पिता ने याची की जन्मतिथि के दिनांक 19.9.1995 के रूप में स्वीकर किया है और मेडिकल बोर्ड ने भी याची की आयु 19 वर्ष निर्धारित किया है। अत:, याची को किशोर घोषित नहीं किया जा सकता है।

7. आक्षेपित आदेश से मैं पाती हूँ कि याची ने विद्यालय में अध्ययन नहीं किया है अैर उसका जन्म प्रमाण पत्र नहीं होने के कारण अवर न्यायालय ने याची की आयु के विनिश्चयकरण के लिए मामला मेडिकल बोर्ड के समक्ष निर्दिष्ट किया है। सिविल सर्जन ने मेडिकल बोर्ड गठित किया और उक्त बोर्ड ने दिनांक 22.11.2012 को याची का परीक्षण किया और याची की आयु 19 वर्ष दर्शाते हुए अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया। इस तथ्य पर विचार करते हुए और उक्त कथित नियम पर विचार करते हुए यदि याची की आयु का निम्न पक्ष लिया जाता है, यह दिनांक 22.11.2012 को 18 वर्ष का होगा और चूँकि घटना की अभिकथित तिथि कुछ दिन पहले ही अर्थात् दिनांक 10.11.2012 है इसमें थोड़ा संदेह है कि याची ने दिनांक 10.11.2012 को अथवा दिनांक 22.11.2012 को 18 वर्ष की आयु पुरा किया है। यद्यपि यह अत्यन्त मार्जिनल मामला है और केवल कुछ दिनों का अंतर है किंतु यदि कुछ संदेह है, अत: संदेह का लाभ याची के पक्ष में जाना चाहिए।

8. याची द्वारा उद्धृत पूर्वोक्त निर्णय भी अभिनिर्धारित करता है कि यह पता लगाने के प्रयोजन से कि क्या वह किशोर है या नहीं, अभियुक्त की आयु के विनिश्चयकरण के मामले में हाइपर टेक्निकल दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाना चहिए।

9. इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए मैं याची को किशोर घोषित करती हूँ और चिरकुंडा (गलफरबरी) पी॰ एस॰ केस सं॰ 259 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ केस सं॰ 4320 वर्ष 2012 के तत्सम, में श्री एस॰ के॰ दूबे, न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 3.12.2012 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करती हूँ। किशोर न्याय बोर्ड को याची का मामला निर्दिष्ट करने के लिए समुचित आदेश पारित करने के लिए मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है।

10. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

प्रधान कुमार सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. Misc. No. 3978 of 2001. Decided on 15th March, 2013.

दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 88 वर्ष 2000 में श्री विष्णुदेव नारायण, तत्कालीन विद्वान सत्र न्यायाधीश, देवघर द्वारा पारित दिनांक 22.1.2001 के निर्णय के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323/341/379/384—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—उपहति, दोषपूर्ण परिरोध, चोरी एवं उद्यापन–संज्ञान का आदेश पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा अभिखंडित किया गया–यह कथन करते हुए कि घटना असत्य थी, अंतिम रिपोर्ट दाखिल किया गया था–अंतिम रिपोर्ट के प्रस्तुतीकरण के बाद भी एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ द्वारा संज्ञान लिया गया था–परिवादी के सिवाए किसी गवाह ने घटना का समर्थन नहीं किया है–बचकाने कारण के लिए दोनों परिवारों ने आपस में झगड़ा किया था–आक्षेपित आदेश विस्तृत है और सत्र न्यायाधीश ने विस्तारपूर्वक अभियोजन मामले के समस्त पहलूओं का चर्चा किया है–वर्तमान याचिका में गुणागुण नहीं है–याचिका खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Kailash Prasad Deo, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Arvind Kumar Choudhary, For the O.P. Nos. 2 & 3.

न्यायालय द्वारा.–यह दांडिक विविध याचिका दंडिक पुनरीक्षण सं॰ 88 वर्ष 2000 में श्री विष्णुदेव नारायण, तत्कालीन विद्वान सत्र न्यायाधीश, देवघर द्वारा पारित दिनांक 22.1.2001 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा विद्वान सत्र न्यायाधीश ने जी॰ आर॰ सं॰ 507/1999 के संबंध में श्री बी॰ के॰ सिंह, तत्कालीन एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, मधुपुर, देवघर द्वारा पारित दिनांक 20.6.2000 के संज्ञान के आदेश को चुनौती देते हुए वि॰ प॰ सं॰ 2 द्वारा दाखिल दंडिक पुनरीक्षण को अनुज्ञात किया है।

2. यह प्रतीत होता है कि आरंभ में याची प्रधान कुमार सिंह द्वारा वि॰ प॰ सं॰ 2 और 3 के विरुद्ध एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, मधुपुर, देवघर के न्यायालय में परिवाद पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 301/1999 दाखिल किया गया था जिसमें अभिकथन किया गया था कि अभियुक्त ने रिवाल्वर से लैस होकर उसे पकड़ा, उस पर प्रहार किया और उसकी जेब से 3000/- रुपया और 900/- रुपयों के मूल्य की कलाई घड़ी को छीन लिया।

3. उक्त परिवाद धारा 156 (3) के अधीन मामले के रजिस्ट्रेशन और अन्वेषण के लिए संबंधित पुलिस थाना भेजा गया था जिसके बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323/341/379/384 और आयुध अधिनियम की धारा 25/27 के अधीन मधुपुर (सरथ) पी॰ एस॰ केस सं॰ 121 वर्ष 1999 दर्ज किया गया था। तद्नुसार, आगे अन्वेषण किया गया और अन्वेषण पूरा करने के बाद यह कथन करते हुए कि घटना असत्य थी, अंतिम रिपोर्ट दाखिल किया गया था। अंतिम रिपोर्ट दाखिल किए जाने के बाद भी विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ ने केस डायरी में उपलब्ध सामग्री पर विचार किया और दिनांक 20.6.2000 के आदेश के तहत संज्ञान लिया।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 और 3 ने दिनांक 20.6.2000 के आदेश जिसके द्वारा संज्ञान लिया गया था के विरुद्ध विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 88/2000 दाखिल किया। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने पक्षों को सुनने के बाद उक्त आदेश अपास्त कर दिया, अत: दिनांक 22.1.2001 के आदेश के अभिखंडन के लिए इस न्यायालय के समक्ष दांडिक विविध याचिका दाखिल की गयी है।

5. यह निवेदन किया गया है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश अपास्त करके गंभीर गलती किया है। संज्ञान लेने की शक्ति रखने वाला दंडाधिकारी पुलिस द्वारा दाखिल अंतिम रिपोर्ट पर विचार करने के लिए बाध्य नहीं है। विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ ने सही प्रकार से दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190 (i) (b) के अधीन प्रदत्त शक्ति का उचित रूप से प्रयोग किया है।

6. वि॰ प॰ सं॰ 2 एवं 3 के अधिवक्ता एवं राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने तर्कों का विरोध किया और निवेदन किया है कि विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ ने गलत रूप से वि॰ प॰ सं॰ 2 और 3 के विरुद्ध संज्ञान लिया है। केस डायरी में आई॰ ओ॰ द्वारा संग्रहित साक्ष्य अत्यन्त स्पष्ट है कि परिवादी के सिवाए किसी गवाह ने घटना का समर्थन नहीं किया है। आई॰ ओ॰ भी वास्तविक घटना का विवरण संग्रहित करने की सीमा तक गया है जिसने ऐसे गंभीर अभिकथन के साथ उक्त परिवाद की दाखिली को जन्म दिया। यह इंगित किया गया था कि बचकाने कारण से दोनों परिवारों ने एक-दूसरे के साथ झगड़ा किया था।

7. मैंने केस डायरी और आक्षेपित आदेश जो विस्तृत है का परिशीलन किया है और विद्वान सत्र न्यायाधीश ने विस्तारपूर्वक अभियोजन मामले के समस्त पहलूओं पर चर्चा किया है। मामले के पूर्वोक्त पहलूओं पर विचार करते हुए मैं दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन दाखिल इस दांडिक विविध याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ। अत: इसे खारिज किया जाता है।

8. अभिलेख कक्ष में इसे जमा करने के लिए केस डायरी के साथ अवर न्यायालय अभिलेख को अवर न्यायालय भेजा जाए।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स श्री राज दुर्गा इस्पात इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰ (1641 में)

मेसर्स अंजन्या इस्पात लि॰ (1642 में)

cuke

बैंक ऑफ बड़ौदा (दोनों में)

W.P. (C) Nos. 1641 with 1642 of 2013. Decided on 15th March, 2013.

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्निर्माण प्रतिभूति हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002—धारा 13 (4)—बंधक संपत्तियों पर कब्जा-नोटिस-याची की आशंका कि बैंक धारा 13

(4) का अवलंब लेकर प्रतिभूत आस्ति का कब्जा लेने का इच्छुक है, भ्रामक है–बैंक ने भी स्पष्टतः कथन किया कि नोटिस धारा 13 (4) के अधीन नोटिस की प्रकृति की नहीं थी–किसी नए वाद हेतुक पर निर्भर करते हुए कोई शिकायत करने की स्वतंत्रता याचीगण को देते हुए रिट याचिकाएँ निपटायी गयी। (पैराएँ 2 एवं 3)

अधिवक्तागण.–M/s Binod Poddar, Vikash Pandey, Darshna Poddar, Piyush Poddar, Amrita Sinha, For the Petitioners; Mrs. A.R. Choudhary, For the Bank.

आदेश

चूँकि दोनों रिट आवेदनों में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक सदृश हैं, उन्हें साथ सुना जा रहा है और इसे एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और प्रत्यर्थी-बैंक की ओर से दाखिल प्रति शपथ पत्र के पैराग्राफों 9 और 10 में दिए गए बयानों से यह प्रतीत होता है कि याचीगण की आशंका कि बैंक वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्निर्माण एवं प्रतिभूति हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 (4) का अवलंब लेकर बंधक संपत्तियों का कब्जा लेने का इच्छुक है, भ्रामक है। बैंक ने अपने प्रति शपथ पत्र में स्पष्टतः कथन किया है कि इसकी प्रतिभूत आस्तियों के कब्जे के संबंध में याचीगण के विरुद्ध दिनांक 4 मार्च, 2013 को जारी नोटिस वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्निर्माण एवं प्रतिभूति हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 (4) के अधीन नोटिस की प्रकृति का नहीं है। पक्षों के निवेदनों से आगे प्रतीत होता है कि बैंक ने पहले वित्तीय आस्तियों के प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्निर्माण एवं प्रतिभूति हित प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 (2) के अधीन नोटिस जारी किया था जिसका याचीगण द्वारा आपत्ति के रूप में उत्तर दिया गया था। अपने प्रतिशपथ पत्र में प्रत्यर्थी बैंक द्वारा किए गए प्रकथनों से आगे प्रतीत होता है कि दिनांक 12 मार्च, 2013 को पारित आदेश द्वारा ऐसी आपत्ति का उत्तर दिया गया है और इसे याचीगण को स्पीड पोस्ट द्वारा भेजा गया है।

3. मामले के उस दृष्टिकोण में, इस क्षण पर याचीगण की आशंका भ्रामक है जैसा यहाँ ऊपर पहले ही उपदर्शित किया गया है। तद्नुसार, किसी नए वाद हेतुक पर निर्भर करते हुए कोई शिकायत करने की स्वतंत्रता याचीगण को देते हुए इन दोनों रिट याचिकाओं को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

महावीर दत्ता एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 2356 of 2000(R). Decided on 15th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406/420/323/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं उपहति–सामान्य आशय–संज्ञान–भाड़े पर दिए गए वाहन का दुर्विनियोग–अभियुक्त द्वारा करार पर सम्यक रूप से हस्ताक्षर किया गया था–अभियुक्त

ने वाहन के पुर्जों को हटाकर और करार भाड़ा भी अपने पास रखकर संपत्ति का दुर्विनियोग किया है–न्यायालय प्राथमिकी अभिखंडित करने का इच्छुक नहीं है और याचीगण को अन्वेषण के परिणाम की प्रतीक्षा करनी होगी–आक्षेपित आदेश रिक्त किया गया और अवर न्यायालय को आगे अग्रसर होने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Das, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. P. Chatterjee, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–यह दांडिक विविध याचिका भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420/323/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दर्ज चिरकुंडा पी॰ एस॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1998 से उद्भूत होने वाली संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. प्राथमिकी से सामने आने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि परिवादी रजिस्ट्रेशन सं॰ WB-42A-9525 वाले 'महिन्द्रा जीप' का स्वामी था। उक्त जीप अभियुक्त सं॰ 1 को भाड़े पर चलाने के लिए दी गयी थी जिसके लिए करार भी निष्पादित किया गया था। परिवादी ने पहले माह के लिए 4000/- रुपया प्राप्त किया किंतु तत्पश्चात अभियुक्तगण ने भुगतान रोक दिया और आगे वाहन के महत्वपूर्ण पुर्जों को हटा दिया और स्वामित्व अंतरित करने का भी प्रयास किया। जब परिवादी ने आपत्ति किया, उसे धमकी दी गयी थी और उसके साथ हाथापाई की गयी थी। तत्पश्चात वि॰ प॰ सं॰ 2 ने याचीगण के विरुद्ध सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय, धनबाद के समक्ष परिवाद मामला सं॰ 774 वर्ष 1997 दाखिल किया। उक्त परिवाद मामला को संस्थापन के लिए और मामले में आगे अन्वेषण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन संबंधित पुलिस थाना भेजा गया था और तद्नुसार भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 408/420/323/34 के अधीन दिनांक 18.1.98 का चिरकुंडा पी॰ एस॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1998 दर्ज किया गया था।

3. यह निवेदन किया गया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 406/420 के अधीन मामला नहीं बनता है। परिवादी के वाहन को करार के निष्पादन पर याचीगण को दिया गया था और तत्पश्चात परिवादी वाहन बेचने के लिए सहमत हुआ था जिसके लिए उसने आगे करार निष्पादित किया था और आवश्यक दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किया था। अत:, संपत्ति के दुर्विनियोग अथवा छल का प्रश्न बिल्कुल उद्भूत नहीं होता है। इसके अतिरिक्त, याचीगण ने परिवादी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420/506 के अधीन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 276 वर्ष 1997 दर्ज किया है। वह मामला भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन पुलिस को भेजा गया था जिसके बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420/504 के अधीन जामताड़ा पी॰ एस॰ केस सं॰ 130 वर्ष 1997 दर्ज किया गया था। पुलिस ने अन्वेषण के बाद घटना सत्य पाया था और परिवादी विरोधी पक्षकार के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया था।

4. वर्तमान मामला परिवादी द्वारा जमानत पर निर्मुक्त किए जाने के बाद दाखिल किया गया है। यह याचीगण के विरुद्ध विरोधी पक्षकार-परिवादी द्वारा आरंभ किया गया पूर्णत: द्वेषपूर्ण अभियोजन है और इसे जारी रखने की अनुमति नहीं है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

6. मैंने प्राथमिकी का परिशीलन किया है जिसमें परिवादी ने अभिकथन किया है कि उसकी महिंद्रा जीप अभियुक्त सं॰ 2 और 3 की प्रेरणा पर अभियुक्त सं॰ 1 को न्यस्त की गयी थी जिसके लिए करार निष्पादित किया गया था और इस पर अभियुक्त सं॰ 3 द्वारा सम्यक रूप से हस्ताक्षर किया गया था और उन्होंने जीप के पुर्जों को हटाकर और करार भाड़ा भी अपने पास रखकर संपत्ति का दुर्विनियोग किया

है। समस्त सामग्रियों पर विचार करने के बाद मैं प्राथमिकी अभिखंडित करने का इच्छुक नहीं हूँ और याचीगण को अन्वेषण के परिणाम की प्रतीक्षा करनी होगी। यदि याची धारा 173 (2) के अधीन आरोप पत्र दाखिल किए जाने पर संज्ञान के आदेश के विरुद्ध व्यथित महसूस करता है, वह समुचित न्यायालय के समक्ष समुचित आवेदन दाखिल कर सकता है। इस मोड़ पर मैं अन्वेषण रोकने का इच्छुक नहीं हूँ और इसलिए दिनांक 31.3.2000 का आदेश, जिसके द्वारा चिरकुंडा पी॰ एस॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1998 में आगे कार्यवाही स्थगित कर दी गयी है, को रिक्त किया जाता है और अवर न्यायालय विधि के अनुरूप आगे अग्रसर होने के लिए स्वतंत्र होगा।

इस संप्रेक्षण के साथ, यह दांडिक विविध याचिका निपटायी जाती है।

इस आदेश की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

बसंत मंडल

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 538 of 2012. Decided on 15th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 311—साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 32(1)—मृत्युकालिक कथन–डॉक्टर, जिन्होंने अभियुक्त याची की पत्नी का मृत्युकालिक कथन दर्ज किया था, के विरुद्ध समन जारी करने के लिए आवेदन की अस्वीकृति–मृतक ने अस्पताल में किसी डॉक्टर द्वारा अपने बयान को दर्ज करने के संबंध में एक शब्द भी नहीं कहा है–याची यह भी सिद्ध करने में विफल रहा कि किसी डॉक्टर द्वारा अस्पताल में मृतका के बयान को दर्ज किया गया था–आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप का कोई कारण नहीं–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Awnish Shankar, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने इस पुनरीक्षण आवेदन को बरकाकाना (रेल) पी॰ एस॰ केस सं॰ 13/2005, जी॰ आर॰ केस सं॰ 501 वर्ष 2005 के तत्सम, से उद्‌भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 303/2009 में अपर सत्र न्यायाधीश–I, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 29.6.2012 के उस आदेश के विरुद्ध दाखिल किया है जिसके द्वारा रेलवे अस्पताल, पतरातू, जिला रामगढ़ के डॉ॰ एस॰ हलधर (डी॰ एम॰ ओ॰) के विरुद्ध समन जारी करने के लिए और दिनांक 10.3.2005 को दर्ज अभियुक्त बसंत मंडल की पत्नी मृतका आरती देवी के बयान को प्रस्तुत करने के लिए भी याची (अभियुक्त) द्वारा दाखिल दिनांक 16.6.2012 की याचिका अस्वीकार कर दी गयी थी।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दिनांक 10.3.2005 को मृतका आरती देवी को पतरातु में उसके इलाज के लिए रेलवे अस्पताल में भरती किया गया था और उसके इलाज के क्रम में डॉ॰ एस॰ हलधर द्वारा उसका बयान दर्ज किया गया था और आरती देवी का उक्त बयान मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए अत्यन्त आवश्यक है और इस प्रकार डॉ॰ एस॰ हलधर, जिन्होंने आरती देवी का बयान दर्ज किया था, को अपने द्वारा दर्ज मृतका आरती देवी के बयान को प्रस्तुत करने के लिए गवाह के रूप में बुलाया जा सकता है।

4. आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि आरती देवी ने दिनांक 15.3.2005 को दर्ज अपने फर्दबयान में उल्लिखित किया था कि उसे पहले पतरातू अस्पताल ले जाया गया था और तत्पश्चात उसके भाई गणेश सिंह और उसकी माता उसे बोकारो अस्पताल ले गयी थी। अत:, स्वीकृत रूप से उसे आर्रंभिक चरण पर उसके इलाज के लिए पतरातू अस्पताल में भरती किया गया था।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि यद्यपि आरती देवी ने उल्लिखित किया है कि उसे पतरातू अस्पताल ले जाया गया था किंतु उसने कहीं नहीं कथन किया है कि किसी डॉक्टर द्वारा उक्त अस्पताल में उसका बयान दर्ज किया गया था। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि याची ने यह दर्शाने के लिए किसी पेपर चिट को दाखिल नहीं किया है कि डॉ॰ एस॰ हलधर अथवा पतरातू अस्पताल के किसी अन्य डॉक्टर ने आरती देवी का बयान दर्ज किया। यह भी निवेदन किया गया है कि मामला वर्ष 2005 का है और याची ने मामले के विचारण में विलंब करने के लिए इस याचिका को दाखिल किया है।

6. दोनों पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार करते हुए और दिनांक 15.3.2005 के फर्दबयान, जिसे इस आवेदन में परिशिष्ट-1 के रूप में संलग्न किया गया है, के विषय वस्तु पर विचार करते हुए मैं पाती हूँ कि आरती देवी ने पतरातू अस्पताल के किसी डॉक्टर द्वारा अपना बयान दर्ज करने के संबंध में एक शब्द भी नहीं कहा है। इसके अतिरिक्त, याची यह सिद्ध करने के लिए कोई पेपर चिट देने में विफल रहा है कि किसी डॉक्टर द्वारा पतरातू अस्पताल में आरती देवी का बयान कभी दर्ज किया गया था। अत: मैं आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं पाती हूँ।

7. तद्नुसार, इस पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

जय किशोर सिंह

cuke

मो॰ इकबाल एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 4061 of 2001. Decided on 14th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 197 एवं 482—गृह अतिचार एवं दुर्व्यवहार–दांडिक अभियोजन–याची कार्यपालक दंडाधिकारी के रूप में पदस्थापित था और विधि व्यवस्था बनाए रखने के अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए और परिवादी की प्रेरणा पर संभावित रूप से किए जाने वाले उपद्रव को रोकने के लिए घटनास्थल पर गया था–दंडाधिकारी ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया कि किसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि याची द्वारा किया गया कृत्य आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में नहीं था–आक्षेपित आदेश सहित दांडिक कार्यवाही अपास्त की गयी–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Kumar Srivastava, For the Petitioners; None, For the Opp. Party No.1; Mr. Sunil Kumar Dubey, For the State.

आदेश

यह दांडिक विविध आवेदन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 56 वर्ष 99 में श्री बी॰ के॰ दूबे, न्यायिक दंडाधिकारी, पाकुड़ द्वारा पारित दिनंक 1.2.2001 के आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए याची की ओर से दाखिल किया गया है।

2. परिवाद से सामने आने वाले मामले के तथ्य ये हैं कि याची जो पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 56 वर्ष 1999 में अभियुक्त है, ने गृह अतिचार किया था और परिवादी के घरवालों के साथ दुर्व्यवहार किया था। जब परिवादी घर लौटा, उसे घटना की जानकारी हुई और उसने पूर्वोक्त मामला दर्ज किया।

3. यह निवेदन किया गया है कि याची कार्यपालक दंडाधिकारी के रूप में पाकुड़ में पदस्थापित था। विविध केस सं॰ 15 वर्ष 1999 के तहत दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 107 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसमें परिवादी को एक वर्ष तक शांति बनाए रखने के लिए बंध पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। जब परिवादी ने दिनांक 23.2.1999 के आदेश का अनुपालन नहीं किया था, दिनांक 10.3.1999 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 113 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी और उस आदेश के निष्पादन के लिए याची को दिनांक 10.3.1999 के पत्र सं॰ 365 के तहत कार्यपालक दंडाधिकारी के रूप में प्रतिनियुक्त किया गया था। उस आदेश के अनुपालन में याची सिविल एस॰ डी॰ ओ॰ के साथ विधि व्यवस्था बनाए रखने के अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में और परिवादी की प्रेरणा पर संभावित रूप से किए जाने वाले उपद्रव को रोकने के लिए घटनास्थल पर गया था। आक्षेपित आदेश अत्यन्त गलत और अवैध है। विद्वान दंडाधिकारी ने मामले के समस्त पहलूओं पर विचार नहीं किया है और मनमाने रूप से संप्रेक्षित किया है कि किसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं है क्योंकि याची द्वारा किया गया कृत्य अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में नहीं था। मामले के उस दृष्टिकोण में, पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 56 वर्ष 1999 से उद्भूत संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 1.2.2001 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने का दायी है।

4. दूसरी ओर, स्थगन देने के बाद भी विरोधी पक्षकार सं॰ 1 के विद्वान अधिवक्ता अनुपस्थित हैं यद्यपि राज्य के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हैं।

5. मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट दस्तावेजों का परिशीलन किया है। यह अत्यन्त स्पष्ट है कि याची विधि व्यवस्था और शांति बनाए रखने के लिए अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए घटनास्थल पर गया था।

6. मामले के इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 56 वर्ष 1999 में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 1.2.2001 के आक्षेपित आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अपास्त की जाती है।

---

ekuuh; vkjï vkjï çlkn] U;k;efr

सदन लाल

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Criminal Appeal (S.J.) No. 1163 of 2003. Decided on 15th March, 2013.

आर॰ सी॰ सं॰ 2(A) वर्ष 1995(R) में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 21.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7, 13(2) एवं 13(1)(d)—अवैध परितोषण–दोषसिद्धि–अवैध परितोषण, चाहे इसे पहले मांगा गया हो या नहीं, का स्वीकरण भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के द्वारा आच्छादित होगा किंतु यदि अवैध परितोषण

का स्वीकरण लोक सेवक द्वारा की गयी मांग के अनुसरण में है, तब यह धारा 13 (1) (d) के अधीन भी आएगा–अभियोजन किसी युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुआ है कि अपीलार्थी ने अवैध परितोषण मांगा था जो दिए जाने पर स्वीकार किया गया था और तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को धारा 7 के अधीन और धारा 13 (2) सह पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन दोषसिद्ध किया है–भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 एवं धारा 13(2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी दोषसिद्ध किया जा सकता है भले ही एकल संव्यवहार में कृत्य किया गया था–चूँकि अपराध ऐसा है जो भिन्न दंड प्रावधानित करने वाले दो भिन्न धाराओं के अधीन आता है, अपराधकर्ता को उस दंड की तुलना में अधिक कठोर दंड के साथ दंडित नहीं किया जाना चाहिए जिसे न्यायालय दोनों अपराधों में से किसी एक के लिए व्यक्ति को अधिनिर्णीत कर सकता था–दंडादेश में उपांतरण के साथ अपील खारिज। (पैराएँ 24 से 27)

निर्णयज विधि.–(2007) 1 SCC (Cr.) 520—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Das, For the Appellant; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आर॰ आर॰ प्रसाद, न्यायमूर्ति.–परिवादी सुरेन्द्र बरायक (अ॰ सा॰ 7) से 5000/- रुपयों का अवैध परितोषण मांगने और स्वीकार करने पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन और धारा 13(2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन आरोप का सामना करने के लिए अपीलार्थी सदन लाल का विचारण किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने उक्त आरोपों के लिए अपीलार्थी को दोषी पाने पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के लिए उसको एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 4000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने और व्यतिक्रम में तीन माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। आगे, उसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 6000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने और व्यतिक्रम में पाँच माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलाने का आदेश दिया गया था।

2. अभियोजन का मामला यह है कि परिवादी सुरेन्द्र बरायक (अ॰ सा॰ 7) ने जिला उद्योग केंद्र, गुमला के समक्ष कर्ज प्रदान करने के लिए आवेदन दिया था। कर्ज मंजूर किए जाने पर इसके संवितरण के लिए आवेदन बैंक ऑफ इंडिया, चिनपुर शाखा अग्रसारित किया गया था। ऐसे आवेदन की प्राप्ति पर, तत्कालीन शाखा प्रबंधक इग्नासियस किंडो (अ॰ सा॰ 6) द्वारा इस अपीलार्थी को जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत करने को कहा गया था जो उसने किया। इस बीच, जब परिवादी कर्ज राशि पाने के लिए अपीलार्थी सदन लाल के पास गया, उसने उससे कहा कि जाँच के क्रम में उसकी दुकान बहुत छोटी पायी गयी थी जिसका आकार बढ़ाने की आवश्यकता है। परिवादी ने सलाह के मुताबिक ऐसा किया। ऐसा करने के बाद वह पुनः अपीलार्थी से मिला, उसने परिवादी से कहा कि 75,000/- रुपयों की राशि मंजूर की गयी है किंतु इसे उसको केवल तब संवितरित किया जाएगा जब वह इसके 10% का भुगतान करता है। परिवादी ने मांग पूरा करने में अपनी अक्षमता अभिव्यक्त किया। इस पर अपीलार्थी ने उससे कहा कि उसे किश्त में धन दिया जाएगा और फर्नीचर खरीदने के लिए उसे पहली किश्त दी जाएगी जिस राशि से उसको धन का भुगतान करना होगा। उस पर उसे 12,875/- रुपयों का चेक दिया गया था। फर्नीचर खरीदने के बाद जब परिवादी अपीलार्थी से दिनांक 13.1.1995 को मिला, उसने उसे शेष धन का भुगतान करने के लिए कहा। इस पर अपीलार्थी ने उससे कहा कि शेष धन का भुगतान केवल तब किया जाएगा जब वह उस राशि के 10% का भुगतान करेगा। इसमें से वह पहली बार उसको 5000/- रुपयों का भुगतान कर सकता है और कर्ज संवितरित किए जाने के बाद 2500/- रुपयों की शेष राशि का भुगतान किया जाए। किंतु परिवादी ने थोड़ा और समय मांगा।

3. तत्पश्चात् परिवादी ने एस० पी०, सी० बी० आई० के समक्ष लिखित परिवाद (प्रदर्श 11) किया। उक्त परिवाद की प्राप्ति पर तत्कालीन एस० पी०, सी० बी० आई० ने डी० एस० पी०, डी० बी० सिंह (अ० सा० 12) को अभिकथन का सत्यापन करने के लिए कहा। अ० सा० 12 ने परिवादी से मिलने के बाद अभिकथन में सार पाया और सत्यापन रिपोर्ट (प्रदर्श 15) प्रस्तुत किया। सत्यापन रिपोर्ट पाने पर अ० सा० 10 श्रवण कुमार, डी० एस० पी०, सी० बी० आई० ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन और धारा 7 के अधीन भी मामला आर० सी० सं० 2 (A)/95 (R) दर्ज किया और औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 14) दर्ज की गयी थी। तत्पश्चात् अ० सा० 10 को अन्वेषण न्यस्त किया गया था, जिसने स्वयं, अन्य सी० बी० आई० पदधारी (अ० सा० 12), परिवादी (अ० सा० 7), दो स्वतंत्र गवाहों अर्थात् अभय कुमार झा, मैनेजर, सी० सी० एल० (अ० सा० 3) और इलियास बा, आयकर निरीक्षक (अ० सा० 5) से गठित टीम गठित किया। तत्पश्चात प्री ट्रैप अभ्यास किया गया था जिसके द्वारा परिवादी द्वारा प्रस्तुत 100/- रुपयों के 45 करेंसी नोटों और 500/- रुपए के एक करेंसी नोट पर फेनेपथ्लीन पाउडर छिड़का गया था और प्री–ट्रैप ज्ञापन (प्रदर्श 2A) में इसके नंबरों को लिखने के बाद परिवादी को इन्हें उसे और गवाहों विशेषत: अ० सा० 3 को इन्हें अपीलार्थी को उसके मांगने पर सौंपने के अनुदेश के साथ दिया गया था और तब ट्रैप टीम के सदस्यों को संकेत देने के लिए कहा गया था। तत्पश्चात् अ० सा० 10 के नेतृत्व में टीम बैंक गयी। परिवादी बैंक में घुसा और जहाँ अ० सा० 3 भी परिवादी के पीछे आया। अपीलार्थी बैंक के काउंटर पर बैठा पाया गया था। परिवादी ने उससे कहा कि उसने धन की व्यवस्था कर ली है। इस पर अपीलार्थी ने उससे कहा कि यदि ऐसा है, वह शेष राशि पाएगा। ऐसा कहते हुए अपीलार्थी ने उसे बैंक से बाहर आने के लिए कहा। बैंक से बाहर आने पर अपीलार्थी परिवादी के साथ किसी विजय कुमार (अ० सा० 9) की दुकान पर आया। अ० सा० 3 भी उनके पीछे आया। वहाँ अपीलार्थी ने परिवादी से उसे धन देने कहा। तद्नुसार, 5000/- रुपयों की राशि उसे दी गयी थी जिसने इसे रेक्सिन बैग में रखा और अपने कैश बॉक्स/ड्राअर में डाला। तत्पश्चात, अपीलार्थी ने परिवादी से कहा कि अब वह धन पाएगा और तब उस स्थान से चला गया। समय के उस बिंदु पर छापामार टीम के सदस्य वहाँ आए और विजय कुमार को चुनौती दिया जिसने पूछे जाने पर उनको तुरन्त बताया कि उसने अपीलार्थी के कहने पर धन रखा था। इस पर धन जिसे रेक्सिन बैग में रखा गया था, बरामद किया गया था। सत्यापन पर, करेंसी नोट वही पाए गए थे जिन्हें प्री–टैप अभ्यास के समय पर फेनोपथ्लीन पाउडर छिड़क कर परिवादी को दिया गया था। तत्पश्चात् फेनोपथ्लीन टेस्ट किया गया था जिसके द्वारा विजय कुमार के दाएँ हाथ की उंगलियों को डब्बे में रखे घोल में डुबाया गया था जिस पर यह गुलाबी हो गया था। उक्त डब्बा मुहरबंद किया गया था जिस पर हस्ताक्षर किए गए थे। 100/- रुपए के जी० सी० नोटों को (प्रदर्श VI से VI/44) और 500/- रुपयों के जी० सी० नोटों (प्रदर्श VI/45) को लिफाफों (प्रदर्श 7) में रखा गया था जिन्हें मुहरबंद किया गया था। तत्पश्चात् पोस्ट ट्रैप ज्ञापन (प्रदर्श 16) तैयार किया गया था। तत्पश्चात् बैंक के विभाग से प्रासंगिक अभिलेख जब्त किए गए थे और अन्वेषण अधिकारी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन विजय कुमार का बयान दर्ज करवाया था जिसमें उसने स्वीकार किया था कि अपीलार्थी ने उसे धन रखने के लिए कहा था जिसे बाद में अपीलार्थी द्वारा वापस ले लिया जाना था। अन्वेषण अधिकारी ने मंजूरी आदेश (प्रदर्श 1) प्राप्त करने पर आरोप पत्र दाखिल किया। जिस पर अपीलार्थी के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया था। बाद में जब आरोप विरचित किए गए थे, अभियुक्त ने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

4. विचारण के क्रम में, अभियोजन की ओर से 12 गवाहों का परीक्षण किया गया था।

5. अभियोजन मामला की समाप्ति के बाद, अपीलार्थी से उसके विरूद्ध प्रतीत होने वाली आलिप्तकारी परिस्थितियों के बारे में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन प्रश्न पूछा गया था जिससे उसने पूरा इनकार किया। इस पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने गवाहों के परिसाक्ष्यों को विश्वसनीय पाने पर पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश दर्ज किया।

6. उक्त निर्णय से व्यथित होकर, यह अपील दाखिल की गयी है।

7. अपीलार्थी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ दास ने निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 जाल बिछाने के लिए गठित टीम के स्वतंत्र सदस्य थे। अ॰ सा॰ 3 के अनुसार, वह परिवादी अ॰ सा॰ 7 के साथ बैंक गया जहाँ अपीलार्थी ने मांग रखा किंतु अ॰ सा॰ 5 ने कभी नहीं परिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपीलार्थी को धन मांगते हुए सुना था। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 7 ने अपने साक्ष्य में ऐसा कुछ भी नहीं कहा है कि अ॰ सा॰ 3 उसके साथ था। ऐसी स्थिति में अपीलार्थी द्वारा किए गए मांग के संबंध में अ॰ सा॰ 3 का साक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है।

8. आगे, अभियोजन का मामला है कि धन जिसे विजय कुमार की दुकान से बरामद किया गया था, विजय कुमार को परिवादी द्वारा अपीलार्थी की प्रेरणा पर दिया गया था किंतु इस सरल तथ्य से यह तथ्य झुठलाया जाता है कि इस अपीलार्थी को विजय कुमार की दुकान पर उपस्थित कभी नहीं पाया गया था जहाँ धन दिया गया था। इसके अतिरिक्त, अभियोजन गवाहों में से कोई कुछ करने के लिए आगे नहीं आया है कि किस प्रकार अपीलार्थी वहाँ से सरक लिया जब ट्रैप टीम के सदस्य दुकान के निकट मौजूद थे।

9. आगे, अभियोजन का मामला बिल्कुल संदेहास्पद बन जाता है जब अ॰ सा॰ 7 कहता है कि उसने कोई संकेत नहीं दिया था जब धन का भुगतान किया गया था जबकि उस साक्ष्य के विपरीत अन्य गवाह कहते हैं कि ट्रैप टीम के सदस्य केवल तब दुकान पर आए थे जब परिवादी ने पूर्व नियत संकेत दिया था।

10. आगे निवेदन यह है कि इस अपीलार्थी का कृषि सहायक होने के नाते कर्ज राशि के संवितरण के साथ सरोकार नहीं है जिसे तत्कालीन बैंक प्रबंधक इग्नासियस किंडो (अ॰ सा॰ 6) द्वारा भी स्वीकार किया गया है और इसलिए, अपीलार्थी के विरुद्ध किया गया कोई अभिकथन कि उसने धन संवितरित करने के लिए धन मांगा, सारहीन प्रतीत होता है।

11. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि अभियोजन किसी युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करने में विफल रहा है, अत: दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश अपास्त किए जाने योग्य है।

12. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री खान निवेदन करते हैं कि परिवादी सुरेन्द्र बरायक (अ॰ सा॰ 7) को गुमला जिला उद्योग केन्द्र द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अधीन कर्ज मंजूर किया गया था और बैंक ऑफ इंडिया, चिनरपुर शाखा द्वारा राशि संवितरित की जाने वाली थी। जब परिवादी अ॰ सा॰ 7 अभियुक्त के पास गया, उसने अपना कमीशन मांगा जिसका भुगतान करने में परिवादी ने आरंभ में अपनी अक्षमता अभिव्यक्त किया। किंतु, जोर दिए जाने पर परिवादी 5000/- रुपयों की राशि का भुगतान करने के लिए सहमत हुआ। इस पर उसने सी॰ बी॰ आई॰ को सूचित किया। जब सत्यापन पर अभिकथन सत्य पाया गया था, ट्रैप टीम गठित की गयी थी और जब अभियुक्त की प्रेरणा पर किसी विजय कुमार को भुगतान किया गया था, विजय कुमार को पकड़ा गया था और धन

बरामद किया गया था जो तथ्य परिवादी (अ० सा० 7), अ० सा० 3 और अ० सा० 5, छाया गवाहगण, साक्ष्य से और अन्वेषण अधिकारी अ० सा० 10 और अ० सा० 12 छापामारी टीम के सदस्य के साक्ष्य से स्थापित होता है और तद्द्वारा विचारण न्यायालय अपीलार्थी को दोषी अभिनिर्धारित करने में बिल्कुल न्यायोचित है।

13. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि यह स्वीकृत स्थिति है कि अपीलार्थी को प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अधीन गुमला जिला उद्योग केंद्र द्वारा 75,000/- रुपयों की कर्ज राशि मंजूर की गयी थी जिस राशि को बैंक ऑफ इंडिया, चैनपुर शाखा द्वारा संवितरित किया जाना था। जब अ० सा० 7 इस अपीलार्थी के पास गया, उसने परिवादी से कहा कि यदि उसके पक्ष में राशि निर्मुक्त की जाती है, उसे 10% का भुगतान करना होगा जिस पर अपीलार्थी ने उसको भुगतान करने में अपनी अक्षमता जाहिर किया। इस पर, अ० सा० 7 के साक्ष्य के मुताबिक अपीलार्थी ने उससे कहा कि आरंभ में वह फर्नीचर खरीदने के लिए 12,875/- रुपयों का चेक पाएगा और उस राशि से वह 10% का भुगतान कर सकता है। तब चेक दिया गया था। जब अ० सा० 7 शेष धन के लिए अपीलार्थी के पास गया, उसने 5000/- रुपया मांगा।

14. अपीलार्थी की ओर से किया गया निवेदन कि इस अपीलार्थी का कर्ज के संवितरण से संबंधित मामले से कोई सरोकार नहीं था और इस प्रकार, अवैध परितोषण मांगने का अवसर इस अपीलार्थी के पास नहीं था किंतु अ० सा० 6 इग्नासियस किंडो, तत्कालीन शाखा प्रबंधक के साक्ष्य की दृष्टि में इस निवेदन में सार नहीं है। उसके अनुसार, अपीलार्थी ने सत्यापन रिपोर्ट प्रस्तुत किया था जब अपीलार्थी के पक्ष में कर्ज राशि मंजूर की गयी थी। केवल यही नहीं, जब फर्नीचर खरीदने के लिए धन का भुगतान किया गया था, अपीलार्थी से पुनः सत्यापन रिपोर्ट प्रस्तुत करने का अनुरोध किया गया था। मामले के उस दृष्टिकोण में, यह कहा जा सकता है कि अपीलार्थी का अपीलार्थी के पक्ष में कोष की निर्मुक्ति से संबंधित मामले से पूरा सरोकार था।

15. मामले में आगे यह प्रतीत होता है कि जब परिवादी द्वारा सी० बी० आई० कार्यालय के समक्ष अभिकथन किया गया था, दो स्वतंत्र गवाहों अर्थात् अभय कुमार झा (अ० सा० 3) और इलियास बा (अ० सा० 5) से गठित ट्रैप टीम गठित की गयी थी। अ० सा० 3 के अनुसार, जब ट्रैप टीम की औपचरिकताओं को पूरा किया जा रहा था, अ० सा० 10 द्वारा उसे परिवादी के साथ बने रहने के लिए कहा गया था जब परिवादी धन का भुगतान करने अपीलार्थी के पास जाएगा। उसका विवरण छापामार दल के सदस्य अ० सा० 10 के साक्ष्य से और अ० सा० 12 के साक्ष्य से समर्थन पाता है। तद्नुसार, जब ट्रैप टीम बैंक आयी परिवादी, जिसके पीछे अ० सा० 3 था, बैंक के अंदर आया जहाँ परिवादी ने अपीलार्थी को बैंक के काउन्टर पर बैठा पाया। परिवादी को देखने पर अपीलार्थी ने पूछा कि क्या उसने धन का प्रबंध कर लिया है और जब उसने सकारात्मक उत्तर दिया, अपीलार्थी ने उसे अपने साथ बैंक के बाहर आने को कहा। वे विजय कुमार की दुकान में आए और अ० सा० 3 भी उनके पीछे आया। वहाँ अपीलार्थी ने परिवादी को विजय कुमार को 5000/- रुपया देने को कहा जिसे परिवादी ने उसे दिया। उसने इसे रेक्सिन बैग में रखने के बाद काउन्टर बॉक्स में रखा। तुरन्त ट्रैप टीम वहाँ आयी तथा पूछे जाने पर विजय कुमार ने स्वीकार किया कि उसने अपीलार्थी के कहने पर पैसे रखे थे। किंतु, उस समय तक, अपीलार्थी वहाँ से चला गया था। विजय कुमार के दायें हाथ के धोबन को सोडियम कार्बोनेट से उपचारित किया गया था, यह गुलाबी हो गया और तब धन बरामद किया गया था।

16. अपीलार्थी की ओर से निवेदन किया गया था कि दो स्वतंत्र गवाहों, अर्थात् अभय कुमार, अ० सा० 3 तथा इलियास बा अ० सा० 5 ट्रैप टीम के सदस्य थे, किंतु अ० सा० 5 ने अपीलार्थी द्वारा की जा रही मांग के बारे में अभिसाक्ष्य कभी नहीं दिया था यद्यपि अ० सा० 3 ने ऐसा कहा था, किंतु उसका विवरण बिल्कुल संदेहास्पद बन जाता है क्योंकि अ० सा० 7 ने भी अपने साक्ष्य में बैंक में अ० सा० 3 की उपस्थिति के बारे में कुछ नहीं कहा है।

17. यह सत्य है कि अ० सा० 5 ने अपीलार्थी द्वारा की जा रही मांग के बारे में कुछ भी नहीं कहा है। ऐसा नहीं कहने का कारण यह है कि उसके पास अ० सा० 3 और परिवादी के साथ बैंक के अंदर आने का अवसर नहीं था क्योंकि केवल अ० सा० 3 को प्री ट्रैप के दौरान परिवादी के साथ बने रहने का अ० सा० 10 द्वारा अनुदेश दिया गया था जो न केवल अ० सा० 3 के साक्ष्य से बल्कि अ० सा० 10 और अ० सा० 12 के साक्ष्य से भी स्पष्ट होगा।

18. आगे, अ० सा० 3 के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि जब परिवादी बैंक के अंदर गया, अ० सा० 3 भी उसके पीछे गया और तद्द्वारा अ० सा० 7 ने अ० सा० 3 को उसके पीछे जाते और उस समय भी जब अपीलार्थी ने धन मांगा था, नहीं देखा था। अत:, अपीलार्थी की ओर से किया गया निवेदन सारहीन है।

19. अपीलार्थी की ओर से यह निवेदन भी किया गया था कि यह आश्चर्यजनक है कि जब विजय कुमार की दुकान से धन बरामद किया गया था, इस अपीलार्थी, जिसे परिवादी अ० सा० 7 के साथ विजय कुमार की दुकान पर गया हुआ बताया जाता है, को गिरफ्तार नहीं किया गया था जो तथ्य संपूर्ण मामले को झुठलाता है।

20. स्वीकृत रूप से, अपीलार्थी को विजय कुमार की दुकान पर कभी नहीं पाया गया था जब धन बरामद किया गया था। अ० सा० 3 के साक्ष्य के मुताबिक इसका कारण यह है कि वह उस समय तक उस स्थान से चला गया था जब ट्रैप टीम वहाँ पहुँची थी और 100/- रुपयों के मूल्यांक के करेंसी नोटों (प्रदर्श VI से VI/44) और 500/- रुपए मूल्यांक के करेंसी नोटों (प्रदर्श VI/45) को बरामद किया गया था।

21. यही विवरण अ० सा० 10 और अ० सा० 12 और अ० सा० 5 का भी है यद्यपि उन सबों ने अपीलार्थी को परिवादी के साथ विजय कुमार की दुकान में जाते देखा था। धन बरामद किए जाने के बाद वे सब अपीलार्थी के कार्यालय गए थे जहाँ अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया था।

22. मामले के उस दृष्टिकोण में, विजय कुमार की दुकान पर अपीलार्थी के नहीं पाए जाने की परिस्थिति ऐसी कभी प्रतीत नहीं होती है कि अभियोजन मामले पर अविश्वास किया जाए। इस चरण पर गौर किया जाए कि अभियोजन द्वारा विजय कुमार का परीक्षण भी अ० सा० 9 के रूप में किया गया है जिसने केवल यह अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी उसकी दुकान पर आया और धन रखा यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन दिए गए पूर्व के बयान में यह कहा गया था कि परिवादी ने अपीलार्थी के कहने पर धन रखा था और उसे इस कारण पक्षद्रोही घोषित किया गया था।

23. मामले के उस दृष्टिकोण में, विजय कुमार का परिसाक्ष्य कि परिवादी ने धन रखा था, स्वीकार्य नहीं है।

24. इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि अभियोजन किसी युक्तियुक्त संदेह के परे मामला सिद्ध करने में सक्षम हुआ है कि अपीलार्थी ने अवैध परितोषण मांगा था जिसे दिए जाने पर उसने इसे स्वीकार किया था और तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को भ्रष्टचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन और धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया

है। यद्यपि दोनों अपराध एकल संव्यवहार में किए गए प्रतीत होते हैं फिर भी **राज्य, पुलिस इंस्पेक्टर, पुडुकोट्टाय, तमिलनाडू के प्रतिनिधित्व में बनाम ए॰ पर्थीवन, (2007)1 SCC (Cr.) 520,** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में किसी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन और धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है भले ही कृत्य एकल संव्यवहार में किए गए थे।

25. यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अवैध परितोषण, चाहे इसकी मांग पहले की गयी हो या नहीं, का स्वीकरण भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 द्वारा आच्छादित होगा किंतु यदि अवैध परितोषण का स्वीकरण लोक सेवक द्वारा की गयी मांग के अनुसरण में है, यह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (d) के अधीन भी आएगा। किंतु, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूँकि अपराध ऐसा है जो भिन्न दंड प्रावधानित करने वाले दो विभिन्न धाराओं के अधीन आता है, अपराधकर्ता को उस दंड जो न्यायालय दो अपराधों में से एक के लिए व्यक्ति को अधिनिर्णीत कर सकता था, की तुलना में अधिक कठोर दंड से दंडित नहीं करना चाहिए।

26. यह गौर किया जाए कि धारा 7 के अधीन न्यूनतम दंड छह माह है और धारा 13 (1) (d) के अधीन न्यूनतम दंड एक वर्ष है। पूर्वोक्त प्रावधान के अधीन विहित न्यूनतम दंड और इस तथ्य कि अपीलार्थी वर्ष 1995 से विचारण की कठोरता का सामना कर रहा है, को दृष्टि में रखते हुए, उसे उक्त अपराधों के लिए विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित जुर्माना के दंडादेश के संबंध में किसी उपांतरण के बिना भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के लिए छह माह के लिए और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष के लिए दंडादेशित करना न्याय के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए समुचित होगा।

27. तद्नुसार, दंडादेश के बिंदु पर उपांतरण के साथ यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

डा॰ एम॰ मुखोपाध्याय

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 2877 of 2001. Decided on 13th February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 323—अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989—धारा 3—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—क्रूरता–दुर्व्यवहार एवं अपमान–दांडिक अभियोजन–अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार करते हुए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपराध नहीं बनता है–किंतु, परिवाद याचिका में विनिर्दिष्ट कथन है कि याचीगण ने सार्वजनिक रूप से सार्वजनिक स्थान पर सूचक के साथ दुर्व्यवहार किया था और अभित्रासित किया था–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अभिकथन अभिखंडित किया गया किंतु एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन अभियोजन जारी रहेगा–आवेदन अंशतः अनुज्ञात। (पैराएँ 12 एवं 13)

निर्णयज विधि.–2010(4) East Cr. C 29 (Jhr); 2012(1) JCR 559 (Jhr)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Kalyan Roy, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Bhaiya Vishwajeet Kumar, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–याची ने सेक्टर IV, बी॰ एस॰ सिटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 121 वर्ष 2000 के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3 के अधीन दर्ज प्राथमिकी और संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए इस आवेदन को दाखिल किया है।

2. याची की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची समय के प्रासंगिक बिंदु पर भारत सरकार के उपक्रम भारत रीफ्रैक्टरीज लि॰ का अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक था और अब वह उक्त पद से सेवानिवृत्त हो चुका है।

3. परिवाद याचिका के मुताबिक मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि परिवादी रामानंद चौधरी सहायक प्रबंधक (विपणन एवं सेवा) ने स्थायी रिक्ति के विरुद्ध उप प्रबंधक (विपणन एवं सेवा) के रूप में प्रोन्नत किया गया था और तत्पश्चात उसे प्रबंधक के पद पर प्रोन्नत नहीं किया गया था और तब उसने दिनांक 16.1.1999 को अपनी ''सेवा शिकायत'' की जाँच एवं प्रतितोष हेतु अध्यक्ष, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग के समक्ष अभ्यावेदन दाखिल किया कि उसे प्रोन्नति नहीं दी गयी थी यद्यपि सेवा के लिए प्रावधान अनुसूचित जाति के पक्ष में था और उक्त प्रावधान को अनदेखा किया गया है। उक्त परिवाद याचिका में आगे अभिकथित किया गया है कि दिनांक 4.11.2000 को दोपहर लगभग 1.45 बजे जब परिवादी ''निगरानी जागरुकता सप्ताह'' के समापन समारोह, जिसमें वह पुरस्कार विजेता और वक्ता था, में भाग लेने के बाद लौट रहा था वर्तमान याची (अभियुक्त सं॰ 2) जो 'भारत मंडपम' के बाहरी दरवाजा के निकट था ने उसे बुलाया और उसे गंदी भाषा में गाली दी:–

> *^^pkèkjh lkyk re gfjtu gkdj re gfj'pn vkj èkejkt ;fèkf"Bj cuu py gk vkj Hk"Vkpkj feVku dk cMk&cMk Hkk"k.k nrk gA e ekjr trk rjk eg rkM nxkA vHkh n[kr tkvk e rEgkjk D;k nxfr djrk gA***

4. आगे अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त सं॰ 2 जो वर्तमान याची है ने परिवादी को अपमानित और अभित्रासित करने के आशय के साथ सार्वजनिक रूप से इन शब्दों को कहा था क्योंकि परिवादी अनुसूचित जाति का साक्ष्य है। तत्पश्चात्, परिवादी ने स्थानांतरण आदेश दिनांक 8 नवंबर, 2000 को प्राप्त किया और दिनांक 10 नवंबर, 2000 को निर्मुक्ति आदेश प्राप्त किया। यह निवेदन किया गया है कि केवल अपनी सेवानिवृत्ति की चरम सीमा पर परिवादी को परेशान और पीड़ित करने के लिए क्योंकि वह अनुसूचित जाति समुदाय से आता है उक्त स्थानांतरण आदेश जारी किया गया था। परिवाद याचिका में यह भी कथन किया गया है कि परिवादी ने स्थानीय पुलिस को सूचित किया था किंतु पुलिस ने अभियुक्त सं॰ 2 (याची) सहित किसी अभियुक्तगण के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं किया था, अत: परिवादी ने इस परिवाद याचिका को दाखिल किया, तत्पश्चात मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, बोकारो ने दिनांक 1.12.2000 का आदेश पारित किया और दिनांक 22.12.2000 तक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन मामला संस्थापित करने और अन्वेषण करने का निर्देश दिया और तद्नुसार, वर्तमान प्राथमिकी दर्ज की गयी है।

5. याची की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता श्री कल्याण रॉय ने आगे निवेदन किया है कि संपूर्ण परिवाद याचिका में इसको लेकर कोई चर्चा नहीं है कि वर्तमान याची ने स्वेच्छापूर्वक उपहति कारित किया है, उसने शायद यह कह कर कि ''मैं मार के जूता तेरा मुँह तोड़ दूंगा-- उसको धमकाने का प्रयास

किया होगा किंतु ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि उसने कभी तमाचा या मुक्का मारा। अत:, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन याची (अभियुक्त सं॰ 2) के विरुद्ध अपराध नहीं बनता है।

6. श्री कल्याण रॉय ने आगे निवेदन किया है कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन के अनुसार घटनास्थल 'भारत मंडपम' के बाहरी दरवाजा के निकट है जहाँ वर्तमान याची ने परिवादी को भद्दी भाषा में गाली दी और दुर्व्यवहार किया, अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि उसने सार्वजनिक रूप से घटना स्थल पर पूर्वोक्त शब्दों को उच्चारित किया।

7. अपने प्रतिवाद का समर्थन करने के लिए उन्होंने **प्रदीप कुमार चौबे बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2010 (4) East Cr. C. 27 (Jhr.)** मामले में प्रदत्त निर्णय उद्धृत किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

*^^, lh fLFkfr e] e ;g vfHkfuèkkfjr dju d fy, etcj g fd tk Hkh dFku vfHkdFkr :i l fd, x, Fk] o lkotfud :i l ugh Fk vkj bl çdkj vfèkfu;e dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu vijkèk ugh curk g] Hky gh li.k vfHkdFku lR; eku tk,A***

8. यह निवेदन भी किया गया है कि **रुपम अखौरी एवं एक अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2012 (1) JCR 559 (Jhr.)** में एक अन्य निर्णय में माननीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:–

*^pfd ?kVuk ?kj d ckgj , l lkotfud LFky ij gb Fkh tgk l vke lMd eMrh g] vr% ;g le>k tk,xk fd ?kVuk lkotfud LFky ij gb vkj blfy,] U;k;ky; }kjk fofèk dk çkoèkku xyr :i l le>k x;k gA***

9. इस मामले में यह अंतत: अभिनिर्धारित किया जाता है कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (i) (x) के अधीन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध नहीं बनता है।''

10. सूचक की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता श्री भैया विश्वजीत कुमार ने निवेदन किया है कि परिवाद याचिका से बिल्कुल स्पष्ट है कि याची ने 'भारत मंडपम' के बाहर दरवाजा के निकट इन शब्दों को उच्चारित किया और सूचक/परिवादी के साथ दुर्व्यवहार किया, अत:, यह नहीं कहा जा सकता है कि यह सार्वजनिक स्थान नहीं है। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि पूर्वोक्त मामले जिन्हें याची के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किया गया है, घटनास्थल सार्वजनिक स्थान नहीं है।

11. प्रदीप कुमार चौबे बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2010 (4) East Cr. C. 27 (Jhr.) (ऊपर) के मामले में स्वीकृत रूप से घटनास्थल आधिकारिक चैंबर था और अभियोजन मामले के अनुसार, कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं था, अत: माननीय न्यायालय ने सही प्रकार से उक्त मामले की प्राथमिकी को अभिखंडित कर दिया था। **रुपम अखौरी एवं एक अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2012 (1) JCR 559 (Jhr.)** के मामले में घटनास्थल सूचक के घर के निकट था। उक्त मामले में, आई॰ ओ॰ ने अन्वेषण के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341/323/504/34 के अधीन और न कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के किसी प्रावधान के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया। उक्त मामले के अन्वेषण में यह भी आया है कि घटनास्थल घर है और प्रासंगिक समय पर कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं था। अत:, दोनों मामलें वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि मामला अन्वेषण के चरण पर है, अत:, इस चरण पर प्राथमिकी खारिज नहीं की जा सकती है क्योंकि याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन है।

12. श्री भैया विश्वजीत कुमार ने भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध के संबंध में याची के अधिवक्ता के प्रतिवाद को विवादित नहीं किया है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि सूचक को उपहति कारित करने का विनिर्दिष्ट अभिकथन वर्तमान याची जो अभियुक्त सं॰ 2 है के विरुद्ध नहीं है, अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन वर्तमान याची के विरुद्ध आरोप नहीं बनता है।

पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों तथा याची के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णयों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर भी विचार करते हुए वर्तमान याची (अभियुक्त सं॰ 2) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन मामला नहीं बनता है किंतु अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला बनता है। परिवाद याचिका में विनिर्दिष्टत: कथन किया गया है कि याची ने 'भारत मंडपम' के बाहरी दरवाजा पर सूचक के साथ दुर्व्यवहार किया था और उसे अभित्रासित किया था जो निश्चय ही सार्वजनिक रूप से सार्वजनिक स्थल है।

13. तद्नुसार, मैं इस आवेदन को अंशत: अनुज्ञात करता हूँ और भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन वर्तमान याची के विरुद्ध प्राथमिकी में किए गए अभिकथन को अभिखंडित करता हूँ किंतु चूँकि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला बनता है, मैं अन्वेषण प्राधिकारी को अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अग्रसर होने का निर्देश देती हूँ। चूँकि मामला वर्ष 2001 का है, कार्यालय को इस मामले के अभिलेख और आदेश को तुरन्त संबंधित न्यायालय के पास भेजने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

डिविजनल मैनेजर, न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰

cuke

पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय-सह-कर्मकार प्रतिकर आयुक्त एवं अन्य

C.W.J.C. No. 3042 of 1999 (R). Decided on 7th March, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन एक आवेदन

कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923—धारा 6 सह-पठित कर्मकार प्रतिकर नियमावली, 1994 का नियम 41—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 114—आयुक्त द्वारा आदेश का पुनर्विलोकन—पुनर्विलोकन की शक्ति संविधि का सृजन है जिसके अधीन प्राधिकारी पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग करता है—कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के न्यायालय को पुनर्विलोकन की सीमित शक्ति है—आयुक्त पूर्णत: गुणागुण पर मूल आदेश पुनर्विलोकित करने के लिए प्रत्यर्थी स्वामी द्वारा दाखिल पुनर्विलोकन को ग्रहण करने में अधिकारिता के बिना कृत्य कर रहा था—आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया—रिट याचिका अनुज्ञात की गयी।

(पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.—Mr. D.C. Ghosh, For the Petitioner; Mr. Shekhar Pd. Sinha, For the Respondent no.2.

न्यायालय द्वारा.—पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची बीमा कंपनी ने विविध केस सं॰ 1/1998 में पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय-सह-कर्मकार प्रतिकर आयुक्त, बोकारो स्टील सिटी द्वारा पारित दिनांक 14 सितंबर, 1995 के आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा उन्होंने डब्ल्यू॰ सी॰ केस सं॰ 5/86 में पारित दिनांक 6 दिसंबर, 1990 के अपने पूर्विक आदेश का पुनर्विलोकन किया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 के समक्ष दिए गए दावा याचिका अर्थात् कर्मकार प्रतिकर मामला सं॰ 5/86 पर विद्वान न्यायालय ने निम्नलिखित निबंधनों में दिनांक 6 दिसंबर, 1990 का आदेश पारित किया:-नियोक्ता को भुगतान योग्य मुआवजा राशि की 50% सीमा तक दंड ब्याज के साथ राशि पर 6% सरल ब्याज का भुगतान करने का निर्देश देना होगा। चूँकि विरोधी पक्षकार सं॰ 1 नियोक्ता का वाहन बीमाकृत था, अत:, मुआवजा का भुगतान करने का दायित्व भी बीमा कंपनी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का है। अत:, उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि दोनों विरोधी पक्षकार सं॰ 1 और 2 संयुक्तत: और पृथकत: दंड और ब्याज के साथ मुआवजा का भुगतान करने के दायी हैं। तद्नुसार उन्होंने विरोधी पक्षकार सं॰ 1 और 2 को इस राशि पर 6% सरल ब्याज वार्षिक के साथ 35,470.80/ रुपयों के मुआवजा और पूर्व राशि के 50% दंड अर्थात् 17,735.04/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश दिया। आगे यह संप्रेक्षित किया गया था कि यदि आदेश की तिथि से दो माह के भीतर राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, 6% प्रतिवर्ष का अतिरिक्त ब्याज लगेगा।

4. बीमा कंपनी के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची ने मुआवजा के रूप में निर्धारित 35,470.80/- रुपयों का भुगतान किया जिसके लिए यह दायी था। ट्रक का स्वामी जो प्रत्यर्थी सं॰ 7 है ने तत्पश्चात् पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 30 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष विविध अपील एम॰ ए॰ सं॰ 17/91 (R) दाखिल किया। दिनांक 28 जून, 1991 को उक्त विविध अपील खारिज कर दी गयी थी। तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी सं॰ 2 स्वामी ने दिनांक 6 दिसंबर, 1990 के मूल आदेश/अधिनिर्णय, जिसके द्वारा इसे सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 114 सह-पठित-धारा 151 और कर्मकार प्रतिकर नियमावली, 1994 के नियम 41 के प्रावधानों का अवलंब लेते हुए 50% की सीमा तक दंड और 6% ब्याज का भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित किया गया था, का पुनर्विलोकन इप्सित करते हुए विविध केस सं॰ 1/1998 दाखिल किया। यह निवेदन किया गया है कि पुनर्विलोकन स्वयं कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 6 के प्रावधानों के अधीन पोषणीय नहीं था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के पास इन परिस्थितियों के अधीन पुनर्विलोकन की सीमित शक्ति है जिसे उसमें प्रावधानित किया गया है। नियम 41 को निर्दिष्ट करते हुए आगे यह निवेदन किया गया है कि अधिनियम के प्रयोजन को लागू करने के लिए नियम विरचित किए गए हैं और इसलिए नियम 41 भी प्रत्यर्थी सं॰ 1 को स्वयं अपने आदेश का पुनर्विलोकन करने की शक्ति का प्रयोग करने की अनुमति नहीं देता है जिसके द्वारा मूल आदेश में उपदर्शित निबंधनों में दायित्व अभिनिर्धारित नहीं किया गया है। नियम 41 के अधीन, केवल सिविल प्रक्रिया संहिता के कतिपय प्रावधान आयुक्त के समक्ष कार्यवाही में प्रयोज्य बनाए गए हैं और वे आदेश V नियम 9 से 13 और 15 से 30 आदेश IX; आदेश XIII नियम 3 से 10; आदेश XVI नियम 2 से 21 आदेश XVII, और आदेश XXIII नियम 1 और 2 में अंतर्विष्ट है। पुनर्विलोकन की पोषणीयता और इसे दाखिल करने में घोर विलंब से संबंधित और आगे स्वामी के दावा के गुणागुण पर विद्वान आयुक्त के समक्ष विनिर्दिष्ट आपत्ति की गयी थी। आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान कर्मकार प्रतिकर आयुक्त ने अभिनिर्धारित किया है कि संबंधित न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के

अधीन पुनर्विलोकन पोषणीय है और उन्होंने आगे पुनर्विलोकन दाखिल करने में विलंब को माफ किया है और अभिनिर्धरित किया है कि प्रश्नगत स्वामी ब्याज और दंड का भुगतान करने का दायी नहीं है क्योंकि प्रश्नगत वाहन याची बीमा कंपनी के साथ बीमाकृत था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का पूर्वोक्त आधार पर विरोध यह कथन करते हुए किया है कि यह पूर्णत: अवैध है और विद्वान न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 114 सहपठित धारा 151 और कर्मकार प्रतिकर नियमावली, 1994 के नियम 41 के अधीन दाखिल पुनर्विलोकन आवेदन विनिश्चित करने में अधिकारिता के परे गया है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण कर्मकार के विद्वान अधिवक्ता ने यह कथन करते हुए आक्षेपित आदेश का समर्थन किया है कि कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के विद्वान न्यायालय ने याची कंपनी की आपत्ति पर विचार किया है और अभिनिर्धारित किया है कि उनके पास अपने पूर्ववर्ती के मूल आदेश में किसी गलती को सुधारने की अंतर्निहित शक्ति है, उनके द्वारा मूल आदेश का पुनर्विलोकन किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले की परिस्थितियों में चूँकि प्रश्नगत वाहन बीमा कंपनी के साथ बीमाकृत था, विद्वान न्यायालय ने पाया है कि केवल याची कंपनी ब्याज और शास्ति के साथ मुआवजा का भुगतान करने का दायी है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और याची द्वारा विश्वास किए गए विधि के प्रावधानों सहित अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 6 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *^^èkkjk 6.* ***iufoZyksdu-*** *&(1) bl vfèkfu;e d rgr n; fdlh v)ekfld lnk; dk fdlh vfgr fpfdRlk 0;oLFkk;h d çek.k&i= fd depkjh dh fLFkfr ifjofrZr gb g] lfgr fu;ktd }kjk ;k depkjh d vkonu ij vFkok] bl vfèkfu;e d rgr fufer fu;ek d vèkhu ,l çek.k&i= cxj vkonu ij ;k rk i{kdkjk d ee; djkj d rgr vFkok vk;Dr d vkn'k d rgr] vk;Dr }kjk iufoZyksdu fd;k tk ldrk gA*
>
> *(2) bl vfèkfu;e d micUèkk d vèkhu bl èkkjk d rgr iufoZyksdu gku ij fdlh v)ekfld lnk; dk tkjh j[kk tk ldrk g] c<k;k tk ldrk g] de fd;k tk ldrk g] lekIr fd;k tk ldrk g] vFkok] ;fn n?kVuk LFkk;h fu%'kDrrk dk dkj.k cuh gk rk lnk; dk ,lh ,de'r jkf'k e cnyk tk ldrk g ftldk fd depkjh gdnkj g ftle l mldk çkIr v)ekfld lnk; dh jkf'k ?kVk nh tk;xhA**

7. यहाँ यह कथन करना सामान्य बात है कि पुनर्विलोकन की शक्ति संविधि का सृजन है जिसके अधीन प्राधिकारी पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग करता है। विधानमंडल द्वारा किसी अधिनियम विशेष में पुनर्विलोकन की शक्ति बढ़ायी अथवा घटायी जा सकती है जिसके अधीन प्राधिकारी को पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करना होगा। वर्तमान मामले में, उसकी धारा 6 का परिशीलन उपदर्शित करता है कि कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के न्यायालय के पास केवल उसमें उपदर्शित परिस्थितियों में पुनर्विलोकन करने की सीमित शक्ति थी ताकि कर्मकार की दशा, जिसे उक्त प्रावधान के अधीन उपदर्शित किया गया है, में ऐसे परिवर्तन के अधीन अधिनियम के अधीन भुगतान योग्य अर्द्धमासिक भुगतान का पुनरीक्षण कर सके। वर्तमान मामले में, नियम 41 भी, जिसे स्पष्टत: अधिनियम के उद्देश्य को परिपूर्ण करने के लिए विरचित किया गया है, स्वयं अधिनियम के सारवान प्रावधान के परे जा सकता है जिसके अधीन कर्मकार प्रतिकर आयुक्त अर्थात् प्राधिकारी को पुनर्विलोकन की सीमित शक्ति प्रदान की गयी है।

वस्तुतः, नियम 41 केवल सिविल प्रक्रिया संहिता के कतिपय प्रावधान को निर्दिष्ट करता है जिसे आयुक्त के समक्ष कार्यवाही में लागू किया जा सकता है।

8. इन परिस्थितियों में, विद्वान कर्मकार प्रतिकर आयुक्त गुणागुण पर मूल आदेश को पुनर्विलोकित करने में प्रत्यर्थी सं॰ 2 स्वामी द्वारा दाखिल पुनर्विलोकन को ग्रहण करने में पूर्णतः अधिकारिता के बिना कृत्य कर रहे थे। मूल आदेश के अधीन सृजित दायित्व स्वामी पर बोझ डालना है जहाँ तक यह शास्ति और ब्याज वाले भाग से संबंधित है जबकि मुआवजा बीमा कंपनी पर अधिरोपित किया गया है। वर्ष 1923 के अधिनियम की धारा 4A मुआवजा के ऐसे दावों के मामलें में नियोक्ता पर दायित्व अधिकथित करती है। याची कंपनी और स्वामी को संयुक्ततः तथा पृथकतः मुआवजा तथा शास्ति एवं ब्याज के शेष का भुगतान करने के लिए दायी अभिनिर्धारित करते हुए कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के विद्वान न्यायालय ने नियोक्ता पर शास्ति एवं ब्याज अधिनिर्णीत किया। उक्त आदेश के विरुद्ध स्वामी की विविध अपील खारिज कर दी गयी थी जैसा यहाँ ऊपर उपदर्शित किया गया है और तत्पश्चात कर्मकार प्रतिकर आयुक्त के पास पुनर्विलोकन ग्रहण करने का कारण नहीं था जो स्वयं विविध केस सं॰ 1/98 में दिनांक 6 दिसंबर, 1990 को मूल आदेश पारित करने के आठ वर्ष बाद दाखिल किए जाने के कारण घोर रूप से वर्जित है।

9. मामले के उस दृष्टिकोण में, मैं आक्षेपित आदेश को प्रत्यर्थी सं॰ 1 कर्मकार प्रतिकर आयुक्त द्वारा अधिकारिता के बिना पारित किए जाने के कारण विधि में असंपोषणीय पाता हूँ और तद्नुसार इसे अभिखंडित किया जाता है। पूर्वोक्त निबंधन में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

विश्वजीत मिश्रा एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Rev. No. 1041 of 2012. Decided on 22nd February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 488A सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धाराएँ 3 तथा 4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973— धारा 482—क्रूरता–उन्मोचन आदेश की अस्वीकृति–दहेज मांग एवं यातना का अभिकथन–समस्त याचीगण के विरुद्ध दहेज मांग के लिए पीड़िता को क्रूरता तथा यातना के अध्यधीन करने का विनिर्दिष्ट अभिकथन है–अवर न्यायालय ने आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री पाया है–याची द्वारा किया गया अपराध चालू रहने वाला अपराध है और वाद हेतुक का भाग अवर न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत उद्भूत हुआ है–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–याचिका खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

निर्णयज विधि.–2012 (1) East Cr C 30 (SC)—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Mahesh Tewari, For the Petitioners; Mr. Sardhu Mahto, For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण पेटरवार पी॰ एस॰ केस सं॰ 73 वर्ष 2010 जी॰ आर॰ सं॰ 756 वर्ष 2010 के तत्सम में विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, तेनूघाट, बेरमो द्वारा पारित दिनांक 11.10.2012 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा याचीगण द्वारा उन्मोचन के लिए दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. यह कथन किया जा सकता है कि याची ने समरुप अनुतोष के लिए पहले दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 56 वर्ष 2012 दाखिल किया था जिसमें इस न्यायालय ने पाया था कि उन्मोचन के लिए याचीगण के आवेदन को अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 16.12.2011 का आदेश गैर–सकारण आदेश था और तद्नुसार दिनांक 14.9.2012 के आदेश द्वारा इस न्यायालय ने उक्त आदेश अपास्त कर दिया था और अवर न्यायालय को याचीगण के विरुद्ध केस डायरी में उपलब्ध सामग्रियों पर चर्चा करके नए सिरे से आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था। जिसके अनुसरण में, अवर न्यायालय द्वारा पुनः सकारण आदेश द्वारा याचीगण का आवेदन खारिज करते हुए वर्तमान आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

4. याचीगण को पतेरवार/तेनूघाट पी॰ एस॰ केस सं॰ 73 वर्ष 2010, जी॰ आर॰ केस सं॰ 756 वर्ष 2010 के तत्सम, में भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है। याचीगण पीड़िता महिला के पति, ससुर और सास हैं और याचीगण के विरुद्ध पीड़िता को दहेज मांग के लिए क्रूरता और यातना के अध्यधीन करने का अभिकथन है। पीड़िता द्वारा अभिकथित किया गया है कि अपने धनबाद स्थित ससुराल में उस पर प्रहार भी किया जाता था जहाँ वह विवाहोपरांत दिनांक 2.12.2009 को गयी थी। पीड़िता के साथ यातना एवं क्रूरता जारी रही और अंततः पीड़िता का पति उसे दिनांक 27.2.2010 को अपनी बहन के घर बोकारो, लाया और तत्पश्चात, दिनांक 28.2.2010 को वह अपने माएके तेनूघाट गयी। पक्षों के बीच सुलह के लिए कदम उठाए गए थे और उसे धनबाद जिला में अपने ससुराल वापस लाया गया था और पुनः अभियुक्त द्वारा उसे क्रूरता, यातना और प्रहार के अध्यधीन किया गया था। यह भी अभिकथित किया गया था कि धनबाद में वीमेन हेल्पलाइन की मदद भी ली गयी थी और याची पति ने अपनी पत्नी को समुचित रूप से रखने का आश्वासन भी दिया था, किंतु उसके बाद भी अभियुक्तगण के व्यवहार में परिवर्तन नहीं हुआ था और यह भी कथन किया गया है कि उसके पति ने सूचक पर, तेनूघाट में उसके माएके में भी प्रहार किया था। पुनः दिनांक 6.5.2010 को सुलह के लिए बात की गयी थी, तत्पश्चात् पीड़िता का पति उसे धनबाद ससुराल लाया था, किंतु पुनः सूचक पर अभियुक्तगण द्वारा क्रूरता और यातना जारी रहा और अंततः तेनूघाट में पुलिस के समक्ष प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसके आधार पर याचीगण के विरुद्ध पुलिस मामला दर्ज किया गया था।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इस पुनरीक्षण आवेदन में संक्षिप्त बिंदु लिया है और निवेदन किया है कि जहाँ तक याची सं॰ 2 और 3 जो पीड़ित महिला के ससुर–सास हैं, का संबंध है, तेनूघाट न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत उनके विरुद्ध क्रूरता अथवा यातना का अभिकथन नहीं है और उनके विरुद्ध जो भी अभिकथन है वह धनबाद में है। विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि केवल तेनूघाट न्यायालय की अधिकारिता सृजित करने के लिए याची सं॰ 1 के विरुद्ध झूठा अभिकथन किया गया है कि उसने तेनूघाट में सूचक पर प्रहार किया था और तद्नुसार तेनूघाट न्यायालय में दांडिक कार्यवाही बिल्कुल पोषणीय नहीं है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **प्रीति गुप्ता एवं एक**

अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2013 (1) East Cr. C. 30 (SC) में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसने यह पाया था कि अपीलार्थीगण, जो पीड़िता के पति के संबंधी थे, अभिकथित घटनास्थल पर कभी नहीं गए थे, अत: उनके विरुद्ध दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दी गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि कम से कम याची सं॰ 2 और 3 के विरुद्ध तेनूघाट न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत कोई वाद हेतुक उद्भूत नहीं हुआ और तद्नुसार, तेनूघाट न्यायालय में उनके विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखना बिल्कुल अवैध है और यह अभिखंडित किए जाने योग्य है।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है क्योंकि समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन है और वाद हेतुक तेनूघाट न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत भी उद्भूत हुआ।

7. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि दहेज मांग के लिए पीड़िता को क्रूरता एवं यातना के अध्यधीन करने के लिए समस्त याचीगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन है। आक्षेपित आदेश यह भी दर्शाता है कि अवर न्यायालय ने केस डायरी में याचीगण के विरुद्ध सामग्री पर चर्चा किया है और आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री पाया है। मैं यह भी पाता हूँ कि वाद हेतुक धनबाद न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत प्रोद्भूत हुआ, किंतु वाद हेतुक का भाग तेनूघाट न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत भी उद्भूत हुआ और याचीगण द्वारा किया गया अपराध चालू अपराध है जो अवर न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत भी है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **प्रीति गुप्ता के मामले (ऊपर)** में निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर इस तथ्य की दृष्टि में प्रयोज्य नहीं है कि उक्त मामले में अपीलार्थीगण घटनास्थल पर कभी नहीं गए थे जहाँ वास्तविक रूप से घटना हुई थी, किंतु वर्तमान मामले में समस्त याचीगण के विरुद्ध क्रूरता, यातना और प्रहार का विनिर्दिष्ट अभिकथन है।

8. मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप लायक आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस याचिका में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

श्री गोपाल बरेलिया एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 255 of 2012. Decided on 19th March, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धाराएँ 3 एवं 4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—दहेज अपराध—क्रूरता—संज्ञान—धन की मांग एवं यातना—प्राथमिकी में किए गए अभिकथन प्रथम दृष्टया भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध गठित करते हैं—वाद हेतुक राँची में प्रोद्भूत हुआ और यह नहीं कहा जा सकता है कि राँची में कोई वाद हेतुक कभी नहीं प्रोद्भूत हुआ है—याची का बचाव उसको इस चरण पर उपलब्ध नहीं होगा—संज्ञान लेने वाले आदेश में अवैधता नहीं है—आवेदन खारिज।

(पैराएँ 13 एवं 14)

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar, For the Petitioners; Mr. A.P.P., For the State; Mr. A.K. Das, For O.P. No.2.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 1140 वर्ष 2013

याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अंतर्वर्ती आवेदन के पैरा 7 में दिए गए बयान को विलोपित करने की अनुमति दी जाए क्योंकि उन बयानों का गलत रूप से उल्लेख किया गया है।

2. इस निवेदन की दृष्टि में, इस अंतर्वर्ती आवेदन के पैरा 7 में दिए गए बयान को विलोपित किया जाए।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता अंतर्वर्ती आवेदन पर सुने गए।

4. याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आरंभ में इस आवेदन को महिला पी॰ एस॰ केस सं॰ 21/2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 3894/2011) की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया था, किंतु जब मामला इस न्यायालय के समक्ष लंबित था, न्यायालय ने आरोप पत्र प्रस्तुत किए जाने पर दिनांक 21.11.2012 के आदेश के तहत इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है, जिसे इस अंतर्वर्ती आवेदन द्वारा दोषपूर्ण के रूप में चुनौती दी गयी है।

5. अंतर्वर्ती आवेदन में की गयी प्रार्थना एतद्द्वारा अनुज्ञात की जाती है। यह अंतर्वर्ती आवेदन मुख्य आवेदन का भाग निर्मित करेगा।

6. आई॰ ए॰ सं॰ 1140 वर्ष 2013 निपटायी जाती है।

दांडिक विविध याचिका सं॰ 1029 वर्ष 2011

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

8. यह आवेदन भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन दर्ज महिला पी॰ एस॰ केस सं॰ 21/2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 3894/2011) की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए पहले दाखिल किया गया था। बाद में, आरोप पत्र प्रस्तुत किए जाने पर जब भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया था, इसे अंतर्वर्ती आवेदन के रूप में चुनौती दी गयी थी।

9. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर जाने से पहले अभियोजन का मामला जैसा प्राथमिकी में बनाया गया है को ध्यान में लेने की आवश्यकता है।

10. अभियोजन का मामला यह है कि विवाह संपन्न होने के पहले अभियुक्तगण/याचीगण ने नगद और गहनों तथा कुछ अन्य वस्तुएँ दहेज में मांगा था। उन वस्तुओं और गहनों को दिया गया था और इन्हें कोलकाता ले जाया गया था जहाँ दिनांक 26.1.2011 को अदिति और मनीष बरेलिया का विवाह हुआ था। इसके तुरंत बाद, समस्त अभियुक्तगण/याचीगण अदिति को दहेज मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण शारीरिक और मानसिक यातना के अध्यधीन करने लगे। समय के एक बिंदु पर, जब अदिति के पिता और

दादा कोलकाता आए, अभियुक्तगण/याचीगण ने 4 लाख रुपया मांगा। धन दिए जाने के बावजूद, अभियुक्तगण उसे यातना के अध्यधीन करते रहे। तत्पश्चात भी मांग रखी गयी थी। ऐसे अभिकथन पर, युवती अदिति की माता ने राँची में भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन महिला पी॰ एस॰ केस सं॰ 21/2011 (जी॰ आर॰ केस सं॰ 3894/2011) दर्ज किया। आरोप-पत्र की प्रस्तुति पर जब भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया गया था, इसे चुनौती दी गयी थी।

11. याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल कुमार निवेदन करते हैं कि याचीगण के विरुद्ध जो कोई भी अभिकथन किए गए हैं, वे अभिकथन लेक टाउन पुलिस थाना, कोलकाता में अदिति द्वारा दी गयी सूचना से झुठलाए जाते हैं। इस संबंध में निवेदन किया गया था कि सब कुछ अच्छा चल रहा था क्योंकि पति-पत्नी के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध था किंतु दिनांक 15.7.2011 से गड़बड़ शुरू हुई जब अदिति बीमार पड़ी। याचीगण उससे पूछने लगे कि वह किस बीमारी से पीड़ित है और क्या वह पहले से इलाज करवा रही है। उस पूछताछ से अदिति के माता-पिता चिढ़ गए और सिर्फ इसी कारण से उन्होंने अदिति को राँची ले जाना चाहा किंतु जब उसे ले जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी, दिनांक 9.8.2011 को प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। मामला दर्ज किए जाने पर दिनांक 12.8.2011 को दैनिक समाचार-पत्र में खबर प्रकाशित की गयी थी। खबर देखने पर सूचक की पुत्री अदिति ने लेक टाउन पुलिस थाना के प्रभारी इंस्पेक्टर के समक्ष उसमें यह कथन करते हुए परिवाद किया कि उसके पति और ससुराल वालों के विरुद्ध समाचार-पत्र में जो भी अभिकथन प्रकाशित किए गए थे, वे समस्त अभिकथन झूठे थे और उन समस्त अभिकथनों को उसके पति और ससुराल वालों की प्रतिष्ठा को चोट पहुँचाने के लिए किया गया है, अत: उन व्यक्तियों जिन्होंने खबर प्रकाशित करवाया था के विरुद्ध आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया गया था। तत्पश्चात, पुलिस कोलकाता आयी और दिनांक 20 अगस्त, 2011 को अदिति को राँची वापस ले गयी और सात माह से अधिक के बाद दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन अदिति का बयान दर्ज किया गया है जिसमें उसने अभिकथित किया कि उसे दहेज मांग पूरा नहीं किए जाने के कारण यातना के अध्यधीन किया जाता था और वे सब घटनाएँ कोलकाता में हुई बतायी जाती हैं, अत:, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध गठित करने वाला कोई प्रत्यक्ष कृत्य राँची में नहीं किया गया है, अत:, राँची न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता की ओर, तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

12. इसके विरुद्ध, वि॰ प॰ सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ दास निवेदन करते हैं कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध के अतिरिक्त दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन अपराध का संज्ञान भी लिया गया है क्योंकि यह अभियोजन का विनिर्दिष्ट मामला है कि विवाह के पहले दहेज मांगा गया था और मांग परिपूर्ण करने के लिए नगद, गहने, बर्तन और अन्य वस्तुओं को दिया गया था और इसके अतिरिक्त प्राथमिकी में यह अभिकथन भी किया गया है कि सूचक की पुत्री को दहेज मांग पूरी नहीं करने के कारण क्रूरता के अध्यधीन किया जाता था और उन दस्तावेजों के आधार पर निर्दोषिता का जो भी अभिवचन किया जा रहा है, उसका परिशीलन इस चरण पर नहीं किया जा सकता है, और इसलिए, इन परिस्थितियों के अधीन संज्ञान लेने वाले आदेश को अवैध कभी नहीं कहा जा सकता है, अत: इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

13. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि प्राथमिकी में दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन अपराध किए जाने का अभिकथन है। दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन अपराध गठित करने वाला वाद हेतुक राँची में प्रोद्भूत होता प्रतीत होता है और, तद्द्वारा, यह नहीं कहा जा सकता है कि राँची में कोई वाद हेतुक प्रोद्भूत नहीं हुआ है। आगे, प्राथमिकी में किए गए अभिकथन प्रथम दृष्टया भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध गठित करते हैं और पत्र को निर्दिष्ट करके जो भी अभिवचन किया जा रहा है, वह अभिवचन याचीगण के बचाव से संबंधित है जो उनको इस चरण पर उपलब्ध नहीं होगा यद्यपि समुचित चरण पर यह उनको उपलब्ध हो सकता है। अत: मैं संज्ञान लेने वाले आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ, अत: संज्ञान लेने वाले आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

14. इस आदेश से अलग होने के पहले यह कथन किया जाए कि किए गए संप्रेक्षण केवल इस मामले के निपटारे के प्रयोजन से किए गए हैं, अत:, याचीगण पर इनका प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ सकता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सुबोध कुमार वर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4121 of 2001. Decided on 7th March, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

सेवा विधि–प्रोन्नति–रद्दकरण–वेतनमान में अवनति–अधीक्षण अभियन्ता, पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ धनबाद सर्किल द्वारा याची को प्रदान की गयी प्रोन्नति शुद्धत: अनंतिम प्रकृति की थी–यह भी उपदर्शित किया गया था कि यदि अनंतिम प्रोन्नति के ऐसे प्रदान को प्रतिसंहृत करने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा कोई प्रतिकूल आदेश पारित किया जाता है, उसे प्रतिवर्तित कर दिया जाएगा और उसको भुगतान की गयी राशि भी वसूल की जाएगी–बी॰ पी॰ एस॰ सी॰ विभाग में प्रयोगशाला सहायक के कैडर में केमिस्ट के पद पर और अन्य अधिष्ठायी पद पर नियुक्ति करने अथवा प्रोन्नत करने के लिए अनुशंसा करने वाला सक्षम प्राधिकार था–याची केमिस्ट के पद पर अधिष्ठायी रूप से प्रोन्नत किए जाने का दावा नहीं कर सकता है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s Dilip Jerath, Abhishek Kumar, Vineet Vashist, Amit Kumar, For the Petitioner; Mr. Rakesh Kr. Sahi, For the State of Jharkhand; Mr. Pankaj Kumar, For the State of Bihar; Mr. S. Ughal, For the Respondent No.10.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने मेमो सं॰ 337 दिनांक 24.3.1999 में अंतर्विष्ट आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा याची के स्थान पर प्रत्यर्थी सं॰ 10 को शुद्धत: अस्थायी आधार पर प्रतिनियुक्ति पर केमिस्ट के पद पर पदस्थापित किया गया था यद्यपि याची प्रत्यर्थी सं॰ 8 के अधीन केमिस्ट के रूप में कार्यरत था। उसने आगे प्रत्यर्थी सं॰ 8 कार्यपालक अभियन्ता, लोक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग, गिरिडीह द्वारा जारी दिनांक

10.7.1999 के आदेश को भी चुनौती दिया है जिसके द्वारा उसका वेतनमान 1400-2600/- रुपयों से 975-1540/- रुपयों तक घटा दिया गया है। याची दिनांक 7.1.2000 के आदेश से भी व्यथित है जिसके द्वारा दिनांक 20.11.1996 को उसे प्रदान की गयी प्रोन्नति भी प्रत्यर्थी सं॰ 7, अधीक्षण अभियंता पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ सर्किल, धनबाद द्वारा रद्द कर दिया गया है एवं परिणामतः, याची केमिस्ट के पद पर कार्य करने रहते देने की इप्सा करता है जिस पद पर वह कार्यकारी निदेशक, प्रौद्योगिकी मिशन, गिरीडीह द्वारा जारी परिशिष्ट 3 के तहत प्रोन्नत किए जाने का दावा करता है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि आरंभ में याची स्नातक था, किंतु अवर सेवा चयन पर्षद द्वारा संचालित प्रतियोगिता परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद उसने प्रयोगशाला सहायक के रूप में दिसंबर, 1992 में पद ग्रहण किया और उसकी अर्हता अर्थात् स्नातक होने को ध्यान में रखकर प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण के समक्ष केमिस्ट के पद पर नियुक्त किए जाने के लिए विचार किए जाने के लिए आवेदन दिया। यह निवेदन किया गया है कि अधीक्षण अभियंता, पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ सर्किल, धनबाद द्वारा दिनांक 20.11.1996 के आदेश परिशिष्ट–3 के तहत याची को ऐसी प्रोन्नति प्रदान की गयी थी। वह आगे निवेदन करते हैं कि दिनांक 10.3.1998 के पत्र के तहत पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ अधीक्षक अभियन्ता–सह–कार्यकारी निदेशक, प्रौद्योगिकी मिशन, गिरीडीह ने उसकी प्रोन्नति को संपुष्ट किया। तत्पश्चात्, उसे केमिस्ट का उच्चतर वेतनमान प्रदान किया गया था। अतः, याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश द्वारा उसे प्रयोगशाला सहायक के पद पर प्रतिवर्तित कर दिया गया है जो विधि में अनुज्ञेय नहीं है और प्रत्यर्थी सं॰ 10 को उक्त पद पर प्रतिनियुक्ति पर पदस्थापित किया गया था।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता अपने प्रतिशपथ पत्र में किए गए निवेदनों के आधार पर निवेदन करते हैं कि याची को दिनांक 29.2.1992 के पत्र के तहत प्रयोगशाला सहायक के पद पर 975-1540/- रुपयों के वेतनमान पर नियुक्त किया गया था। मार्च, 1992 के प्रभाव से उक्त चयन बोर्ड विघटित कर दिया गया था और बिहार लोक सेवा आयोग को ऐसी अनुशंसा करने का काम दिया गया था। यह निवेदन किया गया है कि प्रोन्नति, जिसे दिनांक 20.11.1996 के परिशिष्ट–3 के तहत प्रदान किया गया बताया जाता है, शुद्धतः अनंतिम थी और अधीक्षण अभियंता, पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ सर्किल, धनबाद द्वारा इस शर्त पर की गयी थी कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा किसी प्रतिकूल आदेश को पारित किए जाने के बाद उसे स्वतः प्रतिवर्तित कर दिया जाएगा और उसके द्वारा पाया गया राशि आधिक्य वसूल कर लिया जाएगा। अतः, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि केमिस्ट के पद को प्रत्यक्ष भर्ती के माध्यम से और न कि प्रोन्नति के रूप में भरा जाना है क्योंकि केमिस्ट का पद वर्ग III पद है जिस पर नियुक्ति करने के लिए केवल बिहार लोक सेवा आयोग अथवा डिविजनल कमिश्नर प्रशासनिक एवं कार्मिक सुधार विभाग के मेमो सं॰ 1128 दिनांक 7.2.2000 के अनुदेश के मुताबिक सक्षम प्राधिकारी है। अतः यह निवेदन किया गया है कि याची की प्रोन्नति सचिव, पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ विभाग, बिहार सरकार द्वारा अनुमोदित नहीं की गयी थी और इसलिए, उसे उसके प्रयोगशाला सहायक के मूल अधिष्ठायी पद पर प्रतिवर्तित कर दिया गया है और बिहार राज्य चीनी निगम में कार्यरत कुछ विशेषज्ञ केमिस्टों को शुद्ध प्रतिनियुक्ति आधार पर केमिस्ट के पद पर पदस्थापित किया गया है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। स्वयं परिशिष्ट–3 के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि अधीक्षण अभियंता, पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ सर्किल,

धनबाद द्वारा याची को प्रदान किया गया प्रोन्नति शुद्धतः अर्नतिम प्रकृति का था और यह भी उपदर्शित किया गया था कि यदि अर्नतिम प्रोन्नति के ऐसे प्रदाय को प्रतिसंहृत करने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा कोई प्रतिकूल आदेश पारित किया जाता है, उसे प्रतिवर्तित कर दिया जाएगा और उसको भुगतान की गयी राशि भी वसूल की जाएगी। आगे यह प्रतीत होता है कि बिहार लोक सेवा आयोग विभाग में प्रयोगशाला सहायक के कैडर में केमिस्ट के पद पर और अन्य अधिष्ठायी पद पर नियुक्ति अथवा प्रोन्नति करने के लिए अनुशंसा करने वाला सक्षम प्राधिकारी था। मामले के उस दृष्टिकोण में, याची प्राधिकारी, जो ऐसा करने के लिए सक्षम प्राधिकारी नहीं था, द्वारा पारित दिनांक 20.2.1996 के पत्र के बूते पर केमिस्ट के पद पर अधिष्ठायी रूप से प्रोन्नत किए जाने का दावा नहीं कर सकता है। इन परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश किसी दुर्बलता से पीड़ित नहीं है, अतः रिट अधिकारिता के प्रयोग में हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है।

6. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

सुमेरमल जैन (6044 में)

संजय कुमार जैन (6034 में)

cuke

श्रीमती राधा रानी दत्ता एवं एक अन्य (दोनों में)

W.P. (C) Nos. 6044 with 6034 of 2012. Decided on 28th February, 2013.

बिहार मकान (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982—धारा 15—किराया जमा नहीं किया जाना–प्रतिवादी याची के प्रतिवाद को अस्वीकार किया गया–याचीगण ने स्पष्टीकरण देकर विलंब को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है जिसे अवर न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है–याचीगण ने बाद में नियमित रूप से किराया जमा किया है और किराया जमा करने में एक-दो दिन का विलंब प्रक्रियात्मक विलंब के कारण प्रतीत होता है–अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त। (पैराएँ 10 से 12)

निर्णयज विधि.–AIR 1988 SC 602; 2000 (1) PLJR 70; AIR 2003 SC 1543; 1985 (3) SCC 53—Referred; 1988(4) SCC 698—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Rahul Kr. Gupta @ Niyati Sah, For the Petitioner; Mr. Arbind Kr. Sinha, For the Respondents.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट आवेदन दाखिल करके बेदखली वाद सं॰ 26 वर्ष 2006 में अपर मुंसिफ द्वितीय, राँची द्वारा पारित दिनांक 17.11.2011 के आदेश (परिशिष्ट-4) जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने प्रतिवादी याचीगण के प्रतिवाद को अस्वीकार किया और दिनांक 18.8.2012 के आदेश (परिशिष्ट-6) जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त आदेश को वापस लेने से इनकार कर दिया, अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है।

2. याचीगण और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता विस्तारपूर्वक सुने गए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अवर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत स्पष्टीकरण को निर्दिष्ट करके इसे न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया कि यद्यपि युक्तियुक्त स्पष्टीकरण दिया गया था किंतु अवर

न्यायालय द्वारा इसे स्वीकार नहीं किया गया था। आगे निवेदन किया गया था कि अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए अधिनियम की धारा 15 में अंतर्विष्ट प्रावधान का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया है।

4. अपने निवेदन के समर्थन में उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो निर्णयों को निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है:–

(i) 1985 (3) SCC 53

(ii) 1988 (4) SCC 698

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण–वादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया और निवेदन किया कि अधिनियम की धारा 15 में प्रयुक्त भाषा आज्ञापक प्रकृति की है और ऐसी स्थिति में अवर न्यायालय को स्वविवेक का प्रयोग करने की शक्ति नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि स्वविवेक, यदि कोई हो, का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु यह कि पक्षकार द्वारा तर्कसंगत स्पष्टीकरण दिया गया हो, किंतु इस मामले में प्रतिवादी द्वारा दिए गए कारण को तर्कसंगत स्पष्टीकरण के रूप में नहीं माना जा सकता है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र में तैयार किए गए तालिका फॉर्म से यह भी इंगित किया है कि याची ने बाद में भी व्यतिक्रम किया है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(I) AIR 1988 SC 602;

(II) 2000 (1) PLJR 70,

(III) AIR 2003 SC 1543.

6. इसके विरुद्ध, याचीगण–प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि लगभग 2-3 दिन का विलंब हुआ है और उक्त राशि जमा करने में रजिस्ट्री द्वारा अनुसरित की गयी प्रक्रिया के कारण विलंब कारित किया गया है और जानबूझकर व्यतिक्रम नहीं किया गया है। अभिलेख के परिशीलन से पता चलता है कि याचीगण–प्रतिवादीगण ने नियमित रूप से इसके बाद किराया जमा किया है।

7. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि बिहार मकान (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982 (इसके बाद अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 15 के अधीन वादी–प्रत्यर्थी की ओर से दाखिल आवेदन पर अवर न्यायालय ने दिनांक 7.6.2010 को आदेश पारित किया और 15 दिनों के भीतर अर्थात् दिनांक 20.6.2010 को अथवा इसके पहले किराया का बकाया जमा करने का निर्देश दिया जबकि वर्तमान मामले में दिनांक 6.8.2010 को अर्थात् डेढ़ माह विलंब के बाद उक्त किराया जमा किया गया था।

8. इस बीच, प्रतिवादी–याची के बचाव को अस्वीकार करने के लिए प्रत्यर्थीगण–वादी द्वारा दिनांक 9.7.2010 को आवेदन दाखिल किया था और इसके प्रत्युत्तर में वर्तमान याचीगण–प्रतिवादीगण ने दिनांक 20.12.2010 को उत्तर दाखिल किया जो इस याचिका का परिशिष्ट–3 है।

9. उक्त उत्तर के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान याचीगण–प्रतिवादीगण ने स्पष्टीकरण जैसा उक्त उत्तर के पैराग्राफों 3, 4, 5 तथा 6 में दिया गया है, देकर विलंब को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है जिसमें यह कथन किया गया है कि दिनांक 7.6.2010 का आदेश पारित करने के बाद फाइल प्रतिवादी के किराया जमा करने का सलाह देने के लिए उच्च न्यायालय के अधिवक्ता को सौंपी गयी थी और तत्पश्चात् दिनांक 6.8.2010 को किराया की आवश्यक राशि जमा की गयी थी।

10. इस प्रकार, याचीगण–प्रतिवादीगण द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण की दृष्टि में यह प्रतीत होता है कि उन्होंने स्पष्टीकरण देकर विलंब न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है जिसे विद्वान अवर न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है। किंतु वर्तमान मामले में यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने अधिनियम की धारा 15 जिसे याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है, में अंतर्विष्ट प्रावधान के आलोक में तथ्यों का समुचित अधिमूल्यन नहीं किया है।

11. इसके अतिरिक्त, किराया जमा करने में पश्चातवर्ती व्यतिक्रम के संबंध में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि याचीगण–प्रतिवादीगण ने नियमित रूप से बाद में किराया जमा किया है और किराया जमा करने में एक–दो दिन का विलंब प्रक्रियात्मक विलंब के कारण हुआ प्रतीत होता है।

12. जैसी चर्चा ऊपर की गयी है, विशेषत: **1988 (4) SCC 698** में दिए गए निर्णय में अधिकथित विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना की दृष्टि में और वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है।

13. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि बेदखली वाद वर्ष 2006 में दाखिल किया गया है, अत: वाद को अनुबंधित समय के भीतर निपटाने के लिए अवर न्यायालय को निर्देश जारी किया जा सकता है जिसके लिए याचीगण प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता को कोई आपत्ति नहीं है।

14. इस तथ्य की दृष्टि में कि बेदखली वाद वर्ष 2006 का है, संबंधित अवर न्यायालय इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर उक्त वाद का निर्णय करने का प्रयास करेगा।

15. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ दोनों रिट याचिकाएँ निपटायी जाती हैं।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

उमेश कुमार एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 1078 of 2012. Decided on 27th February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–हत्या एवं चोरी के लिए दोषसिद्धि–अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और दांडिक अपील लंबित है–प्राथमिकी और गवाहों का साक्ष्य प्रथम दृष्टया अपीलार्थीगण के विरुद्ध अभियोग सिद्ध करता है–अ॰ सा॰ के साक्ष्य डॉक्टरों के साक्ष्य से भी पर्याप्त संपुष्टि पा रहे हैं–अपराध की गंभीरता और दंड की मात्रा की दृष्टि में दंडादेश निलंबित नहीं किया जा सकता है–प्रार्थना खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan, Krishna Murari, Vishal Kumar Trivedi, For the Appellants; Mr. Shashank Shekhar Prasad, For the State.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपील इस न्यायालय द्वारा दिनांक 7 जनवरी, 2013 के आदेश के तहत पहले ही स्वीकार की गयी है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दंडादेश

के निलंबन के लिए तर्कों का अधिमूल्यन करने के लिए सत्र विचारण सं॰ 23 वर्ष 2009 के अभिलेख और कार्यवाही को अवर न्यायालय से मंगाया गया है।

2. इन अपीलार्थीगण को सत्र विचारण सं॰ 23 वर्ष 2009 में जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश II धनबाद द्वारा दोषसिद्ध किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया है और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 394 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 10 वर्षों का कठोर कारावास भुगतने और 10,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश भी दिया गया है। उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 412 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 10 वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश भी दिया गया है।

3. सत्र विचारण सं॰ 23 वर्ष 2009 के अभिलेख और कार्यवाही को इस न्यायालय द्वारा प्राप्त किया गया है और हमने इसका परिशीलन किया है और दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुना है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए दोनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि घटना दिनांक 3 जनवरी, 2008 को हुई थी। व्यक्ति अर्थात अशरफ खान जिसकी हत्या की गयी है ट्रक चालक था और ये अपीलार्थीगण ट्रक में सवार हुए थे और बंदूक की नोक पर उन्होंने अपराध किया जैसा दिनांक 4 जनवरी, 2008 को रात्रि लगभग 1 बजे अशरफ खान द्वारा दर्ज प्राथमिकी में अभिकथित किया गया है। अ॰ सा॰ 7 डॉक्टर ने प्राथमिकी पर हस्ताक्षर किया है। व्यक्ति, जिसने सूचना दी है, की मृत्यु दिनांक 5 जनवरी, 2008 को हो गयी है। अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य का पठन प्राथमिकी के साथ करने पर इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है किंतु हम अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं अथवा दांडिक अपील में विनिश्चित किए जाने के लिए कुछ नहीं बचेगा, किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि उनके मुख्य परीक्षण में उनके द्वारा प्रथम दृष्टया जो भी कहा गया है, उनके प्रति परीक्षण को देखते हुए स्थिर बना रहता है। प्राथमिकी के साथ उनका साक्ष्य प्रथम दृष्टया इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अभियोग सिद्ध करता है। उनका साक्ष्य अ॰ सा॰ 7, जो डॉक्टर रुबेन हेम्ब्रम है जिन्होंने पहले अशरफ खान जो सूचक जिसकी बाद में मृत्यु हो गयी है का इलाज किया है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पा रहा है। अ॰ सा॰ 7 ने सदर अस्पताल, धनबाद सिटी में सूचक का इलाज किया है।

5. अ॰ सा॰ 8 जो अन्वेषण अधिकारी है और अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ तपन राय जिन्होंने मृतक के शरीर का शव परीक्षण किया द्वारा दिए गए साक्ष्य से भी पर्याप्त संपुष्टि होती है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 10, जो बैलिस्टिक विशेषज्ञ है द्वारा दिए गए साक्ष्य को देखते हुए, उसने कारतूस के साथ आग्नेयास्त्र का मेल कराया है और बैरल को देखते हुए कथन किया है कि आग्नेयास्त्र का उपयोग किया गया है। पक्षद्रोही गवाहों जो अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 3 है के बारे में काफी तर्क किया गया है। अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 2 अपीलार्थी सं॰ 1 से बरामद किए गए मोबाइल और इन अपीलार्थीगण से बरामद किए गए कारतूस के अभिग्रहण सूची गवाह हैं और उन्होंने अभिग्रहण सूची पर अपना हस्ताक्षर स्वीकार किया है। अ॰ सा॰ 6 जो मृतक की पत्नी है द्वारा बोले गए कुछ वाक्यों के बारे में भी अनेक तथ्यों का तर्क किया गया है।

उसके अभिसाक्ष्य में तनिक विपथन है, किंतु एक गवाह अभियोजन का पूरा मामला सिद्ध नहीं करता है। साक्ष्य का पठन संपूर्ण रूप से किया जाना चाहिए। हम अ॰ सा॰ 6 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य के बारे में अधिक परिशीलन नहीं कर रहे हैं किंतु दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के इस चरण पर अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए इन दोनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया साक्ष्य है। अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें ये दोनों अपीलार्थीगण–अभियुक्तगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं।

6. दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना में सार नहीं है। अतः, यह प्रार्थना खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सुलतान अंसारी

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य

WP(C) No. 2818 of 2010. Decided on 4th March, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 21 एवं 226—बिजली के झटके से मृत्यु–रिट याची को नए अभ्यावेदन के साथ जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता के पास जाने की अनुमति दी गयी–याची का दावा विधि और ऐसे मामलों में बोर्ड पर प्रयोज्य परिपत्र के अनुरुप निर्णित किया जाएगा–यदि याची का दावा वास्तविक और बोर्ड के परिपत्रों द्वारा अच्छादित पाया जाता है–याची को मुआवजा का भुगतान किया जाएगा। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. M.K. Choubey, For the Petitioners; M/s Rajan Raj, Shashank Shekher, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची प्रत्यर्थी बोर्ड के प्रधिकारियों की उपेक्षा का अभिकथन करते हुए दिनांक 6.1.2010 को बिजली के झटके के कारण अपने पुत्र की मृत्यु के कारण मुआवजा इप्सित कर रहा है। यह निवेदन किया गया है कि घटना दिनांक 31.12.2009 को हुई थी जब याची का पुत्र दैनिक कर्म से निबटने गया था और विद्युत प्रवाहयुक्त तार के संपर्क में आया जिसके बाद इलाज के दौरान दिनांक 6.1.2010 को उसकी मृत्यु हो गयी जिसके संबंध में यू॰ डी॰ केस सं॰ 3 वर्ष 2010 भी परिशिष्ट-1 के तहत संस्थापित किया गया है। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थीगण के समक्ष अभ्यावेदन दिए जाने के बावजूद, जैसा परिशिष्ट-3 में अंतर्विष्ट है, वे इस पर कार्रवाई नहीं कर रहे हैं यद्यपि ऐसे मामलों में मुआवजा प्रदान करने के लिए परिपत्र है जो दिनांक 25.9.2006 की रिट याचिका का परिशिष्ट-4 है।

3. किंतु, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी-सक्षम प्राधिकारी मामले की जाँच करेगा और तार्किक आदेश पारित करेगा यदि याची सक्षम प्राधिकारी के पास जाता है।

4. मामले के उस दृष्टिकोण में, मामले के गुणागण में गए बिना यह रिट याचिका निपटायी जाती है और याची को तीन सप्ताह की अवधि के भीतर इसके समर्थन में समस्त आवश्यक तथ्यों एवं दस्तावेजों

को अंतर्विष्ट करने वाले नए अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 2 महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के पास जाने की अनुमति दी जाती है। यदि प्रत्यर्थी सं॰ 2 के समक्ष ऐसा अभ्यावेदन दिया जाता है, वह विधि और ऐसे मामलों में बोर्ड पर प्रयोज्य परिपत्रों के अनुरुप इस पर विचार करेगा और तत्पश्चात् 12 सप्ताह की अवधि के भीतर तार्किक एवं सकारण आदेश पारित करेगा जिसे याची को संसूचित किया जाएगा। यदि याची का दावा ऐसे मुआवजा के लिए वास्तविक और बोर्ड के प्रासंगिक परिपत्रों के अधीन आच्छादित पाया जाता है, तत्पश्चात चार सप्ताह की अवधि के भीतर याची को इसका भुगतान किया जाएगा।

5. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

6. आई॰ ए॰ सं॰ 1533 वर्ष 2011 भी निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

ज्योतिरेश्वर सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 255 of 2013. Decided on 7th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 82, 83 एवं 317 (2)—गिरफ्तारी वारंट–याची को न्यायालय द्वारा नियत तिथि पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहने का निर्देश नहीं दिया गया था–इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन के संबंध में किसी रिपोर्ट के बिना दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 82 एवं 83 के अधीन आदेशिका जारी किया है–आक्षेपित आदेश अपास्त–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 12)

निर्णयज विधि.–2009(1) East Cr. C. 233(Patna)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. Indrajit Sinha, For the Petitioner; Mr. Moti Gope, For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन हुसैनाबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 36 वर्ष 2009 (जी॰ आर॰ सं॰ 399 वर्ष 2009) के संबंध में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, पलामू द्वारा पारित दिनांक 26.7.2012 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन गिरफ्तारी वारंट जारी किए जाने का आदेश दिया गया था और दिनांक 5.12.2012 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन धाराओं 82 और 83 के अधीन याची के विरुद्ध आदेशिकाओं को जारी करने का आदेश दिया गया है, के विरुद्ध निर्देशित है।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री आई॰ सिन्हा निवेदन करते हैं कि विचारण के क्रम में याची का प्रतिनिधित्व उसके अधिवक्ता के माध्यम से किया जा रहा था, किंतु दिनांक 26.7.2012 को न तो याची उपस्थित हुआ और न ही दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 317 के अधीन कोई आवेदन दाखिल किया गया था, अत:, न्यायालय ने जमानत बंध पत्र रद्द कर दिया और गैर जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी करने का आदेश पारित किया जो दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 317 (2) में अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुरुप

नहीं है। यदि याची नियत तिथि पर उपस्थित नहीं हुआ था, न्यायालय को याची की व्यक्तिगत उपस्थिति के लिए तिथि नियत करना चाहिए था किंतु न्यायालय ने याची को अगली तिथि पर व्यक्तिगत उपस्थित होने का निर्देश दिए बिना सीधे तौर पर जमानत बंध पत्र रद्द कर दिया और तद्द्वारा दिनांक 26.7.2012 का आदेश बिल्कुल अवैध है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि दिनांक 5.12.2012 का आदेश भी अवैध है क्योंकि गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन की किसी रिपोर्ट के बिना दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 82 और 83 के अधीन साथ-साथ आदेशिकाएँ जारी की गयी थी।

5. किंतु, राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि अभियुक्त नियत तिथि पर उपस्थित नहीं हुआ था, जमानत बंध पत्र रद्द किया गया था और गिरफ्तारी का वारंट जारी करने का आदेश दिया गया था और तद्द्वारा अवैधता नहीं की गयी थी।

6. निवेदन के संदर्भ में प्रावधान, विशेषत: धारा 317 के उपखंड 2 को ध्यान में लिया जा सकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^èkkjk 317(2):— ;fn ,l fdlh ekey e vfHk;Dr dk çfrfufèkRo lyhMj }kjk ugh fd;k tk jgk g vFkok ;fn U;k;kèkh'k ;k eftLVV dk ;g fopkj g fd vfHk;Dr dh o;fDrd gkft jh vko';d g rk] ;fn og Bhd le> rk] mu dkj.kk l] tk mld }kjk y[kc) fd, tk,x] og ;k rk ,lh tkp ;k fopkj.k dj ldrk g ;k vkn'k n ldrk g fd ,l vfHk;Dr dk ekeyk vyx l fy;k tk, ;k fopkfjr fd;k tk,A***

7. उक्त प्रावधान को ध्यान में लेकर माननीय पटना उच्च न्यायालय ने **संदीप कुमार टेकरीवाल बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2009 (1) East Cr. C. 233 (Patna)** के मामले में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *^^èkkjk 317 dfri; ekeyk e vfHk;Dr dh vuifLFkfr e tkp vkj fopkj.k çkoèkkfur djrh gA fdr] ;fn nMkfèkdkjh ikrk g fd vfHk;Dr dh 0;fDrxr mifLFkfr vko';d g] og fun'k nxk fd n0 ç0 l0 dh èkkjk 317 d vèkhu vxyh frFk dk vfèkoDrk }kjk vfHk;Dr dk çfrfufèkRo ugh fd;k tk,xk cfYd ml 0;fDrxr rkj ij mifLFkr gkuk gkxkA ;fn ,l vkn'k d ckotn vfHk;Dr 0;fDrxr rkj ij mifLFkr ugh gkrk g] fo}ku nMkfèkdkjh dk fxj¶rkjh okjaV tkjh dju vkj n0 ç0 l0 d vè;k; vle fofgr çfØ;k d vu:i vxlj gku dh NV gkxh vkj og tekur Hkh jí dj ldrk g vkj n0 ç0 l0 d vè;k; XXXIII d vu#i vxlj gk ldrk gA***

8. वर्तमान मामले में, यह प्रतीत नहीं होता है कि दिनांक 26.7.2012 के पहले याची को न्यायालय द्वारा दिनांक 26.7.2012 को व्यक्तिगत तौर पर उपस्थित रहने का निर्देश कभी दिया गया था।

9. ऐसी स्थिति में, दिनांक 26.7.2012 का आदेश निश्चय ही अवैधता से पीड़ित है।

10. मामले में आगे जाते हुए यह प्रतीत होता है कि न्यायालय ने गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन के संबंध में किसी रिपोर्ट के बिना दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 82 और 87 के अधीन आदेशिकाओं को जारी करने का आदेश पारित किया है और तद्द्वारा दिनांक 5.12.2012 का आदेश भी अवैधता से पीड़ित है।

11. तद्नुसार, दिनांक 26.7.2012 और 5.12.2012 के आदेश एतद् द्वारा अपास्त किए जाते हैं।

12. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

13. याची के व्यय पर फैक्स के माध्यम से इस आदेश की प्रति संसूचित की जाए।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जी॰ एन॰ दत्ता

cuke

अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक एवं अपीलीय प्राधिकारी कोल इंडिया लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 3808 of 2006. Decided on 19th February, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–दंड–आचरण, अनुशासन एवं अपील नियमावली, 1978 का नियम 29—फॉर्मेट की तैयारी से संबंधित आरोप–भूतलक्षी प्रभाव से समेकित आधार पर वेतनमान में दो चरणों द्वारा घटाए जाने का दंड अधिरोपित करता हुआ अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश जाँच अधिकारी द्वारा सिद्ध किए गए पाए गए आरोपों पर किसी कारण अथवा विवेक के इस्तेमाल को प्रकट नहीं करता है–अपीलीय प्राधिकारी को सकारण आदेश पारित करना ही होगा–दंड का आक्षेपित आदेश विधि में और तथ्यों पर संपोषणीय नहीं है और तद्नुसार इसे अभिखंडित किया जाता है–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 7)

निर्णयज विधि.–(1995) 6 SCC 279; (2005) 7 SCC 597; (2011) 5 SCC 142—Discussed.

अधिवक्तागण.–M/s Ritu Kumar, Samavesh Bhanjdeo, Supriya Dayal, For the Petitioner; Mr. Amit Kr. Sinha, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, भारत कोकिंग कोल लिमिटेड (प्रत्यर्थी सं॰ 2) द्वारा पारित दिनांक 30 जून, 2005 का अभिखंडन इप्सित किया है जिसके द्वारा मई, 2003 के भूतलक्षी प्रभाव से समेकित आधार पर वेतनमान में दो चरणों द्वारा घटाए जाने का दंड उस पर अधिरोपित किया गया है। याची अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को संपुष्ट करते हुए अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, कोल इंडिया लिमिटेड द्वारा पारित दिनांक 17/22 फरवरी, 2006 के अपीलीय आदेश से भी व्यथित है।

3. याची का प्रतिवाद यह है कि भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के लोडना क्षेत्र में अधीक्षक अभियंता (सिविल) के रूप में कार्य करते हुए उस पर आरोपों और अवचार के आधार पर आचरण, अनुशासन और अपील नियमावली, 1978 के नियम 29 के अधीन आरोप ज्ञापन तामील किया गया था। आरोपों के मुताबिक, उसे मरम्मती काम के लिए 11,942.92/- रुपयों की राशि का फॉर्मेट तैयार करता हुआ अभिकथित किया गया था। किंतु, याची का प्रतिवाद यह है कि उक्त फॉर्मेट की तैयारी के अनुसरण में कोई भुगतान नहीं किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि फॉर्मेट की तैयारी अनेक प्राधिकारियों के माध्यम से गुजरी और यह कार्य निष्पादन के प्रमाण पत्र के तुल्य नहीं है। उन आरोपों पर उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी और उसको दोषी अभिनिर्धारित करते हुए जाँच अधिकारी द्वारा रिपोर्ट (परिशिष्ट-3) दाखिल किया गया था। जाँच अधिकारी ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अभियांत्रिकी सहायक एच॰ आर॰ पी॰ सिंह और क्षेत्रीय वित्त प्रबंधक मुख्यत: जिम्मेदार थे। तत्पश्चात, याची पर जाँच रिपोर्ट तामील किया गया था। किंतु, उसके अभ्यावेदन से संतुष्ट नहीं होने पर अनुशासनिक प्राधिकारी ने परिशिष्ट-4 पर अंतर्विष्ट दिनांक 30 जून, 2005 का दंड का आदेश पारित किया। तत्पश्चात् याची ने

अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दाखिल किया किंतु इसे खारिज कर दिया गया था और दंड के मूल आदेश को संपुष्ट किया गया था। अपीलीय आदेश अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, कोल इंडिया लिमिटेड द्वारा पारित किया गया है जो परिशिष्ट-6 पर है। याची का प्रतिवाद यह है कि यद्यपि ग्यारह हजार तथा कुछ रुपयों के मूल्य का फॉर्मेट तैयार करने के संबंध में उसके विरुद्ध कुछ आरोप लगाए गए थे, किंतु यह स्वयं प्रत्यर्थीगण के अनुसार किसी पक्ष को कोई भुगतान करने की ओर नहीं ले गया। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अनुशासनिक प्राधिकारी के मूल आदेश और अपीलीय आदेश का परिशीलन मात्र दर्शाएगा कि दंड का आदेश पारित करते हुए अथवा अपील में उक्त आदेश को संपुष्ट करते हुए कोई कारण नहीं दिया गया है। उन्होंने निवेदन किया कि दंड अधिरोपित करने का कार्य न्यायिक कल्प प्रकृति का होने के नाते विवेक का इस्तेमाल किए जाने और कारणों को दर्ज किए जाने की अपेक्षा रखता है। याची के अधिवक्ता ने **अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, कोल इंडिया लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम अनंतः साहा एवं अन्य, (2011)5 SCC 142,** मामले पर यह निवेदन करने के लिए विश्वास किया है कि उक्त मामले में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों को उक्त आदेश पारित करने के पहले विवेक का इस्तेमाल और कारणों को दर्ज किया जाना दर्शाना चाहिए। अतः याची के अधिवक्ता ने उक्त आदेशों को मनमाना, संक्षिप्त और विवेक के गैर इस्तेमाल से पीड़ित बताया।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विस्तृत प्रक्रिया का अनुसरण किया गया था जिसमें याची को जाँच कार्यवाही में स्वयं का बचाव करने का अवसर दिया गया था और तत्पश्चात् संबंधित जाँच अधिकारी ने अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया है जो याची को अभिकथित आरोपों का दोषी अभिनिर्धारित करता है कि याची ने फॉर्मेट पर हस्ताक्षर किया था और काम लिए बिना ठेकेदार को कपटपूर्ण भुगतान किए जाने की संभावना को खुला छोड़ दिया था और इस प्रकार वह सी॰ ए॰ डी॰ नियमावली, 1978 के अधीन अवचार का दोषी है। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने **स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एवं जयपुर एवं एक अन्य बनाम प्रभु दयाल ग्रोवर, (1995)6 SCC 279,** और **नेशनल फर्टिलाइजर लि॰ एवं एक अन्य बनाम पी॰ के॰ खन्ना, (2005)7 SCC 597,** मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो निर्णयों पर विश्वास किया है। उक्त निर्णयों पर विश्वास करते हुए प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि जब अनुशासनिक प्राधिकारी जाँच अधिकारी के निष्कर्षों के साथ सहमत होता है, तब दंड के आदेश में कारण दर्शाने की अंतर्निहित आवश्यकता नहीं होती है। अतः यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में अनुशासनिक प्राधिकारी केवल याची को दोषी पाने वाले जाँच अधिकारी के निष्कर्षों के साथ सहमत हुआ है और दंड का आक्षेपित आदेश पारित किया है जो विधि की दृष्टि में पूर्णतः न्यायोचित, समुचित और विधिक है और विवेक के गैर इस्तेमाल से पीड़ित नहीं है।

5. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है। मई, 2003 के भूतलक्षी प्रभाव से समेकित आधार पर वेतनमान में दो चरणों द्वारा घटाने का दंड अधिरोपित करता हुआ अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित परिशिष्ट-4 पर अंतर्विष्ट आदेश का परिशीलन जाँच अधिकारी द्वारा सिद्ध पाए गए आरोपों पर किसी कारण अथवा विवेक के इस्तेमाल को प्रकट नहीं करता है और याची द्वारा दिए गए कारण बताओ पर विचार करने पर और जाँच अधिकारी के जाँच रिपोर्ट में इंगित किए गए बताए गए दोष पर यह आगे प्रतीत होता है कि याची ने जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर अभ्यावेदन दिया किंतु यह प्रतीत होता है कि उसको द्वितीय कारण बताओ जारी नहीं किया गया था। अपीलीय प्राधिकारी ने परिशिष्ट-6 के तहत दंड का आदेश संपुष्ट किया जो भी याची द्वारा अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष लिए गए आधारों पर कोई चर्चा नहीं दर्शाता है।

6. अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, कोल इंडिया लिमिटेड (ऊपर) मामले में याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय से यह प्रतीत होता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि प्राधिकारी को जाँच आरंभ करने के लिए और उसके समापन का कुछ कारण दर्शाना ही होगा। इसे सकारण आदेश पारित करना ही होगा और यह जाँच अधिकारी अथवा प्राधिकारी की मनमर्जी पर नहीं हो सकता है। प्रत्यर्थीगण ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो निर्णयों पर विश्वास किया है, पहला **स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एवं जयपुर (ऊपर)** में जिसमें बैंक के विनियम विचाराधीन थे और दूसरा **नेशनल फर्टिलाइजर्स लि॰ (ऊपर)** के मामले में जिसमें नेशनल फटिलाइजर्स लिमिटेड कर्मचारी (आचरण, अनुशासन एवं अपील) नियमावली विचाराधीन था। किंतु वर्तमान मामला कोल इंडिया लिमिटेड पर प्रयोज्य नियमावली से संबंधित है जिसके संबंध में याची द्वारा विश्वास किया गया निर्णय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया है। आगे यह प्रतीत होता है कि याची ने फॉर्मेट तैयार किया था, किंतु परिणाम किसी पक्ष को किसी राशि के भुगतान में नहीं हुआ।

7. मामले के उस दृष्टिकोण में, दिनांक 30 जून, 2005 का दंड का आक्षेपित आदेश विधि में और तथ्यों पर संपोषणीय प्रतीत नहीं होता है और तद्नुसार इसे अभिखंडित किया जाता है।

किंतु, प्रत्यर्थीगण को जाँच रिपोर्ट के आधार पर विधि के अनुरुप नया निर्णय लेने की छूट होगी।

पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

देवेन्द्र प्रसाद एवं अन्य

cuke

नियोक्ता, अंगार पथरा कोलियरी के प्रबंधन के संबंध में, धनबाद एवं अन्य

L.P.A. No. 52 of 2012. Decided on 8th March, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–नियमितिकरण–औद्योगिक अधिकरण ने समस्त संबंधित मजदूरों को कोटि-I मजदूर के रूप में नियमित करने और उनको समस्त लाभ देने, जैसा एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ III और IV के अधीन प्रावधानित है, का निर्देश दिया–रिट याची की रिट याचिका की खारिजी का कारण नहीं है, विशेषतः जब मामला वर्ष 1994 से वादग्रस्त है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–प्रत्यर्थीगण को अधिनिर्णय क्रियान्वित करने और मजदूरों को समस्त लाभ देने का निर्देश दिया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–M/s M.M. Pal, Mahua Palit, For the Appellants; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने सफलतापूर्वक औद्योगिक विवाद उठाया है और केंद्रीय सरकार, औद्योगिक अधिकरण-II धनबाद से दिनांक 21 जनवरी, 1994 को अपने पक्ष में अधिनिर्णय पाया है। इस अधिनिर्णय द्वारा, प्रबंधन को अधिनिर्णय के प्रकाशन की तिथि से दो माह के भीतर समस्त संबंधित मजदूरों को कोटि I मजदूर के

रूप में नियमित करने और उनको समस्त लाभों जैसा एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ III और IV के अधीन प्रावधानित है को देने का निर्देश दिया गया था। पहले एल॰ पी॰ ए॰, फिर एस॰ एल॰ पी॰ और तब पुनर्विलोकन याचिका दाखिल करके उक्त अधिनिर्णय को चुनौती दी गयी थी। पुनर्विलोकन में मुकदमें का अंतिम दौर वर्ष 2004 में समाप्त हुआ। नियुक्ति आदेश जारी करके प्रश्नगत अधिनिर्णय को क्रियान्वित किया गया था और मुख्य महाप्रबंधक द्वारा दिनांक 9 नवंबर, 2008 के आदेश द्वारा इसको अनुमोदन प्रदान किया गया था। अधिनिर्णय के निबंधनानुसार, दिनांक 1 अप्रिल, 1994 के प्रभाव से नियुक्तियाँ दी गयी थी। याचीगण को पारिणामिक लाभ का भुगतान नहीं किया गया था जैसा अधिकरण द्वारा दिनांक 21 जनवरी, 1994 के अपने अधिनिर्णय में अधिनिर्णीत किया गया था।

3. तब याची रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 3117 वर्ष 2011 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया था। उक्त रिट याचिका विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा विलंब के आधार पर दिनांक 23 नवंबर, 2011 के आदेश के तहत खारिज कर दी गयी थी। चूँकि विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष प्रत्यर्थी ने रिट याचिका का उत्तर दाखिल नहीं किया था, अत: एल॰ पी॰ ए॰ में प्रत्यर्थी को उत्तर दाखिल करने की अनुमति प्रदान की गयी थी।

4. तथ्य विवादित नहीं है कि दिनांक 21.1.1994 को अधिनिर्णय पारित किया गया था और यह एस॰ एल॰ पी॰ में और अंतत: पुनर्विलोकन याचिका में इस न्यायालय के समक्ष वर्ष 2004 तक मुकदमा ग्रस्त था। वर्ष 2004 में नियुक्ति आदेश जारी करके अधिनिर्णय क्रियान्वित किया गया था और दिनांक 9.11.2008 को समुचित प्राधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया था। तीन वर्षों की अवधि में याची पारिणामिक लाभ का अनुतोष पाने के लिए इस न्यायालय के पास आया जब याची को पता चला कि दिनांक 9.11.2008 को अनुमोदन प्रदान किए जाने के बाद भी उन्हें पारिणामिक लाभ नहीं दिया गया था। याची की रिट याचिका की खारिजी का कारण नहीं था, विशेषत: जब मामला वर्ष 1994 से मुकदमाग्रस्त था। अन्यथा भी, ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों में, जहाँ वाद हेतुक जारी है जो प्रत्येक माह हुआ हो जब याचीगण को कम भुगतान किया गया था, तीन वर्षों के विलंब के लिए याची की याचिका खारिज नहीं की जानी चाहिए थी।

5. अत:, हमारा सुविचारित मत है कि दिनांक 23.11.2011 का आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने लायक है और याची की रिट याचिका अनुज्ञात किए जाने लायक है। प्रत्यर्थीगण को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर अधिनिर्णय क्रियान्वित करने और एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ III और IV के अधीन मजदूरों को समस्त लाभ देने का निर्देश दिया जाता है।

6. एल॰ पी॰ ए॰ अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

झारखंड इस्पात प्रा॰ लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 922 of 2013. Decided on 8th March, 2013.

झारखंड औद्योगिक नीति, 2001—खंड 29.11—ब्याज सहायिकी–मेगा इकाईयों को ब्याज सहायिकी का प्रदान–संभावित निवेशकों के साथ प्रत्यक्ष बातचीत के माध्यम से प्रत्येक मामले के आधार पर निर्भर करते हुए मेगा इकाईयाँ प्रोत्साहन इप्सित करने की हकदार है यदि निवेश

50 करोड़ रुपयों से अधिक का है–मेगा इकाई होने के आधार पर ब्याज सहायिकी के प्रदान के लिए अपने दावे के संबंध में उद्योग निदेशक के पास जाने की स्वतंत्रता याची को दी गयी। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–M/s Rohit Roy, For the Petitioner; JC to AG, For the Respondents.

आदेश

पक्षगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने मेगा इकाईयों के लिए औद्योगिक नीति के अधीन याची की इकाई को ब्याज सहायिकी के प्रदान के लिए याची के आवेदन पर आवश्यक आदेश पारित करने के लिए झारखंड राज्य, विशेषत: उद्योग विभाग के प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण को निर्देश देने के लिए प्रार्थना किया है।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता के मुताबिक याची ने दिनांक 26.2.2004 को प्रत्यर्थी राज्य के साथ एम॰ ओ॰ यू॰ किया था जो परिशिष्ट–3 पर अंतर्विष्ट है जिसके अधीन यह सहमति हुई है कि याची स्पाँज आयरन एवं स्टील प्लान्ट स्थापित करने के लिए 450 करोड़ रुपये का निवेश करेगा। यह निवेदन किया गया है कि झारखंड राज्य की औद्योगिक नीति, 2001 के 29.11 के प्रावधान के निबंधनानुसार मेगा इकाईयाँ संभावित निर्देशकों के साथ प्रत्यक्ष बातचीत के माध्यम से प्रत्येक मामले पर निर्भर करते हुए प्रोत्साहन इप्सित करने की हकदार हैं यदि निवेश 50 करोड़ रुपयों से अधिक का है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट–2 पर अंतर्विष्ट प्रत्यर्थी झारखंड राज्य की औद्योगिक नीति विशेषत: खंड 2, पर विश्वास किया जो मेगा इकाईयों पर प्रयोज्य है और निवेदन करते हैं कि याची झारखंड में मेगा इकाइयों स्थापित करने के लिए कदम उठाने के कारण उद्योग विभाग से ब्याज सहायिकी का हकदार है। यह निवेदन किया गया है कि याची ने ऐसे ब्याज सहायिकी के प्रदान के लिए आवेदन दिया है और प्रत्यर्थीगण ने इस पर कुछ प्रश्न पूछा है जो याची के मामले पर प्रयोज्य नहीं हो सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इन परिस्थितियों में प्रत्यर्थीगण अनुबंधित समय के भीतर विधि के अनुरुप याची के अनुरोध पर समुचित निर्णय ले सकते हैं।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यदि याची इकाई समस्त आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करता है और यदि इसे झारखंड राज्य की औद्योगिक नीति के प्रावधानों के मुताबिक मेगा इकाई पाया जाता है, राज्य प्राधिकारीगण इस पर विचार करेंगे और इसके संबंध में समुचित निर्णय लिया जाएगा।

5. मामले के उस दृष्टिकोण में, इस चरण पर, दावा के गुणागुण को जाँचे बिना यह रिट याचिका याची को दो सप्ताह की अवधि के भीतर झारखंड राज्य की औद्योगिक नीति के अधीन मेगा इकाई होने के आधार पर ब्याज सहायिकी प्रदान करने के लिए अपने दावा के संबंध में समस्त समर्थनकारी तथ्यों और दस्तावेजों के साथ नया अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 3, निदेशक, उद्योग, झारखंड राज्य के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ निपटायी जाती है। प्रत्यर्थी सं॰ 3 निदेशक, उद्योग, झारखंड सरकार, राँची इसकी प्राप्ति पर और औद्येगिक नीति के अधीन याची के मामले पर विचार करने के लिए आवश्यक अध्यपेक्षाओं से संतुष्ट होने पर तत्पश्चात आठ सप्ताह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप समुचित निर्णय लेंगे जिसे याची को भी संसूचित किया जाएगा।

6. यह स्पष्ट किया जाता है कि यहाँ ऊपर किए गए संप्रेक्षण को किसी पक्ष के दावा के गुणागुण पर टिप्पणी के रूप में नहीं लिया जाएगा।

7. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

मनीर अंसारी

cuke

लाल कृष्णनाथ सहदेव एवं अन्य

W.P. (C) No. 3144 of 2012. Decided on 5th February, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 18, नियम I–साक्ष्य की प्रस्तुति–साक्ष्य देने के लिए अतिरिक्त समय प्रदान करने से इनकार और प्रतिवादी याची के साक्ष्य का बंद किया जाना अवर न्यायालय के समक्ष वादग्रस्त पक्षों को युक्तियुक्त अवसर देने की आवश्यकता है ताकि वे न्याय के हित में अपना साक्ष्य दे सके–प्रतिवादी की ओर से साक्ष्य दर्ज करने के प्रयोजन से आवश्यक पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–याचिका 3000/- रुपया व्यय के भुगतान के अध्यधीन अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 4 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Kundan Kumar Ambastha, For the Petitioner; Mr. A.K. Sahani, For the Respondents.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके अभिधान वाद सं॰ 18 वर्ष 2007 में विद्वान मुंसिफ, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 6.1.2012 और दिनांक 27.3.2012 के दोनों आदेशों, जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने क्रमशः साक्ष्य देने के लिए अतिरिक्त समय प्रदान करने से इनकार किया और प्रतिवादी-याची के साक्ष्य को बंद कर दिया और आगे दिनांक 17.2.2012 को वापस बुलाने (रि कॉल) की याचिका को अस्वीकार कर दिया, को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और आक्षेपित आदेशों एवं अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों का परिशीलन किया गया।

3. ऑर्डरशीट के परिशीलन से पता चलता है कि दिनांक 14.10.2011 के आदेश द्वारा प्रतिवादी का साक्ष्य दर्ज करने के प्रयोजन से मामला दिनांक 19.11.2011 के लिए रखा गया था। तत्पश्चात, प्रतिवादी की ओर से एक गवाह का परीक्षण किया गया है और वादी द्वारा उसी दिन प्रति परीक्षण भी किया गया था। तत्पश्चात, मामला दिनांक 3.12.2011 के लिए स्थगित कर दिया गया था। दिनांक 3.12.2011 को प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने अन्य गवाहों के परीक्षण के लिए समय इप्सित किया। प्रतिवादी के अनुरोध पर विचार करते हुए मामला दिनांक 23.12.2011 के लिए रखा गया था। यह प्रतीत होता है कि दिनांक 23.12.2011 को दोनों पक्षों के अधिवक्ता उपस्थित थे किंतु मामला दिनांक 6.1.2012 तक स्थगित कर दिया गया था। दिनांक 6.1.2012 के आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि बचाव साक्ष्य के चरण को बंद करने का आदेश दिया गया था क्योंकि प्रतिवादी उक्त तिथि पर गवाह प्रस्तुत नहीं कर सका था। कागजात से प्रकट होता है कि दिनांक 14.10.2011 को प्रतिवादी साक्ष्य आरंभ होने के

बाद दिनांक 6.1.2012 के पहले केवल एक गवाह का परीक्षण किया गया है और समयावधि भी इंगित करता है कि अतिरिक्त साक्ष्य देने में वर्तमान याची–प्रतिवादी की ओर से कोई अयुक्तियुक्त विलंब नहीं था।

4. इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय के समक्ष वादग्रस्त पक्षों को युक्तियुक्त अवसर दिए जाने की आवश्यकता है ताकि वे वर्तमान मामले में न्याय के हित में अपना साक्ष्य दे सके। ऑर्डर शीट स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि पर्याप्त अवसर, जैसा प्रतिवादी की ओर से साक्ष्य दर्ज करने के प्रयोजन से आवश्यक है, नहीं दिया गया है।

5. याची–प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में केवल एक गवाह का परीक्षण करने की आवश्यकता है और वह उस प्रयोजन से आगे समय नहीं मांगेंगे और तद्नुसार, दिनांक 6.1.2012 के आदेश को अपास्त किए जाने की आवश्यकता है और प्रतिवादी की ओर से एक गवाह का परीक्षण करने के प्रयोजन से वर्तमान याची–प्रतिवादी को अवसर दिए जाने की जरूरत है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अगली तिथि कल अर्थात् 6.2.2013 है।

7. इन परिस्थितियों के अधीन, प्रतिवादी कल अर्थात् दिनांक 6.2.2013 को साक्ष्य दर्ज किए जाने के प्रयोजन से अपना गवाह प्रस्तुत करेगा और इस प्रयोजन से आगे अवसर नहीं दिया जाएगा।

8. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने ऑर्डरशीट से इंगित किया कि अवर न्यायालय ने प्रतिवादी के आचरण के कारण इस प्रकार का आदेश पारित किया है और इसलिए, इस याचिका को अनुज्ञात करते हुए प्रतिवादी पर कुछ व्यय अधिरोपित करने की आवश्यकता है।

9. तद्नुसार, यह याचिका 3000/- रुपयों के व्यय के अध्यधीन अनुज्ञात की जाती है।

10. याची कल अर्थात् दिनांक 6.2.2013 तक अवर न्यायालय के समक्ष 3000/- रुपयों का व्यय जमा करेगा।

11. याची के व्यय पर फैक्स के माध्यम से यह आदेश संसूचित किया जाए।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

विकास कुमार एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1200 of 2012. Decided on 6th March, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323 एवं 504—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—उपहति एवं आशयपूर्ण अपमान–संज्ञान–बैंक जिसके ये दोनों याचीगण अधिकारी हैं, द्वारा परिवादी के पक्ष में कर्ज मंजूर किया गया था और इ॰ एम॰ आई॰ नियत किया गया था जिसका भुगतान याचीगण के अनुसार नहीं किया गया था–जब बैंक पदधारियों ने पहले ही राशि की वसूली के लिए कदम उठाया था, यह तर्क पर खरा नहीं उतरता है कि परिवादी को भुगतान करने के लिए उसको कहने हेतु चैंबर में याचीगण द्वारा क्यों बुलाया जाएगा और तद्द्वारा

दुर्व्यवहार करने अथवा उपहति भी कारित करने के लिए याचीगण के विरुद्ध लगाए गए अभिकथन द्वेष से भरे प्रतीत होते हैं–यदि परिवाद मामला जारी रहने दिया जाता है, यह न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा–संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 10)

निर्णयज विधि.–1992 Supp. (1) SCC 335—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. P.P.N. Roy, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. K.P. Choudhary, For the O.P. No.2.

आदेश

याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन परिवाद मामला सी॰/1 केस सं॰ 2964 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 23.2.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर ने याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323 एवं 504 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री पी॰ पी॰ एन॰ रॉय निवेदन करते हैं कि यह स्वयं परिवादी का मामला है कि परिवादी ने प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अध्यधीन स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की साकची शाखा जमशेदपुर से कर्ज लिया था और इसका भुगतान 1923/- रुपयों की दर पर 60 बराबर किश्तों में भुगतान किया जाना था किंतु जब परिवादी किश्तों का भुगतान करने में विफल रही, याचीगण की प्रेरणा पर प्रमाण पत्र कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसमें बिहार एवं उड़ीसा (लोक मांग वसूली) अधिनियम की धारा 7 के अधीन नोटिस जारी किया गया था और केवल यह ज्ञात होने के बाद कि परिवादी के विरुद्ध प्रमाण पत्र कार्यवाही आरंभ की गयी है, परिवादी ने उसमें यह अभिकथन करते हुए परिवाद दर्ज किया कि इन दोनों याचीगण ने परिवादी को चैंबर में बुलाया और गंदी भाषा में उसके साथ दुर्व्यवहार किया और परिवादी को बैंक के कुछ फॉर्मेट पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया और जब विरोध किया गया था, उसे धकेला गया था जिसके परिणामस्वरुप उसने उपहति प्राप्त किया जिस अभिकथन को इन तथ्यों और परिस्थितियों में द्वेष से भरा इस कारण से कहा जा सकता है कि बैंक परिवादी से राशि वसूल करने के लिए अग्रसर हुआ था और इसलिए, वर्तमान अभियोजन अभिखंडित किए जाने योग्य है क्योंकि इसे द्वेषपूर्ण आशय के साथ दाखिल किया गया है।

4. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सत्य है कि परिवादी ने बैंक से कर्ज लिया था अैर 60 बराबर किश्तों में भुगतान की जाने वाली 1923/- रुपयों की राशि इ॰ एम॰ आई॰ के रूप में नियत की गयी थी किंतु याची 2000/- रुपया प्रतिमाह जमा कर रही थी और तद्द्वारा परिवादी ने किश्तों का भुगतान करने में व्यतिक्रम कभी नहीं किया, फिर भी परिवादी के विरुद्ध प्रमाणपत्र कार्यवाही आरंभ की गयी थी और जब परिवादी को इसकी जानकारी हुई, वह याचीगण के पास गयी और शिकायत किया जिस पर उसके साथ याचीगण द्वारा दुर्व्यवहार किया गया था और धकेला भी गया था जिसके परिणामस्वरुप वह गिर गयी और उपहति प्राप्त किया और ऐसी स्थिति में अभियोजन द्वेषपूर्ण नहीं कहा जा सकता है और परिवाद मामला अभिखंडित करने की आवश्यकता नहीं है।

5. यह दर्ज किया जाए कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य, 1992 Supp (1) SCC 335,** मामले में उदाहरणस्वरुप मामलों की कोटियों को अधिकथित किया है जिसमें भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण शक्ति अथवा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग उच्च न्यायालय न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने के लिए अथवा अन्यथा न्याय का हित सुरक्षित करने के लिए कर सकता है। कोटियों में से एक निम्नलिखित है:–

> *^^tgk¡ vfHk;ksDr lçfr'kks/k yudj vrjLFk grq d lkFk vFkok futh n'euh d dkj.k mldk viekfur djus dh nf"V ls nkfMd dk;okgh Li"V :i ls }"ki.k g vFkok dk;okgh }"ki.k :i ls lLFkkfir dh x;h gA**

6. जैसा ऊपर गौर किया गया है कि बैंक जिसके ये दोनों याचीगण अधिकारी हैं द्वारा वर्ष 2008 में परिवादी के पक्ष में कर्ज मंजूर किया गया था और 60 बराबर किश्तों में भुगतान किए जाने के लिए 1923/- रुपयों के रूप में इ॰ एम॰ आई॰ नियत की गयी थी जिसका भुगतान याची के अनुसार नहीं किया गया था यद्यपि परिवादी द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि परिवादी नियत इ॰ एम॰ आई॰ राशि की तुलना से अधिक राशि का भुगतान नियमित रूप से कर रही है।

7. चाहे जो भी हो, स्वयं परिवाद याचिका में परिवादी द्वारा स्वीकार किया गया है कि परिवादी ने बिहार एवं उड़ीसा (लोक मांग वसूली) अधिनियम की धारा 7 के अधीन जारी नोटिस प्राप्त किया था।

8. ऐसी स्थिति में, जब बैंक अधिकारियों ने पहले ही राशि की वसूली के लिए कदम उठया था, यह विवेक पर खरा नहीं है कि क्यों परिवादी को भुगतान करने के लिए कहने के लिए चैंबर में याचीगण द्वारा बुलाया जाएगा और तद्द्वारा याचीगण के विरुद्ध दुर्व्यवहार करने अथवा उपहति कारित करने के अभिकथन द्वेषपूर्ण प्रतीत होते हैं।

9. ऐसी स्थिति में, यदि परिवाद मामले को जारी रहने की अनुमति दी जाती है, यह न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा।

10. तद्नुसार, दिनांक 23.2.2012 को संज्ञान लेने वाले आदेश सहित C/1 केस सं॰ 2964 वर्ष 2011 की संपूर्ण कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

11. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

इकरामुल गणी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 3587 of 2001. Decided on 7th March, 2013.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन आवेदन।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420, 467, 468 एवं 471—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक उल्लंघन, छल एवं कूट रचना—संज्ञान—धन वसूल करने के बावजूद बस उपलब्ध नहीं करायी गयी—याची को न तो कुछ सुपुर्द किया गया था और

न ही उसने परिवादी को धन से अलग होने के लिए प्रेरित किया था—याची ने कभी भी परिवादी को कोई कूट रचित दस्तावेज नहीं दर्शाया या सौंपा था—परिवाद में किये गये प्रकथन पर मामले में याची का अभियोजन दुर्भावनापूर्ण है और इसे जारी रहने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए—जहां तक याची का संबंध है, आक्षेपित आदेश निरस्त किया जाता है। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. G.N. Chandra, For the Petitioner; Mr. Tapas Kabiraj, For the State; Mr. Sanjay Piprawal, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–C/1 केस सं॰ 423 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 1.2.2001 के आदेश को निरस्त करने के लिए यह दांडिक विविध याचिका दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 467, 468 एवं 471 के अधीन अपराध के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है।

2. विपक्षी सं॰ 2 जियाउद्दीन अंसारी द्वारा दाखिल परिवाद से प्रतीत होने वाला संक्षिप्त तथ्य यह है कि अभियुक्त महफूज आलम, जो इस याची का पुत्र है, ने परिवादी को सूचित किया था कि टिस्को लिमिटेड द्वारा एक बस के नीलाम किये जाने की संभावना है और उसने ऐसा इंगित करने वाले कतिपय कागजात दिखाये थे कि बस को टिस्को लिमिटेड द्वारा नीलामी के माध्यम से बेचे जाने की संभावना है। चूंकि परिवादी को एक बस की आवश्यकता थी, वह उक्त महफूज आलम द्वारा दिये गये आश्वासन से आकर्षित हो गया था। अभियुक्त ने अभियुक्त महफूज आलम को बस निर्गत किया जाना इंगित करने वाला पत्र सं॰1/1998–1999 प्रसंग 118/98 टिस्को भी दर्शाया था जो तात्पर्यित रूप से श्री संजय सिंह, निदेशक कॉरपोरेट कम्युनिकेशन, टिस्को, जमशेदपुर द्वारा हस्ताक्षरित था, जिसने परिवादी को विश्वास दिलाया था। इसके उपरांत उक्त बस को खरीदने के लिए उसे 1,20,000/– रुपये की एक राशि वसूली गयी थी, जब परिवादी को अभियुक्त महफूज आलम द्वारा दिये गये आश्वासन के अनुसार कोई बस प्राप्त नहीं हुई थी, उसने अपना धन वापस मांगना प्रारंभ कर दिया था। तत्पश्चात् उक्त अभियुक्त महफूज आलम ने परिवादी के पक्ष में चेक निर्गत किये थे, परन्तु प्रारंभ में निर्गत किये गये यह चेक अनादृत कर दिये गये थे और 'भुगतान रोकने' के पृष्ठांकन के साथ परिवादी को लौटा दिये गये थे। धन वापस पाने के लिए परिवादी ने अभियुक्त व्यक्तियों का पीछा किया था और तत्पश्चात् अभियुक्त महफूज आलम द्वारा परिवादी को 60 हजार रुपये की कुल राशि लौटा दी गयी थी, परन्तु 60 हजार रुपये की शेष राशि असंदत्त रह गयी थी और अतएव, यह परिवाद सामने है।

2. यह निवेदन किया गया है कि याची को इस कारण अभियुक्त बनाया गया है कि वह अभियुक्त महफूज आलम का पिता है। समूचे परिवाद में इसका कोई संकेत तक नहीं है कि इस याची ने कौन सा कार्य कारित किया है या पूर्वोक्त सौदेबाजी में उसके द्वारा कौन सी भूमिका निभायी गयी थी। उसने कभी भी किसी बस को बेचे जाने के लिए कोई आश्वासन नहीं दिया था या कोई दस्तावेज नहीं दिखाया था। उसने कभी भी टिस्को लिमिटेड से नीलामी बिक्री में बस खरीदने के लिए परिवादी को प्रेरित नहीं किया था। परिवादी का यह स्वीकृत मामला है कि अभियुक्त महफूज आलम को राशि का भुगतान किया गया था। अभियोजन का यह भी स्वीकृत मामला है कि महफूज आलम ने उस राशि का प्रतिदाय कर दिया था जब परिवादी के नाम कोई बस खरीदी नहीं गयी थी। महफूज आलम द्वारा किया गया आंशिक भुगतान भी परिवादी द्वारा स्वीकार किया गया है।

विद्वान दंडाधिकारी ने अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किये बिना इस याची को सम्मिलित कर लिया है तथा उसे विचारण का सामना करने का निर्देश दिया है। याची ने निष्पक्षता के साथ माना है कि उसे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। अगर उसके पुत्र महफूज आलम का दांडिक अभियोजन जारी रहेगा और अगर उसने अपराध कारित किया है तो उसे दंडित किया जाना चाहिए।

3. दूसरी ओर, परिवादी, विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विद्वान दंडाधिकारी ने परिवादी के सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान का अवलोकन करने के उपरांत संज्ञान

लिया था। याची की मौजूदगी में धन का भुगतान किया गया था और अतएव वह भी अभिकथित अपराधों के लिए अभियोजित किये जाने का दायी है।

4. मैंने समूचे परिवाद, आक्षेपित आदेश तथा मेरे समक्ष प्रस्तुत अन्य दस्तावेजों का अवलोकन किया है। याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 467, 468 एवं 471 के अधीन विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है। स्वीकार्यत:, याची को कोई सुपुर्दगी नहीं हुई थी और न ही उसने परिवादी को धन से अलग होने के लिए प्रेरित किया था। परिवाद याचिका से यह भी स्पष्ट है कि उसने कभी भी परिवादी को कोई कूट रचित दस्तावेज नहीं दर्शाया था या सौंपा था। परिवाद में किया गया प्रकथन इस पर भी मौन है कि किसी कूट रचित दस्तावेज के प्रस्तुतिकरण के समय, याची या तो मौजूद था या ऐसे किसी दस्तावेज का समर्थन किया था। मामले की इस दृष्टि में, मैं पाता हूँ कि परिवाद में किये गये प्रकथन पर मामले में याची का अभियोजन दुर्भावनापूर्ण है और इसे जारी रहने नहीं दिया जाना चाहिए।

5. इन सारे पहलुओं पर विचार करके, मैं वर्तमान याची के अभियोजन की सीमा तक दिनांक 1.2.2001 के आक्षेपित आदेश तथा परिवाद, C/1 केस सं॰ 423 वर्ष 2000, से उद्भूत उसके दांडिक अभियोजन को अपास्त करने के लिए उन्मुख अनुभव करता हूँ। वर्तमान याची के संबंध में यह दांडिक विविध याचिका अनुज्ञात की जाती है। जहां तक एक अन्य अभियुक्त के दांडिक अभियोजन का सवाल है, अवर न्यायालय को आगे कार्यवाही करने का निर्देश दिया जाता है तथा इस मामले में पारित सभी अंतरिम आदेश अभिखंडित किये जाएंगे।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

सेंट्रल कोल्ड फील्ड्स लि॰

cuke

आजाद बिल्डर, अभियांत्रिकी एवं संवेदक, रांची

W.P. (C) No. 5217 of 2007. Decided on 4th March, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 151—निष्पादन कार्यवाही में अतिरेक राशि का समायोजन—कतिपय परिस्थितियों में सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 151 के अधीन अवर न्यायालय अपनी शक्ति का इस्तेमाल कर सकता है जहां विधि का कोई अभिव्यक्त प्रावधान नहीं है—अवर न्यायालय के लिए निष्पादन कार्यवाही में अतिरेक राशि का समायोजन करने के लिए सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 151 के अधीन इसमें निहित शक्ति का इस्तेमाल करना आवश्यक होता है क्योंकि एक अन्य निष्पादन मामले में डिक्री संबंधी राशि जमा की गयी है—धारा 151 के अधीन यथोचित आदेश के लिए मामला निष्पादन न्यायालय को प्रतिप्रेषित। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.—M/s A.K. Srivastava, Badal Vishal, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the Respondent.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके निष्पादन केस सं॰ 8 वर्ष 1996 में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश VI, रांची द्वारा पारित दिनांक 25.4.2007 के आदेश (परिशिष्ट–12) को अभिखंडित तथा अपास्त करने हेतु एक यथोचित रिट/आदेश/निर्देश निर्गत

के लिए आग्रह किया है जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने इस प्रभाव का आदेश पारित किया कि ''ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जिसके द्वारा न्यायालय वर्तमान से इतर अन्य कार्यवाही में जमा की गयी अतिरेक राशि का समायोजन कर सकता है।''

2. याची तथा प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता को भी सुना तथा अभिलेख पर मौजूद आक्षेपित आदेश एवं अन्य सामग्रियों का परिशीलन किया।

3. यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय के समक्ष तीन निष्पादन कार्यवाहियां-निष्पादन केस सं॰ 8 वर्ष 1996, निष्पादन केस सं॰ 9 वर्ष 1996, निष्पादन केस सं॰ 10 वर्ष 1996-दाखिल की गयी थी। उक्त तीनों कार्यवाहियों में से, निष्पादन केस सं॰ 9 वर्ष 1996 एवं निष्पादन केस सं॰ 10 वर्ष 1996 हटा लिये गये हैं और वर्तमान में, निष्पादन केस सं॰ 8 वर्ष 1996 लंबित है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, निष्पादन केस सं॰ 9 वर्ष 1996 में कुछ अतिरेक राशि जमा की गयी है, जिसका निष्पादन केस सं॰ 8 वर्ष 1996 में समायोजन तथा जमा किये जाने की आवश्यकता है।

5. मैं याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत इस तर्क में बल पाता हूँ कि अवर न्यायालय कतिपय स्थितियों में सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 151 के अधीन अपनी शक्ति का इस्तेमाल कर सकता है जहां विधि का कोई अभिव्यक्त प्रावधान नहीं है और अतएव, वर्तमान याचिका में मौजूद तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय के लिए निष्पादन कार्यवाही में अतिरेक राशि का समायोजन करने हेतु सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 151 के अधीन इसमें निहित शक्ति का इस्तेमाल करने की आवश्यकता है क्योंकि डिक्री संबंधी राशि एक अन्य निष्पादन मामले में जमा कर दी गयी है, जिसका निष्पादन केस सं॰ 8 वर्ष 1996 में समायोजन किये जाने की आवश्यकता है।

6. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रति शपथ पत्र के पृष्ठ 17 को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि मामले के प्रभावी निस्तारण हेतु न्यायालय की सहायता करने के लिए गणना प्रपत्र तैयार किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि याची ने ब्याज की राशि का परिकलन नहीं किया है, जो उसके बाद प्रोद्भूत हुई थी।

7. इसके विरुद्ध, याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रति शपथ पत्र तथा उससे संलग्न परिशिष्ट-1 श्रृंखला को निर्दिष्ट करते हुए उस परिकलन तथा समायोजन को प्रदर्शित करने का भी प्रयास किया है जिसे निष्पादन मामले में किये जाने की आवश्यकता है।

8. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के प्रतिद्वंद्वी निवेदनों के आलोक में, इस न्यायालय की यह राय है कि सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 151 के अधीन शक्ति का इस्तेमाल करके प्रतिद्वंद्वी दावों के सत्यापन के लिए आवश्यक कार्य करने हेतु मामला अवर न्यायालय, अर्थात्, निष्पादन न्यायालय को प्रतिप्रेषित किये जाने की आवश्यकता है और तत्पश्चात और उपयुक्त आदेश, जैसाकि उचित एवं उपयुक्त समझा जाए, अवर न्यायालय द्वारा अतिरेक राशि के समायोजन के संबंध में पारित किया जा सकता है। अतएव, दिनांक 25.4.2007 का आक्षेपित आदेश निरस्त एवं अपास्त किया जाता है तथा मुद्दे पर पुनर्विचार के लिए ऊपर परिचर्चा किये गए समायोजन के संबंध में मामला संबद्ध अवर न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया जाता है।

9. पूर्वोक्त संपरीक्षण एवं निर्देश के साथ, यह रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

ekuuh; vkjñ vkjñ i lkn] U;k;efr

भारत भूषण तिवारी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 447 of 2008. Decided on 16th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 304/340—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—चिकित्सीय लापरवाही—मरीज की मृत्यु—संज्ञान—जब मरीज को अस्पताल लाया गया था, उसकी अवस्था पहले ही खराब हो चुकी थी—याची ने तुरंत उसे ऑक्सीजन पर रख दिया था—अस्पताल या चिकित्सक को अस्पताल में प्रत्येक अनहोनी के लिए उत्तरदायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है—अन्वेषण अभिकरण ने आरोप पत्र प्रस्तुत किया था और न्यायालय ने यांत्रिक रूप से अपराध का संज्ञान लिया है—यह नहीं कहा जा सकता कि याची ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304-A के अधीन लापरवाही का अपराध कारित किया था—संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 6 से 9)

निर्णयज विधि.–2005 AIR SCW 3685—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s. T.R. Bajaj, H.K. Shikarwar, For the Petitioner; Mr. APP., For the State; Mr. Laljee Sahay, For the O.P. No.2.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता तथा विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. प्रारंभ में यह आवेदन भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34 के अधीन दर्ज विष्टुपुर पुलिस थाना केस सं॰ 71/2008 (GR 524/2008) की प्रथम सूचना रिपोर्ट को निरस्त करने के लिए दाखिल किया गया था। बाद में, एक अंतर्वर्ती आवेदन–I.A. सं॰ 1799 वर्ष 2012– दाखिल किया गया था जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन, संज्ञान लेने वाले आदेश को चुनौती दी गयी थी परन्तु वह आदेश, जिसके अधीन संज्ञान लिया गया था, कभी भी अंतर्वर्ती आवेदन का हिस्सा नहीं था और, अतएव, मामला आज के लिए स्थगित कर दिया गया था। तदुपरांत, तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा GR सं॰ 524 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 20.8.2010 का आदेश एक सम्पूरक शपथ पत्र के माध्यम से अभिलेख पर लाया गया था।

3. जैसाकि प्रथम सूचना रिपोर्ट में बताया गया है, अभियोजन का मामला यह है कि जब सूचनादाता विनोद कुमार की भतीजी नेहा कुमारी की अवस्था खराब हो गयी थी, वह अपने मित्र गौरांगों के साथ उसे 11.40 बजे रात्रि में ईलाज के लिए TMH ले आया था। वे आपातकालीन कक्ष में आये थे जहां यह याची तथा डॉ॰ ओ॰पी॰ पात्रा ड्यूटी पर थे। याची ने नेहा कुमारी की जांच करके उसे तत्काल ऑक्सीजन पर रख दिया था। जब सूचनादाता ने देखा कि नेहा कुमारी की स्थिति खराब होती जा रही है, उसने इस याची तथा अन्य चिकित्सक से ईलाज करने का आग्रह किया था। तदुपरांत, उन्होंने सूचनादाता से धन जमा करने को कहा था। इस पर, सूचनादाता धन जमा करने के लिए चला गया था। जिस समय तक वह धन जमा करने के उपरांत लौटा था, नेहा कुमारी की अवस्था और भी खराब हो गयी थी। तदुपरांत, इस याची तथा अन्य चिकित्सक दोनों ने ही उसे महिला कक्ष भेज दिया था जहां पहली बार उस नर्स, जो वहां ड्यूटी पर थी, ने सूचनादाता को नेहा कुमारी को वापस आपातकालीन कक्ष ले जाने के लिए कहा था क्योंकि उसका किये जा रहे उपचार के बारे में कागज में कुछ नहीं लिखा हुआ था। तथापि, जब एक महिला चिकित्सक आयी थी, उसने ICU में नेहा कुमारी को रख दिया था परन्तु उन चिकित्सकों

ने, जो ICU में डयूटी पर थे कभी भी आग्रह किये जाने के बावजूद उसे जीवन रक्षक उपकरणों पर नहीं रखा था। इस दौरान, उसकी मृत्यु हो गयी थी। ऐसे अभिकथन पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304/34 के अधीन बिस्टुपुर केस सं॰ 71/2008 के तौर पर एक मामला दर्ज किया गया था। मामले का अन्वेषण कराया गया था। अन्वेषण के समापन पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 304-A/34 के अधीन अभियोग पत्र प्रस्तुत किया गया था जिस पर दिनांक 20.8.2010 के आदेश द्वारा संज्ञान लिया गया था जिसे चुनौती दी गयी है।

4. याची की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बजाज निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में किये गये अभिकथनों से लापरवाही का कोई मामला नहीं बनता है क्योंकि यह अभियोजन का ही मामला है कि जब नेहा कुमारी को आपात कक्ष में लाया गया था, उसकी अवस्था काफी गंभीर थी और मरीज की अवस्था देखते हुए, इस याची ने नेहा कुमारी को तत्काल ऑक्सीजन पर रख दिया था और जब अस्पताल में भर्ती के संबंध में औपचारिकताएं पूरी कर ली गयी थी, इस याची ने उसे महिला कक्ष भेज दिया गया था और, अतएव, याची को भारतीय दंड संहिता की धारा 304-A/34 के अधीन लापरवाही का अपराध करने वाला नहीं कहा जा सकता है और, अतएव, अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304-A/34 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने में अवैधानिकता कारित किया है।

5. इसके विरुद्ध, विपक्षी सं॰ 2 के लिए उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में लगाये गये अभिकथनों से, यह परिलक्षित होता है कि याची या अन्य चिकित्सक ने नेहा कुमारी का इलाज करने में कभी भी तत्परता के साथ कार्य नहीं किया था, जो काफी गंभीर थी जब उसे अस्पताल लाया गया था और, तद्द्वारा, उन्हें लापरवाही का अपराध कारित करनेवाला कहा जा सकता है।

6. इन निवेदनों के संदर्भ में, मैं सीधे ही **2005 AIR SCW 3685** में रिपोर्ट किये गये **जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य एवं एक अन्य** के मामले में दिये गये निर्णय को निर्दिष्ट करूंगा, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अस्पताल या क्लिनिक में प्रत्येक दुर्घटना या दुर्भाग्य के लिए चिकित्सक को आपराधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है यद्यपि पर्याप्त देखभाल एवं सावधानी न बरतने के कारण, किसी पर नागरिक दायित्व अधिरोपित किया जा सकता है। उस मामले में, न्यायाधीश लापरवाही के मामले में किसी चिकित्सक को फंसाने की बढ़ती प्रवृत्ति के संदर्भ में चिकित्सीय लापरवाही के प्रत्येक पहलू की जांच करने के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि चिकित्सक के विरुद्ध लापरवाही के अपराध का संज्ञान लेने में सम्यक् सतर्कता एवं सावधानी बरती जानी चाहिए, क्योंकि उपयुक्त चिकित्सक राय के बिना, चिकित्सक के दोष की ओर इंगित करना इस समुदाय के साथ सामान्य रूप से घोर अन्याय करना होगा।

7. ऐसी परिस्थिति के अधीन, अन्वेषण अभिकरण को भी ऐसे उपाए अपनाने चाहिए थे जैसाकि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा आदेश किया गया है, परन्तु अन्वेषण अभिकरण ने उसका आश्रय लिये बिना आरोप पत्र प्रस्तुत किया था जिस पर न्यायालय ने यांत्रिक रूप से संज्ञान लिया है और, अतएव, संज्ञान लेने वाला आदेश बिल्कुल अवैधानिक है क्योंकि जैसा प्राथमिकी में किये गये अभिकथनों से प्रतीत होता है कि जब नेहा कुमारी, जिसकी अवस्था पहले ही काफी खराब हो चुकी थी, को आपातकाल कक्ष में लाया गया था, इस चिकित्सक ने उसे तत्काल ऑक्सीजन पर रख दिया था और जब अन्य औपचारिकताएं पूरी कर दी गयी थी, उसे महिला कक्ष भेज दिया गया था और इस परिस्थिति के अधीन, यह नहीं कहा जा सकता कि याची ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304-A के अधीन यथा वर्णित लापरवाही का अपराध कारित किया था।

8. तदनुसार, संज्ञान लेने वाला दिनांक 20.8.2010 का आदेश एतद द्वारा निरस्त किया जाता है।

9. परिणामतः जहां तक इस याची का सवाल है, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राजेश हेम्ब्रम

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 7417 of 2006. Decided on 6th March, 2013.

झारखंड विधान मंडल (वेतन, भत्ता एवं पेंशन) अधिनियम, 2001—धारा 17—कुटुम्ब पेंशन—याची ने मृतक विधायक का पुत्र होने का दावा किया—रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान याची की माता की मृत्यु हो गयी—अपने दावे के संबंध में तथा अपनी शिनाख्त एवं नियमों, जिस पर उसने भरोसा किया था, के संबंध में भी सभी समर्थक तथ्यों एवं दस्तावेजों के साथ अभ्यावेदन करके अपनी व्यथाओं के प्रतितोष के लिए याची को उप सचिव/सचिव, झारखंड विधान सभा के पास जाने की अनुमति दी गयी थी—याची को पारिणामिक लाभों का भुगतान किया जाएगा, अगर उसका दावा विशुद्ध पाया जाता है। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.—Mr. Kaushalendra Prasad, For the Petitioner; Mr. J.C. to G.P.-II, Mr. K.P. Deo, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता तथा प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को भी सुना।

2. वर्तमान प्रतिस्थापित याची विलियम हेम्ब्रम का पुत्र होने का दावा करता है जो उसके अनुसार 1952 से 1957 तक संथाल परगना, जिला दुमका में शिकारी पाड़ा विधानसभा क्षेत्र के विधायक थे। याची के अधिवक्ता ने झारखंड विधानमण्डल (वेतन, भत्ता एवं पेंशन) अधिनियम, 2001, विशेषकर इसकी धारा 17 पर भरोसा किया है यह निवेदन करने के लिए कि वर्तमान याची की माता, जो मूल याची तथा मृतक विधायक की पत्नी है, 2001 के अधिनियम के प्रावधानों के अधीन कुटुम्ब पेंशन के हकदार है। विलियम हेम्ब्रम नामक उक्त व्यक्ति की कथित रूप से 1974 में ही मृत्यु हो गयी है तथा वर्तमान याची की माता की इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान 6 मई, 2009 को मृत्यु हो गयी है।

3. इस परिस्थिति में, विवाद के गुणावगुणों में जाये बिना, याची को अपने दावे तथा अपनी शिनाख्त एवं उन नियमों के भी संबंध में, जिन पर उसने भरोसा किया था, सभी समर्थक तथ्यों एवं दस्तावेजों के साथ अभ्यावेदन करके अपनी व्यथाओं के प्रतितोष के लिए उप सचिव/सचिव, झारखंड विधान सभा, रांची के पास जाने की अनुमति दी जाती है। ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति पर, उप सचिव/सचिव, झारखंड विधान सभा, इसके उपरांत 12 सप्ताह की एक अवधि के भीतर युक्तिसंगत एवं आख्यापक आदेश पारित करके विधि के अनुसार इस पर विचार करेंगे और इस आदेश को याची को भी संसूचित किया जाएगा।

4. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अगर याची का दावा कानूनी रूप से ग्राह्य एवं विशुद्ध पाया जाता है, तो इसके उपरांत 8 सप्ताह की अवधि के भीतर पारिणामिक लाभों का भुगतान किया जाएगा।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

महादेवशल सेवा समिति, गोयलकेरा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP (C) No. 6812 of 2012. Decided on 8th March, 2013.

भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—मेला के संबंध में उपायुक्त द्वारा पारित आदेश को चुनौती—विधि व्यवस्था की स्थिति को ध्यान में रखते हुए उपायुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश पारित—याची तथा प्रत्यर्थी के बीच विवाद का अपने आप में उपायुक्त द्वारा पारित आदेश से कुछ लेना-देना नहीं है—वहां पर व्यवस्था की निगरानी करने के लिए तथा विधि व्यवस्था बनाये रखने के लिए उपायुक्त ने SDJM के नेतृत्व में एक समिति नियुक्त की है—मंदिर के न्यास में अधिकार, अभिधान एवं हित के संबंध में याची की व्यथा पर उपयुक्त फोरम के समक्ष जिरह किये जाने की आवश्यकता है—रिट याचिका समर्थनीय नहीं है—उपायुक्त द्वारा पारित आदेश बरकरार। (पैराएँ 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.—(1993) 2 BLJR 771; 1995 (2) PLJR 242—Distinguished.

अधिवक्तागण.—Mr. Arun Kumar, For the Petitioner; M/s. Mahesh Tiwary, Sahazanand Sharma, For the Respondents.

आदेश

I.A. सं॰ 1124/13

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन निस्तारित किये जाने का आदेश किया जाता है क्योंकि यह निरर्थक बन चुका है।

I.A. सं॰ 1139 वर्ष 2013

पक्षकार प्रत्यर्थी के तौर पर प्रस्तुत आवेदन में मध्यक्षेप की इप्सा करते हुए और तदद्वारा उक्त परिसर में मध्यक्षेपी संगठन द्वारा किये जा रहे कल्याणकारी अन्ना कार्यक्रम में हस्तक्षेप न करने का पक्षकारों को एक निर्देश देने की इप्सा करते हुए भी मध्यक्षेपी (अन्ना चेत्रा, महादेव साल मंदिर, गोयलकेरा) द्वारा वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन दाखिल किया गया।

इस आवेदन में, जो एक शपथ पत्र द्वारा समर्थित है, में कथित कारणों से इस न्यायालय की राय यह है कि वर्तमान आवेदन को अनुज्ञात किये जाने की आवश्यकता है। तदनुसार, इसे अनुज्ञात किया जाता है। परिणामत:, मध्यक्षेपी, प्रत्यर्थी को अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए एक अवसर प्रदान किये जाने की आवश्यकता है।

I.A. सं॰ 1139/13 निस्तारित किया जाता है।

WP(C) सं॰ 6812 वर्ष 2012

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके ज्ञाप सं॰ 1477(B) दिनांक 2.11.2012 में अंतर्विष्ट उपायुक्त, प॰ सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 2.11.2012 के आदेश को निरस्त करने तथा अपास्त करने का आग्रह किया है।

2. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना तथा विद्वान उपायुक्त, प॰ सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 2.11.2012 के आक्षेपित आदेश (इस याचिका का परिशिष्ट-5) का परिशीलन किया।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान उपायुक्त ने विधि के अधीन कोई शक्ति न रहते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है और अतएव, विद्वान उपायुक्त, प॰ सिंहभूम द्वारा पारित आदेश विधि में दोषपूर्ण है और इसे अभिखंडित एवं अपास्त किये जाने की आवश्यकता है। यह भी निवेदन किया गया है कि विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुपालन किये बिना तथा याची को सुने जाने का कोई अवसर उपलब्ध कराये बिना उक्त आदेश पारित कर दिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदनों के समर्थन में **(1993) 2 BLJR 771** में रिपोर्ट किये गये **आनंद मोहन पाण्डेय एवं अन्य बनाम बिहार राज्य हिन्दू धार्मिक न्यास बोर्ड एवं अन्य** तथा 1995(2) PLJR 242 में रिपोर्ट किये गये **पिताम्बर ठाकुर एवं अन्य बनाम अपने प्रशासक के माध्यम से बिहार राज्य धार्मिक न्यास बोर्ड एवं अन्य** के मामले में दिये गये निर्णयों को निर्दिष्ट किया है तथा उन पर भरोसा किया है।

4. इसके विरुद्ध, सहायक उपायुक्त, चाईबासा द्वारा दाखिल प्रति शपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि वहां पर विद्यमान विधि व्यवस्था की स्थिति को ध्यान में रखते हुए तथा महादेवशाल में आयोजित होने वाले श्रावणी मेला के दौरान व्यवस्था को भी ध्यान में रखते हुए उपायुक्त, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा दिनांक 2.11.2012 का निर्णय लिया गया है। प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी इंगित किया है कि SDO, पोराहट, चक्रधरपुर को वहां पर विधि व्यवस्था की देखभाल करने का निर्देश दिया गया था तथा श्रावणी मेला के दौरान व्यवस्था की देखरेख करने के लिए SDJM के नेतृत्व वाली एक समिति भी नियुक्त की गयी है। यह भी प्रतीत होता है कि उक्त आदेश पारित करने के पहले, उपायुक्त, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा ने सहायक उपायुक्त द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को भी ध्यान में रखा है और अतएव, DC द्वारा पारित आदेश, जो वर्तमान याचिका में चुनौती के अधीन है, के साथ छेड़छाड़ किये जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसे उस क्षेत्र के व्यापक सार्वजनिक हित तथा विद्यमान स्थिति एवं उस स्थिति को भी ध्यान में रखते हुए निर्गत किया गया है जिसके आने वाले श्रावणी मेला के दौरान उत्पन्न होने की संभावना है।

5. प्रत्यर्थी सं॰ 4 की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने निवेदन किया कि वर्तमान याचिका पोषणीय नहीं है क्योंकि प्रत्यर्थी सं॰ 4 इस कारण से पूजा करता रहा है कि उसे श्याम बिहारी मिश्रा के कानूनी वारिसों की दृष्टि में अखिल भारतीय आध्यात्मिक उत्थान मंडल न्यास द्वारा नियुक्त किया गया है तथा अखिल भारतीय आध्यात्मिक उत्थान मंडल न्यास को मंदिर का प्रबन्ध करने हेतु सशक्त बनाया गया है। यह भी निवेदन किया गया है कि DC, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित आदेश के साथ हस्तक्षेप किये जाने की आवश्यकता ही नहीं है।

6. प्रत्यर्थी–मध्यक्षेपी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उसे पक्षकारों के बीच मौजूद विवाद से कुछ लेना–देना नहीं है। तथापि, एक यथोचित आदेश पारित किया जाना चाहिए ताकि वह कार्य किसी भी ढ़ंग से बाधित न हो जो प्रत्यर्थी–मध्यक्षेपी को सुपुर्द किया गया है।

7. पक्षकारों के पूर्वोक्त प्रतिद्वंद्वी निवेदनों पर विचार करते हुए तथा आक्षेपित आदेश एवं अभिलेख पर मौजूद अन्य सामग्रियों के भी परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि याची उपायुक्त, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 2.11.2012 के आदेश से व्यथित एवं असंतुष्ट होने के कारण इस न्यायालय के पास आया है, वहां पर विद्यमान विधि व्यवस्था की स्थिति को ध्यान में रखते हुए उक्त आदेश पारित

किया गया है। उपायुक्त ने इस आदेश को पारित किया है और तद्द्वारा वहां पर व्यवस्था की देखभाल करने तथा विधि व्यवस्था बनाये रखने के लिए SDJM के नेतृत्व वाली एक समिति नियुक्त किया है एवं SDO, पोराहट, चक्रधरपुर को भी उक्त मेला की व्यवस्था की देखभाल करने का निर्देश दिया गया है। अतएव, वर्तमान याची तथा प्रत्यर्थी सं॰ 4 के आपसी विवाद का उपायुक्त, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित आदेश के साथ कोई लेना देना नहीं है, जो वर्तमान याचिका में चुनौती के अधीन है। जहां तक उक्त मंदिर न्यास में अधिकार, अभिधान तथा हित के संबंध में याची की व्यथा का सवाल है, इसे विधि के अनुसार उपयुक्त मंच/प्राधिकार के समक्ष जिरह किये जाने की आवश्यकता है।

8. वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में, वर्तमान याची द्वारा दाखिल रिट याचिका पोषणीय नहीं है क्योंकि उपायुक्त द्वारा पारित आदेश के साथ किसी भी ढ़ंग से हस्तक्षेप किये जाने की आवश्यकता नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किये गये तथा निर्दिष्ट निर्णय वर्तमान मामले में प्रासंगिक नहीं हैं क्योंकि ये न्यास के प्रबंधन के संबंध में अधिकार, अभिधान एवं हित से जुड़े हुए हैं। याची मंदिर के न्यास में अपने अधिकार एवं दावे के संबंध में यथोचित उपचार का इस्तेमाल कर सकता है जो विधि के अधीन उपलब्ध है। श्रावणी मेला के दौरान विधि व्यवस्था बनाये रखने के लिए उपायुक्त आवश्यक व्यवस्था सुनिश्चित करेंगे। SDO तथा SDJM तीर्थ यात्रियों के व्यवस्था के लिए भी आवश्यक कदम उठायेंगे जो श्रावणी मेला के दौरान मंदिर का दौरा करते हैं।

9. पूर्वोक्त संपरीक्षणों एवं निर्देशों के साथ, उपायुक्त, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 2.11. 2012 के आदेश के साथ हस्तक्षेप किये बिना वर्तमान रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî ilkn] U;k;efr

नरेश कुमार

cuke

झारखंड राज्य, आरक्षी अधीक्षक, निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No. 1329 of 2009. Decided on 8th March, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 468, 471, 477-A सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(d) एवं 13(2)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं कूटरचना—संज्ञान—समिति के पक्ष में अभिकथित रूप से नामान्तरण का अवैधानिक आदेश पारित—याची अंचलाधिकारी था और उसने SDO द्वारा पारित आदेश पर कार्रवाई किया था—जब याची ने अपने पदाधिकारी के निर्देश पर कार्य किया था, भा॰दं॰सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध आकर्षित नहीं हो सकता—याची के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन कोई अपराध आकर्षित नहीं होता है क्योंकि याची पर कभी भी मौद्रिक लाभों को ध्यान में रखकर भ्रष्ट परिपाटियों को अपनाने का आरोप नहीं लगाया गया है—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 13 से 18)

अधिवक्तागण.—Mr. Sujit Narayan Prasad, For the Petitioner; Mr. Nilesh Kumar, For the Vigilance.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 1738 वर्ष 2012

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता तथा निगरानी के विद्वान अधिवक्ता को अंतर्वर्ती आवेदन पर सुना।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रारंभ में प्रथम सूचना रिपोर्ट को अभिखंडित करने के लिए यह आवेदन दाखिल किया गया था परन्तु, बाद मे, इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान न्यायालय ने अभियोग पत्र प्रस्तुत किये जाने पर दिनांक 25.10.2010 के आदेश से याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 469, 471, 120-B, 109, 201, 423, 424, 477-A तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 13(1)(d) सह पठित धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए संज्ञान लिया था जिसे इस अंतर्वर्ती आवेदन द्वारा चुनौती दी गयी है।

3. इस अंतर्वर्ती आवेदन में किया गया आग्रह एतद द्वारा अनुज्ञात किया जाता है। यह अंतर्वर्ती आवेदन मुख्य आवेदन का हिस्सा बनेगा।

4. I.A. सं॰ 1738 वर्ष 2012 निस्तारित किया जाता है।

दांडिक विविध याचिका सं॰ 1329 वर्ष 2009

5. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा निगरानी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

6. प्रारंभ में निगरानी पुलिस थाना केस सं॰ 26 वर्ष 2000 (विशेष केस सं॰ 13 वर्ष 2000) की प्रथम सूचना रिपोर्ट को अभिखंडित करने के लिए यह मामला दाखिल किया गया था। बाद में, दिनांक 25.10.2010 के आदेश, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 469, 471, 120-B, 109, 201, 423, 424, 477-A तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह पठित धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए याची के विरुद्ध संज्ञान लिया गया है, को भी अंतर्वर्ती आवेदन के माध्यम से चुनौती दी गयी थी।

7. जैसा कि प्राथमिकी से प्रतीत होता है अभियोजन का मामला यह है कि ग्राम बारगईन, पुलिस थाना, बरियातु, रांची में अवस्थित खाता सं॰ 140, प्लॉट सं॰ 1114 से सम्बद्ध 113.5 एकड़ जमीन के कतिपय टुकड़े यद्यपि गैर मजरूआ खास जमीन के तौर पर अभिलिखित किये गये हैं, परन्तु 20 व्यक्तियों के नाम से 103.84 एकड़ जमीन के संबंध में जमाबंदी खोल दी गयी है। बाद में, अपर समाहर्ता ने विविध केस सं॰ 19 वर्ष 1992-93 में पारित अपने आदेश द्वारा उस जमाबंदी को रद्द कर दिया था जो इन व्यक्तियों के नाम थी।

8. आगे मामला यह है कि 113.5 एकड़ माप वाली उक्त जमीन में से, कृष्णांचल लाल गृह निर्माण सहयोग समिति ने मो॰ सुलेमान से वर्ष 1984 में तीन विक्रय विलेखों के माध्यम से 7.5 एकड़ जमीन खरीदी थी जिसने सादा हुक्म नामा के माध्यम से इस पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित का दावा किया था। जमीन खरीदने के उपरांत, उसके नाम से जमाबंदी खोलने के लिए तत्कालीन SDO, पी॰ एन॰ राय के समक्ष एक आवेदन दाखिल किया गया था, परन्तु यह अभिनिर्धारित करने के उपरांत वह आग्रह ठुकरा दिया गया था कि आवेदन के नाम जमाबंदी तभी खोली जा सकती है जब पहले विक्रेता के नाम जमाबंदी खोली जाए। तत्पश्चात् 14.7.1986 को, गृह निर्माण सहयोग समिति के सचिव ने अंचलाधिकारी, रांची के समक्ष एक अन्य आवेदन दाखिल किया था, जिसमें समिति के नाम जमाबंदी खोलने के लिए यही आग्रह किया गया था। ऐसे आवेदन पर, केस सं॰ 16 वर्ष 1986-87 दर्ज किया

गया था तथा हल्का कर्मचारी एवं अंचलाधिकारी ने समिति के नाम एक जमाबंदी खोलने की अनुशंसा करनेवाली एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। तदनुसार, रांची के तत्कालीन SDO ने 20.10.1986 को एक आदेश पारित किया था जिसके द्वारा समिति के नाम एक जमाबंदी खोलने का आदेश किया गया था।

9. अभियोजन का आगे मामला यह है कि जब SDO को समिति के नाम से जमाबंदी खोलने का एक आदेश पारित करने से अपने द्वारा कारित अवैधानिकता के बारे में जानकारी हुई थी, उन्होंने दिनांक 27.7.1988 के अपने आदेश से पिछला आदेश रद्द कर दिया था। इसी समय, इस संबंध में जांच पड़ताल करने के लिए LRDC को निर्देश दिया गया था। यह जाँच अंचल निरीक्षक को सौंपी गयी थी जिसने जांच पड़ताल करने के उपरांत अपनी रिपोर्ट इस याची को सौंप दी थी, जिसने इसे सीधे LRDC को अग्रसारित कर दिया था और फिर LRDC ने SDO, राणा अवधेश सिंह के साथ वह रिपोर्ट प्रस्तुत कर दिया था जो श्री प्रफुल्ल कुमार सिंह नामक पिछले SDO के उत्तराधिकारी थे। ऐसी रिपोर्ट के प्राप्ति पर, SDO ने आदेश पारित किया था कि जमाबंदी उचित रूप से 20.10.1986 के आदेश से खोली गयी थी। ऐसा आदेश पारित करने पर, उस आदेश पर कार्यवाही करने तथा भू-धारकों को किराये की रसीद निर्गत करने का निर्देश याची को दिया गया था। ऐसे निर्देश पर याची ने समिति के पक्ष में नामान्तरण से संबंधित आदेश पारित करने के उपरांत किराये की रसीद निर्गत कर दिया था।

10. ऐसे अभिकथन पर, इस याची समेत कई व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 469, 471, 120-B, 109, 201, 423, 424, 477-A तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह पठित धारा 13(2) के अधीन भी दंडणीय अपराधों के लिए निगरानी द्वारा निगरानी पुलिस थाना केस सं० 26 वर्ष 2000 (विशेष केस सं० 13 वर्ष 2000) के तौर पर एक मामला दर्ज किया गया था। अपराध का अभियोग पत्र प्रस्तुत किये जाने के उपरांत यथा पूर्वोक्त अपराधों का संज्ञान लिया गया था जो इस आवेदन में चुनौती के अधीन है।

11. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री सुजीत नारायण प्रसाद निवेदन करते हैं कि अभियोजन के मामले से यह बिल्कुल प्रकट है कि तत्कालीन SDO ने पहले समिति के नाम जमाबंदी खोलने के लिए एक आदेश पारित किया था परन्तु, बाद में, उन्होंने वह आदेश रद्द कर दिया था तथा जांच करने के लिए एक आदेश पारित किया था। यह जांच अंचल निरीक्षक को सौंप दी गयी थी, जिसने जांच करने के उपरांत, इस याची को रिपोर्ट सौंप दी थी, जिसने इसे सीधे LRDC को अग्रसारित कर दिया था तथा जब LRDC ने वह रिपोर्ट SDO राणा अवधेश सिंह को अग्रसारित की थी, जो उस समय तक पिछले SDO के उत्तराधिकारी बन चुके थे, तो उन्होंने इस प्रभाव का एक आदेश पारित किया था कि दिनांक 20.10.1986 का आदेश उचित रूप से पारित किया गया था जिसके परिणामत: समिति के नाम जमाबंदी खोली गयी थी और याची को किराये की रसीद निर्गत करने का निर्देश दिया गया था और, अतएव, यह प्रकट है कि इस याची ने केवल अपने उच्चतर पदाधिकारी के आदेश का अनुपालन किया था, और, तद्द्वारा, उसे ऐसा कोई अपराध कारित करने वाला नहीं कहा जा सकता जिसके अधीन संज्ञान लिया गया है। बाद में, जब याची को शिकायत प्राप्त हुई थी, उसने जांच किया था और जांच करने के उपरांत, उसने इस समिति के नाम तैयार की गयी जमाबंदी रद्द करने की अनुशंसा से युक्त एक रिपोर्ट प्रस्तुत किया था। तदनुसार, अपर समाहर्ता ने 23.6.1993 को जमाबंदी रद्द कर दिया था और तद्द्वारा, जमीन का कब्जा ले लिया था और, अतएव, समिति ने कभी भी अपने पक्ष में जमाबंदी खोले जाने के संबंध में पारित पिछले आदेश का कोई लाभ नहीं लिया था।

12. यह निवेदन भी किया गया था कि याची के विरुद्ध लगाये गये समूचे अभिकथन को सही मानने पर याची को न तो कूटरचना, छल और न ही भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह

पठित धारा 13(2) के अधीन कोई अपराध कारित करने वाला कहा जा सकता है और, अतएव, याची के विरुद्ध कार्यवाही का जारी रहना विधि के आदेशिका के दुरूपयोग के तुल्य है।

13. इसके विरुद्ध, निगरानी की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता श्री निलेश कुमार निवेदन करते हैं कि जब अंचल निरीक्षक ने इस याची को रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, उसने वह रिपोर्ट उस पर कोई टिप्पणी किये बिना LRDC को अग्रसारित कर दिया था यद्यपि याची को इस तथ्य की बिल्कुल जानकारी थी कि जमीन, जो अंतरित की गयी है, एक गैर मजरूआ जमीन रही है जिसके लिए अंतरिति के नाम से जमाबंदी नहीं खोली जा सकती थी और, तद्द्वारा, इस याची ने SDO राणा अवधेश सिंह, जो पिछले SDO, श्री पी० के० सिंह के बाद आये थे, समेत अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ मिली भगत करके निश्चित रूप से अपराध कारित किया था जिसके अधीन संज्ञान लिया गया है और राज्य का पक्ष इस तथ्य से सम्पुष्ट होता है कि जब जमाबंदी रद्द की गयी थी जमीन का कब्जा बिहार राज्य द्वारा लिया गया था और जब इसे चुनौती दी गयी थी, उस पदाधिकारी द्वारा पारित आदेश अक्षत बना रहा था।

14. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं की सुनवाई करके, यह स्वीकृत स्थिति है कि इस याची, जो सुसंगत समय पर अंचलाधिकारी के तौर पर पदस्थापित था, ने LRDC को अंचल निरीक्षक की एक रिपोर्ट अग्रसारित किया था और इसके बाद LRDC ने वह पत्र SDO को अग्रसारित कर दिया था, जिसने इस प्रभाव का एक आदेश पारित किया था कि 20.10.1986 को पद पर बने रहते हुए उसके पूर्वाधिकारी द्वारा पारित आदेश बिल्कुल न्यायसंगत था तथा ऐसा आदेश पारित करने के उपरांत, उसने याची को जमीन के मालिक को किराये के रसीद निर्गत करने का निर्देश दिया था। याची के मामले के अनुसार, इसने इस पर कार्यवाही किया था तथा किराये की रसीद निर्गत कर दिया था। ऐसी परिस्थिति में, मैं इस संबंध में समझने में असमर्थ हूँ कि किस प्रकार याची ने छल एवं कूट रचना का भी अपराध कारित करने के लिए अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ मिली भगत किया था।

15. इसके अतिरिक्त यह भी मेरी समझ से बाहर है कि किस प्रकार भा०दं०सं० की धारा 420 के अधीन अपराध आकर्षित होता है जब याची ने अपने पदाधिकारी के आदेश पर कार्य किया था। इसके अतिरिक्त, अभिकथन को प्रकट रूप में देखने पर याची को कभी भी भा०दं०सं० की धाराओं 423 एवं 424 के अधीन अपराध करने वाला नहीं कहा जा सकता क्योंकि पूर्वोक्त धाराओं के अधीन अपराध प्रतिफल के झूठे कथन से अंतर्विष्ट अंतरण विलेख के कपटपूर्ण या जालसाजी से भरे निष्पादन या सम्पत्ति के छिपाये जाने से संबंधित है जो अभियोजन का कभी भी मामला नहीं रहा था।

16. मामले में और आगे जाने पर, मैं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) के अधीन कोई अपराध आकर्षित होते हुए नहीं पाता हूँ चूंकि याची पर कभी भी यह अभिकथन नहीं लगाया है कि उसने भ्रष्ट आचरण या अवैधानिक उपाय अपनाकर मौद्रिक लाभों/बहुमूल्य वस्तु के लिए किराये की रसीद निर्गत करने का आदेश पारित किया था, और, अतएव, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह-पठित धारा 13(2) के अधीन अपराध का गठन करने वाले अनिवार्य घटक पूर्णतः अनुपस्थित हैं।

17. इन परिस्थितियों के अधीन, संज्ञान लेने वाले दिनांक 25.10.2010 के आदेश समेत निगरानी पुलिस थाना केस सं० 26 वर्ष 2000 (विशेष केस सं० 13 वर्ष 2000) की समूची दांडिक कार्यवाही एतद द्वारा अभिखंडित की जाती है।

18. परिणामतः, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

अरविंद कुमार झा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 6035 of 2007. Decided on 1st March, 2013.

सार्वजनिक भूमि अतिक्रमण अधिनियम, 1956—धारा 3—अतिक्रमण का हटाया जाना—अतिक्रमण मामले में पारित आदेश की इस आधार पर आलोचना की गयी कि याचीगण प्रश्नाधीन जमीन पर पिछले 25 से 30 वर्षों से रह रहे हैं—वर्ष 2006 में अंचलाधिकारी द्वारा पारित आदेश में जबकि एक जगह उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया है कि वर्तमान याचीगण समेत सम्बद्ध व्यक्तियों के विरुद्ध सकारात्मक आदेश पारित किये जाने की आवश्यकता नहीं है परन्तु आगे यह सम्परीक्षित किया कि RMA मामले में पारित आदेश वर्तमान याचीगण पर स्वतः लागू हो जाएगा और उनके मामले को संचालित करेगा जो विधि में असमर्थनीय है—अंचलाधिकारी के पास याचीगण को जाने की स्वतंत्रता के साथ आक्षेपित आदेश निरस्त। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.—Mr. Rajiv Ranjan, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar Mahtha, For the Respondents.

आदेश

पक्षकारों के अधिवक्ता को सुना।

2. याचीगण ने दोनों मामलों में क्रमशः अतिक्रमण सं॰ 2/06-07 तथा 3/06-07 में दिनांक 7.9.2006 के आदेश का निरस्तीकरण इप्सित करते हुए रिट याचिकाएं दाखिल की है, जो कथित रूप से W.P. (PIL) सं॰ 2309 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 16.7.2006 के आदेश के अनुसरण में प्रारंभ किये गये हैं।

3. याचीगण की ओर से यह निवेदन किया गया है कि वे उन 14 व्यक्तियों में से है जिन्हें उक्त सार्वजनिक भूमि अतिक्रमण मामलों में नोटिसें निर्गत की गयी थी परन्तु दिनांक 7.9.2006 के आदेश द्वारा अंचलाधिकारी ने अभिलिखित किया था कि R.M.A. केस सं॰ 2/06-07 में उपायुक्त, गोड्डा के समक्ष एक अपील में पारित आदेश के निबंधनों में वर्तमान मामले में अंतर्ग्रस्त मुद्दे संचालित होने हैं।

4. याचीगण की ओर से यह तर्क दिया गया है कि उक्त अतिक्रमण मामलों में पारित दिनांक 7.6.2006 के आदेश के विरुद्ध अन्य दो व्यक्तियों पूरण साह एवं सुशील साह द्वारा R.M.A. केस सं॰ 2/06-07 दाखिल किया गया था। तथापि, 10 अन्य के साथ वर्तमान याचीगण का मामला अलग कर दिया गया था और उक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कोई बाध्यकारी कार्रवाई किये बिना इन 12 व्यक्तियों के संबंध में दिनांक 7.9.2006 का एक आदेश पारित किया गया था, उक्त आदेश में यह संपरीक्षित करते हुए कि वर्तमान याचीगण समेत उसमें नामजद व्यक्तियों को प्रश्नाधीन जमीन पर बाहरी दीवार के साथ पक्के घरों का निर्माण करके पिछले 25-30 वर्षों से निवास करता हुआ दर्शाया गया है। उक्त आदेश में यह भी सम्परीक्षित किया गया था कि अन्य मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश भी पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत किये गये थे। तथापि, अंचलाधिकारी ने सम्परीक्षित किया है कि वर्तमान मामले का भाग उससे संचालित होगा कि RMA केस सं॰ 2/06-07 में उपायुक्त द्वारा निर्णित किया जाना है। अतएव, याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मूल प्राधिकार के पास याची के विरुद्ध कार्यवाही करने का

कारण नहीं था, परन्तु उपायुक्त ने RMA केस सं॰ 2/06-07 में पारित दिनांक 7.6.2006 के एक अन्य आदेश में इन याचीगण द्वारा नहीं, बल्कि दो अन्य व्यक्तियों द्वारा दाखिल एक पृथक अपील में अभिनिर्धारित किया है कि अभिकथित अतिक्रमण के संबंध में जांच रिपोर्ट सही है और उसके अनुसरण में अतिक्रमण हटाया जाना आवश्यक था। यह निवेदन किया गया है कि इसके परिणामत: दोनों पक्षकार उक्त अपील में उपायुक्त के समक्ष पक्षकार नहीं थे और अभिकथित अतिक्रमण हटाने के लिए अंचलाधिकारी द्वारा कोई अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया था, यद्यपि उन्हें उपायुक्त द्वारा पारित दिनांक 19.9.2006 के आदेश से आबद्ध माना गया है जहां उन्हें अपने आप को बचाने का कोई अवसर प्राप्त नहीं हुआ था। यह भी निर्दिष्ट किया गया है कि WP (PIL) सं॰ 2093 वर्ष 2005 में पारित आदेश की अभिकथित अवज्ञा के लिए अवमान (सिविल) सं॰ 230 वर्ष 2007) कार्यवाही का अनुसरण किया जा रहा था जिसमें 7.12.2007 को विपक्षी-उपायुक्त की ओर से कारणपृच्छा दाखिल किया गया था। उक्त कारणपृच्छा के पैरा 8 में यह कथन किया गया है कि पुराने नाले के अभिकथित अतिक्रमण के लिए 14 व्यक्तियों के विरुद्ध अतिक्रमण कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी तथा RMA केस सं॰ 2/06-07 में उक्त व्यक्तियों को अतिक्रमणकर्ता घोषित किया गया है। तथापि, पैरा 9 एवं 10 में यह कथन किया गया है कि व्यक्तिगत रूप से मौके पर निरीक्षण करने पर उत्तरदाता विपक्षी-उपायुक्त ने पाया था कि अंतिम सर्वेक्षण 'गंतजर' में विवादित जमीन 'दनर' के तौर पर अभिलिखित की गयी है परन्तु भौतिक रूप से उक्त स्थान पर कोई ऐसा दनर विद्यमान नहीं है। ऐसे नाले में कोई प्रवेश या निकासी बिन्दु विद्यमान नहीं पाया गया है। यह भी कथन किया गया है कि प्लॉट सं॰ 8 समेत इस क्षेत्र पर कई पक्के घर खड़े पाये गये हैं तथा मौखिक रूप से पूछताछ करने पर स्थानीय लोगों ने निवेदन किया कि उक्त स्थान में कोई नाला नहीं था बल्कि उस समय मौजूद विद्यमान बनाली जायदाद के बगीचा के सिंचाई के उद्देश्य के लिए केवल अस्थायी मार्ग निर्मित किया गया था। तथापि, त्रुटिपूर्ण रूप से उक्त अस्थायी स्रोत सर्वेक्षण अभिलेख में दनर के तौर पर अभिलिखित कर लिया गया था। याची के अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि प्रश्नाधीन जमीन, जिसे कारणपृच्छा के उक्त पैरा में निर्दिष्ट किया गया है, जमीन का वही प्लॉट है जहां याचीगण अब तक 3 से अधिक दशकों से उक्त प्लॉट सं॰ 8 पर निवास कर रहे हैं। यह भी निवेदन किया गया है कि प्लॉट सं॰ 6 एवं 7 प्लॉट सं॰ 8 से सटे हुए हैं, जिन्हें 1969 PLJR 373 में रिपोर्ट किये गये **CWJC सं॰ 738 वर्ष 1967** में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में रैयती जमीन घोषित कर दिया गया हैं। मामले की इस दृष्टि में, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि प्रश्नाधीन प्लॉट सं॰ 8 पर निर्मित अपने घरों में याचीगण निवास कर रहे हैं और आज तक किसी बाध्यकर कार्यवाही की उन्हें धमकी नहीं दी गयी है परन्तु RMA केस सं॰ 2/06-07 में पारित आदेश अभी भी याचीगण के विरुद्ध प्रकट रूप से खड़ा है यद्यपि वे उक्त अपील में कभी भी पक्षकार नहीं थे तथा उक्त अपील के निष्कर्षों में उन्हें कभी भी बचाव करने नहीं दिया गया था।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण ने निवेदन किया कि याचीगण को मामले पर पुनर्विचार के लिए सक्षम प्राधिकार को पास जाने की अनुमति देनी चाहिए क्योंकि याचीगण दावा करते हैं कि वे प्रश्नाधीन अपील में उपस्थित नहीं हुए हैं, जो कथित रूप से उन्हें प्रभावित करती है। अवमान (सिविल) सं॰ 230 वर्ष 2007 में उपायुक्त द्वारा दाखिल कारणपृच्छा आज न्यायालय में प्रस्तुत की गयी है तथा अभिलेख पर रखी गयी है। उक्त कारणपृच्छा से यह प्रतीत होता है कि RMA सं॰ 2/06-07 में पारित आदेश के अनुसरण में अभिकथित अतिक्रमण हटा लिया गया है। तथापि, याचीगण दावा करते हैं कि वे उक्त अपील में कभी भी एक पक्षकार नहीं थे परन्तु जांच रिपोर्ट से संबंधित अपील में किये गये संपरीक्षण की दृष्टि में प्रभावित होते हैं जिसके अंतर्गत अभिकथित अतिक्रमण को सही पाया गया था। यह निवेदन किया गया है कि उक्त कारणपृच्छा के दाखिले के उपरांत 8.2.2008 को उक्त अवमान मामला इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा हटा लिया गया है।

6. यह भी प्रतीत होता है कि अंचलाधिकारी द्वारा दिनांक 7.9.2006 का एक आदेश पारित किया गया था, जहां उन्होंने एक ओर अभिनिर्धारित किया है कि वर्तमान याचीगण समेत सम्बद्ध व्यक्तियों के विरुद्ध कोई सकारात्मक आदेश पारित किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी परन्तु आगे यह सम्परीक्षित किया था कि RMA केस सं॰ 2/06-07 में पारित आदेश अपने आप वर्तमान याचीगण पर लागू होगा और उनके मामले को संचालित करेगा जो, तथापि, विधि में समर्थनीय नहीं है।

7. मामले की उस दृष्टि में, प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा पारित दिनांक 7.9.2006 के आदेश का वह हिस्सा तदनुसार निरस्त किया जाता है। तथापि, याचीगण को अपने समर्थन में ऐसे सारे तथ्यों एवं दस्तावेजों के साथ अंचलाधिकारी, गोडडा के समक्ष हाजिर होने की स्वतंत्रता है, जो पक्षकारों की सुनवाई करेंगे और, तत्पश्चात्, विधि के अनुसार एक युक्तियुक्त आदेश पारित करेंगे।

8. तदनुसार, दोनों रिट याचिकाएं निस्तारित की जाती हैं।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

उपेन्द्र पासवान

cuke

झारखंड राज्य

I.A. Nos. 1646 of 2012 In Cr. Appeal (DB) No. 905 of 2009. Decided on 4th March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–कई हत्याओं के लिए दोषसिद्धि–आजीवन कारावास–आवेदक एक से अधिक मामलों में अंतर्ग्रस्त है–अभियोजन का मामला एक से अधिक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है–गवाहों ने तीन व्यक्तियों की हत्या कारित करने में अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है–अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है–अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और आवेदक का अपराध में अंतर्ग्रस्तता का तरीका और साथ-साथ इस तथ्य कि पहले भी दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था, की दृष्टि में न्यायालय आवेदक को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. S.K. Murari, For the Appellant; A.P.P., For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन वर्तमान आवेदक (मूल अपीलार्थी) को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल किया गया है। वर्तमान आवेदक को विशेष केस सं॰ 1 वर्ष 2002 (P) में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148, 307/149, 302/149, 333/149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विद्वान न्यायिक आयुक्त, राँची-सह-विशेष न्यायाधीश, पोटा द्वारा दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया है और वर्तमान आवेदक को पोटा की धाराओं 3 (2), 3 (5), 4(a) (b) और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17 के अधीन अपराध करने का भी दोषी पाया है एवं उसे भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराध हेतु दण्डित किया गया है एवं उसे पोटा की धारा 3(2) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास भी दिया गया है और समस्त दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया है। इस मामले में इस आवेदक के विरुद्ध तीन हत्या कारित करने का अभिकथन है।

2. हमने विशेष केस सं॰ 1 वर्ष 2002 (P) के अभिलेख और कार्यवाही का परिशीलन किया है और विस्तारपूर्वक विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

3. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को देखते हुए इस आवेदक (मूल अपीलार्थी) के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि इस मामले में इस आवेदक के विरुद्ध हत्या कारित करने का अभिकथन है:–

(a) jke ljr flag ,o

(b) jkepn jke ,o

(c) Kku nkl fetA

4. घटना दिनांक 31 दिसंबर, 2001 को सायं लगभग 6.50 बजे हुई थी। प्राथमिकी तुरन्त दिनांक 1 जनवरी, 2002 को दाखिल की गयी थी, जिसमें इस आवेदक को नामित किया गया था। आरंभ में यह आवेदक परिप्रश्न के लिए अथवा अन्वेषण के लिए उपलब्ध नहीं था। आवेदक को किसी अन्य मामले में गिरफ्तार किया गया था जो हुसैनाबाद पुलिस थाना केस सं॰ 85 वर्ष 2001 के रूप में दर्ज है और तत्पश्चात इस मामले के लिए उसे रिमांड पर लिया गया था।

5. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से आगे यह प्रतीत होता है कि आवेदक एक से अधिक मामले में अंतर्ग्रस्त है। हुसैनाबाद मामला भी सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम के अधीन है अर्थात् प्रतिबंधित संगठन का सदस्य होने के नाते। अभियोजन का वर्तमान मामला एक से अधिक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो 'अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 6 हैं। इन चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य प्रदर्श 7 द्वारा पर्याप्त संपुष्टि पा रहा है जिसे आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002 की धारा 32 की उपधारा 2 के अधीन दर्ज किया गया है जिसे अ॰ सा॰ 2 जो आरक्षी अधीक्षक, जिला पलामू है द्वारा सिद्ध किया गया है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 8, अ॰ सा॰ 9 और अ॰ सा॰ 10 द्वारा दिए गए साक्ष्य की पर्याप्त संपुष्टि भी की गयी है। इस प्रकार, अभिलेख पर इन साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उन्होंने तीन व्यक्तियों की हत्या कारित करने में इस आवेदक द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 1 घायल चश्मदीद गवाह है और उसने घटना के दौरान उपहतियाँ भी प्राप्त किया है।

6. अभिलेख पर इन साक्ष्यों को देखते हुए इस आवेदक (मूल अपीलार्थी) के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें वर्तमान आवेदक अपराध में अंतर्ग्रस्त है जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए और यह भी ध्यान में रखते हुए कि पूर्व अवसर इस आवेदक की दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना इस न्यायालय द्वारा दिनांक 17 अगस्त, 2010 के आदेश के तहत स्वीकार नहीं की गयी थी और इस तथ्य को भी ध्यान में रखते हुए कि दंडादेश के निलंबन की पूर्व प्रार्थना को अस्वीकार किए जाने के बाद परिस्थिति में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ है, हम विचारण न्यायालय द्वारा इस आवेदक को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। इस अंतर्वर्ती आवेदन में कोई सार नहीं है, अत: इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

कमल शेख एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 2041 of 2012. Decided on 19th March, 2013.

विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908—धाराएँ 4, 5 एवं 6—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—विस्फोट प्रेरकों की बरामदगी–विस्फोट प्रेरक गोला बारुद वर्गों में से एक है एवं यह ऐसा गोला-बारुद है जो स्वयं अपना प्रज्जवलन दाग प्रणाली का साधन अंतर्विष्ट करता है–कोई सामग्री, एप्रेटस, मशीन, आदि जो स्वयं विस्फोट कारित करने में सक्षम है अथवा किसी विस्फोटक पदार्थ की मदद से विस्फोट कारित करता है, विस्फोटक पदार्थ की परिभाषा के अंतर्गत आएगा–विस्फोट प्रेरक वैसा पदार्थ नहीं है जो स्वयं विस्फोट कारित करता है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया और संज्ञान के बिंदु पर नया आदेश पारित करने के लिए मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा गया। (पैराएँ 12, 16 से 19)

निर्णयज विधि.–2004(3) East Cr. C 226 (SC)—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Gautam Kumar, For the Petitioners; Mr. Moti Gope, For the State.

आदेश

यह आवेदन जसीडीह पी॰ एस॰ केस सं॰ 140 वर्ष 2012 (जी॰ आर॰ सं॰ 631 वर्ष 2012) में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, देवघर द्वारा पारित दिनांक 4.8.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धाराओं 4, 5, 6 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि जब जसीडीह पुलिस थाना के प्रभारी-अधिकारी को गुप्त सूचना मिली कि दो व्यक्ति जसीडीह और दुमका के बीच चलाए जा रहे पूजा बस नामक बस में विस्फोटक ले जा रहे हैं, उसने स्वयं बस अड्डा में रजिस्ट्रेशन सं॰ BR 12A 2201 वाले बस को पुलिस दल के साथ पकड़ लिया। तलाशी लिए जाने पर विस्फोट प्रेरकों के 80 बंडल कुल 4000 विस्फोट प्रेरक, अंतर्विष्ट करने वाले दो बैगों को सीट के नीचे पाया गया था जिस पर ये दोनों याचीगण बैठे हुए थे जिन्हें जब्त किया गया था और याचीगण को गिरफ्तार किया गया था। पूछताछ किए जाने पर याची सं॰ 1 कमल शेख ने प्रकट किया कि उसने 3000/- रुपयों की राशि का भुगतान करके किसी इशाक मियाँ से इन्हें खरीदा था और किसी उदय घोष को बेचने के लिए इन्हें ले जा रहा था।

3. ऐसे अभिकथन पर, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धाराओं 4, 5 एवं 6 के अधीन जसीडीह पी॰ एस॰ केस सं॰ 140 वर्ष 2012 दर्ज किया गया था।

4. अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया जिस पर याचीगण के विरुद्ध विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धाराओं 4, 5 तथा 6 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान दिनांक 4.8.2012 के आदेश के तहत लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

5. याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम कुमार ने 'विस्फोटक' परिभाषित करते हुए विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4 (d) में अंतर्विष्ट प्रावधान को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि विस्फोट प्रेरक विस्फोटक की कोटि के अंतर्गत आते हैं और इस प्रकार इसे अपने पास रखना विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4, 5 तथा 6 के अधीन अभियोजन का विषय वस्तु नहीं हो सकता है।

6. इस संबंध में यह निवेदन किया गया था कि विस्फोट प्रेरक वह पदार्थ नहीं है जो स्वयं विस्फोट कारित करता है बल्कि यह विस्फोटक यंत्र को ट्रिगर करने वाला यंत्र है जिसे रासायनिक, यांत्रिक अथवा विद्युत रूप से किया जाता है।

7. ऐसी स्थिति में यह विस्फोटक पदार्थ की परिभाषा के अधीन नहीं आएगा जैसा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 2 के अधीन परिभाषित किया गया है।

8. इस संबंध में यह इंगित किया गया था कि ऐसा एक मामला **लोपचंद नरुजी जाट एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य, 2004 (3) East Cr.C. 226 (SC),** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया था जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया था कि विस्फोट प्रेरक विस्फोटक की परिभाषा के अंतर्गत आएँगे जैसा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4 (d) के अधीन परिभाषित किया गया है।

9. इसके विरुद्ध, राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विस्फोट कारित करने के प्रयोजन से उपयोग किए जा रहे विस्फोट प्रेरक विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के अधीन परिभाषित विस्फोटक की परिभाषा के अंतर्गत आएँगे।

10. निवेदनों के संदर्भ में विस्फोटक अधिनियम की धारा 4 (d) के प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"4 (d) "foLQkVd** l vfHkçr g xu ikmMj] ukbVkfXy ljhu] ukbVkDykbdky] xudkVu] MhO ukbVk&VkY;u] fV&ukbVk&VkY;u] fidfjd ,flM] Mh&ukbVkQuky] fV&ukbVk fjlkfluky (fLVQfud ,flM)] lkbDyk&fVeefFkyhu&fV&ukbVkekbu] iVk,fjFkhVky&VVkukbVV] VfVy] ukbVk&xvkfuMkbu] yhM ,tkbM] yhM fjVQuV] Qyfeuv vFkok ejD;jh vFkok dkb vU; èkkr] fM;ktk&fM&ukbVkQuky] dyM Qk;l vFkok dkb vU; inkFk] pkg ,dy jklk;fud dikmM gk ;k inkFkk dk lfEeJ.k] pkg Bkl gk ;k rjy ;k xlh; ftldk mi;kx vFkok fuek.k foLQkV vFkok ikbjkVdfud bQDV }kjk 0;ogkfjd çHkko mRiUu dju dh nf"V l fd;k x;k g vkj Qkx flXuy] Qk;j oDl] ¶;t] jkdV] ijd'ku di] MhVkuVj] dkVfjt] çR;d o.ku dk xkyk ck#n vkj foLQkVd d çR;d ,MIV'ku vFkok çhij'ku dk lfEefyr djrk g tlk bl [kM e ifjHkkf"kr fd;k x;k gA**

11. विस्फोटक नियमावली के नियम 3 के मुताबिक विस्फोटकों को अनुसूची 1 में वर्गीकृत किया गया है। विस्फोटकों को आठ वर्गों में विभक्त किया गया है। वर्ग–6 प्रासंगिक है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

^^ox 6 xkyk&ck#n ox

*^^xkyk&ck#n** l vfHkçr g iokDr oxk e l dkb Hkh foLQkVd tc bl fdlh [kky vFkok dkUVkbol e lyXu fd;k x;k g vFkok vU;Fkk :ikrfjr ;k r;kj fd;k tkrk g rkfd ;g*

(a) NkV vL=k] rkik vFkok fdlh vU; gfFk;kj d fy, dkVfjt vFkok pkt] vFkok (b) CykLV dju d fy, vFkok lYl d fy, l¶Vh vFkok ¶;t] vFkok (c) foLQkVd nkxu d fy, V;c vFkok (d) Qk;jod l fHkUu ijd'ku di] MhVkuVj] Qkx flXuy] 'ky] Vkjihdk] okj jkdV vFkok fdlh vU; dkVhol dk fufer dj ldA

xkyk&ck#n ox d rhu fMfotu g vFkkr fMfotu 1, fMfotu 2 vkj fMfotu 3.

fMfotu 1 vuU; :i l (i) l¶Vh dkfVt] (ii) CykfLVx d fy, l¶Vh ¶;t] (iii) jyo flXuy vkj (iv) ijd'ku di l xfBr gkrk gA

fMfotu 2 ol xkyk&ck#n l xfBr gkrk g tk Lo; viu çTtoyu'khyrk dk lkèku vrfo"V ugh djrk g vkj fMfotu 1e lfEefyr ugh fd;k x;k g tl l¶Vh dkfVt l fHkUu NkV vL=k d fy, dkfVt] foLQkVd vkj jkdV nkxu d fy, V;c fdlh foLQkVd dk vrfo"V dju oky dkeu 'kYl vkj Vkjihdk d fy, pkt tk Lo; viuh çTtoyu'khyrk d lkèkuk dk vrfo"V ugh djr gA

*fMfotu 3 ol xkyk&ck#n l xfBr gkrk g tk Lo; viuh çTtoyu'khyrk d lkèkuk dk vrfo"V djrk g ft l fMfotu 1 e lfEefyr ugh fd;k x;k g t l CykfLVx d fy, MhVkuVl] ¶; t tk Lo; viuh çTtoyu'khyrk d lkèkuk dk vrfo"V djr g, foLQkVd nkxu d fy, l¶Vh¶; t] V;c ugh gA***

12. इस प्रकार, अभिव्यक्ति जिसे यहाँ ऊपर रेखांकित किया गया है, स्पष्टत: यह दर्शाता है कि विस्फोट प्रेरक गोला-बारुद के वर्गों में से एक है और यह ऐसा गोला-बारुद है जो स्वयं अपनी प्रज्जवलनशीलता के साधनों को अंतर्विष्ट करता है।

13. मामले के पूर्वोक्त पहलू को ध्यान में रखते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **लोपचंद नरुजी जाट एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य (ऊपर)** के मामले में अभिनिर्धारित किया कि विस्फोट प्रेरक विस्फोटक अधिनियम की धारा 4 (d) के निबंधनानुसार विस्फोटक है। वह मामला वैसा मामला था जिसमें एक व्यक्ति अधिनियम की धारा 9B (i) (b) के अधीन दोषसिद्ध किए जाने पर दंडित किया गया था पर सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष किया गया अभिवचन यह था कि विस्फोट प्रेरक विस्फोटक पदार्थों की कोटि के अंतर्गत आता है जिस निवेदन को विस्फोटक की परिभाषा, जैसा विस्फोटक अधिनियम की धारा 4 (d) के अधीन परिभाषित किया गया है और इसके वर्गीकरण की दृष्टि में स्वीकार नहीं किया गया था।

14. जहाँ तक इस निवेदन का संबंध है जिसे राज्य की ओर से किया गया है कि विस्फोट कारित करने के प्रयोजन से उपयोगित विस्फोट प्रेरक विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के अधीन परिभाषित विस्फोटक की परिभाषा के अंतर्गत आएगा, स्वीकार्य नहीं है।

15. विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 2 (a) का पठन निम्नलिखित है:-

*"2 (a) vfHk;fDr ^^foLQkVd inkFk** fdl h foLQkVd inkFk dk cuku d fy, fdl h lkexh dk lfEefyr dju okyh le>h tk,xh(bld vfrfjDr] fdl h foLQkVd inkFk d lkFk vFkok ble fdl h foLQkV dk dkfjr dju d fy, vFkok dkfjr dju e enn nu d fy, mi;kfxr vFkok mi;kx fd, tku d fy, vk'kf;r vFkok vudy cuk;k x;k dkb ,çVl] e'khu] blyheV vFkok lkexh vFkok ,l fdl h ,çVl] e'khu vFkok blyheV dk dkb Hkkx Hkh lfEefyr djrh gA***

16. पूर्वोक्त प्रावधान के सावधानीपूर्वक पठन पर यह पाया जाएगा कि किसी विस्फोटक पदार्थ को बनाने के लिए उपयोगित कोई सामग्री विस्फोटक पदार्थ की परिभाषा के अंतर्गत आएगी और इसके अतिरिक्त कोई एप्रेटस, मशीन, आदि जो किसी विस्फोट को कारित करने में सक्षम है अथवा इसमें मदद देती है, भी विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की परिभाषा के अंतर्गत आएगा। दूसरे शब्दों में, कोई सामग्री, एप्रेटस, मशीन, आदि जो स्वयं विस्फोट कारित करने में सक्षम है अथवा किसी विस्फोटक पदार्थ की मदद से विस्फोट कारित करती है, विस्फोटक पदार्थ की परिभाषा के अंतर्गत आएगी।

17. यहाँ वर्तमान मामले में जैसा ऊपर गौर किया गया है, विस्फोट प्रेरक वह पदार्थ कभी नहीं है जो स्वयं विस्फोट कारित करता है बल्कि यह विस्फोट यंत्र को ट्रिगर करने के लिए उपयोगित यंत्र है और इस यंत्र को विस्फोट की कोटि में रखा गया है जैसा विस्फोटक अधिनियम की धारा 4 (d) के अधीन परिभाषित किया गया है।

18. ऐसी स्थिति में, दिनांक 4.8.2012 का आदेश जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धाराओं 4, 5 एवं 6 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

19. किंतु, संज्ञान के बिंदु पर विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करने के लिए मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है।

20. इस प्रकार, यह आवेदन निपटाया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

भोला पासवान

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1578 of 2008. Decided on 10th January, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—जाति प्रमाण पत्र–अनुसूचित जाति प्रमाण पत्र प्रदान करने का दावा इस आधार पर अस्वीकार किया गया कि याची आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हुआ था–याची को बी॰ डी॰ ओ॰ चास, बोकारो द्वारा दिनांक 4.7.1992 को अनुसूचित जाति का प्रमाण पत्र प्रदान किया गया था–झारखंड राज्य के सृजन के बाद उक्त जाति प्रमाण पत्र को प्राधिकारियों द्वारा मान्यता नहीं दी गयी थी और नया जाति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए उसके आवेदन को ग्रहण नहीं किया जा रहा था–मूल राज्य के पुनर्गठन के कारण राज्य का परिवर्तन प्रवास नहीं है–याची अनुसूचित जाति से आने वाले व्यक्ति के रूप में माने जाने के लिए और प्रत्यर्थी से प्रमाण पत्र प्राप्त करने का हकदार है। (पैराएँ 5 से 7)

निर्णयज विधि.–W.P. (s) No. 3846/2010; (2004)9 SCC 4811—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Shresth Gautam, Sumantra Sinha, For the Petitioner; Mr. Piyush Chawla, For the State.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची अनुमंडलाधिकारी, बोकारो द्वारा जारी दिनांक 12 अप्रिल, 2007 के मेमो में अंतर्विष्ट आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा जाति प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए उसका आवेदन इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि वह जाति प्रमाण पत्र और खतियान की प्रति जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हुआ था। याची ने आक्षेपित आदेश के अभिखंडन पर याची की जाति जिससे वह आता है अर्थात् 'दुसाध', जो झारखंड राज्य में भी राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा अधिसूचित अनुसूचित जाति है, का प्रमाण पत्र जारी करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए पारिणामिक आदेश के लिए भी प्रार्थना की है।

2. याची के अनुसार, उसका पिता वर्ष 1971 से बोकारो स्टील प्लांट में नियोजित था और दिनांक 31 अगस्त, 2002 को बोकारो से सेवानिवृत्त हुआ था। याची का पिता थाना सं॰ 30 के अधीन आर॰ एस॰ भूखंड सं॰ 6701, मौजा चास में आवासीय गृह का स्वामी था जिसे उसने रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के माध्यम से दिनांक 19 जुलाई, 1978 को खरीदा था। याची का जन्म दिनांक 25 जून, 1976 को बोकारो में हुआ था और उसकी बहनों सहित उसका इस प्रभाव का प्रमाण पत्र स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (सेल) द्वारा दिनांक 22 दिसंबर, 2004 को जारी किया गया था। याची वर्ष 1982 में बी॰ एस॰ एल॰ हायर सेकंडरी स्कूल, सेक्टर IV बोकारो स्टील सिटी से बिहार विद्यालय परीक्षा बोर्ड से अपने माध्यमिक विद्यालय परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था और तत्पश्चात वर्ष 1994 में बोकारो से सीनियर स्कूल सर्टिफिकेट परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था। तत्पश्चात याची ने उत्कल विश्वविद्यालय के अधीन क्षेत्रीय शिक्षण संस्थान, राउरकेला से उच्चतर अध्ययन किया था। याची के अनुसार, पहले प्रखंड विकास अधिकारी, चास

द्वारा जाति प्रमाण पत्र जारी किया गया था जो दिनांक 4 जुलाई 1992 के परिशिष्ट–11 पर अंतर्विष्ट है जो उसे अनुसूचित जाति दुसाध के सदस्य के रूप में दर्शाता है।

3. याची पहले भी इस न्यायालय के पास आया था जब बिहार के मूल राज्य के विभाजन और झारखंड के उत्तरवर्ती राज्य के सृजन के बाद जाति प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए उसके अनुरोध पर बोकारो के प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा विचार नहीं किया गया था। उक्त रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ सं॰ 1126/07 को अनुमंडलाधिकारी, चास को याची के अभ्यावेदन पर विचार करने और अनुबंधित समय के भीतर समुचित आदेश पारित करने का निर्देश देते हुए निपटाया गया था और यदि यह पाया जाता है कि वह 'दुसाध' जाति से आता है जैसा उसने दावा किया है और जाति प्रमाण पत्र जारी करने में कोई रुकावट नहीं है, संबंधित प्रत्यर्थी अनुबंधित समय के भीतर उसके पक्ष में आवश्यक प्रमाण पत्र जारी करेगा। तत्पश्चात्, परिशिष्ट–15 के तहत अनुमंडलाधिकारी, चास (प्रत्यर्थी सं॰ 4) द्वारा जारी दिनांक 28 मार्च, 2007 की संसूचना द्वारा याची को अंचलाधिकारी/प्रखंड विकास अधिकारी द्वारा जारी नए जाति प्रमाण पत्र और खतियान की प्रति जैसे दस्तावेज को प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। तत्पश्चात याची ने इन समस्त तथ्यों का कथन करते हुए और उसके ध्यान में यह लाते हुए कि पहले दिनांक 4 जुलाई, 1992 को ही इसी जाति के लिए प्रखंड विकास अधिकारी द्वारा जाति प्रमाण पत्र जारी किया गया था, दिनांक 30 अप्रिल, 2007 को परिशिष्ट–16 के तहत अपना विस्तृत उत्तर दाखिल किया था, किंतु याची की ओर से कथन किया गया है कि उसने झारखंड राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों में व्याख्याता की नियुक्ति के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा संचालित चयन प्रक्रिया में भाग लिया था और जंतु शास्त्र में साहिबगंज महाविद्यालय, साहिबगंज में उसका चयन हुआ था और उसे नियुक्त किया गया था। सिधू–कान्हू मुर्मू विश्वविद्यालय, दुमका द्वारा जारी अधिसूचना सं॰ 91/08 की प्रति परिशिष्ट–19 के रूप में संलग्न की गयी है। याची के अनुसार, प्रत्यर्थी विश्वविद्यालय के प्राधिकारीगण प्रत्यर्थी सं॰ 5 से 7 होने के नाते जाति प्रमाण पत्र मांग रहे हैं जिसे दिनांक 12 अप्रिल, 2007 के परिशिष्ट–20 पर अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश द्वारा अवैध रूप से इस आधार पर देने से इनकार किया गया है कि वह दो दस्तावेजों अर्थात् जाति प्रमाण पत्र और खतियान की प्रति प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हुआ है। याची ने **मधु बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 3846 वर्ष 2010,** में दिए गए इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर विश्वास किया है। याची के अनुसार, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी दिनांक 22 अगस्त, 1985 के परिपत्र, जिस पर प्रत्यर्थीगण द्वारा अपने प्रति शपथ पत्र में विश्वास किया गया है, को इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा विचार में लिया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि उक्त निर्णय द्वारा इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने प्रत्यर्थीगण को संबंधित याची को, जिसका जन्म झारखंड राज्य के सृजन के पहले बोकारो में हुआ था और जो अनुसूचित जाति से आता था जिसे झारखंड राज्य में अधिसूचित किया गया है, जाति प्रमाण पत्र जारी करने का निर्देश दिया गया था। आगे, यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय ने निर्णय देते हुए बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के प्रावधानों और **सुधाकर विठल कुंभरे बनाम महाराष्ट्र राज्य (2004)9 SCC 481,** मामले में दिए गए निर्णय को यह अभिनिर्धारित करने के लिए ध्यान में लिया था कि यह प्रवास का मामला नहीं था बल्कि बिहार के मूल राज्य के द्वि–भाजन और झारखंड के नए राज्य के सृजन की ओर ले जाने वाले इसके पुनर्गठन के प्रशासनिक कारणों से सृजित स्थिति थी जिसे संबंधित व्यक्ति को उसकी जातिगत हैसियत से गैरहकदार नहीं बनाना चाहिए क्योंकि यह राष्ट्रपतिय अधिसूचना के मुताबिक उत्तरवर्ती राज्य में भी विद्यमान है।

4. प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए हैं और अपना प्रतिशपथपत्र दाखिल किया है जिसमें उन्होंने उसमें कथित कारणों से आक्षोपित आदेश जारी किए जाने को न्यायोचित ठहराया है और कार्मिक, प्रशासनिक सुधार और राजभाषा विभाग द्वारा क्रमश: 18 अक्टूबर, 2005 और दिनांक 29 अप्रिल, 2005 को जारी परिपत्रों, जिन्हें दिनांक 22 अगस्त, 1985 के पत्र के तहत गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांतों पर विश्वास करते हुए जारी किया गया था, पर भी विश्वास किया है। कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार द्वारा जारी उक्त संसूचना और पत्रों के मुताबिक, अनुसूचित जाति/जनजाति के व्यक्ति, जिन्होंने शिक्षा, रोजगार इप्सित करने के प्रयोजन से मूल राज्य से किसी अन्य राज्य में प्रवास किया है, मूल राज्य से और न कि उस राज्य से जहाँ उन्होंने प्रवास किया है, लाभ पाने के हकदार होंगे।

5. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों और इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए निर्णय का परिशीलन किया है। तथ्यों जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है से यह प्रतीत होता है कि याची का पिता वर्ष 1971 से वर्ष 2002 की अवधि तक बोकारो स्टील लिमिटेड का एक कर्मचारी था तथा 15.11.2000 को झारखंड राज्य के सृजन के उपरांत बोकारो स्टील प्लान्ट से सेवानिवृत्त हुआ था। याची का जन्म वर्ष 1976 में बोकारो में हुआ था और उस प्रभाव का प्रमाण पत्र स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड द्वारा जारी किया गया था जो परिशिष्ट–3 पर अंतर्विष्ट है। तत्पश्चात याची ने बोकारो से अपनी विद्यालय शिक्षा पूरी की थी और दिनांक 4 जुलाई, 1992 को प्रखंड विकास अधिकारी, चास, बोकारो द्वारा उसे अनुसूचित जाति 'दुसाध' का जाति प्रमाण पत्र प्रदान किया गया था। किंतु झारखंड राज्य के सृजन के बाद प्रत्यर्थीगण द्वारा उक्त जाति प्रमाण पत्र को मान्यता नहीं दी गयी थी और नया जाति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए उसके आवेदन को ग्रहण नहीं किया गया था अथवा इस पर विचार नहीं किया गया था जो उसे डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 1126/07 में और अवमान मामला (सिविल) सं॰ 476/07 के तहत अवमान आवेदन में इस न्यायालय की ओर ले गया। उस रिट याचिका को प्रत्यर्थीगण को अनुबंधित अवधि के भीतर विधि के अनुरुप निर्णय लेने के लिए और उसके पक्ष में जाति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए, यदि इसे जारी करने में कोई भी रूकावट नहीं है, निर्देश देते हुए निपटाया गया था। तत्पश्चात, दिनांक 12 अप्रिल, 2007 के आक्षेपित आदेश द्वारा उक्त प्रमाण पत्र इस आधार पर देने से इनकार किया गया था कि याची नया जाति प्रमाण पत्र और खतियान की प्रति प्रस्तुत करने में विफल रहा है। याची नया जाति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए प्रत्यर्थीगण के पास जा रहा है और अनुमंडलाधिकारी ने आश्चर्य जनक रूप से परिशिष्ट–15 के तहत उसे नया जाति प्रमाण पत्र और खतियान की प्रति प्रस्तुत करने के लिए कहा है।

6. मधु बनाम झारखंड राज्य (ऊपर) के मामले में समरुप मामले में इस न्यायालय का ध्यान इन विवाद्यकों के प्रति आकृष्ट हुआ है जिसमें वर्तमान प्रत्यर्थीगण द्वारा उठाए गए विवाद्यक जैसे विवाद्यक भी वर्ष 1985 में गृह मंत्रालय, भारत सरकार के परिपत्र पर विश्वास करते हुए उक्त रिट याचिका में उठाए गए थे। वर्तमान प्रत्यर्थीगण ने मामला बनाया है कि याची मूल राज्य से प्रवासी होने के लाभों का हकदार नहीं था। इन परिस्थितियों में इस न्यायालय ने बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 और इसकी धारा 23 के प्रावधानों पर राष्ट्रपति अधिसूचना के संदर्भ में चर्चा करने के बाद और **सुधाकर विठल कुंभरे (ऊपर)** के मामले जिसमें महाराष्ट्र राज्य के विभाजन और पुनर्गठन से परिणत समरुप परिस्थितियों पर विचार किया गया था, में दिए गए निर्णय पर भी चर्चा करते हुए पाया है कि वर्तमान मामला प्रवास का मामला नहीं

है बल्कि यह मूल राज्य के पुनर्गठन से परिणत मामला है और याची का जन्म तथा पालन-पोषण बोकारो में हुआ है और अनुसूचित जाति 'दुसाध' के जाति प्रमाण पत्र प्राप्त करने पर अनुसूचित जाति के दर्जे का हकदार था जिसे झारखंड राज्य में राष्ट्रपति की अधिसूचना के अधीन मान्यता दी गयी है। वर्तमान मामले के तथ्य सदृश होने के नाते और यहाँ ऊपर उठाए गए विवाद्यकों पर इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा **मधु (ऊपर)** के मामले में पूरी तरह विचार किए जाने के चलते दुसाध, जो झारखंड राज्य में अनुसूचित जाति है, का जाति प्रमाण पत्र देने से इनकार करते हुए अनुमंडलाधिकारी, बोकारो द्वारा जारी दिनांक 12 अप्रिल, 2007 का आक्षेपित आदेश मान्य नहीं ठहराया जा सकता है और इसे अपास्त किया जाता है।

7. यहाँ ऊपर कथित तथ्यों की दृष्टि में याची अनुसूचित जाति से आने वाले व्यक्ति के रूप में माने जाने और प्रत्यर्थी से प्रमाण पत्र पाने का हकदार है। पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

8. यहाँ ऊपर इस न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षण की दृष्टि में याची प्रत्यर्थी विश्वविद्यालय सहित प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के समक्ष जा सकता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

जय राम महतो

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 807 of 2011. Decided on 28th February, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

भारतीय वन अधिनियम, 1927—धारा 30—वाहन का अधिहरण–आरक्षित वन–अधिसूचना–धारा 30 के अधीन जारी अधिसूचना 30 वर्षों की अवधि के लिए प्रभाव में बनी रहेगी–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि उसके बाद धारा 30 के अधीन किसी अधिसूचना को जारी किया गया है–अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश जिसे पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया था को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और पुनर्विचार के लिए मामले को वापस भेजने की आवश्यकता है।

(पैराएँ 3 से 7)

निर्णयज विधि.–W.P. (C) No.9 of 2011; 2012(3) JLJR 222—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; G.P.-I., For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल करके वन पुनरीक्षण केस सं॰ 49/2009 में विद्वान प्रधान सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, झारखंड सरकार द्वारा पारित दिनांक 28.9.2010 के आदेश, विद्वान उपायुक्त-सह-जिला मजिस्ट्रेट, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 12.8.2008 के आदेश, जिसके द्वारा अधिहरण केस सं॰ 6/2004 में विद्वान प्राधिकृत अधिकारी-सह-प्रभागीय वन अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 10.7.2006 के आदेश जिसके द्वारा याची के वाहन को अधिहृत करने का आदेश दिया गया था, के विरुद्ध याची द्वारा दाखिल अपील खारिज कर दी गयी है, को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए प्रार्थना की है। आगे, अधिहरण केस सं॰ 6/2004

में विद्वान प्राधिकृत अधिकारी–सह–प्रभागीय वन अधिकारी, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 10.7.2006 के आदेश जिसके द्वारा याची के वाहन को अधिहृत करने का आदेश दिया गया है के अभिखंडन के लिए और याची के पक्ष में वाहन (ट्रेलर के साथ ट्रैक्टर सं॰ JH 11B 4089) को निर्मुक्त करने के लिए संबंधित प्राधिकारी को निर्देश देते हुए समुचित आदेश पारित करने की प्रार्थना की गयी है।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और आक्षेपित आदेश एवं अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल पूरक शपथ पत्र के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि गोविन्दपुर पी॰ एस॰ अधिसूचित और सीमांकित संरक्षित वन है जिसे दिनांक 27 दिसंबर, 1952 की अधिसूचना सं॰ OPF-10152/52-5301R के तहत संरक्षित वन के रूप में अधिसूचित किया गया है और इस अधिसूचना को बिहार गजट के दिनांक जनवरी 21, 1953 संस्करण में प्रकाशित किया गया था।

भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 निम्नलिखित प्रावधानित करती है:–

30. ***o{kk] vkfn dk vkjf{kr djrs gq, vf/klwpuk tkjh djus dh 'kfDr-***&jkT; ljdkj vkf/kdkfjd xtV esa vf/klwpuk }kjk

(a) vf/klwpuk }kjk fu;r frfFk ls vkjf{kr fd, tkus ds fy, lajf{kr ou esa fdlh o{k vFkok o{kksa ds oxZ dks ?kksf"kr dj ldrh g(

(b) ?kks"k.kk dj ldrh gS fd vf/klwpuk esa fofufnZ"V ,sls ou ds fdlh Hkkx dks ,slh vof/k ds fy,] tks rhl o"kksZa ls vf/kd dh ugha gks tSlk jkT; ljdkj le;kuqdwy le>rh g] cun dj fn;k tk,xk vkSj ,sls Hkkx dks Åij futh 0;fDr;ksa ds vf/kdkj] ;fn dksbZ gks] dks ,slh vof/k ds nkSjku fuyfcr dj fn;k tk,xk ijUrq ;g fd bl çdkj can fd, x, Hkkx esa fuyfcr vf/kdkjksa ds lE;d ç;ksx ds fy, ,sls ou dk 'ks"k i;kZIr gks vkSj {ks= esa ;fDr;Dr :i ls lfoèkktud gk(vFkok

(c) iokDrkulkj fu;r frfFk ls ,sls fdlh ou esa fdlh Hkkfe esa iRFkj dh [kuu] vFkok puk ;k dk;yk tyk, tkus] vFkok fdlh fuek.k çfØ;k pyku vFkok vè;èkhu fd, tkus vFkok ,sls fdlh ou esa fdlh ou mRikn ds gVk, tkus vkSj fuek.k ds fy,] [krh ds fy,] i'kèku j[kus ds fy, vFkok fdlh vU; ç;ktu ds fy, rkM tkus vFkok lkQ fd, tkus dk çfrf"k) dj ldrh gA

उक्त प्रावधान की दृष्टि में, धारा 30 के अधीन जारी अधिसूचना 30 वर्षों की अवधि के लिए प्रभाव में बनी रहेगी। वर्तमान मामले में, यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि उसके बाद धारा 30 के अधीन आगे कोई अधिसूचना जारी की गयी है।

4. यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय के समक्ष समरुप विवाद्यक आया था और **दिलीप कुमार पांडे उर्फ दिलीप पांडे बनाम झारखंड राज्य,** 2012 (3) JLJR 222, मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया। पैरा 8 से 10 और 13 से 15 का पठन निम्नलिखित है:–

"8. bl ekeys esa çfr 'kiFk i= nkf[ky ugha fd;k x;k g fdrq vijkèk vkj vfHk;ktu fjiksVZ ds ifj'khyu ls ;g çrhr gkrk g fd Bdnkj ;kph dk umjk&jkedMk iFk dh ejEer dk dke U;Lr fd;k x;k Fkk vkSj tc ejEer dk dke fd;k tk jgk Fkk] ekeyk nt fd;k x;k Fkk fd iFk ejEer ds Øe esa ou Hkkfe dk vkSj ou Hkkfe ij mxs o{kksa dk udlku igpk;k x;k FkkA fQj Hkh] v#.k dekj vxoky cuke >kj[kM jkT; ekeys esa fn, x, fu.k; dh nf"V esa ;kph tks ykd dk;

dj jgk Fkk dk fdlh vijkèk dk djrk gvk ugh dgk tk ldrk g fo'k"kr% tc Hkfe ftlij mDr jkM fo|eku Fkk dk igy gh ljdkj }jk vftr dj fy;k x;k FkkA

9. vkx] vfHk;ktu fjikV l ;g çrhr gkrk g fd vfHk;ktu o"k 1995 e tkjh vfèklpuk d QyLo:i Hkfe dk ou Hkfe gku dk nkok dj jgk Fkk fdr ou vfèkfu;e dh èkkjk 30 e vrfo"V çkoèkku dh nf"V e] ;g 30 o"kk d volku d ckn viuk çHkko [kk fn;k FkkA

10. iokDr çkoèkku d ifj'khyu l ;g ijh rjg Li"V g fd ljf{kr ou d :i e Hkfe d fy, ljdkj }kjk dh x;h fdlh ?kk"k.kk dk volku vfèklpuk tkjh gku dh frfFk l 30 o"kk ckn gk tk,xkA

11. tku [kku ,o vU; cuke fcgkj jkT;] AIR 1960 Pat 213, ekey e le#i ç'u fopkjkFk iVuk mPp U;k;ky; d le{k vk;k ftle ekuuh; U;k;kèkh'k u fuEufyf[kr lçf{kr fd;k%

*^^vxj e mDr fufn"V vfèklpuk tk fnukd 29 fnlcj] 1952 dh g dk fopkj e yrk g] ml vfèklpuk e fu;r frfFk l vkjf{kr ou d :i e ljf{kr ou eku tku d fy, Hkkjrh; ou vfèkfu;e dh èkkjk 30 d vèkhu ,d vU; vfèklpuk tkjh djuh gh FkhA***

12. txnh'k egrk cuke >kj[kM jkT; ,o vU; (Åij) d ekey e bl U;k;ky; }kjk le#i nf"Vdk.k viuk;k x;k FkkA

13. bl fLFkfr d vèkhu ge ;g vfHkfuèkkfjr dju d fy, etcj g fd Hkfe] ftll gkdj umjk&jkedMk jkM dVh ljf{kr ou d eke;e l tk jgk Fkk] dk o"k 1955 e tkjh vfèklpuk d 30 o"kk d volku d ckn Hkkjrh; ou vfèkfu;e dh èkkjk 30(b) d fucèkukulkj fdlh vfèklpuk dh vuifLFkfr e vkj bl rF; d dkj.k Hkh fd Hkfe igy gh ljdkj }kjk vftr dj yh x;h Fkh] ou Hkfe d :i e dHkh ugh ekuk tk ldrk gA

14. bl fLFkfr d vèkhu] ;kph dk dkb vijkèk djrk gvk ugh dgk tk ldrk g Hky gh ;kph u ç'uxr iFk dh ejEerh e Lo; dk fylr fd;k FkkA

*15. rnulkj] fnukd 19.3.2001 dk vijkèk dk lKku yu okyk vkn'k lfgr lh0 ,Q0 dl l0 29 o"k 2000 dh li.k nkfMd dk;okgh ,rn}kjk vfHk[kfMr dh tkrh gA***

5. डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 9 वर्ष 2011 (शिबो देवी बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य) में दिया गया निर्णय जिसे याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है और विश्वास किया गया है, वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है।

6. पूर्वोक्त प्रावधान और विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना की दृष्टि में और इस तथ्य की दृष्टि में भी कि प्रत्यर्थी राज्य सरकार अभिलेख पर ऐसा कुछ भी दर्शाने में अक्षम है कि बिहार गजट में प्रकाशित 21 जनवरी, 1953 की अधिसूचना को बाद में नवीकृत और विस्तारित किया गया था और इसलिए अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश जिसे पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया है को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और मामले को पुनर्विचार के लिए वापस भेजने की आवश्यकता है और नए सिरे से आरंभ की गयी कार्यवाही, यदि प्राधिकारी द्वारा कार्यवाही आरंभ की जाती है, में समुचित प्राधिकारी के समक्ष इस विवाद्यक को उठाने के लिए याची को अनुमति/स्वतंत्रता दी जा सकती है।

तद्नुसार, वन पुनरीक्षण केस सं॰ 49/2009 में पारित दिनांक 28.9.2010 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करने का आदेश दिया जाता है। परिणामस्वरुप, आगे कदम उठने के लिए, यदि विधि के अनुरुप आवश्यक हो, और नए सिरे से विचार करने के लिए मामला वन अधिकारी-सह-डी॰ एफ॰ ओ॰ को वापस भेजा जाता है। जब और जैसे ही ऐसी कार्यवाही आरंभ की जाएगी, याची सक्षम प्राधिकारी के समक्ष इस विवाद्यक को उठाने के लिए स्वतंत्र होगा और उक्त प्राधिकारी ऊपर चर्चा किए गए प्रावधान को विचार में लेने के बाद विधि के अनुरुप इसे विनिश्चित करेगा।

7. जहाँ तक प्रश्नगत वाहन के अधिहरण का संबंध है, प्रत्यर्थी सं॰ 4 प्रभागीय वन अधिकारी, बोकारो को संबंधित प्राधिकारी के संतोषानुसार वचन पत्र और बंध पत्र प्रस्तुत किए जाने पर ट्रेलर के साथ रजिस्ट्रेशन सं॰ JH 11B 4089 वाले ट्रैक्टर को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

8. जहाँ तक दांडिक मामले का संबंध है, इसे मामले में अधिकारिता रखने वाले सक्षम न्यायालय द्वारा विधि के अनुरुप विनिश्चित किया जाएगा।

9. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

चेतलाल यादव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. Revision No. 1154 of 2010. Decided on 1st March, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 306/34—आत्महत्या का दुष्प्रेरण–संज्ञान–अवर न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल अभ्यापत्ति-सह-परिवाद याचिका की सुनवाई के लिए तिथि नियत किया है किंतु उस तिथि पर याचिका सुनी नहीं गयी थी और न ही कोई स्थगन दिया गया था और याची को सुने बिना अथवा उसकी याचिका पर विचार किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया था–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और सी॰ जे॰ एम॰ को याची को सुनने के बाद और उसके द्वारा दाखिल अभ्यापत्ति-सह-परिवाद याचिका पर विचार करने के बाद आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 3, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Ramawatar Choubey, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता सुने गए।

2. यद्यपि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 से 8 को नोटिस जारी की गयी थी, उनकी ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है। अभिलेख से मैं पाती हूँ कि नोटिस का तामील वैध रूप से स्वीकार किया गया था और याची ने दिनांक 16.11.2010 के आदेश को अपास्त करने के लिए इस आवेदन को दाखिल किया है जिसके द्वारा न्यायालय ने दिनेश यादव उर्फ चिन्तामन यादव और रघु यादव के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 306/34 के अधीन संज्ञान लिया है। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि याची ने दिनांक 1.11.2010 के अभ्यापत्ति याचिका-सह-परिवाद याचिका दाखिल किया है और अवर न्यायालय ने उक्त याचिका की सुनवाई के लिए दिनांक 2.11.2010 नियत किया, किंतु दिनांक 2.11.2010 को अवर न्यायालय ने याचीगण के आवेदन को सुनने के बजाय अभियुक्त की जमानत याचिका को सुना और

जमानत की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया और तत्पश्चात अवर न्यायालय ने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 और 3 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 306/34 के अधीन संज्ञान लिया है किंतु विरोधी पक्षकार सं॰ 4 से 8 के विरुद्ध अपराध का संज्ञान नहीं लिया गया है यद्यपि उन सबों को प्राथमिकी में नामित किया गया है।

3. याची की मुख्य शिकायत यह है कि उसे सुने बिना अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित किया है यद्यपि अवर न्यायालय ने अभ्यापत्ति याचिका की सुनवाई के लिए दिनांक 2.11.2010 नियत किया है। याची के अधिवक्ता ने दिनांक 1.11.2010, 2.11.2010 और 16.11.2010 के ऑर्डर शीट को इस आवेदन के परिशिष्ट-4/1 और परिशिष्ट-5 के रूप में संलग्न किया है।

4. राज्य के अधिवक्ता ने विरोध किया किंतु याची के अधिवक्ता द्वारा किए गए पूर्वोक्त प्रतिवादों को विवादित नहीं किया है।

5. पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार करते हुए और पूर्वोक्त तिथियों के ऑर्डर शीटों जिन्हें इस आवेदन के साथ संलग्न किया गया है पर भी विचार करते हुए मैं पाती हूँ कि अवर न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल अभ्यापत्ति याचिका-सह-परिवाद याचिका की सुनवाई के लिए दिनांक 2.11.2010 नियत किया है, किंतु उस तिथि पर उन्होंने उक्त याचिका को नहीं सुना था और न ही कोई स्थगन दिया है और दिनांक 16.11.2010 को याची को सुने बिना अथवा उसकी याचिका पर विचार किए बिना अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित किया है।

6. अत: मैं मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 16.11.2010 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करती हूँ और उन्हें याची को सुनने के बाद और उसके द्वारा दाखिल अभ्यापत्ति याचिका-सह-परिवाद याचिका और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार करने के बाद इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से छह सप्ताह की अवधि के भीतर आदेश पारित करने का निर्देश देती हूँ क्योंकि मामला वर्ष 2010 का है।

7. पूर्वोक्त निर्देश के साथ, यह पुनरीक्षण आवेदन निपटाया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

जिउरा ओराँव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

LPA Nos. 47 with I.A. No. 721 of 2013. Decided on 8th March, 2013.

सेवा विधि–नियुक्ति–प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षक का पद–समय पर शिक्षक के लिए प्रशिक्षण परीक्षा में डिप्लोमा प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं करने के कारण उम्मीदवारी अस्वीकार किया जाना–आवश्यकता तिथि विशेष पर अथवा इसके पहले पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने का प्रमाण पत्र दाखिल करना है–एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में अवैधता नहीं है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 10 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. Binod Singh, For the Appellants; Mr. Samjay Piprawal, For the Respondents.

आदेश

विलंब की माफी के बिंदु पर सुना गया।

2. एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल करने में विलंब माफ किया जाता है।

3. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 721 वर्ष 2013 निपटायी जाती है।

4. पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

5. याची प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षक के पद के लिए उम्मीदवार था और वह सफल हुआ था किंतु समय पर शिक्षक के लिए प्रशिक्षण परीक्षा में अपना डिप्लोमा प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं कर सका था, अत:, उसकी उम्मीदवारी अस्वीकार की गयी थी, याची डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6071 वर्ष 2009 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया जिसे दिनांक 17 जुलाई, 2012 के निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया है। अत: इस एल॰ पी॰ ए॰ को दाखिल किया गया है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि याची का मामला **मो॰ सज्जाद अली बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** मामले में दिए गए इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय से पूर्णत: आच्छादित है जिसमें भी प्रशिक्षण का परिणाम कट-ऑफ तिथि के बाद घोषित किया गया था और पूर्ण पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसे उम्मीदवार पात्र उम्मीदवार हैं।

7. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि इस तथ्य के बावजूद कि वे समय पर प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं कर सके थे, अन्य उम्मीदवारों को नियुक्ति दी गयी थी।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने का प्रमाण पत्र कब जारी किया जाएगा, यह याची के नियंत्रण में नहीं है, अत: याची को उस कारण जो याची के नियंत्रणाधीन नहीं है के आधार पर नियुक्ति से इनकार नहीं किया जा सकता था।

9. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि **मो॰ सज्जाद अली बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** में दिया गया निर्णय एस॰ एल॰ पी॰ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विचाराधीन है। यह निवेदन भी किया गया है कि **मो॰ सज्जाद अली बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** का निर्णयाधार वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि इस मामले में पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता शर्त है और यह शर्त **मो॰ सज्जाद अली बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** के मामले में नहीं था और उस मामले में प्रशिक्षण प्रमाण पत्र प्राप्त करने की अपेक्षा की जाती थी।

10. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन को सुना है और मामले के तथ्यों का परिशीलन किया है। इस मामले में, नि:संदेह तिथि विशेष पर अथवा इसके पहले पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने के प्रमाण पत्र को प्रस्तुत करने की आवश्यकता है और यह विवादित नहीं है कि मो॰ सज्जाद अली मामले में आवश्यकता केवल पाठ्यक्रम पूरा करना था और न कि पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना, अत: **मो॰ सज्जाद अली बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** का निर्णय कट-ऑफ-तिथि के पहले प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने के विनिर्दिष्ट शर्त की दृष्टि में वर्तमान मामलें के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं है।

11. हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में अवैधता नहीं पाते हैं।

12. उक्त कारणों की दृष्टि में, गुणागुणरहित होने के कारण इस एल॰ पी॰ ए॰ को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

निर्मल कुमार अग्रवाल

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP (C) No. 2843 of 2012. Decided on 1st April, 2013.

बिहार आरा मिल विनियमन अधिनियम, 1990—धारा 8—भागीदारी विलेख में परिवर्तन–यह अब केवल याची का स्वत्वधारी फर्म है जिसे वह भागीदारी समुत्थान में संपरिवर्तित करने का आशय रखता है–याची को डी॰ एफ॰ ओ॰ के समक्ष नया आवेदन देकर प्रस्तावित भागीदार की ओर से भागीदारी विलेख और मुख्तारनामा की आवश्यक प्रतियों को प्रस्तुत करने की आवश्यकता है–डी॰ एफ॰ ओ॰ को उसके आवेदन के संबंध में तार्किक एवं सकारण आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 9 एवं 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Sheela Prasad, For the Petitioner; J.C. to G.P. IV., For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची अनुज्ञप्ति सं॰ F/DH/14/2009 के अधीन मेसर्स धनबाद टिंबर वर्क्स के नाम और शैली में चलाए जा रहे आरा मिल में नए भागीदार अर्थात् नित्यानंद गिरि को सम्मिलित करके भागीदारी विलेख में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए अनुमति प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिला वन अधिकारी, वन डिविजन, धनबाद पर निर्देश इप्सित कर रहा है क्योंकि अभी यह केवल याची की भागीदारी फर्म है जिसे वह भागीदारी समुत्थान में संपरिवर्तित करने का आशय रखता है।

3. याची की शिकायत यह है कि जिला प्रभागीय वन अधिकारी, धनबाद ने संक्षिप्त आदेश द्वारा उसका आवेदन पहले अस्वीकार कर दिया था यद्यपि स्वयं याची की आरा मिल के संबंध में दिनांक 18.8.2009 के परिशिष्ट–4 में अंतर्विष्ट रिपोर्ट है कि यह प्रतिबंधित वन क्षेत्र से 8 कि॰ मी॰ की दूरी पर अवस्थित है। अपीलीय प्राधिकारी–सह–वन संरक्षक, बोकारो सर्किल के समक्ष याची द्वारा दाखिल अपील में दिनांक 27.7.2010 के आदेश द्वारा डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद को परिशिष्ट–6 के तहत बिहार आरा मिल विनियमन अधिनियम, 1990 के मुताबिक पक्षों को सुनने के बाद सकारण आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था। किंतु दिनांक 26.8.2010 के आदेश, परिशिष्ट–7, के तहत डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद ने दिसंबर, 2008 में प्रस्तुत सहायक वन संरक्षक की रिपोर्ट पर कार्रवाई करते हुए याची के स्वत्वधारी व्यवसाय को भागीदारी फर्म में अंतरित करने के लिए उसके आवेदन को पुनः अस्वीकार कर दिया है।

4. याची का प्रतिवाद यह है कि स्वयं प्रत्यर्थीगण ने याची की अनुज्ञप्ति को दिसंबर, 2008 तक नवीकृत किया है किंतु उसकी व्यावसायिक संकार्य की अत्यावश्यकता के चलते उसकी स्वत्वधारी व्यवसाय को भागीदारी फर्म में संपरिवर्तित करने की अनुमति याची को नहीं दे रहे हैं जबकि याची स्वयं वृद्ध हो गया है और अकेले आरा मिल चलाने की शारीरिक एवं वित्तीय स्थिति में नहीं है।

5. याची का प्रतिवाद यह है कि उसने दिनांक 27.9.2010 के आदेश के विरुद्ध अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील केस सं॰ 1 वर्ष 2010 दाखिल किया है जिसमें वन संरक्षक, बोकारो सर्किल, बोकारो ने पुनः आदेश दिया कि याची भागीदारी विलेख और उसके प्रस्तावित भागीदार अर्थात् नित्यानंद गिरि के मुख्तारनामा के साथ डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद के समक्ष नया आवेदन प्रस्तुत करेगा जिसके बाद डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद याची को युक्तियुक्त अवसर देने के बाद बिहार आरा मिल विनियमन अधिनियम, 1990 के प्रावधानों के अधीन और केंद्रीय सशक्त कमिटि, नयी दिल्ली द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन आवश्यक आदेश पारित करेगा। आगे यह प्रतिवाद किया गया था कि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा बार–बार

स्मरण कराए जाने के बावजूद डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद ने विधि के अनुरुप विवेकपूर्ण निर्णय नहीं लिया है और याची के पास इस रिट याचिका में इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लेने के अलावा विकल्प नहीं है।

6. याची के अधिवक्ता ने शपथ पत्र के माध्यम से प्रत्यर्थीगण के इस प्रतिवाद का विरोध किया है कि सहायक वन संरक्षक का रिपोर्ट इसके समर्थन में किसी दस्तावेज को सिद्ध किए बिना और उसके विपरीत जिसे दिनांक 18.8.2009 के परिशिष्ट–4 के तहत रिपोर्ट किया गया है, आरा मिल को प्रतिबंधित वन क्षेत्र के 1.75 किलोमीटर के भीतर अवस्थित दर्शाता है। यह प्रतिवाद भी किया गया है कि प्रत्यर्थीगण ने कथन किया है कि याची विगत 2-3 वर्ष से आरा मिल नहीं चला रहा है किंतु स्वयं प्रत्यर्थीगण ने दिसंबर, 2012 तक अनुज्ञप्ति नवीकृत किया है।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता ने प्रति शपथ पत्र में किए गए प्रकथनों पर विश्वास करते हुए याची के दावा का प्रतिवाद किया है कि याची के मिल को विगत दो वर्षों से बंद पड़ा पाया गया था और उसने प्रत्यर्थी प्राधिकारी से अनुमति इप्सित किए बिना नित्यानंद गिरि के नाम में भागीदार लाना इप्सित किया है। उन्होंने प्रत्यर्थी द्वारा शपथ पत्र में लिए गए दृष्टिकोण को दोहराया है कि याची का आरा मिल प्रतिबंधित वन क्षेत्र से 1.75 किलोमीटर के भीतर अवस्थित है, अत: याची का आवेदन अनुज्ञात नहीं किया गया है।

8. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है। जो यहाँ ऊपर दर्ज किया गया है, उससे यह प्रतीत होता है कि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिनांक 27.9.2010 के मेमो सं॰ 873 के तहत स्मरण कराए जाने के बाद प्रत्यर्थी, प्रभागीय अधिकारी ने भागीदार अर्थात् नित्यानंद गिरि को सम्मिलित करके स्वत्वधारी व्यवसाय को भागीदारी समुत्थन में परिवर्तित करना इप्सित करते हुए याची के आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं किया है। प्रत्यर्थी का दृष्टिकोण यह है कि याची का आरा मिल प्रतिबंधित क्षेत्र से 1.75 किलो मीटर की दूरी पर अवस्थित है जिसे याची ने वन रेंज अधिकारी, नगरीय वन रेंज को संबोधित फॉरेस्टर द्वारा जारी दिनांक 18.8.2009 के परिशिष्ट–4 में अंतर्विष्ट दस्तावेज के आधार पर प्रतिवादित किया है।

9. चाहे जो भी हो, याची को याची के आरा मिल के स्वत्वधारी व्यवसाय को भागीदारी समुत्थान में ऐसे परिवर्तन को इप्सित करने के लिए डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद को विधि के अनुरुप समुचित निर्णय लेने के लिए सक्षम बनाने के लिए वन संरक्षक, बोकारो सर्किल, बोकारो द्वारा अपील में पारित आदेश के निबंधनानुसार डी॰ एफ॰ ओ॰, धनबाद के समक्ष नया आवेदन देकर प्रस्तावित भागीदार की ओर से मुख्तारनामा और भागीदारी विलेख की आवश्यक प्रतियों को प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

10. मामले के उस दृष्टिकोण में, प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिला वन अधिकारी, वन प्रभाग, धनबाद को वर्तमान रिट याचिका में उठाए गए विवाद्यकों पर विचार करने की आवश्यकता है। याची को तीन सप्ताह की अवधि के भीतर भागीदार को सम्मिलित करके अपने स्वत्वधारी व्यवसाय को भागीदारी समुत्थान में संपरिवर्तित करने के लिए प्रस्तावित भागीदार की उपस्थिति और प्रस्तावित भागीदारी विलेख तथा मुख्तारनामा सहित समस्त समर्थनकारी तथ्यों और दस्तावेजों के साथ नया आवेदन देकर पुन: प्रत्यर्थी सं॰ 3 के पास जाने की अनुमति दी जाती है। ऐसे आवेदन की प्राप्ति पर प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिला वन अधिकारी

वन प्रभाग, धनबाद विधि के अनुरुप और बिहार आरा मिल विनियमन अधिनियम, 1990 तथा समय-समय पर केंद्रीय सशक्त कमिटी द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन इस पर विचार करेगा और स्थल के सत्यापन के बाद और प्रतिबंधित वन क्षेत्र से याची की आरा मिल की स्थिति से संबंधित वास्तविक अवस्था के अभिनिश्चयकरण के बाद बारह सप्ताह की अवधि के भीतर उसके आवेदन के संबंध में तार्किक और सकारण आदेश पारित करेगा जिसे याची को संसूचित किया जाएगा।

11. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

डॉ॰ ब्रज नंदन प्रसाद वर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

C.W.J.C. No. 1293 of 2001. Decided on 15th March, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000—नियम 43 (b)—पेंशन के 10% एवं अन्य सेवानिवृत्ति लाभों का रोका जाना–वर्ष 2001 में नियम 43 (b) के अधीन आरंभ की गयी तथाकथित कार्यवाही कभी नहीं शुरू हुई–नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही अभिकथित घटना की तिथि से चार वर्षों के भीतर शुरू करनी होगी–तीन वर्षों की अवधि के बाद कोई कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है जब पेंशन मंजूर कर दिया गया है–किंतु, पेंशन और उपदान के परे पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन कुछ भी आच्छादित नहीं होगा–अवकाश नगदीकरण वेतन के चरित्र वाला है और इसे रोका नहीं जा सकता है–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–(1999)3 PLJR 949; (1999)3 PLJR 949; 2007 (4) JCR 1 (Jhr); (1995) Suppl. (3) SCC 56—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Vijoy Pratap Singh, A. K. Sinha, Rashmi Kumar, Amrita Kumari, For the Petitioner; Mr. Ramit Satender, For the State of Bihar.

न्यायालय द्वारा.–याची दिनांक 31.1.1996 के प्रभाव से सरकारी सेवा से अधिवर्षित हुआ। उसका अंतिम पेंशन दिनांक 22.12.1995 को पहले ही मंजूर किया गया था। किंतु, जब उसको उसके सेवानिवृति लाभों का भुगतान नहीं किया गया था, वह सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3020 वर्ष 1997 (R) में उच्च न्यायालय के पास गया। दिनांक 8.7.1998 के आदेश द्वारा निदेशक, पशुपालन विभाग को दो सप्ताह के भीतर 10% ब्याज के साथ याची को सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान करने के लिए मंजूरी आदेश जारी करने का निर्देश दिया गया था। किंतु पेंशन की केवल 90% राशि, जी॰ पी॰ एफ॰ और सामूहिक बीमा का भुगतान याची को किया गया था और उपदान, अर्जित अवकाश, पेंशन का 10% आदि का भुगतान नहीं किया गया था, अत: याची पुन: इस न्यायालय के पास आया है।

2. दिनांक 16.4.2001 का प्रति शपथ पत्र दाखिल किया गया था जिसमें यह इंगित किया गया था कि याची के विरुद्ध बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी। ऐसे बयान के समर्थन में किसी दस्तावेज को अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया था। यह निवेदन किया गया था कि याची को चारा घोटाला से संबंधित चार मामलों में अभियुक्त बनाया गया है और आरोप-पत्र दाखिल किया गया था।

3. दिनांक 14.2. 2013 को जब मामला सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया था, इस न्यायालय ने पक्षों को पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही के संबंध में अवस्था अभिनिश्चित करने का निर्देश दिया था और ऐसे निर्देश के अनुसरण में याची ने पशुपालन विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 14.1.2008 के कारण बताओ नोटिस को अभिलेख पर लाते हुए दिनांक 28.2.2003 का पूरक शपथ पत्र दाखिल किया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन तथाकथित कार्यवाही जिसे अभिकथित रूप से याची के विरुद्ध आरंभ किया गया था, को अभिलेख पर कभी नहीं लाया गया था। याची को कोई कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था और बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन किसी कार्यवाही के आरंभ के संबंध में सूचना नहीं दी गयी थी। उसमें यह उपदर्शित करते हुए कि बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (a) और (b) के निबंधनानुसार क्यों नहीं याची का पूर्ण पेंशन स्थायी रूप से वापस ले लिया जाए, याची को एक सप्ताह के भीतर कारण बताने के लिए कहते हुए दिनांक 14.1.2008 को नोटिस जारी की गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि कार्यपालिका आदेश, जैसा दिनांक 14.1.2008 के नोटिस में अंतर्विष्ट है, जारी करके याची के पेंशनीय लाभों को वापस नहीं लिया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी बिहार राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र में लिए गए दृष्टिकोण का समर्थन किया है।

6. यह स्वीकृत अवस्था है कि वर्ष 2001 में बिहार पेंशन नियमावली की धारा 43 (b) के अधीन तथाकथित कार्यवाही कभी आरंभ नहीं हुई थी। प्रत्यर्थी बिहार राज्य के विद्वान अधिवक्ता भी इसे संपुष्ट करने में अक्षम हैं कि क्या वर्ष 2001 में ऐसी कार्यवाही आरंभ करने के पहले याची को नोटिस जारी की गयी थी। बिहार राज्य ने दिनांक 14.1.2008 का कारण बताओ जारी करके बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (a) और (b) के अधीन एक अन्य कार्यवाही का आरंभ इप्सित किया है। किंतु अंतिम आदेश, यदि पारित किया गया था, को अभिलेख पर नहीं लाया गया है।

7. बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (a) और (b) को नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"43 (a) Hkkoh vPNk vkpj.k i'ku d çR;d çnku dh foof{kr 'kr gA çknf'kd ljdkj i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu dk vfèkdkj Lo; d fy, vkjf{kr djrh g] ;fn i'ku ikuoky dk xHkhj vijkèk d fy, nk"kfl) fd;k tkrk g vFkok xHkhj vopkj dk nk"kh ik;k tkrk gA bl fu;e d vèkhu ij i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu d fdlh ç'u ij çknf'kd ljdkj dk fu.k; vfre ,o fu'p;kRed gkxkA

(b) jkT; ljdkj vkx Lo; d fy, i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu] pkg LFkk;h :i l vFkok fofufn"V vofèk d fy,] dk vfèkdkj vkj ljdkj dk dkfjr fdlh èkuh; gkfu d ij vFkok bld Hkkx dk i'ku l oly dju dk vkn'k nu dk vfèkdkj ljf{kr j[krh g ;fn i'ku iku oky dk lokfuofÙk d ckn iufu;ktu ij nh x;h lok lfgr viuh lok d nkjku foHkkxh; vFkok U;kf;d dk;okgh e xHkhj vopkj dk nk"kh vFkok vopkj vFkok mi{kk }kjk ljdkj dk èkuh; gkfu dkfjr djrk gvk ik;k tkrk gA

ijUr ;g fd%

(a) ,lh foHkkxh; dk;okgh] ;fn bl rc lLFkkfir ugh fd;k x;k Fkk tc ljdkjh lod lok fuofÙk d igy vFkok iufu;ktu d nkjku dr0; ij Fkk(

(i) jkT; ljdkj dh etjh d flok, lLFkkfir ugh fd;k tk,xk]

(ii) ,lh ?kVuk d lcèk e tk ,lh dk;okgh d lLFkkiu d pkj o"k l vfèkd d igy ugh Fkh] gkxh(vkj

(iii) ,l çkfèkdkjh }kjk vkj ,l LFkku vFkok LFkkuk ij tlk jkT; ljdkj fun'k n ldrh g vkj dk;okgh ij ç;kT; çfØ;k d vu:i lpkfyr dh tk,xh ftl ij lok l c[kkLrxh dk vkn'k ikfjr fd;k tk ldrk g(

(b) U;kf;d dk;okgh] ;fn bl rc lLFkkfir ugh fd;k x;k Fkk tc ljdkjh lod lokfuofÙk d igy vFkok iufu;ktu d nkjku dr0; ij Fkk] [kM (a) d mi[kM (ii) d vu:i lLFkkfir dj nh tk,xh(vkj

(c) vfre fu.k; ikfjr dju d igy fcgkj ykd lok vk;kx l ijke'k fd;k tk,xkA

Li"Vhdj.k-&bl fu;e d ç;ktu l

(a) foHkkxh; dk;okgh dk lLFkkfir dj fn;k x;k le>k tk,xk tc i'ku ikuoky d fo#) fojfpr vkjkik dk ml tkjh fd;k tkrk g vFkok ;fn ljdkjh lod dk ifod frFk l fuycu d vèkhu fd;k x;k g] ml frFk ij lLFkkfir dj fn;k x;k le>k tk,xk] vkj

(b) U;kf;d dk;okgh lLFkkfir dj nh x;h le>h tk,xh&

(i) nkfMd dk;okgh dh fLFkfr e ml frFk ij ftl ij ifjokn fd;k x;k g vFkok nkfMd U;k;ky; e vkjki&i= nkf[ky fd;k x;k g(vkj

(ii) flfoy dk;okgh dh fLFkfr e ml frFk ij ftl ij ifjokn çLrr fd;k tkrk g vFkok ;FkkfLFkfr flfoy U;k;ky; e vkonu fn;k tkrk gA**

8. बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(a) और (b) के अधीन कोई कार्यवाही अभिकथित घटना की तिथि से चार वर्षों की अवधि के भीतर आरंभ करनी होगी और किसी भी स्थिति में तीन वर्षों की अवधि के बाद कोई कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती है जब पेंशन मंजूर कर दिया गया है। वर्तमान मामले में, मैं पाता हूँ कि याची को वर्ष 1995 और 31 फरवरी, 1996 के बीच की अवधि में अवचार करता अभिकथित किया गया है, अत: वर्ष 2008 में याची के विरुद्ध कोई कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती है।

9. बिहार राज्य एवं अन्य बनाम मो॰ इदरीश अंसारी, (1995)Suppl. (3) SCC 56, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन उस घटना जो विभागीय कार्यवाही आरंभ होने के चार वर्ष पहले हुई है, के संबंध में कर्मचारी के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती है। निर्णय के पैरा 7 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"7. bu çkoèkkuk ij nf"V ek= n'kkrk g fd lok fuoÙk ljdkjh lod d vfHkdfFkr vopkj d lcèk e fu;e 43 (b) d vèkhu 'kfDr dk ç;kx dju d

*igy ;g n'kkuk gh gkxk fd foHkkxh; dk;okgh e vFkok U;kf;d dk;okgh e lcfèkr ljdkjh lod dk xHkhj vopkj dk nk"kh ik;k x;k gA ;g bl mifjdk d vè;èkhu Hkh g fd ,lh foHkkxh; dk;okgh ml vopkj d lcèk e gkxh tk ,lh dk;okgh d vkjHk fd, tku d igy pkj o"k l vfèkd ijkuh ugh gkA vr%] ;g çdV g fd vfHkdfFkr vopkj d lcèk e fu;e 43 (a) vkj (b) d vèkhu çR;Fkh d fo#) o"k 1993 e dkb foHkkxh; dk;okgh vkjHk ugh dh tk ldrh Fkh D;kfd bl o"k 1986-87 e fd;k x;k vfHkdfFkr fd;k x;k gA pfd vfHkdfFkr vopkj o"k 1993 rd de l de Ng o"k ijkuk Fkk] fu;e 43 (b) ifjfèk l ckgj FkkA çR;Fkh çkfèkdkfj;k u Hkh bl fofèkd voLFkk dk Lohdkj fd;k tc mUgku fnukd 27.9.1993 dk ukfVl tkjh fd;kA mle Li"V :i l ;g dFku fd;k x;k Fkk fd fu;ekoyh d fu;e 43 (b) d vèkhu dkjokb ugh dh tk ldrh g D;kfd vkjkik dh vofèk pkj o"k l vfèkd ijkuh gk x;h gA fnukd 17.10.1987 d ifod ukfVl ij fo'okl djuk çkfèkdkfj;k d fy, leku :i l lHko ugh g D;kfd bld vulj.k e dh x;h dk;okgh dk fjV ;kfpdk lñ 6696 o"k 1991 e mPp U;k;ky; }kjk vfHk[kfMr dj fn;k x;k Fkk vkj çR;Fkh d fy, doy u;h dk;okgh 'k: dju dh Lor=rk nh x;h FkhA mPp U;k;ky; u çR;Fkh dk fnukd 17.10.1987 d ukfVl d vulj.k e io foHkkxh; dk;okgh dk ml pj.k l] ftl pj.k ij ;g nf"kr gk x;h Fkh] iu% vkjHk dju dh vuefr ugh nh FkhA**

10. झारखंड पेंशन नियमावली का नियम 43 कर्मचारी के पेंशन के बारे में कथन करता है। नियम 27 कथन करता है कि पेंशन उपदान सम्मिलित करता है। इस प्रकार, पेंशन और उपदान के परे पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन कुछ भी आच्छादित नहीं होगा। अवकाश नगदीकरण का भुगतान अनुपयोगित अवकाश के कारण किया जाता है, अत: यह वेतन का चरित्र धारण करता है। पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन याची के वेतन को रोका अथवा वापस अथवा समपहृत नहीं किया जा सकता है। **बजरंग देव नारायण सिन्हा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** (1999)3 PLJR 949, में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अवकाश नगदीकरण बकाया को रोका नहीं जा सकता है क्योंकि इसका भुगतान अनुपयोगित अवकाश के बदले किया जाता है। **डॉ॰ दूधनाथ पांडे बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2007 (4) JCR 1 (Jhr.)** मामले में इस न्यायालय की पूर्णपीठ के निर्णय ने **बजरंग देव नारायण सिन्हा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** (1999)3 PLJR 949, में दिए गए निर्णय को ध्यान में लिया है और इसे अनुमोदित किया है।

11. अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने पर और पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में मेरा मत है कि वर्तमान रिट याचिका अनुज्ञात किए जाने योग्य है और तद्नुसार इसे अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जगदीश शर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 5641 of 2008. Decided on 4th March, 2013.

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000—नियम 43 (b)—पेंशन रोका जाना और पेंशन से वसूली–आक्षेपित आदेश सेवानिवृत्ति के दस वर्षों बाद पारित किया गया–किसी कारण बताओ

अथवा नोटिस के बिना याची के विरुद्ध पेंशन रोकने और इसकी वसूली के आदेश को प्रभाव दिया गया है यद्यपि इसके प्रतिकूल सिविल परिणाम होते हैं–आदेश पारित करने के पहले नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने की आवश्यकता होती है–आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Kumar Choubey, For the Petitioner; Mr. S. Choudhary, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह रिट याचिका अपर वित्त आयुक्त, झारखंड सरकार द्वारा जारी पत्र सं॰ 3191 दिनांक 24 अक्टूबर, 2008 (परिशिष्ट–3) में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा उपायुक्त, राँची को तुरन्त के प्रभाव से याची का पेंशन रोकने के लिए और उसको भुगतान की गयी पेंशन की राशि वसूल करने के लिए कहा गया है। उसने उप–कलक्टर, स्थापना राँची द्वारा ट्रेजरी ऑफिसर, राँची को जारी पत्र सं॰ 1006 (ii) दिनांक 7 नवंबर, 2008 (परिशिष्ट–4) में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश का अभिखंडन भी इप्सित किया है जिसके द्वारा ट्रेजरी ऑफिसर को याची को पेंशन का भुगतान रोकने और उसको भुगतान किए गए पेंशन को वसूल करने के लिए कहा गया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता प्रतिवाद करते हैं कि दिनांक 31 मई, 1998 को सेवानिवृत्त होने के बाद वह विगत दस वर्षों से अपना पेंशन पा रहा है किंतु आक्षेपित आदेश प्रकटत: इस आधार पर पारित किए गए हैं कि याची को चारा घोटाला मामले के संबंध में सक्षम न्यायालय द्वारा आर॰ सी॰ केस सं॰ 43A/1996 में दोषसिद्ध किया गया है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उक्त आदेशों को झारखंड पेंशन नियमावली, 2000 की धारा 43 (a) और (b) के अधीन प्रदत्त शक्ति के तात्पर्यित प्रयोग में पारित किया गया है किंतु उक्त आदेशों को पारित करने के पहले याची को कारण बताओ अथवा नोटिस जारी नहीं किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 11 नवंबर, 2009 के डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1656 वर्ष 2009 में पारित निर्णय और आदेश को यह निवेदन करने के लिए अभिलेख पर लाया है कि उक्त मामले में भी जब संबंधित याची के पेंशन को रोका गया था और चारा घोटाला मामले में उसकी दोषसिद्धि पर वसूली करने का निर्देश दिया गया था, इस न्यायालय ने प्रश्नगत आदेश को अभिखंडित कर दिया था क्योंकि इसे उक्त याची को अवसर दिए बिना पारित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई के प्रतिकूल परिणाम होते हैं जिन्हें पारित करने के पहले सुनवाई का अवसर दिए जाने की आवश्यकता है।

4. किंतु प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इस आधार पर आक्षेपित आदेशों को न्यायोचित ठहराया है कि झारखंड पेंशन नियमावली की धारा 43 (b) के अधीन प्रदत्त शक्ति का अवलंब लेकर, जो नियोक्ता के कर्मचारी के भावी आचरण पर निर्भर होते हुए पूरे पेंशन अथवा इसके भाग को रोकने/वापस लेने की अनुमति देता है, सक्षम न्यायालय द्वारा चारा घोटाला से संबंधित दांडिक मामले में उसकी दोषसिद्धि पर पेंशन रोकने के उक्त आदेश को याची पर अधिरोपित किया गया है। किंतु याची के विद्वान अधिवक्ता याची के इस प्राख्यान को विवादित नहीं करते हैं कि इसे कारण बताओ अथवा नोटिस जारी किए बिना पारित किया गया है। याची द्वारा विश्वास किए गए डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1655 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 11.11.2009 के आदेश का प्रासंगिक अंश नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^ljdkj dh vkj l ,lh 'kfDr dk lkr çfr'kiFk i= e fu;e 43 crk;k x;k gA Rofjr fun'k d fy, mDr fu;e dk li.krk e uhp m) r fd;k tkrk g%

"43 (a) Hkkoh vPNk vkpj.k i'ku d çR;d çnku dh foof{kr 'kr gA çknf'kd ljdkj i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu dk vfèkdkj Lo; d fy, ljf{kr j[krh g ;fn i'ku ikuoky dk xHkhj vijkèk d fy, nk"kfl) fd;k tkrk g vFkok xHkhj vopkj dk nk"kh ik;k tkrk gA bl fu;e d vèkhu ij i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu d fdlh ç'u ij çknf'kd ljdkj dk fu.k; vfre ,o fu'p;kRed gkxkA

(b) jkT; ljdkj vkx Lo; d fy, i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok okil yu] pkg LFkk;h :i l vFkok fofufn"V vofèk d fy,] dk vfèkdkj vkj ljdkj dk dkfjr fdlh èkuh; gkfu d ij vFkok bld Hkkx dk i'ku l oly dju dk vkn'k nu dk vfèkdkj ljf{kr j[krh g] ;fn i'ku iku oky dk lokfuofÙk d ckn iufu;ktu ij nh x;h lok lfgr viuh lok d nkjku foHkkxh; vFkok U;kf;d dk;okgh e xHkhj vopkj dk nk"kh vFkok vopkj vFkok mi{kk }kjk ljdkj dk èkuh; gkfu dkfjr djrk gvk ik;k tkrk gA

ijUr ;g fd%

(a) ,lh foHkkxh; dk;okgh] ;fn bl rc lLFkkfir ugh fd;k x;k Fkk tc ljdkjh lod lok fuofÙk d igy vFkok iufu;ktu d nkjku dr0; ij Fkk(

(i) jkT; ljdkj dh etjh d flok, lLFkkfir ugh fd;k tk,xk]

(ii) ,lh ?kVuk d lcèk e tk ,lh dk;okgh d lLFkkiu d pkj o"k l vfèkd d igy ugh Fkh] gkxh(vkj

(iii) ,l çkfèkdkjh }kjk vkj ,l LFkku vFkok LFkkuk ij tlk jkT; ljdkj fun'k n ldrh g vkj dk;okgh ij ç;kT; çfØ;k d vu:i lpkfyr dh tk,xh ftl ij lok l c[kkLrxh dk vkn'k ikfjr fd;k tk ldrk g(

(b) U;kf;d dk;okgh] ;fn bl rc lLFkkfir ugh fd;k x;k Fkk tc ljdkjh lod lokfuofr d igy vFkok iufu;ktu d nkjku dr0; ij Fkk] [kM (a) d mi[kM (ii) d vu:i lLFkkfir dj nh tk,xh(vkj

(c) vfre fu.k; ikfjr dju d igy fcgkj ykd lok vk;kx l ijke'k fd;k tk,xkA

Li"Vhdj.k-&bl fu;e d ç;ktu l

(a) foHkkxh; dk;okgh dk lLFkkfir dj fn;k x;k le>k tk,xk tc i'ku ikuoky d fo#) fojfpr vkjkik dk ml tkjh fd;k tkrk g vFkok ;fn ljdkjh lod dk ifod frFk l fuycu d vèkhu fd;k x;k g] ml frFk ij lLFkkfir dj fn;k x;k le>k tk,xk] vkj

(b) U;kf;d dk;okgh lLFkkfir dj nh x;h le>h tk,xh%&

(i) nkfMd dk;okgh dh fLFkfr e ml frFk ij ftl ij ifjokn fd;k x;k g vFkok nkfMd U;k;ky; e vkjki&i= nkf[ky fd;k x;k g(vkj

(ii) flfoy dk;okgh dh fLFkfr e ml frFk ij ftl ij ifjokn çLrr fd;k tkrk g vFkok ;FkkfLFkfr flfoy U;k;ky; e vkonu fn;k tkrk gA**

mDr fu;e l ;g çrhr gkxk fd xHkhj vijkèk d fy, nkfMd U;k;ky; }kjk fdlh depkjh dh nk"kfl) ij ljdkj d ikl fofoèk fodYi g vFkkr i'ku jkdu

vFkok ugh jkdu dk] i'ku okil yu vFkok okil ugh yu dk] ij i'ku dk ugh cfYd bld Hkkx dk jkdu vFkok okil yu vFkok ugh jkdu vFkok okil yu dk fodYi gA

tc lcfèkr çkfèkdkjh d ikl fu;ekoyh d vèkhu vud fodYi g vkj mu fodYik e l çR;d dh fofHkUu rjhd l depkjh dk çfrdy :i l çHkkfor dju dh lHkkouk g vkj tc ulfxd U;k; d fl)kr dk vfHk0;Dr :i l lfofèk }kjk vioftr ugh fd;k x;k g] rc mDr fl)kr lEc) depkjh ij çfrdy çHkko dkfjr dju okyk fu.k; yu d igy lcfèkr depkjh dk luokb dk volj nuk vko';d cuk,xA

*oreku ekey e] ,lk volj ugh fn;k x;k gA ulfxd U;k; d fl)krk d mYy?ku d dkj.k fu.k; nf"kr gk x;k gA***

5. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में यह प्रतीत होता है कि कारण बताओ अथवा नोटिस दिए बिना याची के विरुद्ध पेंशन रोकने और इसकी वसूली के आदेशों को प्रभाव दिया गया है यद्यपि इसके सिविल परिणाम होते हैं। अत: आदेश पारित करने के पहले नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के पालन की आवश्यकता है। मामले के उस दृष्टिकोण में याची को सुनवाई का सम्यक अवसर देने के बाद विधि के अनुरुप नया निर्णय लेने की छूट सरकार को देते हुए आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित किया जाता है।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों/निर्देशों के साथ इस रिट याचिका को निपटाया जाता है। परिणामस्वरुप आई॰ ए॰ सं॰ 2687 वर्ष 2009 और आई॰ ए॰ सं॰ 666 वर्ष 2013 भी निपटाए जाते हैं।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

डॉ॰ महेन्द्र कुमार जायसवाल

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 5930 of 2009. Decided on 14th February, 2013.

सेवा विधि–सेवानिवृत्ति देय–याची ने अपनी सेवानिवृत्ति के पहले 21 वर्षों की लगातार सेवा पूरी की थी–याची अपनी सेवानिवृत्ति के समय विभागीय कार्यवाही का सामना कर रहा था–याची को सचिव, स्वास्थ्य विभाग के समक्ष आवश्यक विशिष्टियों सहित अपने दावा/बकायों के संबंध में नया अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता दी गयी–यदि याची का दावा ग्राह्य पाया जाता है, स्वीकृत बकाया/राशि का भुगतान सांविधिक ब्याज के साथ याची को किया जाएगा। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Abir Chatterjee, For the Petitioner; J.C. to Sr. S.C. II, For the State.

आदेश

इस रिट याचिका में याची ने मोडिफायड एश्योर्ड कैरिअर प्रोगेशन (एम॰ ए॰ सी॰ पी॰) योजना के लाभ और वेतन के बकाया का अंतर और सांविधिक ब्याज के साथ समस्त सेवानिवृत्ति देयों के प्रदान और भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने की प्रार्थना की है।

2. यह कथन किया गया है कि याची दिनांक 31.7.2009 को सारथ, जिला देवघर से चिकित्सा अधिकारी के पद से सेवानिवृत्त हुआ। जब याची सेवारत था, उसके विरुद्ध तुच्छ आरोपों पर विभागीय

कार्यवाही आरंभ की गयी थी। उसे दिनांक 30.11.1995 से दिनांक 6.9.1998 तक निलंबन के अधीन रखा गया था। उसकी सेवानिवृत्ति की तिथि पर विभागीय कार्यवाही समाप्त हो जानी चाहिए थी किंतु इसे अवैध रूप से जारी रखा गया था और उस आधार पर उसकी सेवानिवृत्ति लाभों और देयों को रोक लिया गया था। चूँकि आरोप सिद्ध नहीं किए जा सके थे, याची को दिनांक 28.2.2012 के पत्र द्वारा विमुक्त घोषित किया गया था। उक्त घोषणा के बाद भी याची के विधिक बकायों का भुगतान नहीं किया गया था।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि सेवानिवृत्ति की तिथि पर याची के लाभ भुगतान योग्य थे, वह ब्याज के साथ समस्त सेवानिवृत्ति देयों और सेवा समाप्ति लाभों को पाने का हकदार है। याची ने सेवानिवृत्ति के पहले 21 वर्षों का निरंतर सेवा पूरा किया था और मोडिफायड एश्योर्ड करिअर प्रोग्रेशन के योजना, जिसे झारखंड राज्य द्वारा अपनाया गया है, के अनुसार याची द्वितीय एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ के लाभ और वेतन के अंतर के पारिणामिक बकाया को पाने का हकदार है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान कुछ राशि का भुगतान किया गया था किंतु पेंशन नियत नहीं किया गया है और पूर्ण पेंशन का भुगतान नहीं किया गया है। प्रत्यर्थीगण ने पूर्ण उपदान की राशि और निलंबन अवधि के वेतन बकाया जिसे आरोपों से विमुक्त किए जाने के बाद पाने का हकदार याची है और एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ के लाभों जिसका हकदार याची एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ योजना के प्रावधान के अनुरुप है, का भुगतान नहीं किया है। याची ने संबंधित प्राधिकारी के समक्ष बार-बार अनुरोध किया और अभ्यावेदन दाखिल किया किंतु आज की तिथि तक याची को उक्त लाभों/बकायों का भुगतान नहीं किया गया है।

5. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले वरीय स्थायी अधिवक्ता II के जे॰ सी॰ ने निवेदन किया कि सचिव, स्वास्थ्य, चिकित्सा शिक्षा और परिवार कल्याण विभाग, झारखंड सरकार याची के दावा पर विचार करने और समुचित आदेश पारित करने वाला सक्षम प्राधिकारी है और यदि कोई अभ्यावेदन लंबित है और यदि याची अपने दावा के संबंध में नया अभ्यावेदन दाखिल करता है, इस पर किसी विलंब के बिना विचार किया जाएगा और समुचित आदेश पारित किया जाएगा।

6. उक्त निवेदनों पर विचार करते हुए याची को प्रत्यर्थी सं॰ 2 सचिव, स्वास्थ्य, चिकित्सा शिक्षा तथा परिवार कल्याण विभाग, झारखंड सरकार के समक्ष आवश्यक विशिष्टियों के साथ अपने दावा/देयों के संबंध में नया अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए इस रिट याचिका को निपटाया जाता है। अभ्यावेदन की प्राप्ति पर, उक्त प्रत्यर्थी अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से छह: सप्ताह के भीतर विधि के अनुरुप इस पर विचार करेगा और समुचित आदेश पारित करेगा।

7. यदि याची के दावा को ग्राह्य पाया जाता है, यची को तत्पश्चात छह सप्ताह के भीतर सांविधिक ब्याज के साथ स्वीकृत बकाया/राशि का भुगतान किया जाएगा।

8. यदि उक्त अवधि के भीतर याची को भुगतान योग्य राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, याची अंतिम भुगतान की तिथि तक सांविधिक ब्याज के अतिरिक्त 10% वार्षिक ब्याज पाने का हकदार होगा।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

ब्रजेश कुमार एवं अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (C) No. 2418 of 2012. Decided on 26th February, 2013.

रेलवे अधिनियम, 1989—धारा 20(1)—भूमि का अर्जन–भूमि और प्रयोजन जिसके लिए भूमि अर्जित किया जाना आशयित है, का संक्षिप्त वर्णन अधिसूचना में उल्लिखित किया गया है–धारा 20A की उपधारा 2 के अधीन विधि की अपेक्षा पूरा संतुष्ट किया गया है और अधिसूचना उक्त प्रावधान के अनुरूप है और इसे अवैध नहीं माना जा सकता है–अधिसूचना लोकहित में और विशेष रेलवे परियोजना के लिए जारी की गयी थी–किंतु, याची के आपत्तियों/अभ्यावेदनों पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था और इन्हें विनिश्चित नहीं किया गया था–प्रत्यर्थीगण को नए सिरे से याची द्वारा दाखिल आपत्तियों/अभ्यावेदनों पर विचार करने और इन्हें विनिश्चित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 19 से 23)

निर्णयज विधि.–2005 (13) SCC 477—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Ayush Aditya, Debolina Sen, For the Petitioners; Mr. Ram Niwas Roy, For the Railway; S.C. (Mines), For the State.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके अधिसूचना सं॰ 2804 दिनांक 14.12.2011 (परिशिष्ट–2) को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन धनबाद जिला के अंतर्गत मौजा भूदा की भूमि अर्जित करने के प्रयोजन से रेलवे अधिनियम, 1989 की धारा 20A (1) के अधीन अधिसूचना जारी की गयी है यद्यपि उक्त भूमि सौ से अधिक आवासीय गृहों द्वारा आच्छादित है और बिनोद नगर कॉलोनी नामक घनी आबादी वाली आवासीय कॉलोनी है। आगे प्रार्थना किया गया है कि प्रत्यर्थीगण को याचीगण के अपने आवासीय गृहों पर शांतिपूर्ण कब्जा में छेड़छाड़ करने से अवरुद्ध किया जाए विशेषत: जब अधिनियम की धारा 20 (D) के निबंधनानुसार याचीगण द्वारा दाखिल आपत्तियाँ अभी भी लंबित है। यह प्रार्थना भी की गयी है कि न्यूनतम नुकसान के सिद्धांत और सदस्य रेलवे बोर्ड, जिन्होंने स्वीकार किया है कि अधिसूचना (परिशिष्ट–2) द्वारा आच्छादित भूमि आवासीय कॉलोनी से गठित है और इसका अर्जन अनेक व्यक्तियों जिनका विगत तीन दशकों से भी अधिक से अपना मकान है को आवासहीन बनाते हुए विस्थापित करने के तुल्य होगा, की अनुशंसा (परिशिष्ट–4) को दृष्टि में रखते हुए याचीगण की आपत्ति को विनिश्चित करने के लिए प्रत्यर्थीगण को आवश्यक निर्देश जारी किया जाए।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता सुश्री देबोलिना सेन और प्रत्यर्थीगण–रेलवे प्राधिकारीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री राम निवास रॉय को सुना गया और अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. याचीगण का मामला यह है कि वे जिला धनबाद में मौजा भूदा में बिनोद नगर कॉलोनी के निवासी हैं और उन्होंने अपने आवासीय गृह का निर्माण किया है और विगत तीन दशकों से निवास कर रहे हैं। याचीगण के अनुसार, उन्होंने अपने जीवन भर की बचत से और बैंकिंग/वित्तीय संस्थानों से कर्ज लेने के बाद मंजूर किए गए भवन योजना के आधार पर मकानों का निर्माण किया है और उन्हें रैयतों के रूप में मान्यता दी गयी है।

4. याचीगण का मामला यह है कि वर्ष 1989 के अधिनियम को रेलवे (संशोधन) अधिनियम, 2008 (वर्ष 2008 का अधिनियम 11) (इसके बाद संशोधन अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट), जो दिनांक 31.1.2008 से प्रभाव में आया, द्वारा रेलवे से संबंधित विधि को समेकित करने और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था। संशोधन अधिनियम के मुताबिक, केंद्र सरकार को विशेष रेलवे परियोजना, जिसे संशोधन अधिनियम द्वारा पुर:स्थापित धारा 2 (37A) के अधीन परिभाषित किया गया है, के लिए भूमि अर्जित करने की शक्ति प्रदत्त की गयी थी।

5. यह प्रतीत होता है कि दिनांक 14.12.2011 की अधिसूचना दिनांक 4.2.2012 के दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित की गयी थी जिसके द्वारा केंद्र सरकार ने मौजा भूदा में नौ भूखंडों से गठित भूमि अर्जित करने के अपने आशय की घोषणा करते हुए अधिसूचना जारी किया।

6. याचीगण का मामला यह है कि उक्त अधिसूचना यह नहीं दर्शाती है कि संशोधन अधिनियम की धारा 2 (37A) की आवश्यकता परिपूर्ण की गयी है। यह निवेदन किया गया है कि केंद्र सरकार द्वारा प्रश्नगत परियोजना की किसी अधिसूचना के बारे में कोई उल्लेख नहीं है और न ही अन्य प्रासंगिक विवरणों को उल्लिखित किया गया है जो उन्हें अधिनियम की धारा 2 (37A) की परिधि के भीतर वर्गीकृत कर सकता है।

7. यह निवेदन किया गया है कि समस्त याचीगण के अपने आवासीय गृह हैं जो लगभग विगत तीन दशकों से मौजा भूदा के विभिन्न भूखंडों के ऊपर स्थित है। यह निवेदन किया गया है कि कोई सर्वेक्षण नहीं किया गया है और यांत्रिक रूप से अधिसूचना जारी की गयी है।

8. आगे यह निवेदन किया गया है कि रेलवे ट्रैक के दक्षिणी भाग पर विस्तृत रिक्त भूमि है जिनमें से अधिकतर सरकारी भूमि है। यह निवेदन किया गया है कि किसी आवासीय गृह को उजाड़ने की शायद ही आवश्यकता होगी यदि प्रस्तावित निर्माण रेलवे ट्रैक के दक्षिणी भाग पर किया जाता है।

9. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता सुश्री देबोलिना सेन ने जोरदार निवेदन किया कि दिनांक 14.12.2011 की प्रस्तावित अधिसूचना सैंकड़ों आवासों के भंजन के तुल्य होगी जो विगत तीन दशकों से विद्यमान हैं और यह सुनिश्चित है कि लोक प्रयोजन को प्राप्त करते हुए न्यूनतम नुकसान के सिद्धांत को लागू करना होगा। किंतु, आक्षेपित अधिसूचना में उक्त अधिसूचना को अनदेखा कर दिया गया है जिसका परिणाम इन याचीगण के सैकड़ों आवासीय गृहों के भंजन में होगा।

10. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता सुश्री देबोलिना सेन ने आगे निवेदन किया कि उक्त अधिसूचना की जानकारी मिलने पर याचीगण ने तुरन्त सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अपनी आपत्तियों को दाखिल किया है और स्पष्टत: कथन किया है कि दिनांक 14.12.2011 की प्रस्तावित अधिसूचना द्वारा अर्जित किए जाने के लिए प्रस्तावित भूमि के ऊपर उनके आवासीय गृह हैं और कि यदि प्रस्तावित अर्जन को रेलवे ट्रैक के दक्षिणी भाग पर शिफ्ट किया जाता है, जहाँ विशाल भूमि उपलब्ध है, तब न्यूनतम नुकसान के सिद्धांत को प्राप्त किया जा सकता है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, सदस्य, रेलवे बोर्ड ने भी स्वीकार किया है कि उक्त प्रस्तावित अर्जन लोकहित के विरुद्ध है और अनेक व्यक्तियों के आवासीय गृहों के भंजन के तुल्य होगा क्योंकि क्षेत्र अर्थात् बिनोद नगर कॉलोनी घनी आबादी वाला आवासीय क्षेत्र है और तद्नुसार, अनावश्यक और अपरिहार्य विस्थापन को रोकने के लिए और मामले के समस्त पहलूओं को विचार में लेने के बाद सुविचारित निर्णय लेने का सुझाव दिया गया है।

11. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता सुश्री देबोलिना सेन ने अपने निवेदनों के समर्थन में **''सक्षम प्राधिकारी बनाम बंगलोर जूट कारखाना एवं अन्य, 2005 (13) SCC 477,** मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। उक्त निर्णय के पैरा 5 का पठन निम्नलिखित है:–

*5. .....tgk rd bl ç'u dk lcèk g fd D;k vk{kfir vfèklpuk Hkfe dk lf{kIr o.ku nu d lcèk e vfèkfu;e dh èkkjk 3-A (1) dh vko';drk dk ijh djrh g] geu igy gh n'kk;k g fd ;|fi çR;d ekt d lcèk e Hkfe dh Hk[kM l[;k, nh x;h g] Hkfe d fofHkUu VdMk dk li.k :i l vFkok Hkkx e vftr fd;k x;k gA tgk dgh Hkh Hkfe d cM VdM d Hkkx dk v tu gvk g] dkb o.ku ugh fn;k x;k g fd fdl Hkkx dk vftr fd;k tk jgk FkkA tc rd ;g Kkr ugh gkrk g fd fdl Hk&Hkkx dk vftr fd;k tkuk Fkk] ;kphx.k v tu d çHkko dk le>u e vFkok vfèkfu;e d vèkhu fofufn"V ç;ktu l vftr Hkfe d mi;kxdrk d ckj e dkb vkifÙk mBku e vFkok evkotk dk nkok dju e v{ke gkxA ;g lfuf'pr fofèk g fd tgk lfofèk fdlh fo'k"k ÑR; dk fdlh fo'k"k rjhd l vko';d cukrh g ogk og ÑR; mlh jhfr e fd;k tkuk pkfg,A lfofèk d çR;d 'kCn dk bldk lE;d vFk nuk gkxkA gekj nf"Vdk.k e] vk{kfir vfèklpuk lkfofèkd vkKk dk ikyu dju e foQy gA ;g vLi"V gA ,l ekeyk e ftle tk de l de vko';d g ;g g fd v tu vfèklpuk 0;fDr] ftldh Hkfe dk v tu bfIlr fd;k x;k g] dk crk, fd og D;k [kku tk jgk gA vr% bl ekey e vk{kfir vfèklpuk fofèk d vu:i ugh gA***

12. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी रेलवे प्राधिकारियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 14.12.2011 की अधिसूचना, जिसे आधिकारिक गजट में प्रकाशित किया गया था, को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया।

13. प्रत्यर्थी रेलवे प्राधिकारियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री राम निवास राय ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि अधिसूचना लोकहित में और विशेष रेलवे परियोजना के लिए जारी की गयी है और इसे अधिसूचना में उल्लिखित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण की आपत्तियों को सक्षम प्राधिकारी द्वारा सुना गया है और समुचित कार्रवाई की गयी है जैसा अधिनियम की धारा 20 (D) में प्रावधानित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अधिनियम की धारा 20D (3) प्रावधानित करती है कि ऐसी आपत्तियों पर सक्षम प्राधिकारी का आदेश अंतिम होगा।

14. आगे यह निवेदन किया गया है कि डी॰ एफ॰ सी॰ सी॰ आई॰ एल॰ द्वारा सर्वेक्षण किया गया है और टेक्नो-इकोनोमिक सर्वे पर आधारित एलाइन्मेंट को अंतिम रूप दिया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि डी॰ एफ॰ सी॰ सी॰ आई॰ एल॰ के संरेखण को बदला नहीं जा सकता है क्योंकि यह तकनीकी रूप से व्यवहार्य नहीं है क्योंकि धनबाद स्टेशन और यार्ड लाइंस संरेखण के दक्षिणी भाग पर हैं। इसके अतिरिक्त, धनबाद, झरिया प्रधानकुंठा-सिंद्री, धनबाद-कुसुंडा लाइन दक्षिण भाग पर हैं और ये मजबूरियाँ दक्षिण भाग पर डी॰ एफ॰ सी॰ सी॰ आई॰ एल॰ संरेखण की योजना को प्रतिषिद्ध करती हैं। आगे यह निवेदन किया गया है कि परियोजना प्रथम चरण में दोहरे लाइन फ्रेट कॉरिडोर के 3800 कि॰ मी॰ का निर्माण अंतर्ग्रस्त करती है। ऑपरेशनल आवश्यकता के लिए संरेखण मुख्य ट्रंक रुट के समानांतर रखा गया है। ऐसी परियोजना लिनियर प्रकृति की है और सड़कों के विपरीत रेलवे संरेखण को छोटी बाधाओं से बचने के लिए परिवर्तित अथवा विपथित नहीं किया जा सकता है।

15. आगे यह निवेदन किया गया है कि सक्षम प्राधिकारी के समक्ष याचीगण द्वारा की गयी आपत्तियों को सक्षम प्राधिकारी द्वारा सुना गया है और समुचित कार्रवाई की गयी है जैसा रेलवे संशोधन अधिनियम, 2008 की धारा 20D में प्रावधानित किया गया है।

16. अंत में यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण द्वारा अर्जन प्रक्रिया कठोरतापूर्वक रेलवे संशोधन अधिनियम, 2008 के मुताबिक है और विधि का उल्लंघन नहीं किया गया है।

17. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री तथा याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **सक्षम प्राधिकारी बनाम बंगलोर जूट कारखाना एवं अन्य, 2005 (13) SCC 477** मामले के निर्णय के पैरा 14 के परिशीलन पर विचारार्थ उद्भूत होने वाला प्रश्न यह है कि क्या आक्षेपित अधिसूचना और आक्षेपित परिशिष्ट अवैध मनमाने और विधि की दृष्टि में असंपोषणीय हैं; द्वितीयत: क्या आक्षेपित अधिसूचना लोकहित में और विशेष रेलवे परियोजना के लिए जारी की गयी है; तृतीयत: क्या प्रत्यर्थीगण याचीगण की आपत्तियों को विनिश्चित किए बिना याचीगण की रैयती भूमि अर्जित कर सकते हैं?

18. पूर्वोक्त प्रश्नों पर विचार करने के लिए प्रथमत: रेलवे अधिनियम, 1989 जिसे रेलवे संशोधन अधिनियम, 2008 (वर्ष 2008 का अधिनियम 11) द्वारा संशोधित किया गया था और जो दिनांक 31.1.2008 से प्रभाव में आया था की धारा 20A (1) में अंतर्विष्ट प्रावधान को देखने की आवश्यकता है। अधिनियम की धारा 20A निम्नलिखित प्रावधानित करती है:–

> *"20A. **Hkfe] vkfn vftr dju dh 'kfDr-**&(1) tgk dn ljdkj lr"V g fd ykd ç;kstu l fo'k"k jyo ifj;kstuk d fu"iknu d fy, fdlh Hkfe dh vko';drk g] ;g vfèklpuk }kjk ,lh Hkfe vftr dju dk viuk vk'k; ?kkf"kr dj ldrh gA*
>
> *(2) mièkkjk (1) d vèkhu çR;d vfèklpuk Hkfe dk vkj fo'k"k jyo ifj;kstuk ft ld fy, Hkfe vftr fd, tkus d fy, vk'kf;r g] dk lf{kIr fooj.k nxhA***

19. दिनांक 14.12.2011 की अधिसूचना सं॰ 2804 (परिशिष्ट–2) के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि उक्त अधिसूचना में भूमि तथा उस प्रयोजन जिसके लिए भूमि अर्जित किया जाना आशयित है का संक्षिप्त विवरण उल्लिखित किया गया है। रेलवे (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 20A की उपधारा 2 के अधीन विधि की अपेक्षा पूरी की गयी प्रतीत होती है और इसलिए, उक्त अधिसूचना उक्त प्रावधान के अनुरूप प्रतीत होती है और इसे अवैध के रूप में नहीं माना जा सकता है।

20. अब एक अन्य प्रश्न जो विचारार्थ उद्भूत होता है यह है कि क्या उक्त अधिसूचना लोकहित में और विशेष रेलवे परियोजना के लिए जारी की गयी थी। प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र और उक्त प्रतिशपथ पत्र के साथ संलग्न दस्तावेज के परिशीलन पर यह स्पष्टत: प्रदर्शित होता है कि उक्त अधिसूचना लोकहित में और विशेष रेलवे परियोजना के लिए जारी की गयी थी।

21. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किए गए निर्णय, **2005 (13) SCC 477** के पैरा 5 में उक्त अवस्था की दृष्टि में यह याची के मामले की सहायता नहीं करता है। किंतु **''सक्षम प्राधिकारी बनाम बंगलोर जूट कारखाना एवं अन्य मामले (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा

अपनाया गया दृष्टिकोण वर्तमान मामले के प्रयोजन से प्रासंगिक है क्योंकि भूमि खोने वाले याचीगण को पर्याप्त रूप से मुआवजा देने की जरूरत है। उक्त निर्णय के पैरा 14 का पठन निम्नलिखित है:–

*"14. ;g vfHkfuèkkfjr dju ij fd Hkfe d vtu d lcèk e vk{kfir vfèklpuk voèk g D;kfd ;g lkfofèkd vko';drkvk dk ijk dju e foQy g vkj bld vfrfjDr ;g iku ij fd mDr vfèklpuk d vulj.k e oreku ekey e fjV ;kphx.k dh Hkfe dk dCtk fy;k tkuk fofèk d vu#i ugh Fkk] ;g ç'u mnHkr gkrk g fd ^;kphx.k dk dku lk vurk"k inku fd;k tk ldrk gA mPp U;k;ky; u lgh çdkj l lçf{kr fd;k fd oreku ekey e Hkfe dk vtu vR;Ur jk"Vh; egRo dh ifj;ktuk vFkkr jk"Vh; mPp iFk d fuek.k d fy, FkkA vftr Hkfe ij jk"Vh; mPp iFk dk fuek.k igy gh ijk fd;k tk pdk g tlk luokb d nkjku ge lfpr fd;k x;k gA bl pj.k ij vk{kfir vfèklpuk dk vfHk[kfMr dju l dkb mi;kxh ç;ktu ijk ugh gkxkA ge bl fofèkd voLFkk dk vun[kk ugh dj ldr g fd vtu çkfèkdkjh vk{kfir vfèklpuk tkjh dj ldr gA bldk ifj.kke doy ;g gkxk fd Hkfe dh c<rh dherk dk nf"V e j[kr g, HkLokfe;k dk Hkxrku ;kX; evkotk dh jkf'k vkj Hkh vfèkd gk ldrh gA vr%] vfre ç'u Hk&Lokfe;k dk Hkxrku ;kX; evkotk dh ek=k d ckj e gkxkA bl pj.k ij vfèklpuk dk vfHk[kMu vud ef'dyk vkj 0;ogkfjd leL;kvk dk mnHkr djxkA vk{kfir vfèklpuk d vfHk[kMu e vrxLr leL;kvk d fo#) ;kphx.k d vfèkdkjk dk lrfyr djr g, gekjk nf"Vdk.k ;g g fd cgrj jkLrk HkLokfe;k vFkkr fjV ;kphx.k dk lefpr :i l mI pht gr evkotk nuk gkxk ftll mUg ofpr fd;k x;k gA U;k; dk fgr ge ;g jkLrk viuku d fy, dgrk gA***

22. अब तीसरा प्रश्न जो विचारार्थ उद्भूत होता है यह है कि क्या प्रत्यर्थीगण ने याचीगण द्वारा दाखिल आपत्तियों पर समुचित रूप से विचार किया है और इन्हें विनिश्चित किया है?

23. यह प्रतीत होता है कि आपत्तियों/अभ्यावेदनों पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया है और इन्हें विनिश्चित नहीं किया गया है जैसा प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा किया जाना चाहिए था। अत:, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों को वर्तमान याचीगण को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देने के बाद नए सिरे से उनके द्वारा दाखिल आपत्तियों/अभ्यावेदनों पर विचार करने और विनिश्चित करने का निर्देश दिया जाता है। यद्यपि याचीगण ने पहले ही अपनी आपत्तियों और अभ्यावेदनों को प्रस्तुत किया है, फिर भी याचीगण को इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर नया अभ्यावेदन दाखिल करने का अवसर देने की आवश्यकता है ताकि याचीगण संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष अपना मामला रखने का अवसर पा सके। ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति पर, रेलवे प्राधिकारीगण उक्त अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे।

24. प्रत्यर्थी रेलवे प्राधिकारियों से उम्मीद की जाती है कि लोक प्रयोजन प्राप्त करते हुए न्यूनतम नुकसान के सिद्धांत को ध्यान में रखकर निष्पक्ष मूल्यांकन करेंगे और इसलिए रेलवे प्राधिकारीगण अनेक कारकों जैसे स्थल पर मौजूद अवस्था, भूमि की प्रकृति और अवस्था, आवासीय गृहों यदि हो और हानि जिसे याचीगण द्वारा उपगत किए जाने की संभावना है और व्यक्तियों, जिनके घर/भूमि को व्यापक लोक

हित प्राप्त करने में ऐसे अर्जन के कारण अर्जन के अधीन किया गया है, को मुआवजा की राशि जिसका रेलवे द्वारा भुगतान करने की आवश्यकता है, को विचार में लेंगे।

25. रेलवे प्राधिकारियों द्वारा अभ्यावेदनों को विनिश्चित किए जाने तक रेलवे प्राधिकारियों को लोक प्रयोजन प्राप्त करते हुए याचीगण के घरों को न्यूनतम नुकसान कारित करने के सिद्धांत का पालन करते हुए रेल पटरी बिछाने का काम करने की छूट होगी।

26. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

महेशी साव

cuke

नियोक्ता, मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ धनबाद के पश्चिम मुडीडीह कोलियरी के प्रबंधन के संबंध में

W.P. (L) No. 1428 of 2012. Decided on 12th March, 2013.

उपदान संदाय अधिनियम, 1972—धारा 7 (3)—उपदान–ब्याज–इसके भुगतान योग्य हो जाने की तिथि से 30 दिनों के भीतर उपदान की राशि का भुगतान करने की व्यवस्था करना नियोक्ता का कर्तव्य है–याची शायद औद्योगिक निर्देश का अनुसरण कर रहा हो किंतु अपनी सांविधिक बाध्यता के आधार पर प्रत्यर्थी स्वयं नियंत्रक प्राधिकारी से अनुमति प्राप्त कर सकता था जैसा इस मामले में किया गया प्रतीत नहीं होता है–उपदान के विलंबित भुगतान पर ब्याज से इनकार करने वाला आक्षेपित आदेश संपोषणीय नहीं है और तद्नुसार अपास्त किया जाता है–प्रत्यर्थी को उपदान राशि के ऊपर सांविधिक ब्याज का भुगतान करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s. Ajay Kumar Singh, For the Petitioner; M/s Ananda Sen, Amit Kumar Verma, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची स्वयं को भुगतान योग्य उपदान की राशि पर ब्याज का दावा कर रहा है जिससे प्रत्यर्थी द्वारा इनकार किया गया है। उपदान संदाय अधिनियम, 1972 के अधीन नियंत्रक प्राधिकारी ने आवेदन सं॰ 36 (38)/2009 E4 में पारित दिनांक 20.8.2010 के आदेश के तहत याची को भुगतान योग्य उपदान की राशि पर ब्याज की अनुमति देने से इनकर किया और पी॰ जी॰ अपील/(33)/2010 में पारित दिनांक 14.4.2011 के अपीलीय आदेश द्वारा अपीलीय प्राधिकारी ने भी याची की प्रार्थना अस्वीकार करते हुए मूल प्राधिकारी के आदेश को संपुष्ट किया।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची को दिनांक 4.5.1998 की नोटिस (परिशिष्ट–1) के तहत दिनांक 15.9.1998 के प्रभाव से प्रत्यर्थी द्वारा अधिवर्षित किया गया था। याची ने दिनांक 15.9.1938 के स्थान पर दिनांक 20.3.1946 के रूप में अपनी जन्मतिथि सही करवाने के लिए दिनांक 14.7.1998 को औद्योगिक विवाद उठाया था। उक्त औद्योगिक विवाद को अधिकरण, धनबाद के समक्ष निर्दिष्ट किया गया था जहाँ इसे निर्देश केस सं॰ 294 वर्ष 2000 के रूप में दर्ज किया गया था, जिसे अंततः दिनांक

17.1.2010 को याची के विरुद्ध निपटाया गया था। याची ने सेवानिवृत्ति पश्चात देयों के भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण पर निर्देश इप्सित करते हुए रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 641 वर्ष 2008 दाखिल किया जिसे दिनांक 13.12.2008 को निपटाया गया था। (परिशिष्ट–3) और प्रत्यर्थीगण को केंद्रीय औद्योगिक अधिकरण, धनबाद द्वारा निर्देश मामले के न्याय निर्णयन के अध्यधीन याची के दावे पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना अनुबंधित समय के भीतर याची को उसके स्वीकृत सेवा निवृत्ति देयों को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया गया था। याची का प्रतिवाद यह है कि इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त आदेश पारित किए जाने के बाद प्रत्यर्थी ने दिनांक 15.12.2008 को नियंत्रक प्राधिकारी के समक्ष उपदान की राशि को जमा किया और उसे नियंत्रक प्राधिकारी के समक्ष दावा करने के लिए सूचित किया गया था। तत्पश्चात, उसने सांविधिक ब्याज के साथ उपदान का भुगतान इप्सित करते हुए नियंत्रक प्राधिकारी के समक्ष पी॰ जी॰ एक्ट, 1972 की धारा 7(2) और (3) के अधीन अपना आवेदन दाखिल किया। यद्यपि नियंत्रक प्राधिकारी ने उपदान राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया किंतु ब्याज का अनुरोध दिनांक 20.8.2010 के आदेश (परिशिष्ट–5) के तहत अस्वीकार कर दिया गया था। तत्पश्चात, उसने उपदान के विलंबित भुगतान पर ब्याज का भुगतान करने के लिए निर्देश के लिए अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष पी॰ जी॰ अपील सं॰ 33 वर्ष 2010 दाखिल किया। दिनांक 14.4.2011 के आदेश, परिशिष्ट 7, के तहत उक्त अपील अस्वीकार कर दी गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि पी॰ जी॰ अधिनियम, 1972 की धारा 7 के अधीन उपदान की राशि विनिश्चित करना और इसके बारे में व्यक्ति को लिखित में नोटिस देना और इस प्रकार विनिश्चित उपदान की राशि को विनिर्दिष्ट करते हुए नियंत्रक प्राधिकारी को भी सूचित करना नियोक्त पर बाध्यकारी है। यह प्रतिवाद किया गया है कि यद्यपि याची ने पहले उक्त राशि के भुगतान के लिए आवेदन नहीं दिया हो किंतु व्यक्ति, जिसको उपदान भुगतान योग्य है, को भुगतान योग्य बन जाने की तिथि से तीस दिनों के भीतर उपदान की राशि का भुगतान करने का प्रबंध करना नियोक्ता का कर्तव्य है।

4. किंतु, प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वर्ष 1998 में अपनी सेवानिवृत्ति के पश्चात याची ने औद्योगिक विवाद उठाया है और औद्योगिक अधिकरण के समक्ष निर्देश किया गया था जिसे वर्ष 2010 में विनिश्चित किया गया था। याची वर्ष 2008 में सेवानिवृत्ति पश्चात देयों के भुगतान के लिए इस न्यायालय के समक्ष आया और केवल दिनांक 26.12.2008 को उपदान के भुगतान के लिए आवेदन दाखिल किया और इस प्रकार प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण उपदान के भुगतान में विलंब के लिए जिम्मेदार नहीं थे। अत:, आक्षेपित आदेश समुचित तरीके से पारित किया गया था क्योंकि प्रत्यर्थी उपदान के भुगतान में विलंब के लिए ब्याज का भुगतान करने का दायी नहीं है क्योंकि विलंब उसके द्वारा किए गए मुकदमा के कारण कारित हुआ था।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। यह सत्य है कि याची ने अपनी समयपूर्व सेवानिवृत्ति के संबंध में सक्षम अधिकरण के समक्ष औद्योगिक विवाद उठाया था किंतु धारा 7 (3A) अनुबंधित करती है कि ऐसा ब्याज भुगतान योग्य नहीं होगा यदि भुगतान में विलंब कर्मचारी की गलती के कारण है और नियोक्ता ने इस आधार पर विलंबित भुगतान के लिए नियंत्रक प्राधिकारी से लिखित में अनुमति प्राप्त किया है। प्रकटत:, प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ ने इस आधार पर भी कि स्वयं याची उनके विरुद्ध निर्देश मामले का अनुसरण कर रहा था, उपदान राशि के भुगतान में विलंब के लिए नियंत्रक प्राधिकारी से लिखित में अनुमति प्राप्त नहीं किया है। पी॰ जी॰ अधिनियम, 1972 की धारा 7 (3) के अधीन व्यक्ति, जिसको उपदान भुगतान योग्य है, को भुगतान योग्य बन जाने की तिथि से तीस दिनों के भीतर उपदान की राशि का भुगतान करने का प्रबंध करना नियोक्ता का कर्तव्य है। स्वयं प्रत्यर्थीगण ने याची को दिनांक 15.9.1998 को सेवा निवृत्त किया और नियंत्रक प्राधिकारी के समक्ष उपदान राशि जमा करना उनके ऊपर बाध्यकारी था जैसा उन्होंने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 641 वर्ष 2008 में इस न्यायालय द्वारा आदेश पारित

किए जाने के बाद किया। यद्यपि, याची शायद औद्योगिक निर्देश का अनुसरण कर रहा था किंतु सांविधिक बाध्यता के आधार पर स्वयं प्रत्यर्थी नियंत्रक प्राधिकारी से अनुमति प्राप्त कर सकता था जैसा इस मामले में किया गया प्रतीत नहीं होता है। इन परिस्थितियों में, उपदान के विलंबित भुगतान पर ब्याज से इनकार करने वाला आक्षेपित आदेश विधि में और तथ्यों पर संपोषणीय प्रतीत नहीं होता है। अतः, उस प्रभाव तक का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। प्रत्यर्थीगण को उपदान संदाय अधिनियम, 1972 के मुताबिक विलंब की अवधि के लिए उपदान राशि के ऊपर सांविधिक ब्याज का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

6. तद्नुसार पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

सुष्मिता कुमारी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W. P. (S) No. 5237 of 2011. Decided on 2nd December, 2011.

सेवा विधि–चयन–रद्दकरण–आंगनबाड़ी सेविका का पद–याची का चयन अपास्त किया गया और सी॰ डी॰ पी॰ ओ॰ को आंगनबाड़ी सेविका के चयन और नियुक्ति के लिए नयी आम सभा आहूत करने का निर्देश दिया गया–उपायुक्त को इस आधार पर याची की नियुक्ति रद्द करने की शक्ति नहीं है कि इसे नियमावली के उल्लंघन में किया गया था–यदि याची की नियुक्ति में अनियमितता की गयी थी, नियुक्ति रद्द करने वाला समुचित प्राधिकारी निदेशक, सामाजिक कल्याण है और न कि उपायुक्त–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 5 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioner; J.C. to G.P. I., For the State; Mr. Vijay Kumar Roy, For Respondent No. 5.

आदेश

यह रिट आवेदन केस सं॰ 11 वर्ष 2011 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 (उपायुक्त, गिरीडीह) द्वारा पारित दिनांक 19.8.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा उत्तीमटांड़ आंगनबाड़ी केन्द्र के आंगनबाड़ी सेविका के पद पर नियुक्ति के लिए याची का चयन अनुमोदित करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा लिया गया निर्णय अपास्त कर दिया गया है और सी॰ डी॰ पी॰ ओ॰ (प्रत्यर्थी सं॰ 4) को आंगनबाड़ी सेविका के चयन और नियुक्ति के लिए नयी आम सभा आहूत करने का निर्देश दिया गया है।

2. यह कथन किया गया है कि याची को परिशिष्ट-3 में अंतर्विष्ट आदेश के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 3 के अनुमोदन के साथ उत्तीमटांड़ आंगनबाड़ी केन्द्र के आंगनबाड़ी सेविका के पद पर नियुक्त किया गया था। आगे यह कथन किया गया है कि किसी संगीता कुमारी (प्रत्यर्थी सं॰ 5) ने याची की नियुक्ति को चुनौती देते हुए इस न्यायालय में रिट आवेदन दाखिल किया जिसे परिशिष्ट 6 में अंतर्विष्ट आदेश द्वारा निपटाया गया था। परिशिष्ट 6 प्रकट करता है कि इस न्यायालय ने संगीता कुमारी के पूर्वोक्त रिट आवेदन

को ग्रहण करने से इनकार कर दिया क्योंकि उपायुक्त (प्रत्यर्थी सं॰ 2) के समक्ष जाँच लंबित है। यह प्रतीत होता है कि उपायुक्त जाँच करने के बाद इस निष्कर्ष पर आए कि प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना याची का चयन किया गया था, अत: डी॰ डी॰ सी॰ द्वारा दिया गया अनुमोदन विधि के अनुरुप नहीं है। तद्नुसार, दिनांक 19.8.2011 के आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–7) द्वारा याची के चयन को अनुमोदन देते हुए डी॰ डी॰ सी॰ के निर्णय को अपास्त कर दिया गया है और प्रत्यर्थी सं॰ 4 को आंगनबाड़ी सेविका के चयन के लिए नयी आम सभा आहूत करने का निर्देश दिया गया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री पांडे नीरज राय द्वारा निवेदन किया गया है कि डी॰ सी॰ को इस आधार पर नियुक्ति रद्द करने की शक्ति नहीं है कि इसे राज्य सरकार द्वारा जारी परिपत्र (परिशिष्ट–1) में अधिकथित प्रक्रिया के उल्लंघन में किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि परिशिष्ट–1 के खंड–17 में यह उल्लिखित किया गया है कि यदि आंगनबाड़ी सेविका को नियमावली के उल्लंघन में नियुक्त किया जाता है, तब निदेशक, सामाजिक कल्याण को ऐसी नियुक्ति रद्द करने की शक्ति है। यह भी निवेदन किया गया है कि निदेशक, सामाजिक कल्याण के आदेश के विरुद्ध अपील विभागीय सचिव के समक्ष की जाएगी। यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने याची के चयन को अनुमोदित करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 3 के निर्णय को अपास्त कर दिया क्योंकि सम्यक प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया है। श्री राय के अनुसार, परिशिष्ट–1 के खंड 17 की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 2 को पूर्वोक्त आदेश पारित करने की शक्ति नहीं है।

4. जी॰ पी॰ 1 के विद्वान जे॰ सी॰ और प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची की नियुक्ति अवैध है क्योंकि इसे परिशिष्ट 1 में अंतर्विष्ट परिपत्र के खंडों 13 और 14 के उल्लंघन में किया गया था। इस प्रकार, वे निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने प्रत्यर्थी सं॰ 3 का उच्चतर प्राधिकारी होने के नाते सही प्रकार से नियुक्ति अपास्त किया है और सी॰ डी॰ पी॰ ओ॰ को नयी ग्राम सभा आहूत करने के लिए कहा है ताकि विधि के अनुरुप आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति की जा सके।

5. निवेदन सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। स्वीकृत रूप से झारखंड राज्य ने आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति के लिए और उनकी सेवा समाप्ति के लिए अनेक प्रक्रियाओं को अधिकथित करते हुए परिपत्र जारी किया। परिशिष्ट–1 के खंड 17 के मुताबिक, यदि नियमावली के उल्लंघन में आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति की जाती है, तब उसकी नियुक्ति रद्द करने के लिए निदेशक, सामाजिक कल्याण सक्षम है। उक्त नियम आगे प्रावधानित करता है कि निदेशक, सामाजिक कल्याण द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध अपील विभागीय सचिव के समक्ष की जाएगी। पूर्वोक्त परिपत्र का खंड 16 प्रावधानित करता है कि यदि नियुक्ति के बाद आंगनबाड़ी सेविका 15 दिनों तक सेवा से अनुपस्थित बनी रहती है अथवा उसकी सेवा संतोषजनक नहीं है, तब सी॰ डी॰ पी॰ ओ॰, डी॰ डी॰ सी॰ के अनुमोदन से उसकी सेवा समाप्त कर सकता है। यह आगे प्रावधानित करती है कि सी॰ डी॰ पी॰ ओ॰ द्वारा पारित सेवा समाप्ति के पूर्वोक्त आदेश के विरुद्ध व्यथित व्यक्ति उपायुक्त (प्रत्यर्थी सं॰ 2) के समक्ष अपील कर सकता है।

6. इस प्रकार, परिशिष्ट 1 में अंतर्विष्ट पूर्वोक्त प्रावधानों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 को किसी नियुक्ति को इस आधार पर रद्द करने की शक्ति नहीं है कि इसे नियमावली के उल्लंघन में किया गया है। परिशिष्ट–7 (आक्षेपित आदेश) के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने याची की नियुक्ति का आदेश अपास्त कर दिया क्योंकि इसे परिशिष्ट–1 में अंतर्विष्ट राज्य सरकार द्वारा विहित नियमावली के उल्लंघन में किया गया था। उसे यह शक्ति नहीं थी क्योंकि परिशिष्ट–1 के खंड 17 के अनुसार ऐसी शक्ति निदेशक, सामाजिक कल्याण में निहित की गयी है।

7. प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित की गयी अनियमितताएँ अर्थात् ग्राम सभा ने याची के नाम की अनुशंसा नहीं की थी और/अथवा डी॰ डी॰ सी॰ ने परिशिष्ट–1 के खंड 14 के उल्लंघन में चयन कमिटी की अनुशंसा की प्राप्ति की तिथि से 15 दिन बीतने के बाद अनुमोदन दिया, प्रत्यर्थी सं॰ 2 को नियुक्ति के पूर्वोक्त आदेश को अपास्त करने की शक्ति नहीं देगी। प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित की गयी पूर्वोक्त अनियमितताएँ केवल यह दर्शाती है कि याची की नियुक्ति परिशिष्ट–1 में अधिकथित प्रक्रिया के उल्लंघन में की गयी थी। यदि ऐसी अनियमितताएँ हैं, जैसा प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित किया गया है, तब नियुक्ति रद्द करने वाला समुचित प्राधिकारी निदेशक, सामाजिक कल्याण है और न कि उपायुक्त।

8. चूँकि प्रत्यर्थी सं॰ 2 को याची की नियुक्ति रद्द करने की शक्ति नहीं है क्योंकि इसे नियमावली के उल्लंघन में किया गया है, मेरे दृष्टिकोण में आक्षेपित आदेश अधिकारिताहीन है और विधि की दृष्टि में अविद्यमान है।

9. परिणामस्वरुप, इस आवेदन को अनुज्ञात किया जाता है और केस सं॰ 11 वर्ष 2011 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 (उपायुक्त) द्वारा पारित दिनांक 19.8.2011 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

कैलाश रजक

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 3507 of 2010. Decided on 26th February, 2013

सेवा विधि–प्रोन्नति–सहायक खनन अधिकारी के पद से जिला खनन अधिकारी के रिक्त पद पर नियमित प्रोन्नति के लिए दावा और आगे की प्रोन्नति एवं समस्त पारिणामिक लाभों को प्रदान करने के लिए भी दावा–याची को पहले ही दांडिक मामले में आरोपों से दोषमुक्त किया गया है–विभाग के अभिलेख के विपरीत याची के दावा का विरोध किया गया है–काफी पहले दिनांक 10.6.2009 को विभागीय प्रोन्नति कमिटि द्वारा जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नति के लिए याची के नाम को अनुशंसित किया गया था–याची झारखंड राज्य में कार्यरत वरीयतम सहायक खनन अधिकारी है–प्रमुख सचिव के याची के दावा पर तार्किक आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Saurav Arun, For the Petitioner; J.C. to S.C. 1, For the State.

आदेश

इस रिट याचिका में याची ने सहायक खनन अधिकारी के पद से जिला खनन अधिकारी के रिक्त पद पर नियमित प्रोन्नति के लिए उस पर विचार करने के लिए और अतिरिक्त प्रोन्नति के लिए भी और समस्त पारिणामिक लाभों को प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए प्रार्थना किया है।

2. यह कथन किया गया है कि याची जुलाई, 1984 से सहायक खनन अधिकारी का पद धारण कर रहा है। वह दिसंबर, 1990 से जिला खनन प्रभारी अधिकारी के कर्तव्य का निर्वहन भी कर रहा है। याची के पास जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नत किए जाने के लिए समस्त आवश्यक पात्रता तथा

अर्हता है। अत: याची ने जिला खनन अधिकारी के पद पर अपनी प्रोन्नति पर विचार किए जाने के लिए विभागीय प्राधिकारी के समक्ष अभ्यावेदन दिया। विभागीय प्रोन्नति कमिटी ने दिनांक 1.10.1992 के प्रभाव से जिला खनन अधिकारी के पद पर याची की प्रोन्नति की अनुशंसा की। इसके बावजूद याची की प्रोन्नति इस अभिवचन पर रोक दी गयी है कि उसके विरुद्ध दांडिक मामला लंबित है। याची को दांडिक मामले में पहले ही आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है। दोषमुक्ति के बाद, याची ने संबंधित प्राधिकारी के समक्ष विभागीय प्रोन्नति कमिटी की अनुशंसा के मुताबिक जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नति प्रदान करने के लिए अभ्यावेदन दिया। अन्य संबंधित प्राधिकारियों ने उसकी प्रोन्नति की अनुशंसा की। किंतु इसके बावजूद आज की तिथि तक प्रोन्नति के उसके दावा पर आदेश पारित नहीं किया गया है। याची अरसे से जिला खनन प्रभारी अधिकारी के रूप में कार्यरत है और जिला खनन अधिकारी के समस्त कर्तव्यों का निर्वहन कर रहा है किंतु उसकी प्रोन्नति रोक कर उसे जिला खनन अधिकारी को ग्राह्य लाभों से वंचित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची झारखंड राज्य में वरीयतम सहायक खनन अधिकारी है और जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नत किए जाने योग्य है।

3. प्रत्यर्थीगण ने प्रतिशपथ पत्र दाखिल करके रिट याचिका का विरोध किया है। अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि यद्यपि याची वरीयतम सहायक खनन अधिकारी है, उसके पास जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नत किए जाने के लिए अध्यपेक्षित अर्हता नहीं है। किंतु यह स्वीकार किया गया है कि विभागीय प्रोन्नति कमिटी ने पद के लिए याची की पात्रता पर विचार करने के बाद काफी पहले उसकी प्रोन्नति की अनुशंसा की है। अन्य प्राधिकारियों ने भी उसकी प्रोन्नति की अनुशंसा की है।

4. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विभागीय प्रोन्नति कमिटी जो सक्षम निकाय है और विभाग के उच्चतर प्राधिकारियों की अनुशंसाओं को विचार में लिए बिना इस रिट याचिका में याची के दावा का द्वेष पूर्वक विरोध किया गया है। केवल विरोध के लिए प्रतिशपथ पत्र में तुच्छ अभिवचन किए गए हैं।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर, मैं पाता हूँ कि विभाग के अभिलेख के विपरीत याची के दावा का विरोध किया गया है। काफी पहले दिनांक 10.6.2009 को विभागीय प्रोन्नति कमिटी द्वारा जिला खनन अधिकारी के पद पर प्रोन्नति के लिए याची के नाम की अनुशंसा की गयी थी। विभाग के उच्चतर प्राधिकारियों ने भी याची की प्रोन्नति की अनुशंसा की थी। यह विवादित नहीं है कि याची झारखंड राज्य में वरीयतम सहायक खनन अधिकारी है। इसके बावजूद, यदि प्रत्यर्थीगण के पास याची की प्रोन्नति रोकने के लिए न्यायोचित आधार है, उन्हें याची के दावा पर सकारण आदेश पारित करना चाहिए था। किंतु आज की तिथि तक सक्षम प्राधिकारी द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया है।

6. उक्त पर विचार करते हुए प्रमुख सचिव, खान एवं भू-गर्भशास्त्र विभाग, झारखंड सरकार को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह के भीतर याची के दावा पर सकारण और तार्किक आदेश पारित करने का निर्देश देते हुए इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

7. प्रत्यर्थीगण लिखित में याची को आदेश की संसूचना देंगे।

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

राजेन्द्र प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 5047 of 2002. Decided on 8th March, 2013

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में

झारखंड सेवा संहिता, 2000—नियम 97 सह-पठित मूल नियमावली का नियम 54—दंड-अवचार-सेवा संहिता के नियम 97 का सहारा लेने के पहले कर्मचारी को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किए जाने की आवश्यकता है—चूँकि याची को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने का दायी है—प्रत्यर्थी को विधि के अनुरुप मामले में अग्रसर होने की स्वतंत्रता दी गयी—रिट याचिका अंशतः अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 3, 11, 12 एवं 23)

निर्णयज विधि.—1988 PLJR 82; 2003 (4) PLJR 71; AIR 1968 SC 240; 2003 (3) JCR 102 (Jhr); (2005)3 JLJR 141—Relied on.

अधिवक्तागण.—Mr. A. R. Sarangi, For the Petitioners J.C. to C.A., For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.—याची ने दिनांक 27.6.2001, 20.5.2002/31.5.2002 के आदेशों को चुनौती दिया है। याची के विरुद्ध विभागीय जाँच की गयी थी और अभिकथित अवचार सिद्ध पाया गया है, अतः दिनांक 27.6.2001 का दंड का आदेश पारित किया गया है और इसकी अपील भी अपीलीय प्राधिकारी द्वारा अस्वीकार कर दी गयी है। अतः वह इस न्यायालय के पास आया है।

2. याची जो लेखा लिपिक के रूप में कार्यरत था को निलंबन के अधीन किया गया था और दिनांक 12.12.1997 को उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी। दिनांक 3.2.1998 को याची पर आरोप मेमो तामील किया गया था और उसने दिनांक 25.5.1998 को अपना उत्तर दाखिल किया। याची ने उच्च न्यायालय में सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2221 वर्ष 1997 (R) दाखिल किया जिसमें प्रत्यर्थीगण को पाँच माह की अवधि के भीतर विभागीय कार्यवाही समाप्त करने का निर्देश दिया गया था जिसमें विफल रहने पर निलंबन आदेश वापस ले लिया जाना था। चूँकि दिनांक 20.5.1998 के आदेश को प्रभाव नहीं दिया गया था, याची ने अवमान मामला एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 110 वर्ष 1999 (R) दाखिल किया। किंतु, निलंबन आदेश प्रतिसंहृत कर दिया गया था और इसलिए, अवमान कार्यवाही छोड़ दी गयी थी। याची ने पुनः उच्च न्यायालय में सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2407 वर्ष 2000 (R) दाखिल किया क्योंकि विभागीय कार्यवाही दो वर्ष बाद भी समाप्त नहीं की गयी थी। उच्च न्यायालय ने आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर विभागीय कार्यवाही समाप्त करने के निर्देश के साथ रिट याचिका निपटाया जिसमें विफल रहने पर विभागीय कार्यवाही प्रतिसंहृत हो जानी थी। याची का मामला यह है कि विभागीय कार्यवाही दो माह की अवधि के भीतर समाप्त नहीं की गयी थी जैसा उच्च न्यायालय द्वारा निर्देश दिया गया था, फिर भी याची पर अनेक दंडों को अधिरोपित करते हुए दिनांक 27.6.2001 का आदेश पारित किया गया था। याची ने दिनांक 27.6.2001 के आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल किया। किंतु, चूँकि उसकी अपील निपटायी नहीं गयी थी, उसने पुनः उच्च न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1814 वर्ष 2002 दाखिल किया जिसे अपीलीय प्राधिकारी को तीन माह की अवधि के भीतर याची की अपील को विनिश्चित करने का निर्देश देते हुए दिनांक 19.3.2002 को निपटाया गया था। अपीलीय प्राधिकारी ने

दिनांक 20.5.2002 के आदेश द्वारा याची की अपील को अस्वीकार कर दिया, अत: याची वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

3. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें यह इंगित किया गया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2407 वर्ष 2000 (R) में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 4.8.2000 के आदेश के अनुपालन में विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी, किंतु क्षेत्रीय शिक्षा उप निदेशक के निलंबन के कारण पद दिनांक 19.9.2000 से दिनांक 9.5.2001 की अवधि के बीच रिक्त बना रहा और इसलिए अनुबंधित समय के भीतर विभागीय कार्यवाही पूरी नहीं की जा सकी थी। याची के विरुद्ध महिला अधिकारी के साथ दुर्व्यवहार करने का अभिकथन है और इस संबंध में पुलिस थाना में मामला भी दर्ज किया गया था। याची के विरुद्ध आरोप सिद्ध पाया गया था और इसलिए उसे दंडित किया गया है। दंड का आदेश न्यायोचित और समुचित है और इस न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि चूँकि विभागीय कार्यवाही दो माह की अनुबंधित अवधि के भीतर समाप्त नहीं की गयी थी जैसा उच्च न्यायालय द्वारा सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2407 वर्ष 2000 (R) में निर्देश दिया गया था, विभागीय कार्यवाही दिनांक 9.10.2000 को समाप्त हो गयी थी और इसलिए, दिनांक 27.6.2001 का आदेश अवैध है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में याची के विद्वान अधिवक्ता ने **शंभुकांत दूबे बनाम झारखंड राज्य, (**2005)3 JLJR 141, में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि दिनांक 7.10.1997 के पत्र की दृष्टि में यह स्पष्ट हो जाता है कि याची अपना कर्तव्य ग्रहण नहीं कर सका था क्योंकि स्थानांतरण आदेश में पदस्थापन का स्थान गलत रूप से उल्लिखित किया गया था। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि आदेश, कि निलंबन की अवधि के दौरान वह निर्वाह भत्ता के सिवाए किसी अन्य चीज का हकदार नहीं होगा, विधि में दोषपूर्ण है क्योंकि उसे झारखंड सेवा संहिता के नियम 97 (3) और (5) के निबंधनानुसार कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ सं॰ 9 में किए गए कथन पर विश्वास किया है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *"9. fd fjV ;kfpdk d ijkvk 10 vkj 12 e fd, x, dFku d lcèk e ;g fuonu fd;k x;k g fd ifjf'k"V A d ifj'khyu l ;g Li"V gkxk fd ekuuh; U;k;ky; d fun'k (ifjf'k"V 4) d ckotn ;kph u foHkkxh; dk;okgh e bl vfHkl{kh d lkFk ç;ktuiod lg;kx ugh fd;kA vkx ;g fuonu fd;k x;k g fd ifjf'k"V&4 d ifj'khyu l ;g Li"V gkxk fd ;|fi ;kph lpkyu vfèkdkjh d le{k mifLFkr gvk fdr foHkkxh; dk;okgh e lg;kx ugh fd;k vkj bl çdkj ekuuh; U;k;ky; d fun'k d vkykd e foHkkxh; dk;okgh e lg;kx dju d lcèk e tkp vfèkdkjh }kjk vFkok vu'kkfud çkfèkdkjh }kjk ;kph l iNrkN dju dk ç'u gh ugh gA***

7. सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2407 वर्ष 2000 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 4.8.2000 के आदेश के अननुपालन के आधार पर दिनांक 27.6.2001 के दंड के आदेश की पोषणीयता पर विचार किए बिना मैं पाता हूँ कि दंड सं॰ 1 परिशिष्ट–12 को देखते हुए संपोषणीय नहीं है जो क्षेत्रीय शिक्षा उपनिदेशक, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा जारी दिनांक 7.10.1997 का पत्र है। उक्त पत्र में

पदस्थापन का स्थान गलत रूप से उल्लिखित किया गया है जैसा याची के विद्वान अधिवक्ता ने सही प्रकार से इंगित किया है। स्थानांतरण आदेश दिनांक 17.2.1997 को जारी किया गया था और परिशिष्ट–12 में अंतर्विष्ट पत्र दिनांक 7.10.1997 को जारी किया गया था और परिशिष्ट–12 के आधार पर विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि यह समय पर पद ग्रहण नहीं करने का कारण था। मैं याची के अधिवक्ता के निवेदन को स्वीकार करने का इच्छुक हूँ।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार करते हुए कि यह अभिनिर्धारित करने वाला कि याची निलंबन की अवधि के दौरान केवल निर्वाह भत्ता का हकदार था, आदेश पारित करने के पहले याची को पृथक कारण बताओ नोटिस जारी करने की आवश्यकता थी, मैं पाता हूँ कि **शराफत हुसैन बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य,** 2003 (3) JCR 102 (Jhr.) मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि बिहार सेवा संहिता के नियम 97 का सहारा लेने के पहले कर्मचारी को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किए जाने की आवश्यकता है।

9. बिहार सेवा संहिता का नियम 97 और मूल नियमावली का नियम 54 समविषयक है। बिहार सेवा संहिता के नियम 97 को नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^fu;e 97 (1) tc ljdkjh lod ftl c[kkLr fd;k x;k g] gVk;k x;k g vFkok fuyfcr fd;k x;k g] dk iucgky fd;k tkrk g] iucgkyh dk vkn'k nu oky l{ke çkfèkdkjh dk&

(a) dr0; l mldh vuifLFkfr dh vofèk d fy, ljdkjh lod dk Hkxrku fd, tku oky oru rFkk HkÙkk d lEcUèk e] rFkk

(b) D;k mDr vofèk dk dÙk0; ij fcrk;h x;h vofèk ekuh tk,xh ;k ugh d lcèk e fopkj djuk gkxk vkj fofufn"V vkn'k ikfjr djuk gkxkA

(2) tgk mifu;e (1) e mfYyf[kr çkfèkdkjh dk er g fd ljdkjh lod dk i.kr% foeDr dj fn;k x;k g] vFkok fuycu dh fLFkfr e] fd ;g i.kr% vU;k;kfpr Fkk] ljdkjh lod dk ijk oru vkj HkÙkk ftl dk og gdnkj gkrk ;fn ml ;FkkfLFkfr c[kkLr ugh fd;k tkrk] gVk;k ugh tkrk vFkok fuyfcr ugh fd;k tkrk] nuk gkxkA

(3) vU; ekeyk e ljdkjh lod dk ,l oru vkj HkÙkk dk ,lk vuikr fn;k tk,xk tl k ,lk l{ke çkfèkdkjh fofgr dj ldrk gA

ijUr ;g fd [kM (2) vFkok [kM (3) d vèkhu HkÙkk dk Hkxrku vU; leLr 'krk d vè;èkhu gkxk ftl d vèkhu ,lk HkÙkk xkg; gA

(4) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk leLr ç;ktu l dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ekuk tk,xkA

(5) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ugh ekuh tk,xh tc rd ,lk l{ke çkfèkdkjh fofufn"Vr% fun'k ugh nrk g fd bl fdl h fofufn"V ç;ktu l ,lk ekuk tk,xk%

*ijUr ;g fd ;fn ljdkjh lod ,lk pkgrk g fd ,lk çkfèkdkjh fun'k n ldrk g fd dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk ljdkjh lod dk n; rFkk xkg; fdl h çdkj d vodk'k e lifjofrr dj fn;k tk,xkA***

मूल नियम 54 निम्नलिखित है:

^^(1) tc ljdkjh lod ftl c[kkLr fd;k x;k g] gVk;k x;k g vFkok fuyfcr fd;k x;k g] dk iucgky fd;k tkrk g(iucgkyh dk vkn'k nu oky l{ke çkfèkdkjh&

(a) dr0; l mldh vuifLFkfr dh vofèk d fy, ljdkjh lod dk Hkxrku fd, tku oky oru ,o HkÙkk d lEcÙèk e(,o

(b) D;k mDr vofèk dÙk0; ij fcrk;h x;h vofèk ekuh tk,xh ;k ugh d lcèk e fopkj djxk vkj fofufn"V vkn'k ikfjr djxkA

(2) tgk mifu;e (1) e mfYyf[kr çkfèkdkjh dk er g fd ljdkjh lod dk i.kr% foeDr dj fn;k x;k g] vFkok fuycu dh fLFkfr e] fd ;g i.kr% vU;k;kfpr Fkk] ljdkjh lod dk ijk oru vkj HkÙkk ftldk og gdnkj gkrk ;fn ml ;FkkfLFkfr c[kkLr ugh fd;k tkrk] gVk;k ugh tkrk vFkok fuyfcr ugh fd;k tkrk] nuk gkxkA

(3) vU; ekeyk e ljdkjh lod dk ,l oru vkj HkÙkk dk ,lk vuikr fn;k tk,xk tlk ,lk l{ke çkfèkdkjh fofgr dj ldrk gA

ijUr ;g fd [kM (2) vFkok [kM (3) d vèkhu HkÙkk dk Hkxrku vU; leLr 'krk d vè;èkhu gkxk ftld vèkhu ,lk HkÙkk xkg; gA

ijUr ;g Hkh fd ,l oru ,o HkÙkk dk ,lk vuikr fu;e 53 d vèkhu xkg; fuokg HkÙkk rFkk vU; HkÙkk l de ugh gkxkA

(4) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk leLr ç;ktu ldr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ekuk tk,xkA

(5) [kM (3) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ugh ekuh tk,xh tc rd ,lk l{ke çkfèkdkjh fofufn"Vr% fun'k ugh nrk g fd bl fdlh fofufn"V ç;ktu l ,lk ekuk tk,x%

ijUr ;g fd ;fn ljdkjh lod ,lk pkgrk g fd ,lk çkfèkdkjh fun'k n ldrk g fd dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk ljdkjh lod dk n; rFkk xkg; fdlh çdkj d vodk'k e lifjofrr dj fn;k tk,xkA**

10. एम॰ गोपालकृष्ण नायडू बनाम मध्य प्रदेश राज्य, AIR 1968 SC 240, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मूल नियम 54 का परीक्षण करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"(6) ;g lR; g fd ,Q0 vkj0 54 d vèkhu vkn'k bl vFk e ikfj.kkfed vkn'k g fd bl iucgkyh d vkn'k d ckn ikfjr fd;k tk,xkA fdr ;g rF; fd ikfj.kkfed vkn'k bl ç'u dk fofuf'pr ugh djrk g fd D;k ljdkjh lod dk dkj.k crku dk volj fn;k tkuk gkxk ;k ugh] ;g Hkh lR; g fd ,l ekey e tgk foHkkxh; tkp d ckn iucgkyh dk vkn'k fn;k tkrk g] ljdkjh lod dk lkekU;r% dkj.k crku dk volj gkxkA ,l ekey e] fu%lng çkfèkdkjh d le{k ljdkjh lod }kjk fn, x, Li"Vhdj.k lfgr li.k vfHky[k gkxk ftll çkfèkdkjh

d le{k ekey d leLr rF; vkj ifjfLFkfr;k gkxh vkj ftl log er fufer dj ldrk g fd D;k ml i.kr% foeDr fd;k x;k Fkk ;k ugh vkj fuycu d ekey e fd D;k , lk fuycu i.kr% U;k;kfpr Fkk ;k ughA , l ekey e] oreku ey fu;e tl fu;e d vèkhu ikfjr vkn'k dk foHkkxh; tkp d ckn ikfjr ikfj.kkfed vkn'k dgk tk ldrk gA fdr ekey d rhu ox g] tl k vuPNn 311 e ijUrd }kjk vfèkdfFkr fd;k x;k g] tgk foHkkxh; tkp ugh dh tk,xh vFkkr (a) tgk 0;fDr dk vkpj.k tk nkfMd vkjki ij mldh nk"kflf) dh vkj y x;k g d vkèkkj ij c[kkLr fd;k tkrk g] gVk;k tkrk g vFkok J.kh e ?kVk;k tkrk g] (b) tgk 0;fDr dk c[kkLr dju d fy, vFkok gVku d fy, vFkok J.kh e ?kVku d fy, l'kDr cuk;k x;k çkfèkdkjh fyf[kr e nt fd, tku oky dkj.kk l lr"V g fd , lh tkp djuk ;fDr;Dr :i l 0;ogkfjd ugh g vkj (c) tgk jk"Vifr vFkok jkT; iky] ;FkkfLFkfr] lr"V g fd jkT; dh lj{kk d fgr e , lh tkp djuk lehphu ugh gA pfd ekeyk d bu oxk e tkp ugh gkxh] çkfèkdkjh d le{k ljdkjh lod }kjk fn;k x;k Li"Vhdj.k ugh gkxkA , l ekeyk e çkfèkdkjh dk ek= mu rF;k ij] tk lcfèkr foHkkx }kjk mld le{k çLrr fd, tk ldr Fk] fopkj djuk gkxk vkj vkn'k ikfjr djuk gkxkA , l ekey e vkn'k ,d i{kh; gkxk D;kfd çkfèkdkjh d le{k fp= dk nljk igy ugh gkxkA , l ekeyk e vkn'k] ftl , lk çkfèkdkjh ikfjr djxk] ikfj.kkfed vkn'k ugh gkxk tk ml ekey d foijhr g tgk foHkkxh; tkp dh x;h gA vr%] ey fu;e 54 d vèkhu ikfjr vkn'k lno ikfj.kkfed vkn'k ugh g vkj u gh , lk vkn'k depkjh d fo#) dh x;h foHkkxh; dk;okgh dh fujrjrk gA

(7) ;g lR; g] tl k Jh lu u bfxr fd;k] fd ,Q0 vkj0 54 vfHk0;Dr 'kCnk e vfèkdfFkr ugh djrk g fd çkfèkdkjh dk vkn'k ikfjr dju d igy lcfèkr depkjh dk dkj.k crku dk volj nuk gkxkA fQj Hkh] ç'u ;g g fd D;k fu;e foo{kk }kjk çkfèkdkjh ij , lk dr0; Mkyrk gA vkn'k fd D;k fn;k x;k ekeyk ey fu;e d [kM 2 vFkok [kM (5) d vèkhu vkrk gA çkfèkdkjh }kjk ekey d leLr rF;k vkj ifjfLFkfr;k ij vkj nk rkfF;d fu"d"kk l mld er fufer dju ij fuHkj djxk(D;k depkjh dk i.kr% foeDr fd;k x;k Fkk vkj fuycu d ekey e D;k ;g ijh rjg vU;k;kfpr FkkA bld vfrfjDr] bl fu;e d vèkhu ikfjr vkn'k Li"Vr% ljdkjh lod dk çfrdy :i l çHkkfor djxk ;fn bl [kM 3 vkj 5 d vèkhu ikfjr fd;k x;k gA bl fu;e d vèkhu vufpru] tl k fd ;g rF;k vkj ifjfLFkfr;k ij mudh li.krk e fuHkj djrk g] , l rF;k vkj ifjfLFkfr;k e igp x, rkfF;d fu"d"k d vkèkkj ij vkn'k ikfjr fd;k tkuk vkj , l vkn'k dk ljdkjh lod dk dkfjr vkfFkd gkfu e ifj.kr gkuk oLrijd :i l vkj u fd 0;fDrijd :i l vfHkfuèkkfjr djuk gkxkA dk; dh çÑfr U;kf;d :i l ÑR; dju dk dr0; foof{kr djrh gA , l ekey e ;fn çLrkfor dkjokb d fo#) dkj.k crkvk dk volj ugh fn;k tkrk g] tl k LohÑr :i l oreku ekey e ugh fd;k x;k g] vkn'k bl vkèkkj ij voèk d :i e fo[kfMr fd, tku dk nk;h g fd ;g ulfxd U;k; d fl)krk d mYy?ku e gA**

11. रामाश्रय प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2000 (3) PLJR 41, में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल संबंधित कर्मचारी को कारण बताने का अवसर दिए जाने के बाद बिहार सेवा संहिता के नियम 97 के अधीन निलंबन की अवधि के लिए वेतन के निर्बंधित भुगतान का

आदेश पारित किया जा सकता है। **श्री महाबीर प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 1988 PLJR 82, और **विश्वनाथ मित्रा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 2003 (4) PLJR 71, में उच्च न्यायालय द्वारा समरुप दृष्टिकोण अपनाया गया है।

12. मामले के अभिलेख से, यह प्रतीत नहीं होता है कि निर्वाह भत्ता के संबंध में आदेश पारित किए जाने के पहले याची को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। याची सरकार के अधीन नियोजित है। केवल झारखंड सेवा संहिता (जैसा बिहार सेवा संहिता से अपनाया गया है) के नियम 97 का सहारा लेकर निलंबन अवधि के दौरान निर्वाह भत्ता के सिवाए उसे उसके वेतन और भत्ता से वंचित किय जा सकता है और चूँकि याची को कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था, दिनांक 27.6.2001 के आदेश में पैरा (ii) के अधीन अंतर्विष्ट आदेश अपास्त किए जाने का दायी है। किंतु, प्रत्यर्थीगण सलाह दिए जाने पर विधि के अनुरुप मामले में अग्रसर होने के लिए स्वतंत्र होंगे।

13. परिणामस्वरुप, दिनांक 27.6.2001 के दंड के आदेश में क्रम सं॰ (i) और (ii) पर वर्णित दंड अभिखंडित किया जाता है। रिट याचिका पूर्वोक्त निबंधनों में अंशत: अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

14. किंतु, व्यय को लेकर आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

कन्हैया लाल उर्फ कन्हाई लाल साव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 3406 of 2012. Decided on 16th April, 2013.

भारतीय वन अधिनियम, 1927—धाराएँ 33, 41, 42 एवं 52—वन अपराध–वाहन का अधिहरण–इसी घटना के लिए याची के विरुद्ध दांडिक अभियोजन भी शुरू किया गया–जैसा पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि वन अपराध नहीं बनता है, आरंभ की गयी और पुनरीक्षण के चरण पर इस आधार पर संपुष्ट की गयी अधिहरण कार्यवाही कि याची ने ऐसे वाहन के उपयोग द्वारा वन अपराध किया था, स्वयं में आधारहीन तथा औचित्यहीन है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Binod Kr. Dubey, For the Petitioner; JC to AG, For the State.

आदेश

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 1000 वर्ष 2013</u>

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची अधिहरण पुनरीक्षण सं॰ 100 वर्ष 2011 में अपर मुख्य सचिव (वन एवं पर्यावरण) झारखंड सरकार, राँची द्वारा पारित दिनांक 17 अप्रिल, 2012 के आदेश (परिशिष्ट 5) का अभिखंडन इप्सित कर रहा है जिसके अधीन अधिहरण अपील सं॰ 1 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 1 जुलाई 2011 का आदेश (परिशिष्ट 4) और अधिहरण केस सं॰ 23 वर्ष 2005 में डिविजनल वन अधिकारी, रामगढ़ द्वारा पारित दिनांक 8 अगस्त, 2009 का मूल आदेश संपुष्ट किया गया है और याची का पुनरीक्षण आवेदन अस्वीकार

किया गया है। परिणामत: याची ने रजिस्ट्रेशन सं॰ PB-07B-3966 वाले वाहन और कोयला की निर्मुक्ति के लिए प्रार्थना किया है क्योंकि उसके अनुसार संपूर्ण अधिहरण कार्यवाही बिल्कुल आधारहीन है क्योंकि इस न्यायालय ने इसी घटना और अभिकथित वन अपराध के संबंध में दांडिक विविध याचिका सं॰ 853 वर्ष 2005 में दिनांक 11 सितंबर, 2009 के अपने निर्णय में स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि याची के विरुद्ध भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 के अधीन अपराध नहीं बनाया गया है।

3. याची के अनुसार, परिवाद पर वन रेंज अधिकारी, गोलारेंज, रामगढ़ ने कोयले से लदा रजिस्ट्रेशन सं॰ PB-07B-3966 वाला ट्रक पकड़ा गया था तथा पूछे जाने पर कोयले के ऐसे परिवहन से सम्बन्धित दस्तावेज ट्रक के खलासी द्वारा प्रस्तुत नहीं किया जा सका था और चालक भाग गया था। तद्नुसार, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा कोयला और वाहन दोनों जब्त कर लिया गया था और भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 52 के अधीन डिविजनल वन अधिकारी, रामगढ़ के समक्ष अधिहरण केस सं॰ 23 वर्ष 2005 के तहत अधिहरण कार्यवाही आरंभ की गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 के अधीन अपराध किए जाने का अभिकथन करते हुए रेंज अधिकारी, गोलारेंज, रामगढ़ द्वारा किए गए परिवाद के आधार पर याची के विरुद्ध अभियोजन भी आरंभ किया गया था। उक्त दांडिक मामले जी॰ सं॰ 231 वर्ष 2005 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा याची के विरुद्ध भारतीय वन अधिनियम के अधीन अपराध के लिए दिनांक 17 जून, 2006 के आदेश के तहत संज्ञान लिया गया था। याची ने इस न्यायालय के समक्ष दांडिक एम॰ पी॰ सं॰ 853 वर्ष 2005 में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और दिनांक 17 जून, 2006 के संज्ञान के आदेश को चुनौती दिया। इस न्यायालय ने पक्षों को सुनने के बाद दिनांक 11 सितंबर, 2009 के विस्तृत निर्णय द्वारा संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और आक्षेपित आदेश अभिखंडित कर दिया।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त निर्णय में भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 की प्रयोज्यता पर समग्र रूप से विचार किया गया है और यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि प्रत्यर्थीगण को कोयला के अभिवहन के लिए किसी अधिसूचना जारी करने अथवा नियमों को विरचित करने की शक्ति नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय ने यह भी पाया था कि याची अथवा अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध कोई अभिकथन नहीं है कि वे वन क्षेत्र में कोयला का खनन कर रहे थे। यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि स्वीकृत रूप से प्रश्नगत कोयला वन उत्पाद नहीं है, अत: भारतीय वन अधिनियम की धारा 41 के अधीन वन उत्पाद के अभिवहन के लिए विरचित नियम कोयला के अभिवहन के मामले पर प्रयोज्य नहीं है। अत: याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वाहन और प्रश्नगत कोयला के अधिहरण का आक्षेपित आदेश विधि में संपोषणीय नहीं है क्योंकि इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि याची द्वारा वन अपराध नहीं किया गया है। वह आगे निवेदन करते हैं कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 52 केवल तब प्रयोज्य बनायी जा सकती है यदि उपकरणों, नावों, ठेलों अथवा पशुओं का उपयोग करके किसी वन उत्पाद के संबंध में किसी वन अपराध को किया गया बताया जाता है जिन्हें अधिहरण के अध्यधीन किया जा सकता है।

5. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अधिहरण कार्यवाही दांडिक अभियोजन से स्वतंत्र है। अधिहरण कार्यवाही वन क्षेत्र से आने वाले कोयला से लदे ट्रक के अभिग्रहण के बाद आरंभ की गयी थी और यह भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 के प्रावधानों के विरुद्ध थी।

याची के प्रतिवाद पर मूल प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा विचार किया गया है और अपीलीय प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा दांडिक अभियोजन के अभिखंडन से संबंधित प्रश्न पर भी विचार किया गया है और उन्होंने अधिहरण आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई अच्छा कारण नहीं पाया है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। परिशिष्ट 3 पर अंतर्विष्ट दिनांक 8 अगस्त, 2009 के मूल आदेश के परिशीलन से यह प्रकट है कि तत्कालीन बिहार राज्य द्वारा किए गए संशोधनो के साथ भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 के प्रावधानों जो झारखंड राज्य पर भी प्रयोज्य हैं, का उल्लंघन करने पर याची के विरुद्ध वाहन और कोयला के अधिहरण के लिए कार्यवाही आरंभ की गयी थी। इसी घटना के लिए याची के विरुद्ध दांडिक अभियोजन भी आरंभ किया गया था। याची दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 853 वर्ष 2005 में दांडिक अभियोजन से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष आया था जिसमें भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धाराओं 33, 41 और 42 के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन अपराध की कारिता से संबंधित प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा पूरी तरह विचार किया गया था और पूर्वोक्त प्रावधानों को विस्तारपूर्वक निर्दिष्ट करने के बाद यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41 और 42 के अधीन अपराध नहीं बनता है। तद्नुसार, दिनांक 11 सितंबर, 2009 के निर्णय के तहत संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित संज्ञान का आदेश अभिखंडित कर दिया गया था। यद्यपि इन तथ्यों को अधिहरण अपील सं॰ 1 वर्ष 2010 में अपीलीय प्राधिकारी-सह-उपायुक्त, रामगढ़ के ध्यान में और पुनरीक्षण अधिहरण केस सं॰ 100 वर्ष 2011 में पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष लाया गया था किंतु वे तथ्यों और विधि का अधिमूल्यन करने में विफल रहे हैं और अभिनिर्धारित किया कि अधिहरण कार्यवाही की जा सकती है यदि संबंधित व्यक्ति द्वारा वाहन अथवा ऐसी अन्य वस्तु का उपयोग करके वन अपराध किए जाते हैं।

7. जैसा दां॰ एम॰ पी॰ सं॰ 853 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 11 सितंबर, 2009 के अपने निर्णय में इस न्यायालय द्वारा पहले ही अभिनिर्धारित किया गया है कि वन अपराध नहीं बनता है। अत: आरंभ की गयी और पुनरीक्षण के चरण पर इस आधार कि याची ने ऐसे वाहन के उपयोग द्वारा वन अपराध किया था, संपुष्ट की गयी अधिहरण कार्यवाही आधारहीन और औचित्यहीन है। इन परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, अभिखंडित किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। आई॰ ए॰ भी॰ अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

अनिरुद्ध कुमार उर्फ अनिरूध कुमार

cuke

झारखंड राज्य, निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No. 847 of 2013. Decided on 5th April, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 41 एवं 73—गिरफ्तारी वारन्ट–पुलिस अथवा अन्वेषण एजेंसी को संज्ञेय मामले में गिरफ्तारी वारंट की अनुपस्थिति में भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति है किंतु उस शक्ति को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 41 के अधीन उल्लिखित शर्तों द्वारा सीमित

किया गया है–तलब में कहीं नहीं यह कथन किया गया है कि अभियुक्त गिरफ्तारी से बच रहा है–दंडाधिकारी ने याची के विरुद्ध वारंट जारी करने से संबंधित आदेश पारित करने में अवैधता किया–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 8, 12 से 14)

निर्णयज विधि.–[1997(2) East Cr.C 124 (SC)]—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Anil Kumar, Krishna Murari, For the Petitioner; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

त्रुटि सं॰ 9(i) को एतद् द्वारा अनदेखा किया जाता है। जहाँ तक त्रुटि सं॰ 9 (ii) का संबंध है, इसे दिन के क्रम में हटाया जाए।

2. यह आवेदन विशेष केस सं॰ 15 वर्ष 2009 (R) (निगरानी पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 11 वर्ष 2009) में विद्वान विशेष न्यायाधीश (निगरानी), राँची द्वारा पारित दिनांक 8.2.2013 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान विचारण न्यायालय ने याची के विरुद्ध गैर–जमानती वारन्ट जारी करने के लिए आदेश पारित किया।

3. जिस आधार पर आक्षेपित आदेश का अभिखंडन इप्सित किया जा रहा है यह है कि आदेश जिसके अधीन याची के विरुद्ध गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने का आदेश दिया गया था दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 73 में अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुकूल कभी नहीं है क्योंकि गिरफ्तारी वारन्ट इस आधार पर जारी किया जाना इप्सित किया गया था कि केवल अभियुक्त की गिरफ्तारी पर मामले में कुछ पता लगाया जा सकता था और कि अभियुक्त को उस स्थिति में न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर किया जा सकता था और कि अन्वेषण अधिकारी द्वारा पर्याप्त साक्ष्य संग्रहित किया गया है किंतु वे समस्त आधार अविद्यमान हैं जहाँ तक यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 73 में अंतर्विष्ट प्रावधानों के निबंधनानुसार गिरफ्तारी वारन्ट जारी किए जाने से संबंधित है और तद्द्वारा आक्षेपित आदेश अभिखंडन योग्य है।

4. इसके विरुद्ध, निगरानी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री शैलेश निवेदन करते हैं कि याची के विरुद्ध पर्याप्त साक्ष्य पहले ही संग्रहित किए गए हैं और तद्द्वारा यदि न्यायालय ने अन्वेषण अधिकारी द्वारा प्रस्तुत तलब के आधार पर गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया है, कोई अवैधता नहीं की गयी है और व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति पुलिस को है यदि वह संज्ञेय मामले में अभियुक्त है।

5. विधि की प्रतिपादना में कोई विवाद नहीं है कि पुलिस अथवा अन्वेषण एजेंसी को संज्ञेय मामले में गिरफ्तारी वारन्ट की अनुपस्थिति में भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति है किंतु उस शक्ति को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 41 के अधीन उल्लिखित शर्तों द्वारा सीमित किया गया है। जहाँ तक गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने से संबंधित मामले का संबंध है, वह विधि के अनुरुप जारी किया गया प्रतीत कभी नहीं होता है।

6. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों के संदर्भ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 73 के प्रावधान आकृष्ट होते हैं जिनका पठन निम्नलिखित है:–

> *73.* ***okj.V fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V gk ldx-****&(1) e[; U;kf;d eftLVV ;k iFke ox eftLVV fdlh fudy Hkkx fl)nk"k] mn?kkf"kr vijkèkh ;k fdlh ,l 0;fDr dh tk fdlh vtekurh; vijkèk d fy, vfHk;Dr g vkj fxj¶rkjh l cp jgk g] fxj¶rkjh dju d fy, okj.V viuh LFkkuh; vfèkdkfjrk d vUnj d fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V dj ldrk gA*

(2) ,Ik 0;fDr okj.V dh ikfIr dk fyf[kr :i e vfHkLohdkj djxk vkj ;fn og 0;fDr] ft ldh fxj¶rkjh d fy, okj.V tkjh fd;k x;k g] mld Hkkj lkèkd d vèkhu fdlh Hkfe ;k vU; lifUk e g ;k io'k djrk g rk og ml okj.V dk fu"iknu djxkA

(3) tc og 0;fDr] ft ld fo:) ,Ik okj.V tkjh fd;k x;k g] fxj¶rkj dj fy;k tkrk g] rc og okj.V lfgr fudVre ifyl vfèkdkjh d goky dj fn;k tk,xk] tk ;fn èkkjk 71 d vèkhu ifrHkfr ugh yh xb g rk] ml ml ekey e vfèkdkfjrk j[ku oky eftLVV d le{k fHkt ok,xkA

7. धारा के कोरे परिशीलन से, यह स्पष्ट है कि यह व्यक्ति के तीन वर्गों अर्थात् (i) भाग निकले दोषसिद्ध (ii) उद्घोषित अपराधी और (iii) व्यक्ति जो गैर जमानती अपराध में अभियुक्त है और गिरफ्तार से बच रहा है की गिरफ्तारी के लिए वारन्ट जारी करने की शक्ति दंडाधिकारी पर प्रदत्त करती है।

8. राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से बनाम दाऊद इब्राहिम कशकर, 1997 (2) East Cr. C. 124 (SC) मामले में माननीय न्यायाधीशों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 73 के अधीन प्रतिष्ठापित पूर्वोक्त प्रावधान और विधि आयोग की अपनी 41वीं रिपोर्ट में अनुशंसा को विचार में लेते हुए उक्त निर्णय के पैरा 20 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

*^^fd èkkjk 73 okjUV tkjh dju d fy, nMkfèkdkjh dk 'kfDr çnÙk djrh g vkj fd vUo"k.k d nkjku Hkh bldk ç;kx ml }kjk fd;k tk ldrk g dk lfgrk dh èkkjk 155 d çfr fun'k e cgrj rjhd l le>k tk ldrk gA t lk igy xkj fd;k x;k g] bl èkkjk d vèkhu ifyl vfèkdkjh nMkfèkdkjh d vkn'k l xj lK; ekey e vUo"k.k dj ldrk g vkj vUo"k.k d lcèk e mUgh 'kfDr;k dk ç;kx dj ldrk g ft ldk ç;kx og lK; ekey e dj ldrk g] flok; bld fd og okjUV d fcuk fxj¶rkjh ugh dj ldrk gA ;fn nMkfèkdkjh d vkn'k l ifyl xj&lK; vkj xj tekurh vijkèk e vUo"k.k 'k: djrh g (Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 466 vFkok 467 (Hkkx&1) dh rjg vkj ;fn vUo"k.k d nkjku vUo"k.k vfèkdkjh vijkèk d vfHk;Dr 0;fDr dk fxj¶rkjh dju dk vk'k; j[krk g] ml nMkfèkdkjh l fxj¶rkjh okjUV bfIlr vkj çkIr djuk gkxkA ;fn vfHk;Dr fxj¶rkjh l cprk g] vUo"k.k vfèkdkjh d ikl èkkjk 73 d vèkhu vkj rhi'pkr viuh 'kfDr lfuf'pr dju d fy, ,dek= cpk jkLrk ddh dh mn?kk"k.kk djuk gA ,lh fLFkfr e nMkfèkdkjh oèk :i l èkkjk 73 d vèkhu viuh 'kfDr dk ç;kx dj ldrk g D;kfd fxj¶rkj fd, tku okyk 0;fDr ^^xj&tekurh vijkèk dk vfHk;Dr g vkj fxj¶rkjh l cp jgk gA***

9. परिणामस्वरुप, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संहिता की धारा 73 सामान्य उपयोजन है और कि अन्वेषण के क्रम में न्यायालय, अन्य बातों के साथ, व्यक्ति जो गैर–जमानती अपराध का अभियुक्त है और गिरफ्तारी से बच रहा है को गिरफ्तार करने के लिए उसके अधीन शक्ति के प्रयोग में वारंट जारी कर सकता है।

10. ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए यह भी संप्रेक्षित किया गया था कि केवल अभियोजन/पुलिस अन्वेषण की सहायता और मदद करने के लिए गिरफ्तारी वारन्ट जारी नहीं किया जा सकता है।

11. इस प्रकार, प्रश्न जिस पर विचार किया जाना है यह है कि क्या याचीगण के विरुद्ध गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया जाना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 73 (1) के प्रावधान के अनुकूल है?

12. तलब (परिशिष्ट–1) के परिशीलन से, जिसके आधार पर गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने का आदेश पारित किया गया था, यह प्रतीत होगा कि गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया जाना इस आधार पर इप्सित किया गया था कि केवल अभियुक्त व्यक्ति की गिरफ्तारी पर मामले में कुछ पता लगाया जा सकता था

और कि उस स्थिति में अभियुक्त व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर किया जा सकता था और कि याची के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री भी संग्रहित की गयी है किंतु तलब में उल्लिखित आधारों में से कोई भी संहिता की धारा 73 में अंतर्विष्ट कार्यक्षेत्र के अंतर्गत नहीं आता है। तलब में कहीं नहीं यह कथन किया गया है कि अभियुक्त गिरफ्तारी से बच रहा है और ऐसी स्थिति में दंडाधिकारी ने निश्चय ही याची के विरुद्ध गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने से संबंधित आदेश पारित करने में अवैधता किया।

13. परिणामस्वरुप, विशेष केस सं॰ 15 वर्ष 2009 (R) (निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 11 वर्ष 2009) में विद्वान विशेष न्यायाधीश (निगरानी) द्वारा पारित दिनांक 8.2.2013 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

14. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

15. यह कहना अनावश्यक होगा कि अन्वेषण अधिकारी विधि के अनुरुप अन्वेषण के साथ अग्रसर होने के लिए स्वतंत्र होगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

प्रकाश चंद्र साह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 2358 of 2008. Decided on 8th February, 2013.

जन वितरण प्रणाली–उचित मूल्य की दुकान की अनुज्ञप्ति का रद्दकरण–काला बाजारी एवं व्यापार अनुज्ञप्ति नियंत्रण आदेश के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन का अभिकथन–मूल प्राधिकारी ने विधि में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण किया है और जाँच रिपोर्ट तथा याची के कारण बताओ उत्तर पर चर्चा करने के बाद मूल आदेश पारित किया जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पर्याप्त कारणों के साथ संपुष्ट किया गया है–उच्च न्यायालय ऐसे मामले में अपीलीय प्राधिकारी के रूप में आदेश पारित करने के लिए अपील नहीं सुन सकता है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. J.P. Jha, For the Petitioner; M/s Srijit Choudhary, C.S. Singh, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने दिनांक 15.12.2006 के मेमो सं॰ 948 में अंतर्विष्ट प्रत्यर्थी सं॰ 3 सब-डिविजनल अधिकारी, गोड्डा द्वारा पारित (परिशिष्ट-A) और विविध अपील सं॰ 32/06-07 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 उपायुक्त, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 26.3.2008 के अपीलीय प्राधिकारी के आदेश, जिसके द्वारा उसकी उचित मूल्य दुकान की अनुज्ञप्ति रद्द कर दी गयी थी, को चुनौती दिया है।

3. याची के अनुसार, वह गोड्डा जिला एवं प्रखंड के अधीन नोखिल पंचायत ढोंदरी गाँव में वर्ष 1972 से अनुज्ञप्ति सं॰ 30/84 वाला उचित मूल्य दुकान डीलर अनुज्ञप्तिधारी था। यह कथन किया है कि दिनांक 11.12.2006 को उसके आदेश प्राप्त करने तक उसके विरुद्ध परिवाद नहीं था जिसके द्वारा सब-डिविजनल अधिकारी, गोड्डा द्वारा जारी दिनांक 29.11.2006 के पत्र सं॰ 884 के तहत कारण

बताओ के आधार पर उसकी अनुज्ञप्ति निलंबित कर दी गयी थी। याची द्वारा यह प्रतिवाद किया गया है कि कारण बताओं में किए गए संपूर्ण अभिकथन सतही थे और किसी प्रमाण द्वारा सिद्ध नहीं किए गए हैं और इस तथ्य के बावजूद कि याची ने दिनांक 14.12.2006 के परिशिष्ट–3 के तहत आरोपों में से प्रत्येक का तर्कपूर्ण उत्तर दिया है, रद्दकरण का आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। याची द्वारा आगे प्रतिवाद किया गया है कि कालाबाजारी में लिप्त होने अथवा व्यापार अनुज्ञप्ति नियंत्रण आदेश के अधीन अनुज्ञप्ति के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन का कोई स्थापित निष्कर्ष नहीं है। किंतु, यह निवेदन किया गया है कि एस॰ डी॰ ओ॰ ने अनुज्ञापन प्राधिकारी होने के नाते गूढ़ आदेश पारित किया है और असिद्ध अभिकथनों के प्रति उसके उत्तरों को दर किनार कर दिया और कारणरहित आदेश द्वारा स्वयं अनुज्ञप्ति रद्द करने के लिए अग्रसर हुआ। आगे यह निवेदन किया गया है कि यह विचार में लिए बिना कि याची के विरुद्ध अभिकथित अनियमितताओं में से किसी को भी स्थापित किया गया नहीं पाया गया था, अपीलीय प्राधिकारी का आदेश भी समरुप तरीके से पारित किया गया है। जाँच रिपोर्ट (परिशिष्ट–4 और 4/A) को निर्दिष्ट करते हुए आगे निवेदन किया गया है कि जाँच रिपोर्ट याची के विरुद्ध परिशिष्ट–2 के तहत जारी कारण बताओ में अभिकथित अभिकथनों के साथ मेल नहीं खाता है और इस प्रकार यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध, मनमाने और अपास्त किए जाने के दायी हैं।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता ने अपनी ओर से दाखिल शपथपत्र के आधार पर निवेदन किया कि अभिकथन, जिन्हें दिनांक 30.6.2006 को आपूर्ति निरीक्षक, गोड्डा द्वारा निरीक्षण पर पाया गया था, और प्रखंड आपूर्ति अधिकारी द्वारा संबोधित पश्चातवर्ती रिपोर्ट ने भी याची द्वारा अनुज्ञप्ति के निबंधनों एवं शर्तों का अनुसरण नहीं करने के गंभीर आरोपों को परिलक्षित किया। इन अभिकथनों को याची को अपना उत्तर दाखिल करने के लिए उसको सक्षम बनाने के लिए दिनांक 29.11.2006 के कारण बताओ में बिंदुवार संगणित किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची के विरुद्ध कम से कम नौ गंभीर आरोप है जिनके विरुद्ध वह तर्कपूर्ण उत्तर देने में सक्षम नहीं हुआ है। प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने याची के विरुद्ध संचालित कार्यवाही के संबंध में दिनांक 15.12.2006 के आदेश जिसे प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट–C श्रृंखला के साथ संलग्न किया गया है पर विश्वास करते हुए आगे निवेदन किया है कि कारण बताओ में लगाए गए प्रत्येक आरोप के विरुद्ध अनुज्ञापन/सक्षम प्राधिकारी ने याची के निवेदनों पर विचार किया है और उसके निवेदनों को बिल्कुल असंतोषजनक पाया है। तत्पश्चात, आक्षेपित आदेश पारित किया गया है और उक्त आदेश में कोई दुर्बलता नहीं है क्योंकि उचित मूल्य अनुज्ञप्ति दुकान के मामले में अनुज्ञप्तिधारी को बी॰ पी॰ एल॰ कार्ड धारकों जैसे लाभार्थियों के बीच संवितरित किए जा रहे आवश्यक वस्तुओं के वितरण के समुचित अभिलेख को रखने की आवश्यकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने वितरण रजिस्टर प्रस्तुत नहीं करते हुए केवल अस्पष्ट बहाना बनाया है जो अभिकथन सं॰ 1, 2, 5 और 6 के संबंध में और आरोप सं॰ 9 के संबंध में भी कार्ड धारकों को आवश्यक वस्तुओं का वितरण नहीं करने का अभिकथन स्थापित करेगा। यह निवेदन किया गया है इन परिस्थितियों में, अपीलीय प्राधिकारी ने भी याची का बचाव विश्वसनीय नहीं पाया है और मूल आदेश में हस्तक्षेप किए बिना इसे संपुष्ट किया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि प्रत्यर्थीगण ने परिवादों और निरीक्षण के आधार पर याची के विरुद्ध लगाए गए विनिर्दिष्ट आरोपों को संगणित करने के बाद याची–अनुज्ञप्तिधारी को कारण बताने का पर्याप्त अवसर देते हुए नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुसरण करके ऐसी कार्यवाही के संबंध में आवश्यक संपूर्ण प्रक्रिया का अनुसरण किया है और निर्णय करने की प्रक्रिया में कोई दुर्बलता नहीं है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित आदेश सहित अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। दिनांक 29.11.2006 के कारण बताओ के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि इसे उचित मूल्य दुकान में अनाजों तथा आवश्यक वस्तुओं के वितरण के मामले में याची के विरुद्ध अनियमितताओं के परिवादों को पाने पर सक्षम प्राधिकारी द्वारा संचालित निरीक्षण के आधार पर जारी किया गया है। याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथनों/आरोपों को क्रमांक 1 से 9 में संगणित किया गया है। स्वयं आरोप सं॰ 1 में अभिकथन का परिशीलन मात्र उपदर्शित करता है कि याची को लाल कार्ड धारकों जिनके नामों को उसमें दिया गया है, को जनवरी, 2006 और इसके आगे से चावल/गेहूँ का वितरण नहीं करता हुआ पाया गया था और अपने कारण बताओ के उत्तर में, जिस पर आक्षेपित आदेश में चर्चा की गयी है और परिशिष्ट-C के तहत अभिलेख पर लाया गया है, याची के विरुद्ध ऐसे अभिकथनों को भंजित करने के लिए लाभार्थियों के हस्ताक्षरों को इसके संबंध में दर्शाते हुए किसी वितरण रजिस्टर को प्रस्तुत करने में विफल रहा था। अन्य आरोपों के संबंध में भी याची को इस अभिकथन कि खाद्य वस्तुओं को वितरित नहीं किया गया था अथवा समुचित रूप से लेखा-जोखा नहीं दिया गया था, को भंजित करने के लिए वितरण रजिस्टर और स्टॉक रजिस्टर को प्रस्तुत करने में विफल पाया गया है। मूल प्राधिकारी/अनुज्ञापन प्राधिकारी ने याची पर तामील विस्तृत कारण बताओ को ध्यान में लिया है और कारण बताओ का उत्तर दाखिल करने का सम्यक अवसर देने के बाद आक्षेपित आदेश पारित किया है। अपीलीय प्राधिकारी ने भी याची के निवेदनों को विचार में लेने और यह दर्ज करने कि उसका समस्त बचाव आरोपों को भंजित करने के लिए किसी साक्ष्य को प्रस्तुत किए बिना बहाना मात्र है, के बाद अपीलीय आदेश पारित किया है। तद्नुसार, उन्होंने पाया है कि याची ने कार्यालय अभिलेख रखे बिना 'अंत्योदय' और बी॰ पी॰ एल॰ चावल सहित राशन सामग्रियों की कम और अनियमित आपूर्ति और कालाबाजारी करके व्यापार अनुज्ञप्ति नियंत्रण आदेश के निबंधनों एवं शर्तों का उल्लंघन किया है जो इस मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों के उल्लंघन के तुल्य भी है।

6. यह न्यायालय ऐसे मामलों में अपीलीय प्राधिकारी के रूप में आदेश पारित करने के लिए अपील नहीं सुनता है। तथ्यों और परिस्थितियों में तथा यहाँ ऊपर दर्ज किए गए कारणों से यह प्रकट है कि मूल प्राधिकारी ने विधि में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण किया है और जाँच रिपोर्ट तथा याची के कारण बताओ के उत्तर पर चर्चा करने के बाद मूल आदेश पारित किया है जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पर्याप्त कारणों के साथ संपुष्ट किया गया है। मैं आक्षेपित आदेशों में कोई दुर्बलता नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

लखी सिंह एवं एक अन्य

cuke

चूटो सिंह

W.P. (C) No. 3992 of 2012. Decided on 14th March, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VI, नियम 17 सह-पठित धारा 151—वाद पत्र का संशोधन—आवेदन अस्वीकार किया जाना—विलंबित चरण पर संशोधन अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है जब मामला बहस के लिए रखा गया है—किंतु, वादीगण-याचीगण आदिवासी क्षेत्र से

आते हैं, अतः उन्हें अपने मामले के वास्तविक सारवान विवाद्यकों को अवर न्यायालय के समक्ष रखने का कम से कम एक अवसर देना चाहिए ताकि तकनीकी पेचीदगियों को अनदेखा करके सारवान न्याय किया जा सके जो न्याय का सार है–निर्देश के साथ रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–(1991) 2 BLJR 42; (2011) 12 SCC 268; 2012(3) JCR 184; 2010(1) JCR 5 (SC)—Referred; (2008) 12 SCC 364—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Ashish Verma, Shyam Narsaria, For the Petitioners; Mr. Ashish Jha, For the Respondent.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके अभिधान वाद सं॰ 76/2004 में सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन-IV, दुमका द्वारा पारित दिनांक 2.7.12 के आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने की प्रार्थना की है जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VI नियम 17 सह-पठित धारा 151 के अधीन वाद पत्र का संशोधन इप्सित करते हुए दाखिल आवेदन को अस्वीकार कर दिया है।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आशीष वर्मा ने जोरदार निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VI नियम 17 में अंतर्विष्ट प्रावधान का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया है और संशोधन याचिका में किए गए अनुरोध को अस्वीकार कर दिया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना की दृष्टि में संशोधन आवेदन कार्यवाही के किसी चरण पर दाखिल किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रश्नगत संशोधन पक्षों के बीच वास्तविक विवाद/विवाद्यक के विनिश्चयकरण के प्रयोजन से आवश्यक था। यह निवेदन भी किया गया है कि वाद की कार्यवाही के दौरान बहस कर रहे अधिवक्ता की मृत्यु हो गयी थी और तत्पश्चात वर्ष 2009 में वादीगण-याचीगण द्वारा नए अधिवक्ता को काम पर लगाया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वाद वर्ष 2004 का है और विवाद्यक वर्ष 2008 में विरचित किए गए थे और तत्पश्चात वर्ष 2009 में नए अधिवक्ता को काम पर लगाया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि कतिपय तथ्य याचीगण की जानकारी में नहीं थे, अतः इन्हें वाद दाखिल करने के आरंभिक चरण पर अभिलेख पर नहीं लाया जा सकता था और इसलिए, वादीगण-याचीगण ने इस संशोधन के रूप में तथ्यों को पुरःस्थापित करने के लिए उनको अनुमति देने के लिए अवर न्यायालय से अनुरोध किया जो वाद संपत्ति में अधिकार, हक और हित को विनिश्चित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक हैं। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों को निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है:–

(i) (1991)2 BLJR 42;

(ii) (2011)12 SCC 268;

(iii) (2008)14 SCC 364;

(iv) 2012 (3) JCR 184 vkj

(v) 2010 (1) JCR-5 SC.

4. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने इस याचिका का विरोध करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया और निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने इस

मामले के तथ्यों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद याचीगण द्वारा दाखिल संशोधन आवेदन अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसे विलंबित चरण पर दाखिल किया गया था और ऐसे संशोधन के कारण वाद की प्रकृति के परिवर्तित होने की संभावना है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **(2008)14 SCC 364 पर (राजकुमार गुरावारा बनाम एस॰ के॰ सारवागी एंड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड एवं एक अन्य)** में निर्णय को निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा सम्यक तत्परता के प्रश्न पर समुचित रूप से विचार किया गया है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि संशोधन आवेदन बहस के चरण पर सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VI नियम 17 के अधीन वादीगण–याचीगण द्वारा दाखिल किया गया था जिसे अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि मामले में मौखिक साक्ष्य लिए गए थे और तत्पश्चात् विलंबित चरण पर ऐसा संशोधन आवेदन दाखिल किया गया था जब निर्णय उद्घोषणा के लिए तैयार है। संशोधन याचिका के परिशीलन से, यह भी प्रतीत होता है कि यदि इसे अनुज्ञात किया जाता है, वाद की प्रकृति के परिवर्तित होने की संभावना है, अत: अवर न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण सही और विधि के अनुरूप प्रतीत होता है और इस प्रकार विलंबित चरण पर संशोधन अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है जब मामले को बहस के लिए रखा गया है, तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि मामला लगभग समापन पर है। इसके अतिरिक्त, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VI नियम 17 के अधीन निर्णय लिए जाने के समय पर सम्यक तत्परता को भी विचार में लेने की आवश्यकता है जैसा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने अनेक निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किया गया निर्णय अर्थात् **(2008)14 SCC 364** वर्तमान मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक है। यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि और ऊपर निर्दिष्ट माननीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायिक उद्घोषणा के अनुकूल है। जहाँ तक निर्णयज विधि का संबंध है, जिसे याचीगण–वादीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है और इस पर विश्वास किया गया है, संशोधन वाद की कार्यवाही के किसी चरण पर लाया जा सकता है किंतु उक्त संशोधन अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है जहाँ वाद की प्रकृति के परिवर्तित होने की संभावना है। जैसी चर्चा वर्तमान मामले में की गयी है, वाद के दावा का संपूर्ण आधार परिवर्तित होने वाला है क्योंकि आरंभ में वादीगण दान के आधार पर अपने अधिकार, हक और हित का दावा कर रहे थे जबकि संशोधन आवेदन में, जिसे वादीगण–याचीगण द्वारा लाया गया है, संपूर्ण दावा का आधार उत्तराधिकार पर आधारित है और इसलिए, दावा का संपूर्ण आधार परिवर्तित होने वाला है यदि संशोधन आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और इसलिए, अवर न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि के अनुरुप प्रतीत होता है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है।

6. याचीगण–वादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने वैकल्पिक रूप से अनुरोध किया कि उन्हें नया वाद दाखिल करने की अनुमति के साथ वाद को वापस लेने की अनुमति दी जाय ताकि याचीगण–वादीगण को वाद संपत्ति में अपने अधिकार, हक और हित का दावा करने से वंचित नहीं किया जा सके। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने इस प्रतिवाद पर आपत्ति किया और निवेदन किया कि परिसीमा का प्रश्न ऐसी अनुमति प्रदान करने के रास्ते में आएगा।

7. वादीगण-याचीगण के सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि को देखते हुए, क्योंकि वे आदिवासी क्षेत्र से आते हैं, उन्हें अवर न्यायालय के समक्ष मामले के अपने वास्तविक सारवान विवाद्यकों को रखने का कम से कम एक अवसर देना चाहिए ताकि तकनीकी पेचिदगियों को अनदेखा करके सारवान न्याय प्रदान किया जा सके जो न्याय का सार है।

8. वर्तमान मामले के उक्त तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि वादीगण-याचीगण को नया वाद दाखिल करने की अनुमति देने के साथ उनको वर्तमान वाद वापस लेने, यदि वे ऐसा करने के इच्छुक हैं, के लिए अनुमति प्रदान किए जाने की आवश्यकता है। जब और जैसे ही वादीगण-याचीगण द्वारा ऐसा आवेदन दाखिल किया जाता है, अवर न्यायालय इस न्यायालय के संप्रेक्षणों को ध्यान में रखते हुए विधि के अनुरूप इस पर विचार करेगा।

9. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy] U;k;efr

सोमदत्त बिल्डर्स (प्रा॰) लि॰ एवं श्रीनेट एंड शांडिल्य कंस्ट्रक्शन (प्रा॰) लि॰ (जे॰ वी॰), राँची

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Arbitration Appeal No. 9 of 2012. Decided on 12th April, 2013.

माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996—धाराएँ 9 एवं 17—अंतरिम अनुतोष-बैंक गारंटी नगद करवाने से प्रत्यर्थीगण को अवरुद्ध करने की प्रार्थना अस्वीकार किया जाना-धारा 17 के अधीन मध्यस्थ अधिकरण द्वारा आवेदन विनिश्चित किए जाने तक उच्च न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया स्थगन प्रवर्तित बना रहेगा-स्थगन को दिनांक 6.5.2013 को अथवा इस तिथि से रिक्त किया गया समझा जाएगा। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Ajay Kumar Sah, For the Appellant; Mr. M.S. Akhtar, For the Respondents.

आदेश

यह अपील विविध केस सं॰ 16 वर्ष 2012 में सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) I, राँची द्वारा दिनांक 25 जुलाई, 2012 को पारित आदेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन अपीलार्थी द्वारा दाखिल अंतरिम अनुतोष के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है। प्रार्थना बैंक गारंटी को नगद करवाने से प्रत्यर्थीगण को अवरुद्ध करने के लिए थी।

2. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि मध्यस्थ की नियुक्ति की प्रक्रिया के दौरान सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) I, राँची के समक्ष धारा 9 के अधीन अंतरिम अनुतोष के लिए आवेदन दाखिल किया गया था किंतु इसे दिनांक 11 जुलाई, 2012 को विनिश्चित नहीं किया गया था और, इसलिए, पूर्व अवसर पर डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3961 वर्ष 2012 दाखिल किया गया था जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा यह बयान दिए जाने पर कि वे सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) I, राँची द्वारा अपीलार्थी द्वारा धारा 9 के अधीन दाखिल आवेदन विनिश्चित किए जाने तक बैंक गारंटी को नगद करवाने

नहीं जा रहे हैं, दिनांक 20 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा निपटाया गया था और अब अंततः दिनांक 25 जुलाई, 2012 को उक्त आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है। अतः यह अपील दाखिल की गयी है जिसमें दिनांक 30 जुलाई 2012 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा बैंक गारंटी के नगदीकरण के विरुद्ध स्थगन प्रदान किया गया है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि मध्यस्थ अधिकरण के समक्ष मध्यस्थता चल रही है और प्रत्यर्थीगण एक के बाद दूसरा आवेदन दाखिल करने के लिए समय इप्सित कर रहे हैं। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि मध्यस्थ अधिकरण द्वारा धारा 17 के अधीन आवेदन निपटाए जाने तक दिनांक 30 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया स्थगन जारी रहने दिया जाए और यह अपील निपटायी जा सकती है।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि इस माध्यस्थ अपील को अंततः निपटा कर अनुबंधित समय के भीतर माध्यस्थम कार्यवाही समाप्त की जा सकती है और अधिनियम 1996 की धारा 17 के अधीन आवेदन दाखिल किया जाए और मध्यस्थ अधिकरण द्वारा इसे विधि के अनुरुप विनिश्चित किया जाएगा।

5. इस सीमित निवेदन की दृष्टि में और पक्षों के बीच विवाद को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि मध्यस्थ अधिकरण ने पहले ही मध्यस्थता आरंभ कर दिया है। आरंभ में डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3961 वर्ष 2012 में प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा बयान दिया गया था कि वे सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) I, राँची द्वारा अंतिम रूप से अधिनियम 1996 की धारा 9 के अधीन आवेदन विनिश्चित किए जाने तक वे बैंक गारंटी नहीं भुनाएँगे। अब यह प्रतीत होता है कि दिनांक 25 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत अंततः उक्त आवेदन विनिश्चित किया गया था और, तत्पश्चात पुनः इस न्यायालय ने बैंक गारंटी भुनाने के विरुद्ध दिनांक 30 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत स्थगन प्रदान किया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि वे अंतरिम अनुतोष पाने के लिए मध्यस्थ अधिकरण द्वारा उक्त आवेदन विनिश्चित किए जाने तक इस न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया स्थगन अस्थायी अवधि के लिए जारी रहने दिया जाए और यदि ऐसा आवेदन अपीलार्थी के विरुद्ध विनिश्चित किया जाता है, तब विधि के अनुरुप आवश्यक कार्रवाई की जा सकती है।

6. पूर्वोक्त निवेदन की दृष्टि में, इस माध्यस्थम अपील को एतद् द्वारा इस निर्देश के साथ निपटाया जाता है कि इस न्यायालय द्वारा दिनांक 30 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत प्रदान किया गया स्थगन अधिनियम 1996 की धारा 17 के अधीन आवेदन मध्यस्थ अधिकरण द्वारा विनिश्चित किए जाने तक प्रवृत्त बना रहेगा। धारा 17 के अधीन आवेदन आज के दिन से एक सप्ताह की अवधि के भीतर दाखिल किया जाएगा, यदि इसे पहले ही दाखिल नहीं किया गया है। मैं इस न्यायालय के आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 15 दिनों की अवधि के भीतर अधिनियम 1996 की धारा 17 के अधीन आवेदन यदि यह पहले ही दाखिल किया जा चुका है, विनिश्चित करने का निर्देश मध्यस्थम अधिकरण को देता हूँ। पूर्वोक्त अनुसूची के आलोक में दिनांक 30 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया स्थगन दिनांक 5 मई, 2013 के सायं 5 बजे तक जारी रहेगा। दिनांक 6 मई, 2013 को अथवा इस तिथि से स्थगन को रिक्त समझा जाएगा, यदि मध्यस्थ अधिकरण स्थगन प्रदान करने के लिए अपीलार्थी के पक्ष में आदेश पारित करता है, तब उक्त आदेश प्रवृत्त होगा।

7. तद्नुसार, यह माध्यस्थम अपील निपटायी जाती है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

मोदी रबर लिमिटेड एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cri. Misc. No. 1896 of 2001. Decided on 21st March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल–संज्ञान–त्रुटिपूर्ण टायरों की आपूर्ति–मालों के विक्रय के लिए किसी विज्ञापन को प्रत्याभूति अथवा उत्प्रेरण नहीं माना जा सकता है–प्रत्येक कंपनी अपने द्वारा निर्मित मालों की प्रोन्नति के लिए अपने विक्रय को बढावा देने के लिए विज्ञापन देती है किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि उस समय पर जब ऐसा विज्ञापन दिया गया है, उनका प्रवंचनापूर्ण आशय था–यदि निर्माता अपने उत्पाद के संबंध में कोई गलत विज्ञापन देता है, वह संबंधित अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध हो सकता है–याचीगण ने परिवादी के पक्ष में चेक प्रस्तुत किया है जो उनके सद्भाव और निष्पक्षता को उपदर्शित करता है–परिवाद में किए गए प्रकथनों पर याचीगण का अभियोजन कुछ सीमा तक द्वेषपूर्ण है और इसे जारी रहने की अनुमति नहीं दी जाएगी–दांडिक अभियोजन अभिखंडित। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A.S. Dayal, For the Petitioner; Mr. T. Kabiraj, For the State; Mr. Manoj Kumar, No.4, For the Complainant.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन यह आवेदन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 291/2000 (टी॰ आर॰ सं॰ 953/2000) में न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, दुमका द्वारा पारित दिनांक 30.9.2000 के संज्ञान के आदेश और उक्त मामले से उद्भूत होने वाली संपूर्ण दांडिक अभियोजन के अभिखंडन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल किया गया है जिसके द्वारा याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है।

2. परिवाद से प्रतीत होने वाला मामले का संक्षिप्त तथ्य यह है कि अभियुक्त सं॰ 1 मोदी रबर लिमिटेड रबर की वस्तुओं और वाहन के टायर का निर्माता है जबकि अभियुक्त सं॰ 2 उक्त कंपनी का निदेशक है और अभियुक्त सं॰ 4 उक्त कंपनी का क्षेत्रीय विक्रय प्रबंधक है। अभियुक्त सं॰ 3 दुमका के लिए अभियुक्त सं॰ 1 का प्राधिकृत एवं अनन्य डीलर मेसर्स बी॰ के॰ इंटरप्राइजेज, भागलपुर रोड, दुमका का स्वत्वधारी है। यह अभिकथित किया गया है कि परिवादी जो रजिस्ट्रेशन सं॰ BRJ 9929 वाले वाहन का रजिस्टर्ड स्वामी है ने दिनांक 25.8.1999 को अभियुक्त सं॰ 3 की दुकान से अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा निर्मित दो टायर खरीदा था। टायर के जीवन और टिकाऊपन के संबंध में परिवादी को हर प्रकार की प्रत्याभूति दी गयी थी। सूचक ने जुलाई, 1999 के मेक वाले 109256 और 110610 संख्या वाले आकार 900 x 20 मैराथन 16 प्लाई के दो टायरों के विरुद्ध 15,500.47/- रुपयों का भुगतान किया है। परिवादी को आश्चर्य हुआ जब दिनांक 15.9.1999 को निर्माण त्रुटि के कारण 109256 संख्या वाला टायर फट गया।

परिवादी ने डीलर को मामले का रिपोर्ट किया जिसने उसे टायर बदलने का आश्वासन दिया किंतु

काफी कहने पर भी न तो टायर बदला गया और न ही उक्त टायर के विरुद्ध भुगतान की गयी राशि उसे वापस लौटायी गयी। जब परिवादी ने छला गया महसूस किया उसने यह मामला दर्ज किया।

3. यह निवेदन किया गया है कि यह कहना गलत है कि परिवादी को बेचे गए टायर में कोई निर्माण त्रुटि थी। परिशिष्ट-4 पर प्रस्तुत रिपोर्ट स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि उक्त टायर में कोई निर्माण त्रुटि नहीं पायी गयी थी और अन्य कारण से टायर फटा था किंतु परिवादी ने केवल धन ऐंठने के लिए इस मामले को दाखिल किया था। यह उपदर्शित करने के लिए अभिलेख पर कोई दस्तावेज नहीं है कि याचीगण का कपटपूर्ण अथवा गैरईमानदार आशय था। यह स्वीकृत तथ्य है कि याची-कंपनी कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड है और टायरों, आदि जैसे रबर मालों के निर्माण के क्षेत्र में कंपनी की अच्छी प्रतिष्ठा है। परिवादी को वर्तमान कंपनी द्वारा निर्मित टायर खरीदने के लिए उत्प्रेरित कभी नहीं किया गया था। यह कंपनी द्वारा निर्मित वस्तुओं के बारे में सामान्य विज्ञापन था कि उत्पाद अच्छी गुणवत्ता के हैं और टिकाऊ हैं। टायरों के जीवन के संबंध में परिवादी को कोई विनिर्दिष्ट आश्वासन अथवा वचन नहीं दिया गया था। यद्यपि याची स्वीकार नहीं करता है कि परिवादी को बेचे गए टायर में कोई निर्माण त्रुटि थी किंतु अपना निष्पक्ष आशय दर्शाने के लिए और परिवादी द्वारा उपगत हानि की क्षतिपूर्ति के लिए भी याचीगण टायर की राशि के दो गुना अर्थात 15,000/- रुपयों का भुगतान करने आगे आए थे और उसके लिए याची के पक्ष में जारी दिनांक 13.3.2013 का चेक सं॰ 074884 वाला 15,000/- रुपयों की राशि का चेक इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। परिवाद में किए गए प्रकथनों के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन मामला नहीं बनता है। यदि टायर में कोई निर्माण त्रुटि थी और झूठा आश्वासन दिया गया था, परिवादी उपभोक्ता न्यायालय के समक्ष परिवाद दाखिल करने के लिए स्वतंत्र हैं।

4. परिवादी और राज्य के अधिवक्ता ने तर्कों का विरोध किया है। यह निवेदन किया गया है कि अभियुक्त सं॰ 1, 2 और 4 की ओर से अभियुक्त सं॰ 3 द्वारा उत्प्रेरण किया गया था कि अभियुक्त सं॰ 1 का उत्पाद टिकाऊ है और अन्य कंपनियों द्वारा उत्पादित टायरों की तुलना में लंबे जीवन वाला है। शेष अभियुक्तगण की ओर से अभियुक्त सं॰ 3 द्वारा दिए गए आश्वासन और गारंटी पर उसने अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा निर्मित दो टायर खरीदा और आवश्यक राशि का भुगतान किया। चूँकि गारंटी अवधि के दौरान टायरों में से एक फट गया, उसने टायर बदलने अथवा भुगतान वापस करने के लिए दावा किया किंतु इस पर ध्यान नहीं दिया गया था, अत: परिवादी ने कानूनी नोटिस तामील करके भी पत्राचार किया किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। अंत में, उसने उपाय इप्सित करने के लिए परिवाद दाखिल किया।

5. मैंने परिवाद याचिका और अपने समक्ष प्रस्तुत दस्तावेज का परिशीलन किया है। यह विवादित नहीं है कि अभियुक्त सं॰ 1 कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड कंपनी है और कंपनी विभिन्न वाहनों के लिए अनेक आकार के टायर जैसे रबर वस्तुओं का निर्माण करती है। मालों के विक्रय के लिए किसी विज्ञापन को गारंटी अथवा उत्प्रेरण के रूप में नहीं माना जा सकता है। प्रत्येक कंपनी अपने द्वारा निर्मित मालों को बढ़ावा देने के लिए उनके विक्रय को प्रोत्साहित करने के लिए विज्ञापन देती है किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि उनका उस समय पर जब विज्ञापन दिया गया है कोई प्रवंचना पूर्ण आशय है। यदि निर्माता अपने उत्पाद के संबंध में कोई गलत विज्ञापन देता है, तब वह संबंधित अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध हो सकता है।

परिवादी ने कैश मेमो के सिवाए यह दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि उसे अभियुक्त सं॰ 1 के उत्पाद विशेष को खरीदने के लिए उत्प्रेरित किया गया था। याचीगण ने परिवादी के

पक्ष में जारी दिनांक 13.3.2013 का सं॰ 074884 वाला 15000/- रुपयों की राशि का चेक प्रस्तुत किया है जो उनके सद्भाव और निष्पक्षता को उपदर्शित करता है।

6. इस समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए, मैं पाता हूँ कि परिवाद में किए गए प्रकथनों पर याचीगण का अभियोजन कुछ सीमा तक द्वेषपूर्ण है और, इसलिए इसे जारी रहने की अनुमति नहीं दी जाएगी। परिणामस्वरुप, मैं इस आवेदन को अनुज्ञात करने का इच्छुक हूँ और तद्नुसार, पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 291/2000 (टी॰ आर॰ सं॰ 953/2000) में न्यायिक दंडाधिकारी, दुमका द्वारा पारित दिनांक 30.9.2000 का संज्ञान आदेश अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरुप, उक्त मामले से उद्भूत होने वाला याचीगण का दांडिक अभियोजन भी अभिखंडित किया जाता है किंतु याचीगण को निर्देश दिया जाता है कि चेक जिसे इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है को दिनांक 10 अप्रिल, 2013 के पहले संबंधित न्यायालय में जमा किया जाए और परिवादी को सूचित किया जाए ताकि वह समुचित पहचान प्रस्तुत करने और समुचित रसीद देने के बाद अवर न्यायालय से इसे संग्रहित कर सके। अवर न्यायालय को भी परिवादी को संसूचित करने का निर्देश दिया जाता है ताकि वह समय पर चेक संग्रहित कर सके। यदि उक्त चेक की वैधता का अवसान हो जाता है, याचीगण इसे पुनर्वैध करेंगे।

इस आदेश की प्रति को फैक्स के माध्यम से संबंधित न्यायालय को संसूचित किया जाए।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 3508 of 2001. Decided on 13th February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 29—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—अधिनिर्णय का गैर-क्रियान्वयन–संज्ञान–संबंधित प्राधिकारी ने कर्तव्य पुनः ग्रहण करने के लिए मजदूर को अनेक पत्र जारी किया किंतु मजदूर अपनी अधिवर्षिता तक उपस्थित नहीं हुआ था–सह-अभियुक्त के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा अभिखंडित कर दी गयी है–संज्ञान का आक्षेपित आदेश अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s. A.K. Mehta, Amit Kr. Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. Prabhash Kumar, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन निर्देश केस सं॰ 14/1989 में पारित दिनांक 14.3.1991 के अधिनिर्णय के गैर-क्रियान्वयन के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 29 के अधीन अपराध के लिए आई॰ डी॰ केस सं॰ 4 वर्ष 2001 के संबंध में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 4.1.2001 के संज्ञान लेने वाले आदेश को अपास्त करने के लिए दाखिल की गयी है।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि जगदीश भूइयाँ, गोंडूडीह कोलियरी का ट्रैमर, को दिनांक 3.3.1987 को अधिवर्षित किया गया था। ट्रेड यूनियन ने प्रबंधन के विरुद्ध औद्योगिक विवाद उठाया और विवाद न्याय निर्णयन के लिए केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1, धनबाद को निर्दिष्ट किया गया था जिसे निर्देश केस सं॰ 14/1989 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त निर्देश मामले में दोनों पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया था और समझौते पर आए थे जो निम्नलिखित निबंधनों में है:–

^^(a) fd lcfèkr dedkj Jh txnh'k Hkb;k dk mldh vk; d fuèkkj.k d fy, çcèku d lokPp efMdy ckM dk fufn"V fd;k tk,xkA lokPp efMdy ckM }kjk fuèkkfjr vk; mldh vfèkof"krk d ç;ktu l fdlh pukrh d fcuk lcfèkr dedkj] çcèku vkj ;fu;u }kjk Lohdkj fd;k tk,xkA

(b) fd lcfèkr dedkj dk mld dke ij iucgky dj fn;k tk,xk ;fn ml 60 o"k l de vk; dk ik;k tkrk gA ;fn ;g ik;k tkrk g fd mlu viuh vfèkof"krk dh frfFk ij 60 o"k dh vk; ijk dj fy;k Fkk] og fdlh vurk"k dk gdnkj ugh gkxkA

(c) fd ;fn mldh vfèkof"krk dh frfFk ij vk; 60 o"k l de fuèkkfjr dh tkrh g] lcfèkr dedkj dk mldh vfèkof"krk dh frfFk l mld 60 o"k dh vk; çkIr dju rd vFkok viu dr0; dk iuq xg.k dju dh frfFk rd] ;FkkfLFkfr] mldh fiNyh etnjh d 50% dk Hkxrku fd;k tk,xkA

*(d) fd lcfèkr dedkj Lo; dk lokPp efMdy ckM dk fufn"V djoku d fy, le>kr dh frfFk l rhu ekg d Hkhrj çcèku dk fjikV djxkA***

4. उक्त समझौते के आधार पर, दिनांक 14.3.1991 का अधिनिर्णय पारित किया गया था। समझौते के निबंधनानुसार, उक्त जगदीश भूइयाँ को अपनी आयु के निर्धारण के लिए सर्वोच्च मेडिकल बोर्ड के समक्ष उपस्थित होना था। वह लंबे समय के अवसान के बाद अर्थात् दिनांक 11.3.1994 को मेडिकल बोर्ड के समक्ष उपस्थित हुआ और बोर्ड ने उसी तिथि को उसकी आयु 58 वर्ष पाया है। तत्पश्चात, उक्त कर्मचारी ने दिनांक 10.3.1996 (तिथि जिस पर वह 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद अधिवर्षित हुआ) तक अपना कर्त्तव्य पुन: ग्रहण कभी नहीं किया। उसकी अधिवर्षिता के पहले उसको अनेक नोटिस जारी किए गए थे किंतु वह उपस्थित नहीं हुआ था। तत्पश्चात, तीन वर्ष बाद, दिनांक 14.3.1991 का अधिनिर्णय क्रियान्वित करने के लिए श्रम प्रवर्तन अधिकारी द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनिर्णय क्रियान्वित करने के लिए श्रम प्रवर्तन अधिकारी द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धाराओं 18 और 32 के अधीन वर्तमान याचीगण के विरुद्ध परिवाद मामला आरंभ किया गया था।

5. आगे यह निवेदन किया गया है कि समझौते के निबंधनों के अनुसार कर्मकार को अपना कर्तव्य पुन: ग्रहण करना था किंतु वह अनेक स्मरण पत्रों के बावजूद अपनी अधिवर्षिता की तिथि तक उपस्थिति नहीं हुआ था। अत:, नियोक्ता अधिनिर्णय क्रियान्वित नहीं कर सका था। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि इसी आधार पर अन्य दो सह-अभियुक्तगण अर्थात् अशोक मेहता उर्फ ए॰ के॰ मेहता और वी॰ पी॰ गुप्ता द्वारा दाखिल दांडिक विविध याचिका सं॰ 4586/2001 जिसे श्रम प्रवर्तन अधिकारी (केंद्रीय), धनबाद सहित दोनों पक्षों को सुने जाने के बाद अनुज्ञात किया गया था और उनके विरुद्ध आरंभ की गयी आई॰ डी॰ केस सं॰ 4/2001 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और उनके विरुद्ध संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित कर दिया गया था। इस न्यायालय के उक्त आदेश के विरुद्ध वि॰ प॰ सं॰ 2 किसी उच्चतर न्यायालय के समक्ष नहीं गया था। इस प्रकार, उक्त आदेश अंतिम बन गया है। अत:, पूर्वोक्त अधिनिर्णय

के गैर–क्रियान्वयन के लिए याचीगण के विरुद्ध आरंभ किया गया आई॰ डी॰ केस सं॰ 4/2001 अभिखंडित कर देना चाहिए।

6. वि॰ प॰ सं॰ 2 के अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है और परिशिष्ट–A संलग्न किया है जो महासचिव, बिहार कोलियरी मजदूर सभा द्वारा क्षेत्रीय श्रम आयुक्त, धनबाद को संबोधित दिनांक 14.8.1995 का पत्र है जिसमें क्षेत्रीय श्रम आयुक्त को सूचित किया गया है कि यूनियन और कर्मकार द्वारा बार–बार कहे जाने के बाद भी कुसुंडा क्षेत्र के प्रबंधन ने अधिनिर्णय क्रियान्वित करने से इनकार कर दिया। यह प्रतिवाद भी किया गया है कि परियोजना अधिकारी, गोंडूडीह कोलियरी को संबोधित दिनांक 18.4.1995 के पत्र के तहत क्षेत्रीय कार्मिक प्रबंधक, कुसुंडा क्षेत्र ने परियोजना अधिकारी से संबंधित कर्मकार को अपना कर्तव्य ग्रहण करने के लिए अपनी ओर से आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया। पूर्वोक्त दो पत्रों को प्रतिशपथ पत्र के साथ परिशिष्ट ए॰ और डी॰ के साथ संलग्न किया गया है।

7. उत्तर में, याचीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि संबंधित प्राधिकारी ने कर्मकार को अपना कर्तव्य पुनः ग्रहण करने के लिए अनेक पत्र जारी किया था किंतु कर्मकार अपनी अधिवर्षिता की तिथि तक उपस्थित नहीं हुआ था। उसने यह भी इंगित किया है कि यह दर्शाने के लिए एक भी पत्र नहीं है कि कर्मकार अपना कर्तव्य पुनः ग्रहण करने के लिए तैयार था अथवा वह अपना कर्तव्य पुनः ग्रहण करने के लिए संबंधित प्राधिकारी के पास गया था और संबंधित प्राधिकारी ने उसके पदग्रहण से इनकार कर दिया था।

8. दोनों पक्षों को सुनने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन करने के बाद और इस तथ्य पर भी विचार करते हुए कि इस न्यायालय की एक अन्य पीठ ने पहले ही दांडिक विविध याचिका सं॰ 4586/2001 में पारित दिनांक 19.4.2012 के आदेश के तहत अन्य दो सह–अभियुक्तगण अर्थात् अशोक मेहता उर्फ ए॰ के॰ मेहता और वी॰ पी॰ गुप्ता के विरुद्ध दिनांक 4.1.2001 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित आई॰ डी॰ केस सं॰ 4/2001 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दिया है और इस तथ्य पर भी विचार करते हुए कि कर्मकार अपनी अधिवर्षिता की तिथि तक अपना कर्तव्य पुनः ग्रहण करने के लिए उपस्थित कभी नहीं हुआ, मैं इस आवेदन को अनुज्ञात करती हूँ और आई॰ डी॰ केस सं॰ 4/2001 में पारित दिनांक 4.1.2001 के आदेश, जिसके द्वारा वर्तमान याचीगण के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया है, अपास्त किया जाता है और आई॰ डी॰ केस सं॰ 4/2001 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही भी अभिखंडित की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

अनिता देवी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 274 of 2012. Decided on 5th February, 2013.

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955—धाराएँ 7 एवं 8—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—चावल की अभिकथित कालाबाजारी–प्राथमिकी–प्रखंड आपूर्ति प्रभारी पदाधिकारी द्वारा अभिग्रहण किया गया–जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 आरंभ होने के बाद बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 में अंतर्विष्ट प्रावधान व्यवहार्य नहीं होंगे जहाँ तक यह पी॰ डी॰ एस॰ वस्तुओं के वितरण से संबंधित हैं–इसके अतिरिक्त, प्रखंड आपूर्ति पदाधिकारी को तलाशी और जब्ती के लिए राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत नहीं किया गया है–ऐसे

अभिग्रहण जिसे प्राधिकृत पदाधिकारी द्वारा प्रभाव नहीं दिया गया है पर आधारित कोई मामला दूषित हो जाता है–प्राथमिकी अभिखंडित। (पैराएँ 10 से 15)

निर्णयज विधि.–Cr. M.P. No. 56 of 2012—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s J.S. Singh, V.K. Tiwary, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

यह आवेदन आवश्यक वस्तु अधिनियम की धाराओं 7 और 8 के अधीन संस्थापित मेहरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 154 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 1212 वर्ष 2011) की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. अभियोजन का मामला जैसा प्राथमिकी से प्रतीत होता है यह है कि जब चावल से भरे पाँच बोरों को टमटम पर ले जाया जा रहा था, गाँव वालों द्वारा इसे पकड़ा गया था। पूछे जाने पर टमटम वाले ने प्रकट किया कि अजय पोद्दार के कहने पर उसने पी॰ डी॰ एस॰ डीलर अनिता देवी के घर से चावल के उक्त बोरों को लाया था। जब प्रखंड आपूर्ति प्रभारी-पदाधिकारी, मेहरमा द्वारा ऐसी सूचना प्राप्त की गयी थी, वह घटनास्थल पर आये और अभिग्रहण सूची के अधीन चावल के बोरों को जब्त किया और अनिता देवी की दुकान पर भी छापा मारा किंतु इसे बंद पाया गया था। इस प्रकार, यह अभिकथित किया गया था कि अजय पोद्दार ने कालाबाजार में इसे बेचने के प्रयोजन से पी॰ डी॰ एस॰ डीलर अनिता देवी की दुकान से चावल के उक्त बोरों को खरीदा था।

3. ऐसे अभिकथन पर आवश्यक वस्तु अधिनियम की धाराओं 7 और 8 के अधीन मेहरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 154 वर्ष 2011 के रूप में मामला दर्ज किया गया था।

4. प्राथमिकी का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि प्रखंड आपूर्ति प्रभारी पदाधिकारी, मेहरमा, जिसने चावल के पाँच बोरों को जब्त किया था जिस पर मामला दर्ज किया गया था, को जनवितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के खंड 10 के निबंधनानुसार तलाशी एवं जब्ती के लिए प्राधिकृत कभी नहीं किया गया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि केन्द्र सरकार ने दिनांक 31.8.2001 के प्रभाव से पी॰ डी॰ एस॰ डीलर पर प्रयोज्य समस्त नियंत्रण आदेशों को निरसित कर दिया था जब केंद्र सरकार ने जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 को प्रख्यापित किया था जिसके द्वारा जन वितरण प्रणाली आदेश का परिशिष्ट 6 विहित करता है कि राज्य सरकार को जन वितरण प्रणाली से संबंधित वस्तुओं के विक्रय और वितरण को नियमित करने के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 3 के अधीन आदेश जारी करना है किंतु झारखंड सरकार ने जन वितरण प्रणाली और तद्द्वारा पी॰ डी॰ एस॰ डीलरों, जिन्होंने योजना के लाभार्थियों के प्रति आवश्यक वस्तुओं के वितरण के मामले में अवैधता और अनियमितता में स्वयं को लिप्त भी किया था, को अभियोजित नहीं किया जा सकता है और उस स्थिति में पी॰ डी॰ एस॰ डीलर से भिन्न व्यक्ति का मामला ज्यादा मजबूत है। अतः याची सं॰ 2 और याची सं॰ 1 पी॰ डी॰ एस॰ डीलर के विरुद्ध अभियोजन दूषित हो जाता है।

6. दूसरा तर्क यह है कि उक्त आदेश के अधीन राज्य सरकार को उक्त आदेश के खंड 10 के निबंधनानुसार किसी व्यक्ति को तलाशी एवं जब्ती करने की शक्ति के साथ प्राधिकृत करने की आवश्यकता होती है किंतु राज्य सरकार आज की तिथि तक उक्त आदेश के खंड 10 के निबंधनानुसार किसी व्यक्ति को तलाशी एवं जब्ती करने के लिए प्राधिकृत करते हुए किसी प्राधिकरण के साथ आगे नहीं आयी है। इस प्रकार व्यक्ति, जिसे उक्त आदेश के खंड 10 के निबंधनानुसार प्राधिकृत नहीं किया

गया है, द्वारा की गयी जब्ती सदैव अवैध कही जा सकती है और ऐसी जब्ती पर आधारित अभियोजन निश्चय ही दूषित हो जाएगा और इस स्थिति के अधीन प्राथमिकी अभिखंडित किए जाने योग्य है।

7. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उक्त विवाद्यक अन्य मामलों के संबंध में उठाया गया था जिसमें राज्य यह दर्शाने में विफल रहा कि जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 की धारा 3 के अधीन ऐसा कोई आदेश झारखंड राज्य द्वारा जारी किया गया है और परिणामस्वरुप यह दर्शाया नहीं जा सका था कि जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के खंड 10 के निबंधनानुसार किसी व्यक्ति को तलाशी और जब्ती करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। आज के दिन पर भी समरुप स्थिति है, अत: प्राथमिकी का अभिखंडन अपेक्षणीय है।

8. प्रतिशपथ पत्र भी दाखिल किया गया है जिसमें इसी तथ्य जो प्राथमिकी में भी है को दोहराया गया है।

9. इन निवेदनों की दृष्टि में, जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के खंड 14 को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"14. **jkT; ljdkj d ifod vkn'kk ij vkn'k d çkoèkku vfHkHkkoh gkx-**&jkT; ljdkj }kjk vFkok ,l jkT; ljdkj d fdlh vfèkdkjh }kjk bl vkn'k d vkjHk gku d igy ikfjr fdlh vkn'k e vrfo"V fdlh foijhr pht d ckotn ,l vkjHk d igy dh x;h vFkok bld vèkhu dju l yki dh x;h fdlh pht d flok, bl vkn'k d çkoèkku çHkkodkjh gkxA***

10. पूर्वोक्त आदेश के प्रावधान के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि जन वितरण प्रणाली के अधीन डीलर से संबंधित समस्त प्रावधान खंड 14 में अंतर्विष्ट प्रावधान के फलस्वरुप निरसित हो जाते हैं।

11. ऐसी स्थिति में, जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के आरंभ होने के बाद बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 में अंतर्विष्ट प्रावधान व्यवहार्य नहीं होंगे जहाँ तक ये पी॰ डी॰ एस॰ वस्तुओं के वितरण से संबंधित मामलों से संबंधित हैं।

12. इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर ऐसा कुछ भी प्रतीत नहीं होता है कि खंड 10 के अधीन राज्य सरकार द्वारा प्रखंड आपूर्ति पदाधिकारी को तलाशी और जब्ती करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। अत: ऐसी जब्ती, जिसे प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा प्रभाव नहीं दिया गया है, पर आधारित कोई मामला दूषित हो जाता है।

13. उक्त कथित प्रतिपादना **आलोक दत्ता बनाम झारखंड राज्य, (दांडिक विविध याचिका सं॰ 56 वर्ष 2012)** में पहले ही अधिकथित की जा चुकी है। इन परिस्थितियों के अधीन, निश्चय ही प्राथमिकी का अभिखंडन अपेक्षणीय है।

14. तद्नुसार, याचीगण के विरुद्ध आवश्यक वस्तु अधिनियम की धाराओं 7 और 8 के अधीन संस्थापित मेहरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 154 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 1212 वर्ष 2011) की प्राथमिकी एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

15. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

संजीव अग्रवाल

cuke

सुमन अग्रवाल

F.A. No. 190 of 2011. Decided on 17th April, 2013.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 13 (i-a)—तलाक वाद–खारिजी–पत्नी द्वारा अभिकथित क्रूरता–वादी-अपीलार्थी ने कोई विनिर्दिष्ट तिथि, माह तथा वर्ष का जिक्र नहीं किया है जब प्रतिवादी ने उसके और उसके परिवार के सदस्यों के साथ दुर्व्यवहार किया था–पत्नी द्वारा क्रूरता सिद्ध करने के लिए अपीलार्थी द्वारा किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है–अपीलार्थी ने प्रतिवादी के किसी विनिर्दिष्ट कृत्य जिसने क्रूरता कारित किया है के बारे में विनिर्दिष्टतः प्राख्यान नहीं किया है–आक्षेपित निर्णय अभिपुष्ट किया गया–अपील खारिज।
(पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Mahesh Kumar Sinha, For the Appellant; None, For the Respondent.

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची–अपीलार्थी ने हक वैवाहिक वाद सं॰ 40 वर्ष 2011 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 26.11.2011 के निर्णय के विरुद्ध इस अपील को दाखिल किया है जिसके द्वारा प्रमुख न्यायाधीश ने हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (i-a) के अधीन दाखिल याची–अपीलार्थी का वाद खारिज कर दिया है।

2. संक्षेप में मामला यह है कि याची–अपीलार्थी और प्रतिवादी–प्रत्यर्थी के बीच दिनांक 25.2.2008 को दिगंबर जैन मंदिर, हर्मू रोड राँची में हिंदू रीति-रिवाजों के मुताबिक विवाह संपन्न किया गया था। यह कथन किया गया है कि पूर्वोक्त विवाहोपरांत प्रतिवादी प्रत्यर्थी को याची–अपीलार्थी के घर ले जाया गया था जहाँ विवाहोत्तर सहवास किया गया था। यह कथन किया गया है कि विवाह के कुछ समय तुरन्त बाद प्रतिवादी प्रत्यर्थी ने कुछ रिष्टि करना शुरू किया और अपीलार्थी की सहमति के बिना और अपने अता–पता की समुचित सूचना अपीलार्थी को दिए बिना यहाँ वहाँ जाने लगी। अपीलार्थी ने मामला शांत करने का प्रयास किया किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। यह कथन किया गया है कि तत्पश्चात प्रतिवादी प्रत्यर्थी जानबूझकर और आशयपूर्वक स्वयं को अपीलार्थी के घर से दूर रखने लगी जो निश्चय ही अपीलार्थी के लिए चिंता का विषय था। यह कथन किया गया है कि अपीलार्थी को पड़ोसियों से मालूम हुआ कि उसे प्रायः अन्य लोगों के साथ देखा जाता था जिस पर अपीलार्थी ने मामला शांत करने का प्रयास किया किंतु उसने सदैव धृष्टता दिखायी और अपीलार्थी के अनुरोध पर ध्यान नहीं दिया। यह कथन किया गया है कि जब कभी अपीलार्थी ने शांत चित्त से और स्वस्थ वातावरण में मामला सुलझाने का प्रयास किया, उसने तलाक और पृथक्करण का प्रस्ताव दिया। यह कथन किया गया है कि उक्त परिस्थितियों में अपीलार्थी के लिए तलाक के सिवाए प्रतिवादी के साथ वैवाहिक संबंध जारी रखना व्यवहार्य नहीं था। यह कथन किया गया है कि प्रतिवादी के पूर्वोक्त रुख और कृत्य के कारण वह अत्यन्त मानसिक वेदना और निराशा से पीड़ित हो रहा है और सार्वजनिक रूप से अपमान का सामना कर रहा है।

3. याची अपीलार्थी ने दिनांक 10.2.2011 को वाद दाखिल किया जिसे दिनांक 22.2.2011 को ग्रहण किया गया था। तत्पश्चात्, नोटिस जारी की गयी थी और अंततः दिनांक 14.6.2011 को दैनिक समाचार पत्र ''हिन्दुस्तान'' में नोटिस प्रकाशित की गयी थी किंतु प्रतिवादी वाद का प्रतिवाद करने के लिए उपस्थित नहीं हुई। वाद को एकपक्षीय सुनवाई के लिए नियत किया गया था। याची–अपीलार्थी ने स्वयं (अ॰ सा॰ 3 के रूप में) सहित तीन गवाहों का परीक्षण किया। तपेन्द्र सिंह अ॰ सा॰ 1 है और संजय कुमार अ॰ सा॰ 2 है। याची–अपीलार्थी की ओर से कोई दस्तावेज दाखिल नहीं किया गया है।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दोनों गवाहों ने और उसने स्वयं प्रतिवादी के विरुद्ध किए गए अभिकथनों को सिद्ध किया है किंतु अवर न्यायालय ने इस पर विचार नहीं किया है।

5. अभिलेख से हम पाते हैं कि वादी ने कोई विनिर्दिष्ट तिथि, माह तथा वर्ष का जिक्र नहीं किया है कि कब प्रतिवादी ने याची और उसके परिवार के सदस्यों के साथ दुर्व्यवहार किया, किसी पड़ोसी का

विनिर्दिष्ट नाम भी नहीं है जिसे प्रतिवादी को फोन पर अन्य लोगों से अथवा तथा कथित पुरुषों के साथ बातचीत करते देखता हुआ बताया गया है। इसके अतिरिक्त, यह भी स्पष्ट नहीं है कि क्या प्रतिवादी याची के घर में रह रही है या नहीं। क्रूरता के किसी प्रकार के संबंध में याची अपीलार्थी सहित गवाहों में से किसी के भी साक्ष्य में कुछ नहीं आया है। याची ने केवल यह कथन किया है कि वह सार्वजनिक रूप से मानसिक वेदना, पीड़ा से पीड़ित हुआ है और अपमान का सामना किया है।

6. अ॰ सा॰ 1 जो याची का मित्र है अनुश्रुत गवाह है। उसने किसी भी पड़ोसी के नाम का कथन नहीं किया है जिसके साथ प्रतिवादी को फोन पर बातचीत करता देखा गया था। उसने केवल याची की भाभी और माता से सुना है और उन्होंने उसके फोन पर बातचीत करने पर विरोध भी जताया था। किंतु याची की उक्त भाभी अथवा माता का इस मामले में परीक्षण नहीं किया गया है।

7. अ॰ सा॰ 2 भी अनुश्रुत गवाह है। उसने भी किसी पड़ोसी का नाम नहीं दिया है जिसके साथ प्रतिवादी अभिकथित रूप से फोन पर बात करती थी। उसने भी वादी के बड़े भाई से ऐसा सुना था। उसने व्यक्तिगत रूप से प्रतिवादी को किसी व्यक्ति विशेष के साथ नहीं देखा था।

8. अंत में अ॰ सा॰ 3 जो अपीलार्थी याची है। उसने भी कोई तिथि नहीं दिया है कि किस तिथि पर प्रतिवादी उसकी अनुमति के बिना घर से चली गयी थी। उसने केवल यह कथन किया है कि उसने पड़ोसियों से जाना कि उसकी पत्नी अन्य व्यक्तियों के साथ घूम रही है किंतु उसने ऐसे किसी व्यक्ति का नाम प्रकट नहीं किया है। इसके अतिरिक्त, वादी ने प्रतिवादी के किसी विनिर्दिष्ट कृत्य जिसने क्रूरता कारित किया है के बारे में विनिर्दिष्टत: प्राख्यान नहीं किया है।

9. याची ने अपने मामले के समर्थन में अपनी माता, भाई अथवा भाभी का परीक्षण नहीं किया है जिन्हें प्रतिवादी को अन्य पुरुषों के साथ फोन पर बातचीत करते देखता हुआ बताया गया है।

10. अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों और गवाहों के साक्ष्य पर विचार करते हुए और संवीक्षण करते हुए, हम पाते हैं कि अपीलार्थी प्रतिवादी अर्थात् सुमन अग्रवाल के विरुद्ध क्रूरता के किसी कृत्य अथवा अधित्यजन को सिद्ध करने में विफल रहा है और दूसरी ओर गवाहों ने याची का प्रतिवादी के साथ विवाह सिद्ध किया है। अत:, हम आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं। तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

गंगा शरण सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cri. Misc. No. 2680 of 2001. Decided on 21st March, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन में।

(क) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 177, 178 एवं 482—क्षेत्रीय अधिकारिता–कोई न्यायिक दंडाधिकारी जो संज्ञान लेने के लिए सक्षम है किसी अपराध का संज्ञान ले सकता है

यदि परिवाद के रूप में इसे उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता है–अधिकारिता के बाहर किए गए अपराध के लिए भी संज्ञान लेने पर वर्जना नहीं है–अपराध का विचारण सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय को अंतरित किया जा सकता है। (पैरा 7)

(ख) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 420 एवं 417—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—षडयंत्र एवं छल–संज्ञान–बढ़ाई गयी फीस का भुगतान नहीं करने पर याची का नाम संस्थान से काट दिया गया और भुगतान की गयी फीस वापस भी नहीं की गयी–परिवाद में किया गया प्रतिवाद प्रथम दृष्टया विचारण हेतु अग्रसर होने के प्रयोजन से अपराध गठित करता है–अभिखंडन आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 13 एवं 14)

अधिवक्तागण.–Mr. Sameer Saurabh, For the Petitioner; Mr. Binay Tiwari, For the State.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन यह आवेदन परिवाद केस सं॰ 27 वर्ष 2001 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 31.1.2001 के संज्ञान के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420 और 417 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए और उक्त परिवाद मामले से उद्‌भूत होने वाले याची के दांडिक अभियोजन के लिए भी विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है।

2. परिवाद से प्रतीत होने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची एस॰ एन॰ सिन्हा इंस्टिच्यूट ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट, धुर्वा, राँची का प्रशासनिक अधिकारी है। परिवादी प्रबंधन पाठ्यक्रम में प्रवेश परीक्षा में उपस्थित हुआ था और परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद उसने प्रवेश पाया और संस्थान के प्रॉस्पेक्टस और नियमों के मुताबिक आवश्यक फीस जमा किया।

3. यह अभिकथित किया गया है कि परिवादी को द्वितीय वर्ष के लिए अपना अध्ययन जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी क्योंकि संस्थान ने किसी पूर्व नोटिस के बिना अपना फीस 12,585/- रुपयों से 35,000/- रुपयों तक बढ़ा दिया था। परिवादी का नाम काट दिया गया था और उसे अपना अध्ययन जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी। उसका मूल महाविद्यालय निर्गम प्रमाण पत्र भी संस्थान द्वारा अपने पास रख लिया गया था और संस्थान द्वारा वसूली गयी 18,935/- रुपयों की राशि भी उसे वापस नहीं की गयी थी। चूँकि परिवादी ने स्वयं को छला हुआ महसूस किया, उसने समस्त पत्राचार के बाद परिवाद दाखिल किया है।

4. यह निवेदन किया गया है कि परिवादी का नाम इसलिए काट दिया गया था क्योंकि उसने आवश्यक उपस्थिति पूरा नहीं किया था और उसे कक्षा से अनुपस्थित पाया गया था। यह कहना गलत है कि फीस 12,585/- रुपयों से 35,000/- रुपया बढ़ा दी गयी थी। यह छल का मामला नहीं है। आरंभ से जब परिवादी को संस्थान में प्रवेश दिया गया था, कोई प्रवंचनापूर्ण आशय नहीं था। यह परिवादी का स्वीकृत मामला है कि उसने प्रवेश पाया और उसे संस्थान में अध्ययन करने की अनुमति दी गयी थी किंतु उसकी ओर से ढिलाई अर्थात् उपस्थिति की कमी के कारण उसे अगले वर्ष अपना अध्ययन जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी।

विद्वान अधिवक्ता ने एक अन्य बिंदु उठाया कि संस्थान राँची जिला के अंतर्गत चलाया जा रहा है किंतु यह परिवाद डालटेनगंज में दाखिल किया गया है और, इसलिए, दंडाधिकारी को संज्ञान लेने की क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है।

5. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि यह केवल परिवादी द्वारा जमा की गयी राशि के दुर्विनियोग अथवा छल का मामला नहीं है बल्कि ऐसा मामला है जिसमें छात्र का बहुमूल्य एक वर्ष बर्बाद कर दिया गया है।

6. मैंने परिवाद याचिका और अपने समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों का परिशीलन किया है। यह विवादित नहीं है कि परिवादी एस॰ एन॰ सिन्हा इंस्टीच्यूट ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट का छात्र था जिसका याची प्रशासनिक अधिकारी है। स्वयं याची द्वारा आगे स्वीकार किया गया है कि परिवादी को द्वितीय वर्ष के लिए अपना अध्ययन जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी किंतु परिवादी द्वारा अपने परिवाद में लिए गए आधार पर नहीं बल्कि उपस्थिति की कमी के आधार पर। प्रॉस्पेक्टस में संस्थान के नियम स्पष्ट थे और संस्थान के नियमों के मुताबिक छात्र को एक सत्र के लिए 75% उपस्थिति पूरा करना था।

7. प्रथमत: मैं अधिकारिता के बिंदु पर विचार करना चाहूँगा। यह परिवादी का और याची का भी स्वीकृत मामला है कि संस्थान द्वारा परिवादी के साथ डालटेनगंज जिला की अधिकारिता के अंतर्गत आने वाले उसके आवासीय पते पर पत्राचार किया गया था जहाँ परिवाद दाखिल किया गया था। परिवादी ने यह भी स्पष्ट किया है कि वह एप्टिच्यूड परीक्षा में उपस्थित हुआ और उसके रैंक के मुताबिक संस्थान द्वारा दिनांक 26.12.1999 के पत्र के तहत डालटेनगंज जिला के अंतर्गत अवस्थित उसके आवासीय पते पर उसको प्रवेश लेने का प्रस्ताव दिया गया था। प्रस्ताव पत्र के बाद परिवादी साक्षात्कार के लिए उपस्थित हुआ और सफल होने के बाद उसने अपेक्षित फीस, ट्यूशन फीस और अन्य प्रभारों को जमा किया और प्रवेश पाया। चूँकि परिवादी और संस्थान के बीच पत्राचार राँची और डालटेनगंज के बीच हुआ था, यदि पूर्वोक्त पक्षों के बीच विवाद उद्‌भूत होता है, मामला दाखिल करने की अधिकारिता दोनों स्थानों अर्थात् डालटेनगंज और राँची में होगी। अत: मैं नहीं पाता हूँ कि दाखिल किया गया परिवाद और लिया गया संज्ञान अधिकारिता की किसी कमी से पीड़ित है। इसके अतिरिक्त, कोई न्यायिक दंडाधिकारी जो संज्ञान लेने के लिए सक्षम है किसी अपराध का संज्ञान ले सकता है यदि इसे उसके समक्ष परिवाद के रूप में प्रस्तुत किया गया है और अधिकारिता के बाहर किए गए अपराध का भी संज्ञान लेने में कोई वर्जना नहीं है।

जहाँ तक अपराध के विचारण का संबंध है, इसे सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय को अंतरित किया जा सकता है। इस मामले में, विचारण का चरण नहीं आया है। अत: याची समुचित चरण पर इस बिंदु को उठा सकता है यदि वह व्यथित महसूस करता है।

8. मैंने पूर्ववर्ती पैराग्राफ में पहले ही उल्लिखित किया है कि संस्थान द्वारा प्रथम सत्र के लिए फीस वसूली गयी थी और परिवादी को अपना अध्ययन जारी रखने के लिए प्रवेश दिया गया था। परिवाद के पैराग्राफ 4 में स्पष्टत: कथन किया गया है कि दिनांक 5.9.2000 को 122,585/- रुपयों के बजाए 35,000/- रुपया फीस मांगी गयी थी और धन की उक्त राशि के गैर भुगतान के कारण परिवादी का नाम काट दिया गया था और उसे अपना अध्ययन जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी। प्रथम दृष्टया, विचारण हेतु अग्रसर होने के प्रयोजन से परिवाद में किया गया प्रतिवाद अपराध गठित करता है। परिवाद में किए गए प्रकथनों के आधार पर यदि इस मोड़ पर इस न्यायालय द्वारा कोई संप्रेक्षण किया जाता है, यह संबंधित पक्षों पर प्रतिकूल प्रभाव कारित करेगा, अत: मुझे इसके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है कि क्या कोई अपराध विशेष किया गया है या नहीं।

9. मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे खारिज किया जाता है। दिनांक 6.6.2001 का स्थगन का अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है और विचारण न्यायालय अथवा मामले की सुनवायी करने वाला न्यायालय इस न्यायालय द्वारा किए गए किसी संप्रेक्षण से पूर्वाग्रह ग्रस्त हुए बिना विधि के अनुरुप आगे अग्रसर होने के लिए स्वतंत्र होगा।

इस आदेश की प्रति संबंधित न्यायालय को फैक्स के माध्यम से संसूचित की जाए।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

झारखंड लोक सेवा आयोग

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1923 of 2008. Decided on 1st February, 2013.

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005—धाराएँ 8(i)(d) एवं 9—सूचना का अधिकार–सूचना आयुक्त को प्रत्यर्थी को प्रश्नवार उत्तर देने का निर्देश–राज्य सूचना आयुक्त ने याची को उन प्रश्नों को भी उपलब्ध कराने का निर्देश दिया जिसे मूलतः प्रत्यर्थी द्वारा आर॰ टी॰ आई॰ आवेदन में नहीं पूछा गया था–अपीलीय प्राधिकारी प्रत्यर्थी द्वारा की गयी मूल प्रार्थना के परे गया–आक्षेपित आदेश अपास्त–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s Sanjoy Piprawall, Mahadeo Thakur, Amitabh, For the Petitioner; Mr. Yogendra Prasad, For the Respondent no.1.

आदेश

याची और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यद्यपि निजी प्रत्यर्थी वकालतनामा दाखिल करके नोटिस पर अपने अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुआ किंतु उसके मामले का प्रतिवाद करने के लिए उसकी ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ।

3. याची अपील सं॰ 799 वर्ष 2007 में विद्वान मुख्य सूचना आयुक्त, झारखंड राज्य सूचना आयोग, राँची द्वारा पारित दिनांक 31.3.2008 के आदेश, परिशिष्ट-9 से व्यथित है जिसके द्वारा याची जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को प्रत्यर्थी सं॰ 3 को प्रश्नवार उत्तर देने का निर्देश दिया गया है जिसमें विफल होने पर लोक सूचना अधिकारी को आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के अधीन दोषी अभिनिर्धारित किया जाएगा।

4. आक्षेपित आदेश का विरोध एकमात्र इस आधार पर किया गया है कि आयोग सूचना इप्सित करने वाले प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा परिशिष्ट 1 के तहत आवेदन में पूछे गए प्रश्न के विस्तार के परे चला गया। दिनांक 7.6.2007 के आवेदन के (क) पर इप्सित की गयी उक्त सूचना विज्ञापन सं॰ 3/2003-04 में ली गयी प्रासंगिक परीक्षा के मेकेनिकल इंजीनियरिंग पेपर की लिखित परीक्षा का सही उत्तर प्रस्तुत करने से संबंधित थी। याची जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने परिशिष्ट 6 के तहत बयान देकर उक्त सूचना प्रदान किया कि उक्त पेपर का सही उत्तर आयोग की वेबसाइट पर प्रकाशित किया गया है। तत्पश्चात प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने प्रश्नों, जिनके संबंध में उसके अनुरोध पर पहले उत्तर दिए गए थे, को प्रदान करने का आगे अनुरोध किया। राज्य सूचना आयोग के समक्ष अपील सं॰ 799 वर्ष 2007 में परिशिष्ट 8 द्वारा अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए इसका उत्तर दिया गया था कि सूचना इप्सित करने वाले मूल आवेदन का विस्तार बढ़ा दिया गया है जो आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के अधीन अनुज्ञेय नहीं है और आगे कि विभिन्न परीक्षाओं के लिए आयोग द्वारा तैयार किए गए प्रश्न कॉपी राइट अधिनियम और आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम, 2005 की धाराओं 8 (i) (d) और 9 के प्रावधानों के अधीन संरक्षित हैं। किंतु, आक्षेपित आदेश द्वारा राज्य सूचना आयोग याची-आयोग को यह निर्देश देने के लिए अग्रसर हुआ है कि याची-आयोग को आवेदक को

प्रश्नवार उत्तर प्रदान करना चाहिए जिसमें विफल रहने पर लोक सूचना अधिकारी को सही सूचना दबाने और भ्रामक सूचना देने के लिए आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के अधीन दोषी अभिनिर्धारित किया जाएगा।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन करने के बाद यह प्रकट है कि मूलत: विज्ञापन सं॰ 3/2003-04 के अधीन याची–जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा संचालित मेकेनिकल इंजीनियरिंग परीक्षा के लिए उत्तरों के संबंध में सूचना के लिए अनुरोध किया गया था। तत्पश्चात ऐसी लिखित परीक्षा का उत्तर याची आयोग के वेबसाइट पर डाला गया था और आवेदक को इसके बारे में सूचित भी किया गया था। तत्पश्चात्, उसने ऐसे उत्तर से संबंधित प्रश्नों को प्रदान करने का आगे अनुरोध किया है। प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा किया गया अनुरोध स्पष्टत: उसके द्वारा परिशिष्ट 1 के तहत इप्सित मूल सूचना के विस्तार के परे गया है और राज्य सूचना आयोग के समक्ष याची आयोग द्वारा इसका पर्याप्त रूप से उत्तर दिया गया था। किंतु, राज्य सूचना आयोग ने याची को प्रश्नों को भी उपलब्ध कराने का निर्देश दिया है जिन्हें प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा आर॰ टी॰ आई॰ आवेदन में मूलत: नहीं मांगा गया था। प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि अपीलीय प्राधिकारी सूचना इप्सित करने वाले आवेदन में प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा की गयी मूल प्रार्थना के परे चला गया है।

6. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 6 सूचना प्राप्त करने के लिए अनुरोध के लिए प्रावधान बनाती है। यह कथन करती है कि व्यक्ति, जो अधिनियम के अधीन किसी सूचना को प्राप्त करने की इच्छा रखता है, को अपने द्वारा इप्सित की गयी सूचना की विशिष्टियों को विनिर्दिष्ट करते हुए लिखित में अथवा इलेक्ट्रॉनिक साधन के माध्यम से अनुरोध करना होगा।

7. अत: यह प्रतीत होता है कि अपीलीय प्राधिकारी इसे यह कारण बताने के लिए कहते हुए कि क्यों नहीं इसे सही सूचना नहीं देने के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए यद्यपि याची ने मूल अनुरोध पर प्रासंगिक सूचना प्रदान किया था, आक्षेपित आदेश पारित करने के लिए अग्रसर हुआ है। यदि आर॰ टी॰ आई॰ आवेदक आगे सूचना इप्सित करने का आशय रखता था, उसे विधि के अनुरुप समुचित आवेदन देने की छूट थी जिस पर विधि के मुताबिक विचार किया जा सकता था। मामले के उस दृष्टिकोण में आक्षेपित आदेश को विधि में और तथ्यों पर संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, इसे अपास्त किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कं॰ लि॰ एवं एक अन्य

cuke

वीणा देवी एवं अन्य

M.A. No. 118 of 2011. Decided on 5th April, 2013.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धारा 163A—दुर्घटना–मुआवजा–अपराधकर्ता वाहन के चालक के पास दुर्घटना जिसमें पीड़ित की मृत्यु हो गयी, के समय पर वैध ड्राइविंग लाइसेंस था–अधिकरण ने धारा 163A की अनुसूची II में विहित 5000/- रुपयों के विरुद्ध साहचर्य की हानि के लिए मुआवजा के रूप में 50,000/- रुपया अधिनिर्णीत किया–अधिनिर्णय का वह भाग अपास्त किया जाता है–शेष निर्णय/अधिनिर्णय अभिपुष्ट किया गया। (पैराएँ 7, 11 से 14)

निर्णयज विधि.–2009 (2) TAC 677 (SC)—Relied; 2008(4) JLJR 567—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Basav Chatterjee, For the Appellant; Mr. Rajiv Anand, For the Respondent.

आदेश

यह अपील मोटर वाहन दावा मामला सं॰ 32 वर्ष 2009 में अपर जिला न्यायाधीश सह–मोटर वाहन दुर्घटना दावा अधिकरण, एफ॰ टी॰ सी॰ 11, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 16.3.2011 के निर्णय/अधिनिर्णय के विरुद्ध दाखिल किया गया है।

2. चूँकि प्रत्यर्थी–दावेदार सं॰ 1 से 5 के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हुए हैं, दोनों पक्षों की उपस्थिति में अपील सुनी जा रही है।

3. अपीलार्थीगण ने तीन आधारों पर आक्षेपित निर्णय/अधिनिर्णय को चुनौती दिया है: (i) लाइसेंस की वैधता के संबंध में विद्वान अधिकरण का निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है और निर्णय विकृत है; (ii) विद्वान अधिकरण ने गलत रूप से गुण्य राशि को मासिक वेतन का दुगुना लिया है और **अर्चना झा बनाम ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लि॰,** (2008)4 JLJR 567, में इस न्यायालय के निर्णय के आलोक में वेतन की राशि को दोगुना करने में भी गलती की है और (iii) विद्वान अधिकरण ने साहचर्य की हानि शीर्ष के अधीन मोटर यान अधिनियम, 1988 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 163A की अनुसूची II के मुताबिक 5000/- रुपयों की नियत राशि के विरुद्ध 50,000/- रुपयों की राशि प्रदान करने में गलती किया है।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान अधिकरण ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और सामग्रियों पर समग्र रूप से चर्चा किया है और विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दिया है कि चालक का ड्राइविंग लाइसेंस पुरुलिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 31/09 (प्रदर्श 5) में जब्त कर लिया गया था और कि वह वैध ड्राइविंग लाइसेंस था। अपीलार्थीगण ने अभिलेख पर विपरीत साक्ष्य नहीं दिया है। विद्वान अधिकरण ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि अपराधकर्ता वाहन के चालक के पास दुर्घटना जिसमें मृतक की मृत्यु हो गयी थी की अभिकथित तिथि और समय पर वैध ड्राइविंग लाइसेंस था। विद्वान अधिकरण ने उन परिस्थितियों पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है जिसके अधीन गुणक लागू किया गया है और वेतन की राशि नियत की गयी है और **अर्चना झा (ऊपर)** के मामले में अधिकथित सिद्धांत पर विश्वास किया है। विद्वान अधिकरण के उक्त निष्कर्ष में कोई गलती अथवा अवैधता नहीं है।

5. जहाँ तक साहचर्य की हानि के लिए मुआवजा प्रदान करने का संबंध है, यद्यपि अधिनियम की धारा 163A की अनुसूची II 5,000/- रुपए की राशि प्रावधानित करती है, **सरला वर्मा बनाम दिल्ली परिवहन निगम एवं अन्य, 2009 (2) TAC 677 (SC)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में उक्त अनुसूची के प्रभाव को क्षीण कर दिया गया है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और सामग्री पर विचार किया है। मैंने आक्षेपित निर्णय/अधिनिर्णय का परिशीलन भी किया है।

7. मैं पाता हूँ कि विद्वान अधिकरण ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों, सामग्रियों और साक्ष्य पर समग्र रूप से चर्चा किया है और अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत ड्राइविंग लाइसेंस को पुरुलिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 31/09 (प्रदर्श 5) के संबंध में जब्त किया गया था और इसे वैध ड्राइविंग लाइसेंस पाया गया था। उन्होंने आगे स्पष्टत: संप्रेक्षित किया है कि इसका खंडन करने के लिए बीमा कंपनी–विरोधी पक्षकार द्वारा विपरीत साक्ष्य नहीं दिया गया है।

8. उस आधार पर विद्वान अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया है कि अपराधकर्ता वाहन के चालक के पास दुर्घटना जिसमें मृतक की मृत्यु हो गयी अभिकथित तिथि और समय पर वैध ड्राइविंग लाइसेंस था।

9. विद्वान अधिकरण ने समग्र रूप से मृतक की आयु और संभावना तथा साक्ष्यों (प्रदर्श 1, 2 और 3) पर चर्चा किया है और उसके आधार पर अपना निष्कर्ष दर्ज किया है। विद्वान अधिकरण ने **अर्चना झा के मामले (ऊपर)** में इस न्यायालय के निर्णय के आलोक में अभिलेख पर आए तथ्यों और परिस्थितियों पर भी विचार किया है और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और साक्ष्यों के आधार पर और विधि के अनुरुप मुआवजा की राशि विनिश्चित किया है।

10. मैं उक्त निष्कर्षों में अवैधता अथवा अशुद्धता नहीं पाता हूँ।

11. किंतु, जहाँ तक साहचर्य की हानि के शीर्ष के अधीन मुआवजा की राशि का संबंध है, अधिनियम की धारा 163A की अनुसूची II स्पष्टत: 5000/- रुपयों की नियत राशि का मुआवजा प्रावधानित करती है। उसके विरुद्ध विद्वान अधिकरण ने उस आधार पर हानि के लिए 50,000/- रुपयों का मुआवजा प्रदान किया है। उक्त विपथन के लिए और अधिनियम की धारा 163A की अनुसूची II में विहित मुआवजा राशि के विरुद्ध 50,000/- रुपयों का मुआवजा अधिनिर्णीत करने के लिए कोई विशेष कारण नहीं दिया गया है।

12. यद्यपि प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने उक्त निष्कर्ष का समर्थन करने का प्रयास किया, उन्होंने स्वीकार किया है कि उक्त प्रावधान से ऐसे विपथन के लिए और साहचर्य की हानि के शीर्ष के अधीन 50,000/- रुपया के विनिश्चयकरण के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है।

13. उक्त की दृष्टि में, अधिनियम की धारा 163A की अनुसूची II में विहित 5000/- रुपयों के विरुद्ध 50,000/- रुपयों का मुआवजा प्रदान करता हुआ विद्वान अधिकरण के निर्णय/अधिनिर्णय का उक्त भाग किसी विधिक आधार के बिना है और अधिनिर्णय के उस भाग को अपास्त किया जाता है। आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय को इस सीमा तक उपांतरित किया जाता है और साहचर्य की हानि के लिए 5000/- रुपयों का मुआवजा अभिनिर्धारित और अधिनिर्णीत किया जाता है और आक्षेपित अधिनिर्णय में मुआवजा की कुल राशि से 45,000/- रुपयों की राशि घटायी जाती है। निर्णय/अधिनिर्णय के शेष भाग को अभिपुष्ट किया जाता है और तद्नुसार, उक्त निबंधनों में अपील निपटायी जाती है।

14. कार्यालय को सांविधिक राशि को विद्वान अधिकरण को अंतरित करने का निर्देश दिया जाता है जैसी प्रार्थना अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गयी है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

गोपी कृष्ण डे उर्फ गोपी डे

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1229 of 2002. Decided on 10th April, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 406 एवं 407—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—कैरियर द्वारा न्यास का दांडिक भंग एवं छल–संज्ञान–अभियुक्त-याची ने विभिन्न ग्राहकों से संग्रहित आदेश के विरुद्ध फर्म से अभिकथित रूप से माल उठाया किंतु उसने भुगतान जमा नहीं किया था जिसे उसने विभिन्न ग्राहकों से मालों की आपूर्ति के विरुद्ध प्राप्त किया था–अभिकथनों को देखते ही भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 406 एवं 407 के अधीन अपराध नहीं बनता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया गया–किंतु, चूँकि परिवादी के

मुताबिक परिवाद में किए गए अभिकथन भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध गठित करते हैं, संज्ञान के बिंदु पर नया आदेश पारित करने के लिए मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा गया। (पैराएँ 5, 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Kalyan Roy, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the O.P. No.2; Mr. A.P.P., For the State.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 1373 वर्ष 2013

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वह इस अंतर्वर्ती आवेदन पर जोर नहीं दे रहे हैं।

2. तद्नुसार, यह अंतर्वर्ती आवेदन जोर नहीं दिए जाने पर खारिज किया जाता है।

दांडिक विविध याचिका सं॰ 1229 वर्ष 2002

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

4. यह आवेदन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 185/1998 (टी॰ आर॰ सं॰ 298/2002) में तत्कालीन एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, साहेबगंज द्वारा पारित दिनांक 17.12.1998 के आदेश के विरुद्ध है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 और 307 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

5. परिवादी का मामला यह है कि याची मेसर्स बिहारी लाल भारतीय के रूप में ज्ञात निर्माण फर्म में एजेन्ट के रूप में कार्यरत था। याची को विभिन्न ग्राहकों से आदेश प्राप्त करने और फर्म की सामग्रियों की आपूर्ति का काम न्यस्त किया गया था। यह अभिकथित किया गया है कि दिनांक 3.7.1997 से दिनांक 18.11.1997 के बीच अभियुक्त याची ने विभिन्न ग्राहकों से संग्रहित आदेश के विरुद्ध फर्म से माल उठाया किंतु उसने भुगतान जमा नहीं किया था जिसे उसने विभिन्न ग्राहकों से मालों की आपूर्ति के विरुद्ध प्राप्त किया था। ऐसे अभिकथन पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 और 407 के अधीन पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 185/1998 दर्ज किया गया था। बाद में, न्यायालय ने दिनांक 17.12.1998 के अपने आदेश के तहत याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 तथा 407 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया।

6. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री रॉय निवेदन करते हैं कि संपूर्ण अभिकथन को सत्य मानने पर भी छल अथवा न्यास के दांडिक भंग का मामला नहीं बनता है क्योंकि याची को छल का अपराध करता नहीं कहा जा सकता है क्योंकि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 अथवा धारा 406 के अधीन अपराध की कारिता का अवयव नहीं है और इसी समय पर भारतीय दंड संहिता की धारा 407 के अधीन अपराध गठित करने वाला अवयव कभी प्रतीत नहीं होता है और, तद्द्वारा, न्यायालय ने याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया है।

7. इसके विरुद्ध, वि॰ प॰ सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 तथा 407 के अधीन अभिकथनों से प्रकटत: अपराध आकृष्ट नहीं हो सकता है किंतु परिवाद में किए गए अभिकथन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराध गठित करते हैं और तद्द्वारा संपूर्ण कार्यवाही का अभिखंडन अपेक्षणीय नहीं है।

8. पक्षों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि अभिकथनों से प्रकटत: जिस पर परिवाद मामला संस्थापित किया गया है, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 406 तथा 407 के अधीन अपराध नहीं बनता है और तद्द्वारा दिनांक 17.12.1998 का संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

9. किंतु, चूँकि परिवादी के मुताबिक परिवाद में किया गया अभिकथन भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराध गठित करता है, संज्ञान के बिंदु पर नया आदेश पारित किए जाने के लिए मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है।

10. साथ ही यह अभिवचन भी किया गया है कि दिनांक 8.3.2000 को अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में याची के विरुद्ध गैर जमानतीय गिरफ्तारी वारन्ट भी जारी किया गया था यद्यपि उसके विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिए जाने के बाद याची पर समन तामील कभी नहीं किया गया था।

11. यदि न्यायालय द्वारा पाया जाता है कि समन तामील किए बिना गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया गया है, याची के उपस्थित होने पर उसे पूर्विक जमानत पर बने रहने की अनुमति दी जाएगी किंतु यदि यह अन्यथा है, तब याची को विधि का सहारा लेने की आवश्यकता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

महाबीर प्रसाद एवं अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

WP (C) No. 681 of 2013. Decided on 13th February, 2013.

अभिधृति–बेदखली–करार का अवसान–अनुज्ञप्ति फीस जो देय और भुगतान योग्य थी का भुगतान याचीगण द्वारा नहीं किया गया था–नोटिस जारी करने और उनको अनधिकृत अधिभोगियों के रूप में घोषित करने के पहले याचीगण को अवसर नहीं दिया गया था–याचीगण आवश्यक अनुज्ञप्ति फीस जिसे प्राधिकारियों द्वारा नियत किया जा सकता है को जमा करने के लिए तैयार और इच्छुक हैं–याचीगण को नया आवेदन देने की स्वतंत्रता दी गयी–प्राधिकारियों द्वारा अंतिम निर्णय लिए जाने तक याचीगण के विरुद्ध प्रपीड़क कदम नहीं उठाया जाएगा।
(पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Prasad, For the Petitioners; Mr. Ram Nivas Roy, For the Respondents.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका को दाखिल करके प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा जारी दिनांक 7.12.11 के आदेश (परिशिष्ट-6 श्रृंखला) को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा बेदखली के नोटिसों को इस आधार पर जारी किया गया है कि नवीकरण करार समाप्त हो गया है और तत्पश्चात याचीगण ने नया करार नहीं किया है।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और आक्षेपित नोटिसों, परिशिष्ट-6 श्रृंखला का और अभिलेख पर प्रस्तुत अन्य सामग्रियों का परिशीलन किया गया।

3. यह प्रतीत होता है कि याचीगण वाणिज्यिक भूखंडों से बेदखली के लिए नोटिसों के विरुद्ध रिट अधिकारिता के अधीन इस न्यायालय के पास आए हैं जो उपदर्शित करता है कि याचीगण ने पूर्विक करार के अवसान के बाद नया करार नहीं किया है और दिनांक 1.1.1994 से अध्यपेक्षित फीस का भुगतान नहीं किया है। आगे यह प्रतीत होता है कि दिनांक 7.2.11 की उक्त नोटिसों को जारी करने के बाद वर्तमान याचीगण के विरुद्ध प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाया गया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि याचीगण इस न्यायालय के पास आने के लिए मजबूर हुए क्योंकि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने प्रश्नगत परिसर को तुरन्त खाली करने के लिए कहा।

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याचीगण बार-बार करार के नवीकरण के अनुरोध के साथ उनके पास गए थे किंतु प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने याचीगण द्वारा किए गए अनुरोध के प्रत्युत्तर में कोई कार्रवाई नहीं की है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण आवश्यक अनुज्ञप्ति फीस जिसे प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा नियत किया जा सकता है को जमा करने के लिए तैयार तथा इच्छुक है। आगे यह निवेदन किया गया है कि ऐसी नोटिसों को जारी करने और अनधिकृत अधिभोगियों के रूप में याचीगण को घोषित करने के पहले याचीगण को अवसर नहीं दिया गया है, और इसलिए, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने स्पष्टत: नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इस याचिका के साथ संलग्न परिशिष्ट-1 को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि याचीगण को प्रश्नगत परिसर का अधिभोग और उपयोग करने की अनुमति दी गयी है और दिनांक 20.9.1975 को आवश्यक किराया रसीदों को जारी किया गया है तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि याचीगण वर्ष 1975 से उक्त परिसर के अधिभोग में है। यह प्रतीत होता है कि परिशिष्ट-3 के मुताबिक तत्पश्चात वर्ष 1991-92 में याचीगण और प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के बीच अनुज्ञप्ति के रूप में करार निष्पादित किया गया था। तत्पश्चात, परिशिष्ट-6 श्रृंखला पर रखे गए आक्षेपित नोटिसों के मुताबिक आगे कोई भी नवीकरण करार कभी नहीं किया गया है। यह भी प्रतीत होता है कि अनुज्ञप्ति फीस जो देय और भुगतान योग्य थी का भुगतान दिनांक 1.1.94 से नहीं किया गया है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि इस संबंध में अभ्यावेदन दिया गया था किंतु प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया है। याचीगण आक्षेपित नोटिस, परिशिष्ट-6 श्रृंखला, के अनुसरण में नया अभ्यावेदन प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र हैं और जब तथा जैसे ही उनके द्वारा ऐसा अभ्यावेदन दिया जाता है, प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण तीन माह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे। प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा अंतिम निर्णय लिए जाने तक याचीगण के विरुद्ध प्रपीड़क कदम नहीं उठाए जाएँगे।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मो॰ कबीर (798 में)

संतोष कुमार सिंह (810 में)

cuke

भारत संघ एवं अन्य (दोनों में)

W.P. (C) Nos. 798 with 810 of 2013. Decided on 13th February, 2013.

सार्वजनिक परिसर (अनाधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971—धारा 7—बेदखली नोटिस—याचीगण विक्रेताओं, जिनके पक्ष में राज्य प्राधिकारियों द्वारा पहले इसका बंदोबस्त किया गया था, से रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के आधार पर प्रश्नगत भूमि के ऊपर स्वामित्व का दावा कर रहे हैं—समुचित नोटिस की आवश्यकता है कि उनके विरुद्ध किसी प्रतिकूल आदेश को पारित करने के पहले इसके विरुद्ध अभ्यावेदन देने के लिए व्यथित पक्षों को समुचित अवसर प्रदान करने के लिए इसमें आवश्यक विवरण को अंतर्विष्ट होना चाहिए—यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत में पहलूओं में से एक है चूँकि अन्यथा यह कोरी औपचारिकता है—आक्षेपित नोटिस और आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 4, 6 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s Shresth Gautam, Raja Ravi Shekhar, For the Petitioners; Mr. Ram Nivas Roy, For the Respondents.

आदेश

त्रुटियों, जैसा कार्यालय द्वारा इंगित किया गया है, को सुधार दिया गया बताया गया है किंतु रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 798 वर्ष 2013 को आदेश के शीर्ष के अधीन सूचीबद्ध किया गया है।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. इन दो रिट याचिकाओं में याचीगण परिशिष्टों 1 और 3 में अंतर्विष्ट संपदा अधिकारी, इस्टर्न रेलवे, मालदा डिविजन के नोटिस और आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा याचीगण को प्रश्नगत भूमि खाली करने के लिए कहा गया है।

4. याचीगण के मुताबिक प्रश्नगत भूमि उनकी है जिसे उन्होंने विक्रेताओं, जिनके पक्ष में राज्य प्राधिकारियों द्वारा पहले इसे बंदोबस्त किया गया था, से रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के अधीन खरीदा है।

5. पूरक शपथ पत्र के परिशिष्ट–4 को निर्दिष्ट करके यह निवेदन किया गया है कि बंदोबस्ती अधिकारी, दुमका ने अन्य व्यक्तियों के पक्ष में भूमि के आधिक्य का बंदोबस्त किया था, जिसे पहले रेलवे द्वारा अर्जित किया गया था। परिशिष्ट–5 निजी रैयतों के पक्ष में बंदोबस्ती दर्शाने वाला खतियान पर्ची है। तत्पश्चात, परिशिष्ट–6 विक्रय विलेख है जिसके द्वारा याचीगण ने प्रथम रिट याचिका में याची की पत्नी के नाम में और द्वितीय रिट याचिका में याची के पिता के नाम में विक्रेताओं, जिनकी भूमि उनके पूर्ववर्तियों के पक्ष में पहले बंदोबस्त की गयी थी, से इसे खरीदने का दावा किया है।

6. सार्वजनिक परिसर (अनाधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के अधीन शक्ति के तात्पर्यित प्रयोग में पारित आदेशों और आक्षेपित नोटिस को चुनौती देने का आधार यह है कि नोटिस भूमि के किसी वर्णन के बिना पूर्णत: अस्पष्ट है जिसके द्वारा उन्हें अपने वास स्थान से हटने के लिए संक्षिप्त रूप से कहा गया है।

7. परिशिष्ट–1 पर मौजूद नोटिस और परिशिष्ट–3 पर मौजूद आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि इसमें भूमि के समुचित वर्णन की कमी है जिसे याचीगण द्वारा अतिक्रमित किया गया कहा जाता है, और जिस कारण वे अपने बचाव में समुचित उत्तर देने में सक्षम नहीं हुए हैं। समुचित नोटिस की आवश्यकता है कि उनके विरुद्ध किसी प्रतिकूल आदेश को पारित किए जाने के पहले इसके विरुद्ध अभ्यावेदन देने के लिए व्यथित पक्षों को समुचित अवसर देने के लिए इसमें आवश्यक विवरण को अंतर्विष्ट होना चाहिए। यह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के पहलूओं में से एक है चूँकि अन्यथा यह कोरी औपचारिकता है।

8. इन परिस्थितियों में, परिशिष्टों 1 और 3 पर अंतर्विष्ट आक्षेपित नोटिस और आदेश को अभिखंडित किया जाता है।

9. किंतु प्रत्यर्थीगण को भूमि, जिसे याचीगण द्वारा अतिक्रमित किया गया कहा जाता है, का समुचित वर्णन अंतर्विष्ट करने वाले समुचित नोटिस जारी करने की छूट होगी और वे 1971 अधिनियम के निबंधनानुसार समुचित अवसर देने के बाद विधि के अनुरूप आदेश पारित करने के लिए अग्रसर होंगे।

10. यह स्पष्ट किया जाए कि यहाँ किए गए संप्रेक्षण को मामले के गुणागुण पर की गयी टिप्पणी के रूप में नहीं माना जाएगा क्योंकि न्यायालय ने विवाद के गुणागुण पर विचार नहीं किया है।

11. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में इन रिट याचिकाओं को निपटाया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

बजरंग साहू उर्फ बजरंग कुमार साहू

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 254 of 2011. Decided on 11th April, 2013.

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000—धारा 7A—किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007— नियम 12—किशोरता–विद्यालय स्थानांतरण प्रमाण पत्र के आधार पर किशोरता का अभिवचन अस्वीकार किया गया–जब एक बार उसको किशोर घोषित करने के लिए याची द्वारा आवेदन दाखिल किया जाता है, अवर न्यायालय को नियम 12 के अनुरुप उसकी आयु के विनिश्चयकरण के लिए जाँच करने की आवश्यकता है–इस प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और अवर न्यायालय के नियम 12 के निबंधनानुसार यह जाँच करने कि क्या घटना की तिथि पर याची किशोर था या नहीं, का निर्देश दिया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 3, 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Bibhash Sinha, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची एस॰ टी॰ सं॰ 3685 वर्ष 2012 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त VI, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.2.2013 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा उसको किशोर घोषित करने के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

2. याची को नामकुम पी॰ एस॰ केस सं॰ 100 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 2742 वर्ष 2012 के तत्सम, के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/201/34 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है। मामला याची के पिता की हत्या से संबंधित है जिसका मृत शरीर कुआँ से बरामद किया गया था और याची, उसकी माता, उसके भाई और अन्य सह–अभियुक्तगण को इस मामले में अभियुक्त बनाया गया था। आक्षेपित आदेश से यह भी प्रतीत होता है कि याची का जमानत आवेदन गुणागुण पर सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। तत्पश्चात याची ने विद्यालय द्वारा जारी स्थानांतरण प्रमाण पत्र उसके साथ संलग्न करने के लिए स्वयं को किशोर घोषित करवाने के लिए आवेदन दिया। अवर न्यायालय उक्त प्रमाण पत्र पर अविश्वास करता हुआ प्रतीत होता है और इसने इन तथ्यों कि आवेदन विलंबित चरण पर दिया गया था और कि अपने इकबालिया बयान में याची ने अपनी आयु 19 वर्ष प्रकट किया था, को विचार में लेते हुए याची का आवेदन खारिज कर दिया।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है। यह निवेदन किया गया है कि जब एक बार याची को किशोर घोषित करने के लिए अवर न्यायालय में आवेदन दाखिल किया गया था, न्यायालय को याची की आयु विनिश्चित करने के लिए जाँच करना चाहिए था और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 के निबंधनानुसार इसके गुणागुण पर आवेदन निपटाना चाहिए था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है किंतु स्वीकार किया है कि उक्त नियमावली के निबंधनानुसार जाँच संचालित नहीं की गयी है।

5. पूर्वोल्लिखित तथ्यों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि आक्षेपित आदेश को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। जब एक बार उसको किशोर घोषित करने के लिए याची द्वारा आवेदन दाखिल किया गया था, अवर न्यायालय को किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 के नियम 12 के अनुरुप उसकी आयु विनिश्चित करने के लिए जाँच करने की आवश्यकता थी। इस मामले में इस प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया है।

6. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, एस॰ टी॰ सं॰ 3685 वर्ष 2012 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त VI, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.2.2013 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 के नियम 12 के निबंधनानुसार यह जाँच करने कि क्या घटना की तिथि पर याची किशोर था या नहीं, का निर्देश दिया जाता है।

7. तद्नुसार, उक्त निर्देश के साथ यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

रामस्वरुप साहू

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 834 of 2013. Decided on 12th February, 2013.

राष्ट्रीय उच्च पथ अधिनियम, 1956—धारा 3 (H)—भूमि का अर्जन–भूस्वामी द्वारा आपत्ति–याची ने भूमि के अर्जन के समय पर आपत्ति नहीं किया है यदि उसे भूमि के स्वामित्व के प्रति कोई दावा था–याची को भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष अपने उपाय का अनुसरण करने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Rishi Pallava, For the Petitioners; Mr. V.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने ओरमाँझी गाँव, थाना सं॰ 61, खाता सं॰ 31 भूखंड सं॰ 1112 वाली भूमि के संबंध में, जिसे याची का बताया जाता है, एन॰ एच॰ 33 के निर्माण और चौड़ा करने में आगे की कार्रवाई न करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 पर निर्देश इप्सित किया है।

3. तथ्यों से जिन्हें याची की ओर से कथित किया गया है यह प्रतीत होता है कि अधिसूचना का प्रकाशन जारी करके एन॰ एच॰ 33 को चौड़ा करने के लिए वर्ष 2010 में अर्जन प्रक्रिया शुरू की गयी थी और तत्पश्चात व्यक्तियों जिन्हें दावेदारगण पाया गया है के नाम में राष्ट्रीय उच्च पथ अधिनियम, 1956 की धारा 3 (H) के अनुपालन में दिनांक 13.9.2010 के परिशिष्ट 1 के तहत नोटिस जारी किए गए थे। किंतु यह निवेदन किया गया है कि याची को बाद में अर्जन के बारे में जानकारी हुई जब प्रत्यर्थीगण प्रश्नगत

भूमि से याची का परिसर हटाने के लिए आए। तत्पश्चात, उसने दिनांक 16.5.2012 के अपने अभ्यावेदन के तहत सक्षम अधिकारी अर्थात् भूमि अर्जन अधिकारी, ओरमाँझी, राँची के समक्ष आपत्ति दाखिल किया।

4. किंतु, राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि एनः एचः अधिनियम की धारा 3 (H) के प्रावधानों के अधीन विहित प्रक्रिया अधिकथित की गयी है जिसके अधीन आपत्ति निपटाने के बाद यह भूमि का कब्जा लेगा और अधिनियम की धारा 3G के अधीन विनिश्चित राशि केंद्र सरकार के पास जमा किया जाएगा जैसा नियमावली के अधीन अधिकथित किया गया है। जहाँ अनेक व्यक्ति जमा की गयी राशि में हितबद्ध होने का दावा करते हैं, सक्षम प्राधिकारी उन व्यक्तियों को विनिश्चित करेगा जिनको राशि भुगतान योग्य है। राशि अथवा उसके किसी भाग के प्रभाजन के प्रति विवाद की स्थिति में संबंधित व्यक्तियों द्वारा आपत्ति किए जाने पर सक्षम प्राधिकारी मूल अधिकारिता के प्रमुख सिविल न्यायालय, जिसकी अधिकारिता की सीमा के अंतर्गत भूमि अवस्थित है, में निर्णय के लिए विवाद निर्दिष्ट करेगा।

5. पक्षों के निवेदन से और एनः एचः अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों के परिशीलन पर यह प्रकट है कि स्वयं दिनांक 13.9.2010 को अधिनियम 1956 के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन कतिपय व्यक्तियों के पक्ष में अधिनिर्णय दिया गया है। भूस्वामी के रूप में और उक्त अर्जन द्वारा प्रभावित होने का दावा करते हुए याची ने संबंधित भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष मई, 2012 में आपत्ति किया है।

6. किंतु, किसी भी स्थिति में यह प्रतीत नहीं होता है कि याची ने प्रश्नगत भूमि के अर्जन के समय पर इसके लिए आपत्ति किया यदि उसका उक्त भूमि के स्वामित्व के प्रति कोई दावा भी था। इन परिस्थितियों में यह न्यायालय वर्तमान रिट याचिका में हस्तक्षेप करने से परहेज करता है।

7. किंतु, याची को प्रत्यर्थी सं॰ 3 भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष अपने उपाय का अनुसरण करने की छूट होगी जो एनः एचः अधिनियम, 1956 के प्रावधानों और विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे। यदि यह पाया जाता है कि उसकी आपत्ति मान्य है और अधिनियम के प्रावधानों के मुताबिक समय के भीतर है, सक्षम प्राधिकारी को याची के प्रतिवाद को विनिश्चित करने की अधिकारिता वाले संबंधित प्रमुख सिविल न्यायालय के समक्ष निर्देश करने की छूट होगी।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

धर्मेन्द्र दूबे उर्फ धर्मेन्द्र कुमार दूबे एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 587 of 2011. Decided on 2nd April, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 498A/323/34 सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961 की धाराएँ 3 एवं 4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—दहेज अपराध–क्रूरता–संज्ञान–विवाह के विघटन के लिए वाद लाने के लिए वाद हेतुक भाः दंः संः की धारा 498A

के अधीन अपराध की कारिता के लिए मामला दर्ज करने के लिए वाद हेतुक से बिल्कुल भिन्न है–तलाक याचिका दाखिल किए जाने का भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन मामला के संस्थापन पर कोई प्रभाव नहीं होगा–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

निर्णयज विधि.–(2007) 12 SCC 369—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Awnish Shankar, For the Petitioners; Mr. APP., For the State.

आदेश

याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. परिवाद मामला सं॰ 295 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 29.1.2011 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 498A/323/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है, का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि वर्तमान मामला दर्ज करने के पहले याची सं॰ 1 ने विवाह के विघटन के लिए वैवाहिक वाद दाखिल किया था क्योंकि इस याची की पत्नी 59% की सीमा तक नि:शक्त थी जो तथ्य परिशिष्ट 3 अर्थात् डॉक्टर के चिकित्सीय नुस्खा से सिद्ध होता है और केवल वैवाहिक वाद दाखिल किए जाने की जानकारी होने के बाद यह मामला दाखिल किया गया है, अत: यह आसानी से कहा जा सकता है कि परिवाद में जो भी अभिकथन किए गए हैं, वे द्वेषपूर्ण हैं।

3. मैं उन आधारों जिन्हें संज्ञान लेने वाले आदेश के अभिखंडन के लिए लिया गया है को मान्य नहीं पाता हूँ क्योंकि विवाह के विघटन के लिए वाद लाने के लिए वाद हेतुक भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध की कारिता के लिए मामला दर्ज करने के लिए वाद हेतुक से बिल्कुल भिन्न है। अत:, तलाक याचिका दाखिल किए जाने का भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन मामले के संस्थापन पर कोई प्रभाव नहीं होगा।

4. इस संबंध में, मैं **प्रतिभा बनाम रामेश्वरी देवी एवं अन्य, (2007)12 SCC 369,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ।

5. इन परिस्थितियों के अधीन, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसलिए, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

6. इस आवेदन में किए गए संप्रेक्षण याचीगण के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेंगे क्योंकि यहाँ ऊपर किए गए संप्रेक्षण केवल इस मामले को निपटाने के प्रयोजन से किए गए हैं।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

सज्जाद एवं एक अन्य

cuke

हुस्न आरा एवं अन्य

W.P.(C) No. 2876 of 2008. Decided on 5th February, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश I, नियम 10(2)—अभिधान वाद में पक्षकार बनाया जाना–पक्षकार प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाने के लिए दाखिल आवेदन अस्वीकार

किया जाना–याचीगण का किसी भी रूप में वाद संपत्ति की विषय वस्तु के साथ सरोकार नहीं है–याचीगण द्वारा दावा की गयी संपत्ति का सरोकार किसी रूप में वाद संपत्ति की विषय वस्तु के साथ नहीं है–पृथक वाद दाखिल करने की स्वतंत्रता के साथ वाद खारिज किया गया।

(पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Anuj Kumar, For the Petitioner; Mr. S.K. Sharma, For the Respondent.

आदेश

वर्तमान याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस रिट याचिका को दाखिल करके अभिधान वाद सं॰ 86 वर्ष 2002 में उप न्यायाधीश IV गिरिडीह के विद्वान न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.3.2008 और दिनांक 23.4.2008 के आदेशों के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा विद्वान न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 10(2) के अधीन दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

2. याचीगण और प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए। आक्षेपित आदेश और अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार किया है और उक्त आवेदन पर विचार करते हुए विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं कि याचीगण द्वारा दावा की गयी संपत्ति अर्थात् खाता सं॰ 58 का सरोकार किसी रूप में वाद संपत्ति के विषय वस्तु के साथ नहीं है। दोनों संपत्तियाँ भिन्न-भिन्न हैं तथा अवर न्यायालय द्वारा यह विनिर्दिष्ट रूप से अभिलिखित किया गया है कि वादी-प्रत्यर्थी भी वाद संपत्ति के सम्बन्ध में किसी चीज का दावा नहीं कर रहे हैं। वादी खाता सं॰ 79 वाली वाद भूमि का दावा कर रहा है। इस प्रकार वर्तमान याचीगण द्वारा दावा किया गया संपत्ति अर्थात खाता सं॰ 58 किसी भी प्रकार से वाद संपत्ति की विषय वस्तु से संबंधित नहीं है। इस प्रकार, वर्तमान याचीगण भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस याचिका को ग्रहण किए जाने का मामला बनाने में अक्षम रहे हैं। इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में अधिकारिता की गलती नहीं की है और इसलिए वर्तमान याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

4. दिनांक 2.7.2007 को पारित किए गए तदंतरिम आदेश को रिक्त करने का आदेश दिया जाता है यदि याचीगण प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध स्वयं द्वारा दावा किए गए वाद संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार, हक और हित का दावा करना चाहते हैं, तब उस स्थिति में वे इसके संबंध में अधिकार, हक और हित का दावा करते हुए पृथक वाद दाखिल कर सकते हैं।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

ईश्वरी प्रसाद मंडल

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य

W.P. (S) No. 6166 of 2008. Decided on 8th February, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

झारखंड सेवा संहिता, 2000—नियम 78(a)(i)—वेतन संरक्षण–भुगतान आधिक्य की वसूली–उच्चतर पद पर प्रोन्नति पर याची का वेतन उस वेतन पर नियत करना होगा जिसे याची

निम्नतर पद में अपने मूल/अधिष्ठायी वेतन के रूप में अंत में प्राप्त कर रहा था–यदि विद्युत बोर्ड का परिपत्र/स्थायी आदेश, जो कहता है कि उन कर्मकारों जो विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर अग्रिम वेतनवृद्धि पर रहे थे के मामले में अगले उच्चतर पद पर प्रोन्नति पर वेतन के नियतीकरण के लिए अग्रिम वेतनवृद्धि को विचार में नहीं लिया जाएगा, को प्रभाव दिया जाता है, सांविधिक नियम 78(a)(i) विषमतापूर्ण स्थिति लाने के अतिरिक्त अनावश्यक बन जाएगा–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 3 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Choudhary, For the Petitioners; Mr. M.K. Sinha, For the Respondents.

आदेश

याची ने दिनांक 23.1.2008 के आदेश का अभिखंडन इप्सित करते हुए इस रिट याचिका को दाखिल किया है जिसके द्वारा याची का वेतनमान 9205/- रुपयों से 8875/- रुपयों तक घटा दिया गया है और 9205/- रुपयों पर उसके वेतन के नियतिकरण के अनुसरण में याची को किए गए भुगतान आधिक्य की वसूली का निर्देश दिया गया है। दिनांक 9.7.2008 के पत्र सं॰ 87 का अभिखंडन इप्सित करते हुए प्रार्थना भी की गयी है।

2. मामले का संक्षिप्त तथ्य यह है कि याची ने दिनांक 24.8.1977 को पत्राचार लिपिक के रूप में पदग्रहण किया और दिनांक 20.12.1987 को हेड क्लर्क के पद पर प्रोन्नति के लिए विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ, अत: उसे बिहार राज्य विद्युत बोर्ड के स्थायी आदेशों की दृष्टि में तीन वार्षिक वेतनवृद्धि प्रदान की गयी थी। अपनी सेवानिवृत्ति के ठीक पहले दिनांक 25.7.2006 के कार्यालय आदेश सं॰ 841 द्वारा हेडक्लर्क के पद पर प्रोन्नत किया गया था और उसे दिनांक 24.8.2006 से वेतनवृद्धि प्रदान की गयी थी। किंतु, दिनांक 23.1.2008 के पत्र द्वारा प्रोन्नत पद में याची का वेतन दिनांक 27.9.2006 के प्रभाव से 8875/- रुपयों पर नियत किया गया था यद्यपि वह उस समय पर 9040/- रुपयों का वेतन पा रहा था जब उसे हेडक्लर्क के पद पर प्रोन्नत किया गया था और दिनांक 24.8.2006 से उसे वेतनवृद्धि प्रदान की गयी थी और उसका वेतन 9250/- रुपयों पर नियत किया गया था। उक्त की दृष्टि में याची ने वेतन संरक्षण इप्सित किया है।

3. झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड की ओर से प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें यह स्वीकार किया गया है कि याची, जो दिनांक 29.2.2008 को सेवा से सेवानिवृत्त हुआ दिनांक 20.12.1987 को विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था और तद्नुसार उसे तीन अग्रिम वेतनवृद्धि प्रदान किया गया था। इस अवधि के दौरान उसने सेलेक्शन ग्रेड वेतनमान और सुपर सेलेक्शन ग्रेड वेतनमान भी पाया। किंतु बोर्ड के स्थायी आदेश की दृष्टि में, जो कहता है कि उन कर्मकारों जो विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर अग्रिम वेतनवृद्धि पा रहे थे के मामले में, अगले उच्चतर पद पर प्रोन्नति पर वेतन के नियतिकरण के लिए अग्रिम वेतनवृद्धि को विचार में नहीं लिया जाएगा, और इसलिए, याची का वेतनमान 8875/- रुपयों पर नियत किया गया था।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर दस्तावेजों का परिशीलन किया गया। याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची वेतन संरक्षण का हकदार है। लघुतर वेतनमान में याची का वेतन नियत करने की प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई बिहार/झारखंड सेवा संहिता के नियम 78(a)(i) के विपरीत है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि यदि झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के परिपत्र/स्थायी आदेश को प्रभाव दिया जाता है, इसका परिणाम याची के वेतन संरक्षण के अधिकार के उल्लंघन के अतिरिक्त विषमतापूर्ण स्थिति में होगा। याची के विद्वान अधिवक्ता ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 6120/1994 (सुरेन्द्र कुमार बनाम बिहार राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य) में पारित आदेश पर विश्वास किया है जिसमें सदृश स्थिति वाले कर्मचारी को वेतन संरक्षण प्रदान किया गया था।

5. यह स्वीकृत अवस्था है कि याची को हेड क्लर्क के पद पर प्रोन्नत किए जाने के पहले वह 9040/- रुपयों का वेतनमान पा रहा था और दिनांक 24.8.2006 से उसे वेतनवृद्धि दी गयी थी और वह 9205/- रुपयों का वेतनमान पा रहा था। याची को कारण बताओ नोटिस दिए बिना उसकी प्रोन्नति के बाद उसका वेतन 8875/- रुपयों पर नियत किया गया था। पक्षों द्वारा यह भी स्वीकार किया गया है कि बिहार/झारखंड सेवा संहिता के प्रावधान झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड पर लागू होते हैं। बिहार/झारखंड सेवा संहिता के नियम 78 (a) (i) का पठन निम्नलिखित है:–

^^fu;e 78 (a) (i) tc u, in ij fu;fDr ,l LFkk;h in l lcfèkr dr0;k vFkok nkf;Rok dh ryuk e mPprj egRo d dr0;k vFkok nkf;Rok ¼tl fu;e 89 d ç;ktu l 0;k[;k dh x;h g½ dk xg.k vrxLr djrh g] og ijku in d lcèk e viu vfèk"Bk;h@ey oru d vxy Åijh le; eku d pj.k dk vkjfHkd oru ik,xk(

*(ii) tc u, in ij fu;fDr ,lk xg.k vrxLr ugh djrh g] og le; eku d pj.k dk vkjfHkd oru ik,xk tk ijku in d lcèk e mld ey@vfèk"Bk;h oru d cjkcj g] vFkok ;fn ,lk pj.k ugh g] ml oru d Bhd uhp oky pj.k d lkFk vrj d rY; futh oru ik,xk vkj çR;d ekey e og ml oru dk rc rd ikrk jgxk ekuk mlu ijku in d le; eku e oruof) çkIr fd;k Fkk vFkok vofèk ftld ckn u, in d le; eku e oruof) vftr dh tkrh g] nkuk e l tk de gkA fdr ;fn u, in d le; eku dk U;ure oru ijku in d lcèk e mld ey@vfèk"Bk;h oru dh ryuk e mPprj g] og vkjfHkd oru d :i e ml U;ure oru dk ik,xkA***

6. पूर्वोक्त नियमों से यह स्पष्ट है कि उच्चतर पद पर प्रोन्नति पर याची के वेतन को उस वेतन पर नियत किया जाना होगा जिसे याची लघुतर पद में अपने मूल/अधिष्ठायी वेतन के रूप में अंत में पा रहा था। मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद से सहमत हूँ कि यदि झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के परिपत्र/स्थायी आदेश को प्रभाव दिया जाता है, बिहार/झारखंड सेवा संहिता का सांविधिक नियम 78 (a) (i) विषमतापूर्ण स्थिति लाने के अतिरिक्त अनावश्यक बन जाएगा।

7. परिणामस्वरुप, आक्षेपित आदेशों को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

8. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

9. किंतु, व्यय को लेकर आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मणी भूषण सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C). No. 7658 of 2012. Decided on 6th May, 2013

सरकारी संविदा—संकर्म संविदा—भुगतान—संकर्म आदेश के निष्पादन के लिए संविदात्मक बकायों के भुगतान से याची का आग्रह संबंधित है—याची सफल निविदाकर्त्ता था एवं उसे संकर्म आदेश के अधीन योजना आवंटित की गयी थी—याची को एक नये अभ्यावेदन के साथ अभियंता प्रमुख के पास जाने की स्वतंत्रता प्रदान की गयी थी। (पैराएँ 3 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mrs. Chandra Prabha, For the Petitioner; Mr. Krishna Shankar, For the Respondent (BAIDA).

आदेश

पक्षकारों के अधिवक्ताओं को सुना।

2. टनकी जॉब के आधार पर पेय जल एवं स्वच्छता प्रभाग, चास के अधीन बोकारो औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकार (BAIDA) की गंगाजल आपूर्ति योजना के सुधार, जीर्णोद्धार की अधिसूचित कार्य योजना के लिए करार सं॰ 01F2-2005-06 निष्पादन हेतु 1,61,73,497/- रुपये की कुल राशि के विरुद्ध याची 4,75,385/- रुपये की बकाया राशि के भुगतान की इप्सा कर रहा है। याची को सफल निविदाकर्त्ता घोषित किया गया था तथा दिनांक 2.5.2005 के संकर्म आदेश (परिशिष्ट 2) के अधीन योजना आवंटित की गयी थी। याची के अनुसार, धन के कमी के कारण याची के बकाये असंदत्त रह गये हैं। याची के अधिवक्ता ने परिशिष्ट-6, 26.5.2010 के माध्यम से याची के बकायों के भुगतान के लिए उसी विभाग के अभियंता प्रमुख को संबोधित विभाग के कार्यपालक अभियंता, चास प्रभाग के द्वारा निर्गत तथा दिनांक 7.3.2010 के पत्र (परिशिष्ट 7) के माध्यम से सचिव, बियाडा-प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पत्रों पर भी भरोसा किया है। याची ने परिशिष्ट-8 श्रृंखला के माध्यम से विभिन्न तिथियों को अभ्यावेदन भी किये हैं। उसने परिशिष्ट-9 के माध्यम से प्रत्यर्थी-पेय जल विभाग से RTI के अधीन भी सूचना प्राप्त किया है जिसके अनुसार आवंटन न होने के कारण भुगतान नहीं किये जा सके थे। अतएव, याची ने भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 को निर्देश देने का आग्रह किया है।

3. प्रत्यर्थी-बियाडा एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता, जो उपस्थित हुए हैं, ने निवेदन किया कि एक करार के निष्पादन के अधीन बकाया राशियों के भुगतान से संबंधित याची की व्यथा अभिलेखों के सत्यापन तथा प्रत्यर्थीगण पर बकायों की ग्राहता पर भी निर्भर करती है। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि प्रश्नाधीन NIT पेय जल आपूर्ति विभाग द्वारा निर्गत किया गया था और उक्त विभाग द्वारा संकर्म आदेश निर्गत किया गया था, अतएव, प्रत्यर्थी-बियाडा याची को बकाया राशियों का भुगतान करने का दायी नहीं है।

4. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा आक्षेपित आदेश समेत अभिलेख पर मौजूद सुसंगत सामग्रियों का अवलोकन किया है।

5. याची का आग्रह पेयजल एवं स्वच्छता प्रभाग, चास द्वारा निर्गत संकर्म आदेश के निष्पादन के लिए संविदात्मक बकायों के भुगतान से संबंधित है। इन परिस्थितियों में, यह न्यायालय विवाद के गुणावगुणों में जाये बिना 3 सप्ताह की अवधि के भीतर उक्त योजना के अधीन कार्य के निष्पादन के लिए बकाया राशियों के भुगतान से संबंधित याची की व्यथा के प्रतितोष हेतु सभी समर्थनकारी तथ्यों एवं दस्तावेजों सहित याची को एक नये अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 5, अभियंता प्रमुख, धनबाद के पास जाने की अनुमति देता है। ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति पर, प्रत्यर्थी सं॰ 5 अभिलेखों के सत्यापन पर विचार करेंगे तथा 12 सप्ताहों की अवधि के भीतर एक युक्तिसंगत तथा आख्यापक आदेश पारित करेंगे, तत्पश्चात्, इसे याची को संसूचित कर दिया जाएगा। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अगर याची की व्यथा सही पायी जाती है और दावा की गयी राशि वैधानिक रूप से ग्राह्य है तब इसका इसके बाद 4 सप्ताहों के भीतर भुगतान कर दिया जाएगा।

6. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pæ'k[kj] U;k;efrx.k

मणीरुद्दीन अंसारी उर्फ मणीरुद्दीन मियां उर्फ अंसारी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 698 of 2012. Decided on 6th May, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलम्बन—हत्या का विचारण—कई चश्मदीद गवाहों ने स्पष्ट रूप से बम धमाके द्वारा मृतक की हत्या कारित करने में अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका वर्णित की—चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य को चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा प्रर्याप्त सम्पोषण प्राप्त—गवाहों द्वारा अपीलार्थी की शिनाख्त की गयी है—न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णित दंडादेश को निलंबित करने का इच्छुक नहीं—आग्रह खारिज। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. Md. Zaid Ahmed, For the Appellant; Mr. V.S. Sahay, For the State.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.—दिनांक 11 फरवरी, 2013 के आदेश यह दांडिक अपील पहले ही ग्रहण की जा चुकी है। वर्तमान अपीलार्थी को विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णित दंडादेश के निलम्बन के लिए तर्कों का मूल्यांकन करने हेतु विचारण न्यायालय से सत्र विचारण सं॰ 20 वर्ष 1993 के अभिलेख तथा कार्यवाहियां मंगाये गये थे।

2. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता स्थगन हेतु समय की इप्सा कर रहे हैं जिसे इस न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है क्योंकि अपीलार्थी ने निम्नांकित तिथियों को समय की इप्सा किया है:—

(i) 4.9.2012; (ii) 18.09.2012; (iii) 24.9.2012; (iv) 8.10.2012; (v) 7.11.2012; (vi) 7.1.2013; (vii) 15.1.2013; (viii) 23.1.2013; (ix) 7.3.2013; (x) 13.3.2013; (xi) 15.4.2013; (xii) 29.4.2013;

आज भी, अपीलार्थी के अधिवक्ता समय चाह रहे हैं और अतएव, स्थगन का आग्रह अस्वीकार कर दिया गया है।

3. विद्वान APP द्वारा यह निवेदन किया गया है कि समूची घटना 20 जुलाई, 1991 को लगभग 8.30 बजे अपराह्न में घटित हुई है और इसके तुरंत बाद, अर्थात्, 21 जुलाई, 1991 को अगले दिन प्राथमिकी दर्ज हुई है। यह अपीलार्थी, जो सत्र विचारण सं॰ 20 वर्ष 1993 में मूल अभियुक्त सं॰ 1 है, प्राथमिकी में नामजद किया गया था। अभियोजन का मामला कई चश्मदीद गवाहों पर आधारित है, जो अ॰सा॰ 1, अ॰सा॰ 2, अ॰सा॰ 4 एवं अ॰सा॰ 5 हैं। विद्वान APP द्वारा यह निवेदन किया गया है कि इन चश्मदीद गवाहों ने अनुरुद्दीन मियां नामक मृतक की हत्या कारित करते हुए बम धमाके में इस अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका स्पष्ट रूप से वर्णित किया है। विद्वान अपर महाधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अ॰सा॰ 7, जो डॉक्टर विनोद कुमार है, द्वारा दिया गया चिकित्सीय साक्ष्य चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों का सम्पोषण करता है। यह भी विद्वान APP द्वारा निवेदन किया गया है कि यह अपीलार्थी-अभियुक्त अनुपस्थित था तथा विचारण के समय उपलब्ध नहीं था और अतएव, विचारण अलग कर दिया गया था जो कि सत्र विचारण सं॰ 20(A) वर्ष 1993 था और बाद में, उसने न्यायालय में समर्पण कर दिया था और पुन: उसका विचारण अन्य सह अभियुक्तों के विचारण के साथ एक कर दिया गया था। परिस्थितियों के इन समूहों में, विद्वान APP द्वारा निवेदन किया गया है कि सत्र विचारण सं॰ 20 वर्ष 1993 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-II, धनबाद द्वारा इस अपीलार्थी के लिए अधिनिर्णित आजीवन कारावास का दंडादेश इस न्यायालय द्वारा निलंबित न किया जाए।

4. हमने विचारण न्यायालय के अभिलेख तथा कार्यवाहियों का परिशीलन किया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों के अवलोकन पर, इस अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। चूंकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं परन्तु इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि अभियोजन का मामला कई चश्मदीद गवाहों पर आधारित है, जो अ०सा० 1, अ०सा० 2, अ०सा० 4 एवं अ०सा० 5 है। उन्होंने स्पष्ट रूप से बम धमाके द्वारा मृतक की हत्या कारित करने में इस अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका वर्णित किया है। इन चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य अ०सा० 7 डॉ० विनोद कुमार द्वारा प्रदत्त चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त सम्पोषण प्राप्त कर रहे हैं। इससे भी बढ़कर, जैसा कि निर्णय के पैरा 5 में उल्लिखित किया गया है, यह अपीलार्थी (सत्र विचारण का मूल अभियुक्त सं० 1) अनुपस्थित था तथा विचारण न्यायालय में उपलब्ध नहीं था और अतएव, मामला अलग कर दिया गया था तथा सत्र विचारण सं० 20(A) वर्ष 1993 के तौर पर क्रमांकित किया गया था और बाद में, उसने न्यायालय में आत्मसमर्पण कर दिया था और अतएव, पुनः उसका विचारण अन्य सह-अभियुक्तों के विचारण के साथ मिला दिया गया था। गवाहों द्वारा इस अपीलार्थी की शिनाख्त की गयी थी।

5. इन तथ्यों की दृष्टि में तथा अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा तथा उस ढ़ंग, जिस ढ़ंग से वर्तमान अपीलार्थी मृतक की हत्या के अपराध में संलिप्त है, का अवलोकन करने पर, हम विचारण न्यायालय को इस अपीलार्थी को अधिनिर्णित दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अतएव, दंडादेश के निलंबन का आग्रह एतद द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; idk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k] t;k jk;] U;k;efr

भ्रष्टाचार के विरुद्ध झारखंड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 89 of 2013 with I.A. No. 2766 of 2013. Decided on 6th May, 2013

भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—जनहित याचिका—राज्य सभा चुनाव, 2012 में उम्मीदवारों की खरीद-फरोख्त—प्रत्येक गवाह संरक्षण का हकदार है अगर उसके बाद यह उपधारित करने के लिए युक्तिसंगत कारण है कि दांडिक मामले में उसके गवाह होने के कारण उसे खतरा है—अन्वेषण के दौरान अभियुक्त के पास सुनवाई का कोई अधिकार नहीं होता है—न्यायालय अन्वेषण में हस्तक्षेप नहीं कर सकता—इस याचिका में सीमित गुंजाइश है जिसमें कोई भी अन्वेषण चुनौती के अधीन नहीं है और न ही CBI के लिए कोई निर्देश इप्सित किया गया है—मामला गंभीर प्रकृति और संवेदनशील प्रकृति का भी है—न्यायालय किसी को भी इस मुकदमें की परिधि विस्तारित करने की अनुमति नहीं दे सकता है— CBI को निर्देश निर्गत।
(पैराएँ 5 से 10, 16 एवं 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajeev Kumar, For the Petitioner; M/s. M.S. Anwar, Mokhtar Khan, Sh. R. Pandey, For the Respondents.

आदेश

<u>I.A. सं० 2766 वर्ष 2013</u>

मामले में हस्तक्षेप करने की अनुमति की इप्सा करते हुए आवेदक की विद्वान अधिवक्ता श्रीमती सीता सोरेन को उनके I.A. सं० 2766 वर्ष 2013 पर सुना ताकि वो अभिलेख पर सही तथ्य ला सकें।

2. मामले के तथ्यों का पुनः स्मरण करना यथोचित होगा कि झारखंड में राज्य सभा के चुनाव में मतों के लिए रिश्वत प्रदान करने के गंभीर अभिकथन लगाये गये थे और इसे सामान्य रूप से चुनाव के दौरान उम्मीदवारों के खरीद-फरोख्त के तौर पर जाना जाता है। 2 करोड़ रूपये से अधिक की वसूली के साथ गंभीर अभिकथनों की दृष्टि में, निर्वाचन आयुक्त ने 30.3.2012 को अधिसूचना निर्गत किया था जिसके द्वारा राज्यों के परिषद-राज्य सभा के अंतिम चुनाव के मतों की गणना रोक दी गयी थी। दो याचिकाएं- एक जनहित याचिका तथा दूसरी व्यक्तिगत याचिका- दाखिल की गयी थी जिन्हें WP (PIL) सं॰ 1801 वर्ष 2012 तथा W.P(C) सं॰ 1802 वर्ष 2012 के तौर पर दर्ज किया गया था। दोनों याचिकाओं को एक साथ सुना गया था तथा 5.4.2012 के निर्णय से इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था जिनमें से हममें से एक (प्रकाश तांतिया, मुख्य न्यायाधीश) एक पक्ष थे। याचिकाओं को खारिज करने के दौरान, अन्वेषण हेतु और अधिक कदम उठाने हेतु मामला CBI के हवाले कर दिया गया था। दिनांक 5.4.2012 के उक्त निर्णय के अनुसरण में, CBI ने एक मामला दर्ज किया था तथा अन्वेषण प्रारंभ कर दिया था। वर्तमान याचिका इस अभिकथन के साथ दाखिल की गयी है कि लंबी अवधि गुजर जाने के बावजूद अन्वेषण आगे नहीं बढ़ रहा है। तथापि, याची ने अभिकथित किया था कि अन्वेषण के लंबित रहने के दौरान, विकास कुमार उर्फ् संटी पाण्डेय, विकास सिंह एवं जयकांत कुमार नामक गवाहों, जो अभियोजन साक्षीगण हैं, को धमकाया गया है तथा अगवा करने का अभिकथन परिवादी द्वारा लगाया गया है जिसके आधार पर पुलिस द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। उस मामले में भी, अभियुक्त को गिरफ्तार नहीं किया जा रहा है। अभियुक्त I.A. सं॰ 2766 वर्ष 2013 की आवेदिका, अर्थात्, सीता सोरेन हैं। जब यह मामला 11 जनवरी, 2013 को इस न्यायालय के समक्ष सूचीबद्ध किया गया था, इस न्यायालय ने राज्य सरकार को याची के इस अभिवाक पर अपने पक्ष को रखने का निर्देश दिया था कि कुछ गवाहों को यातना दी गयी है और एक गवाह का अपहरण कर लिया गया है तथा प्राथमिकी दर्ज कर ली गयी है और उस परिस्थिति में, CBI मामले में गवाहों को बचाने के लिए राज्य सरकार द्वारा क्या कदम उठाये गये हैं। 22 जनवरी, 2013 को CBI ने एक सील किये गये आवरण में अन्वेषण रिपोर्ट प्रस्तुत किया था जिसे परिशीलन के उपरांत गोपनीयता बनाये रखने के लिए हमने CBI के विद्वान अधिवक्ता को वापस भेज दिया था। 22 जनवरी, 2013 को यह निवेदन किया गया था कि अन्वेषण समापन की प्रक्रिया में है और अधिक उपाए करने के लिए कोई प्रशासनिक स्वीकृति आवश्यक होगी, अतएव, दो महीनों के समय की आवश्यकता है। इस न्यायालय ने संपरीक्षित किया था कि चूंकि यह अन्वेषण अंतिम चरण में है, दो महीनों के समय की इप्सा करना काफी लंबा समय की इप्सा करना है। तथापि, CBI को उपरोक्त समय प्रदान कर दिया गया था। 22 जनवरी, 2013 को स्पष्ट रूप से उपरोक्त निर्दिष्ट यातना तथा अपहरण के अभिकथनों का जवाब देने के लिए राज्य सरकार द्वारा प्राथमिकी रिपोर्ट भी प्रस्तुत की गयी थी, जिनमें वर्तमान आवेदिका अभियुक्त है। इस न्यायालय ने 22 जनवरी, 2013 को आदेश दिया था कि चूंकि गंभीर अभिकथन है तथा मामला संवेदनशील मामला है कुछ भी संपरीक्षित किये बिना हमने राज्य सरकार को शीघ्रतापूर्वक अन्वेषण पूरा करने का निर्देश दिया था ताकि मामले में सच्चाई का पता लगाया जा सके।

3. तत्पश्चात्, मामला 19 फरवरी, 2013 को इस न्यायालय के समक्ष आया था। उस दिन, विद्वान अधिवक्ता, जो I.A. सं॰ 2766 वर्ष 2013 में सीता सोरेण के लिए उपस्थित हुए हैं, ने निर्दिष्ट किया था कि उन्होंने श्री एम॰ एल॰ मांझी की ओर से वकालतनामा दाखिल किया है जो आवेदिका श्रीमती सीता सोरेन, विधायक के पिता है। इस न्यायालय ने यह संपरीक्षित किया कि किसी के पक्षकार हुए बिना आवेदन दाखिल करना किसी काम का नहीं, तब इस न्यायालय ने संपरीक्षित किया कि अन्यथा भी इस मामले में राज्य सरकार को निर्गत एकमात्र निर्देश अन्वेषण को पूरा करने के लिए है और इसके उपरांत राज्य सरकार को दो सप्ताह के भीतर प्रास्थिति प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था ताकि अन्वेषण

में हुई प्रगति से अवगत हुआ जा सके। 6 मार्च, 2013 को याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि राज्य सभा चुनाव, 2012 में उम्मीदवारो की खरीद-फरोख्त के मामले में गवाहों में से एक के अपहरण के अभिकथित मामले में अन्वेषण आगे नहीं बढ़ रहा है तथा अभियुक्त को गिरफ्तार नहीं किया जा रहा है। यह निर्दिष्ट किया गया था कि अभियुक्त को पहले ही राज्य सुरक्षा कर्मी उपलब्ध कराये गये हैं और अभियुक्त सुरक्षाकर्मियों के साथ घूम रही है और, अतएव, राज्य के पास मामले के अभियुक्त के आने-जाने की प्रत्येक जानकारी है और अगर अभियुक्त को विधिपूर्ण कारा से गिरफ्तार किये जाने की आवश्यकता है, तब अन्वेषण पदाधिकारी अभियुक्त को गिरफ्तार क्यों नहीं कर रहा है। इस न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में लिया था और पाया था कि इस पर विश्वास करना कठिन है कि राज्य के उन सुरक्षाकर्मियों जो स्वाभाविक रूप से आवेदिका-अभियुक्त से जुड़े हुए हैं, अन्वेषन अभिकरण समेत अपने उच्चतर पदाधिकारियों के साथ कोई संबंध नहीं है और इस न्यायालय ने संपरीक्षित किया था कि इस परिस्थिति में, इस पर विश्वास करना कठिन है कि अगर अभियुक्त की गिरफ्तारी आवश्यक है, तो उस स्थिति में अभियुक्त को गिरफ्तार क्यों नहीं किया गया है। आज, विद्वान महाधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि आवेदिका-अभियुक्त को अभी तक गिरफ्तार नहीं किया गया है।

4. इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में, श्रीमती सीता सोरेन द्वारा अपने अधिवक्ता के माध्यम से 4 मई, 2013 को इस न्यायालय में यह I.A. सं०2766 वर्ष 2013 दाखिल किया गया है। आवेदिका श्रीमती सीता सोरेन ने निर्दिष्ट किया है कि उसके पिता ने श्रीमती रीना देवी के पति तथा उसके भाई प्रमोद कुमार पाण्डेय जो आवेदिका-मध्यक्षेपी के चालक के तौर पर कार्य कर रहा था, के विरुद्ध टीपर तथा उसके कल-पूर्जों की चोरी के लिए एक परिवाद मामला दाखिल किया था। आवेदिका के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि टीपर डंपर है। यह निवेदन किया गया है कि केवल एक जवाबी कार्रवाई के तौर पर, आवेदिका के विरुद्ध अपहरण का अभिकथन लगाया गया है और उसने मध्यक्षेपी के विरुद्ध भा०दं०सं० की धाराओं 363 एवं 365 के अधीन प्राथमिकी, अर्थात्, डोरंडा पुलिस थाना केस सं० 616/2012 दर्ज कराया था। यह निवेदन किया गया है कि मध्यक्षेपी कानून के अंतर्गत प्रदत्त उपचार का इस्तेमाल कर रही है और एक फरार व्यक्ति नहीं है और वर्तमान में, माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक विशेष अनुमति याचिका (दांडिक) सं० 3827 वर्ष 2013 लंबित है जिसमें उसने अग्रिम जमानत का आग्रह किया है। यह निवेदन किया गया है कि रिट याची अधूरी सूचना प्रदान करने न्यायालय को दिग्भ्रमित करने का प्रयास कर रहा है। उपरोक्त कारणों की दृष्टि में, आवेदिका को सुने जाने का अवसर दिया जाना चाहिए।

5. इस चरण में, हम यहां संपरीक्षित करेंगे कि इस मुकदमें में आवेदिका के पिता या आवेदिका के प्रवेश के पहले, 22 जनवरी, 2013 को यह निर्दिष्ट किया गया था कि राज्य सभा चुनाव, 2012 में उम्मीदवारों की खरीद-फरोख्त के गंभीर मामले के गवाहों को यातना देने एवं अपहरण करने के अभिकथन हैं और इस न्यायालय ने संपरीक्षित किया था कि गवाह गंभीर एवं संवेदनशील भी हैं और, अतएव, कुछ भी संपरीक्षित किये बिना, इस न्यायालय ने राज्य सरकार को शीघ्रतापूर्वक अन्वेषण पूरा करने का निर्देश दिया था कि मामले में सच का पता लगाया जा सके। यह सुस्थापित है कि अभियुक्त को अन्वेषण के दौरान सुनवाई का कोई अधिकार नहीं होता है। यह भी सुस्थापित विधि है कि न्यायालय अन्वेषण में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता और, अतएव, इस न्यायालय ने राज्य सरकार को अन्वेषण पूरा करने का निर्देश दिया था कि इस मामले में सच्चाई का पता लगाया जा सके। इस याचिका की भी सीमित परिधि है जिसमें कोई भी अन्वेषण चुनौती के अधीन नहीं है और न ही CBI के लिए कोई निर्देश इप्सित किया गया है कि इस अन्वेषण में CBI को कैसे कार्रवाई करनी चाहिए। हस्तक्षेप के लिए कोई आग्रह नहीं है और इस संबंध में किसी व्यक्ति की कोई प्रार्थना नहीं हो सकती कि दांडिक मामले में अन्वेषण कैसे आगे बढ़ रहा है और विशेषकर उस दांडिक मामले में जिसे परिवाद पर या CBI के उम्मीदवार खरीद फरोख्त मामले के गवाहों की यातना अपहरण के अभिकथन लगाने वाले परिवाद के रिपोर्ट पर दर्ज किया गया है।

6. इस न्यायालय की यह राय है कि प्रत्येक गवाह संरक्षण का हकदार होता है, अगर उसके पास यह उपधारित करने के लिए युक्तिसंगत कारण है कि दांडिक मामले में एक गवाह होने के कारण उसे खतरा है। सुनवाई के दौरान, राज्य इस मामले के साथ सामने आया था कि अभियुक्त की गिरफ्तारी आवश्यक है। इस न्यायालय ने कभी भी किसी व्यक्ति इत्यादि के गिरफ्तारी का आदेश पारित नहीं किया था बल्कि केवल अन्वेषण की प्रास्थिति रिपोर्ट एवं प्रगति रिपोर्ट की इप्सा किया था। यह राज्य था, जिसने कथन किया था कि अन्वेषण पूरा करने के लिए अभियुक्त की गिरफ्तारी आवश्यक है। तब, इस न्यायालय ने संपरीक्षित किया था कि जहां अभियुक्त सुरक्षाकर्मी उपलब्ध राज्य सरकार द्वारा प्रदत्त पूर्ण संरक्षण में था, तब इस पर कैसे विश्वास किया जा सकता है कि उसके आवागमन को पुलिस तथा राज्य सरकार को जानकारी नहीं है और हमारी राय है कि अगर सुरक्षाकर्मी उस व्यक्ति के सम्बद्ध पुलिस कर्मियों तथा राज्य सरकार को सूचित नहीं कर रहे हैं, तब यह किस प्रकार की सुरक्षा तथा सुरक्षाकर्मी है? अतएव, इस न्यायालय ने राज्य सरकार को उस स्थिति को स्पष्टीकृत करने का निर्देश दिया कि जिसमें अभियुक्त को गिरफ्तार नहीं किया जा रहा है, जिसकी गिरफ्तारी अन्वेषण अभिकरण की राय में आवश्यक है।

7. तथ्यों की संपूर्णता में, जो विस्तार से दिये हुए हैं इन बातों को स्पष्ट करने के लिए कि न तो अभियोजन याची के अनुसरण में है और न ही अन्वेषण इस न्यायालय के निर्देश या मार्ग निर्देशों के अनुसार हैं और न ही न्यायालय अन्वेषण में हस्तक्षेप कर रहा है और न्यायालय कोई ऐसा आदेश पारित नहीं करेगा जो मामले के अन्वेषण में हस्तक्षेप के समतुल्य हो। मामला गंभीर प्रकृति और संवेदनशील प्रकृति का भी है परन्तु साथ ही साथ इसी समय सम्यक् सावधानी एवं सतर्कता तथा पूरी निष्पक्षता के साथ भी मामले का अन्वेषण करना अन्वेषण अभिकरण का दायित्व है। इन तथ्यों तथा परिस्थितियों में, हम किसी को इस मुकदमें की परिधि को बढ़ाने की अनुमति नहीं दे सकते जिसमें न्यायालय को राज्य सभा चुनाव, 2012 के उम्मीदवार, खरीद-फरोख्त मामले में केवल अन्वेषण के समान तथा उस मामले के गवाहों के संरक्षण से संबंध रखना है। अगर आवेदिका को पक्षकार बनने की अनुमति दी जाती है तथा सुनवाई का अवसर प्रदान कर दिया जाता है, तब इसके परिणामत: केवल अभिकथन लगाने तथा जवाबी अभिकथन लगाने का कार्य होगा। यह न्यायालय अपने आप में उन सभी अभिकथनों की उपेक्षा करने तथा उन्हें अस्वीकृत करने में पर्याप्त रूप से सक्षम है जो याची द्वारा भी लगाया जा सकता है जिनकी कोई प्रासंगिकता नहीं है सिवाए इस आग्रह के कि उन गवाहों तथा वैसे व्यक्ति, जो मामले में प्रासंगिक हैं, को पूर्ण संरक्षण प्रदान करके प्रभावित हुए बिना तथा पूरी निष्पक्षता के साथ राज्य सभा चुनाव, 2012 की उम्मीदवार खरीद-फरोख्त मामले में अन्वेषण शीघ्रतापूर्वक पूरा किया जाए। अतएव, श्रीमती सीता सोरेन द्वारा दाखिल आवेदन-I.A. सं॰ 2766 वर्ष 2013- एतद द्वारा अस्वीकार किया जाता है।

8. 15 अप्रैल, 2013 के आदेश के अनुसरण में प्रधान सचिव, गृह, झारखंड सरकार, आरक्षी महानिदेशक, झारखंड सरकार एवं वरीय आरक्षी अधीक्षक, रांची न्यायालय में उपस्थित हैं, राज्य सभा चुनाव, 2012 के खरीद-फरोख्त के मामले के गवाहों में से एक अपहरण के अभिकथन को ध्यान में लेने के उपरांत, हमने पाया कि अन्वेषण अभिकरण अभिकथन में कुछ बल पाते हुए अन्वेषण को पूरा करने के लिए एक अभियुक्त सीता सोरेन को गिरफ्तार करना चाहता था। वह एक विधानसभा की एक सदस्य है और उन्हें सुरक्षाकर्मी भी उपलब्ध कराये गये हैं। इस तथ्यपरक परिस्थिति को पाते हुए, इस न्यायालय ने अपना आश्चर्य दर्शाया है कि किस प्रकार कोई व्यक्ति राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराये गये सुरक्षाकर्मियों के साथ अपने आप को छुपा रही है और सुरक्षाकर्मी क्या कर रहे हैं अगर वे उसके साथ हैं और अगर सुरक्षाकर्मी अभियुक्त साथ नहीं हैं, तब उन्हें उस व्यक्ति से कब वापस लिया गया था जिसे राज्य सरकार द्वारा सुरक्षा उपलब्ध करायी गयी थी। क्या नागरिक असुरक्षित हैं और अभियुक्त

अधिक सुरक्षित है? अभियुक्त व्यक्ति से सुरक्षा क्यों वापस ली गयी थी अगर यह आवश्यक थी और उसके जीवन या उसके शरीर को खतरे को देखते हुए उसे उपलब्ध करायी गयी थी।

9. चाहे जो भी स्थिति हो, आरक्षी महानिदेशक, झारखंड सरकार ने निवेदन किया कि स्वयं गवाह ने सुरक्षा प्रहरियों का समर्पण कर दिया था और अंतत: 26 फरवरी, 2013 को अभियुक्त के निजी सहायक राकेश चौधरी ने काउंस्टेबल सं०775 विकास कुमार सिंह को अभियुक्त को हवाई अड्डे से लाने के लिए सूचित किया था और फिर उसने उसे हवाई अड्डे से लाया था और उसी दिन 3 बजे अपराह्न में जमशेदपुर जाने के मार्ग में चौका तक अभियुक्त काउंस्टेबलु सं० 304, चंचल कुमार पाटर के साथ गयी थी और तत्पश्चात् वाहन बदल लिया था। वह जमशेदपुर की ओर गयी थी और काउंस्टेबल सं० 304 को वापस को लौटने को कहा था। इन व्यक्तियों को भी जानकारी नहीं है कि अभियुक्त कहा गयी है। अभियुक्त की गिरफ्तारी के लिए उठाये गये कदमों के संबंध में कुछ विवरण दिये गये हैं। यह भी निवेदन किया गया है कि गवाहों में से एक विकास कुमार पाण्डेय उर्फ् संटी पाण्डेय का बयान दं० प्रं० सं० की धारा 164 के अधीन अभिलिखित किया गया है। अन्वेषण दल अभियुक्त की तलाश कर रहा है और उसके टेलीफोन नंबरों के कॉल विवरणों की जांच करके उसका पता लगाने का प्रयास कर रहा है। अन्वेषण अभिकरण ने मोबाइलों के IMEI के नंबरों को भी प्राप्त कर लिया है ताकि उसकी अवस्थिति का पता लगाया जा सके, अगर उसी मोबाइल सेट में सीम कार्ड लगा हुआ है।

10. चाहे जो भी स्थिति हो, अभियुक्त के एक सार्वजनिक व्यक्ति होने के बावजूद उसे अभी तक गिरफ्तार नहीं किया गया है और उसे सुरक्षा प्रहरी उपलब्ध कराये गये थे। हम आरक्षी महानिदेशक, झारखंड सरकार को हमारे समक्ष यह कथन करने का निर्देश देते हैं कि क्या सुरक्षा प्रहरी 19 फरवरी, 2013 के बाद मोबाइल पर 26 फरवरी, 2013 तक अभियुक्त के सम्पर्क में थे, किन तिथियों को सुरक्षा प्रहरियों ने सूचना दिया था कि अभियुक्त ने उन्हें उसके सुरक्षा प्रहरियों के तौर पर ड्यूटी पर न आने का निर्देश दिया था और क्या कोई ऐसी रिपोर्ट अभिलेख का हिस्सा बनायी गयी है या नहीं और क्या सुरक्षा प्रहरियों को कोई अन्य दायित्व अगर सौंपा गया है या नहीं एवं अगर सौंपा गया है तो कौन सी ड्यूटी पर लगाया गया है ?

11. हम प्रधान सचिव, गृह, झारखंड सरकार एवं आरक्षी महानिदेशक, झारखंड सरकार को अन्वेषण के मामले में और गंभीर प्रयास करने का निर्देश देते हैं तथा केवल मुख्य अभियुक्त के गिरफ्तारी के ही मुद्दे पर ध्यान केंद्रित करने के लिए अन्वेषण का ध्यान हटाया नहीं जाना चाहिए क्योंकि अन्वेषण में गिरफ्तारी के अलावा कई अन्य बातें भी सम्मिलित हैं। इसी समय, एक सतर्कता बरतनी है कि अन्वेषण के अन्य कार्य करने के नाम पर, अगर अभियुक्त की गिरफ्तारी आवश्यक है, तब बिना किसी विलम्ब के यथोचित कार्रवाई की जानी चाहिए। अतएव, अगली तिथि को प्रत्यर्थी-राज्य सरकार द्वारा प्रास्थिति रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए। अगली तिथि को, हम प्रधान सचिव, गृह, झारखंड सरकार एवं आरक्षी महानिदेशक, झारखंड सरकार को हाजिरी से मुक्त कर रहे हैं जो आज न्यायालय में उपस्थित हैं।

12. CBI के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

13. CBI के विद्वान अधिवक्ता ने प्रास्थिति रिपोर्ट प्रस्तुत किया था जो वस्तुत: समापन रिपोर्ट है जिसके द्वारा CBI ने इस न्यायालय को सूचित किया है कि अभियोजन ने मामले का अभियोजन करने का निर्णय लिया है और वर्तमान में, और सब कुछ पूरा किया जा चुका है और वे आरोप पत्र दाखिल करने जा रहे हैं, जिसमें अधिक से अधिक 15 दिनों का समय लग सकता है।

14. हम गोपनीयता बनाये रखने के उद्देश्य के लिए CBI द्वारा प्रस्तुत प्रास्थिति रिपोर्ट लौटा रहे हैं।

15. 15 अप्रैल, 2013 को याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह कथन किया गया है कि CBI पहले ही अन्वेषण में देरी कर चुका है और इस अवधि के दौरान, ऐसे गंभीर मामले में एक अभियुक्त व्यक्ति को विचारण न्यायालय से जमानत प्राप्त हो गयी थी। पूछ-ताछ करने पर, CBI के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पहले मामला राज्य पुलिस अभिकरण के समक्ष था और तत्पश्चात्, इसे 19 अप्रैल, 2012 को ही CBI के हवाले किया गया था। CBI के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, 20 अप्रैल 2012 को आरोपों को जोड़ने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था जिनका आधार प्राथमिकी में है, परन्तु जिन्हें प्राथमिकी दर्ज करते समय प्राथमिकी में उल्लिखित नहीं किया गया है।

16. मामले पर गंभीर रूप से विचार किये जाने की आवश्यकता है और, अतएव, CBI को कुछ विशिष्टियां इस न्यायालय को प्रदान किये जाने का निर्देश दिया जाता है जो निम्नवत् है :-

(a) jkT; lHkk puko] 2012 d mEehnokj [kjhn&Qjk[r ekey e nkfMd ekeyk dc nt fd;k x;k Fkk

(b) dc ekeyk CBI igpk Fkk vkj CBI ekey d rkj ij nt fd;k x;k Fkk

(c) CBI igpu d igy] jkT; vUo"k.k vfHkdj.k }kjk fdruk vUo"k.k ijk fd;k x;k Fkk

(d) frFk dkykuØe e] bl ekey e iLrr tekur d vkonuk dh frFk;k nh tk, vkj] mu vkn'kk dh ifrfyfi;k Hkh lkih tk, tk tekur d vkonuk ij ikfjr fd; x; FkA

17. CBI के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जमानत रद्द करने के लिए, CBI उच्च न्यायालय के समक्ष गयी है।

18. हमें इस अभिवाक से अधिक लेना-देना नहीं है मात्र इस सीधे एवं सरल कारण से कि हम कानून की किसी अदालत का आदेश प्राप्त करने में किसी व्यक्ति के अधिकार के साथ हस्तक्षेप नहीं कर रहे हैं क्योंकि न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र में यथोचित आदेश पारित करने के लिए, जो उच्चतम प्राधिकार होता है, चाहे ये जमानत प्रदान करने का मामला हो या चाहे जमानत को अस्वीकार करने का मामला हो और हम यह अस्पष्ट कर रहे हैं कि विचारण से निबटने के दौरान या अन्वेषण के दौरान न्यायालयों को इस याचिका में हमारे द्वारा पारित किसी आदेश से प्रभावित होने की आवश्यकता नहीं है।

19. राज्य 11 जून, 2013 तक या इससे पहले प्रास्थिति रिपोर्ट प्रस्तुत कर सकता है।

20. इस मामले को 9 मई, 2013 को प्रस्तुत किया जाए।

21. इस आदेश की प्रतिलिपि CBI के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता को भी सौंपी जाए।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

रामू प्रसाद जायसवाल

cuke

राकेश नारायण

W.P. (C) No. 2806 of 2012. Decided on 9th May, 2013

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 47—डिक्री के निष्पादन को चुनौती—याची ने निष्कासन वाद में विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री से व्यथित तथा असंतुष्ट होकर कोई अपील दाखिल नहीं किया है और विधि के अधीन प्रभावी सांविधिक उपचार का आश्रय लिये बिना, याची सीधे ही निष्पादन न्यायालय के पास चला गया है और अंतर्निहित अधिकारिता के प्रश्न के संबंध में अभ्यापत्ति उठाया है—डिक्री निष्पादित करने वाला न्यायालय डिक्री से आगे नहीं जा सकता—अंतर्निहित अधिकारिता न होने के संबंध में प्रश्न याची द्वारा अपीलीय न्यायालय के समक्ष उठाया जा सकता है—रिट याचिका खारिज।(पैराएँ 11 से 14)

निर्णयज विधि.—AIR 1954 SC 340; 1985 PLJR 490; AIR 1973 SC 2391; AIR 1977 SC 1201—Distinguished; (1970)1 SC 670; 2006 (3) BLJR 2359 (Jhar)—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s. V. Shivnath, Nilesh Kumar, For the Petitioner; M/s. Manjul Prasad, S.S. Prasad, Praveen Kr., For the Respondent.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके निष्पादन केस सं॰ 5/2011 में विद्वान मुंसिफ, पलामू, डालटेनगंज द्वारा पारित दिनांक 16.4.2012 के आदेश (परिशिष्ट-6) को अभिखंडित तथा अपास्त करने के लिए एक यथोचित रिट/आदेश/निर्देश निर्गत करने का आग्रह किया है, जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन याची द्वारा दिनांक 24.2.2012 की याचिका स्वीकार कर दिया है।

2. याची तथा प्रत्यर्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ताओं को सुना तथा अभिलेख पर मौजूद आक्षेपित आदेश तथा अन्य सामग्रियों का भी परिशीलन किया।

3. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन परिधि पर विचार उपयुक्त रूप से नहीं किया है। मुख्य तर्क, जो सि॰ प्र॰ सं॰ 47 के अधीन दाखिल एक आवेदन में निष्पादन न्यायालय के समक्ष उठाया गया था, यह था कि अंतर्निहित अधिकारिता न होने से डिक्री एक अकृतता है और अतएव, उक्त मुद्दा निष्पादन न्यायालय के समक्ष उठाया जा सकता है और निष्पादन न्यायालय के समक्ष विस्तार से उक्त आवेदन का निर्णय करना आवश्यक है और उस उद्देश्य के लिए सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल आवेदन विविध मामले के तौर पर दर्ज किया जाना आवश्यक है और इससे पक्षकारों को युक्तिसंगत अवसर उपलब्ध कराने के उपरांत निबटे जाने की आवश्यकता है। याची का मामला यह है कि प्रत्यर्थी/मूल वादी ने विचारण न्यायालय के समक्ष निष्कासन वाद दाखिल किया था तथा बिहार मकान, (पट्टा, किराया एवं निष्कासन) नियंत्रण अधिनियम की धारा 11 (1)(b) एवं (c) के अधीन उक्त वाद दाखिल किया गया था और अतएव, अधिनियम की धारा 14 के अधीन यथा वर्णित विशेष प्रक्रिया को अपनाकर उक्त वाद दाखिल किया गया था।

4. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने मुख्य याचिका के परिशिष्ट-3, अर्थात्, निर्णित ऋणी द्वारा दाखिल दिनांक 24.2.2012 की अभ्यापत्ति याचिका पर डिक्री धारी की ओर से दाखिल स्पष्टीकरण, को निर्दिष्ट करते हुए पैराओं सं॰ 3 एवं 4 से इंगित किया कि धारा 11(1)(c) के अधीन निष्कासन वाद के दाखिले तथा धारा 14(4) के अधीन यथा अधिकथित अनुमति प्रदान किये जाने से संबंधित तथ्य मूल वादी द्वारा अपनाया गया है। तथापि, इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए, विद्वान निष्पादन न्यायालय ने सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया था।

5. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल एक आवेदन में याची द्वारा उठाया गया अंतर्निहित अधिकारिता न होने से संबंधित प्रश्न कि अपील का आश्रय लिये बिना निष्पादन न्यायालय द्वारा परीक्षित किये जाने की आवशकयता है और याची के लिए निष्कासन वाद में पारित निर्णय तथा डिक्री को चुनौती देते हुए एक अपील को दाखिल करने की आवश्यकता नहीं है।

6. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में निम्नांकित निर्णयों को निर्दिष्ट किया है और उन पर भरोसा किया है:–

(i) AIR 1954 SC 340 ;

(ii) 1985 PLJR 490 ;

(iii) AIR 1973 SC 2391 ;

(iv) AIR 1977 SC 1201.

7. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि वाद, जिसमें डिक्री पारित की गयी थी, के पक्षकारों, या उनके प्रतिनिधियों के बीच उद्भूत तथा डिक्री के निष्पादन, उन्मोचन या समाधान से संबंधित सारे प्रश्न डिक्री निष्पादित करने वाले न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किये जाएंगे तथा एक पृथक वाद द्वारा नहीं।

8. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची कोई अन्य उपचार का इस्तेमाल किये बिना संहिता की धारा 47 का मार्ग अपनाने का पात्र तथा हकदार है क्योंकि याची ने अंतर्निहित अधिकारिता न होने के कारण डिक्री को चुनौती दिया है।

9. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान निष्पादन न्यायालय ने पक्षकारों द्वारा किये गये निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के उपरांत तथा मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों की जांच परख करके और विधि के प्रावधानों पर भी विचार करके एक विस्तृत आदेश पारित किया था तथा याची के पास गुणावगुणों पर कोई मामला नहीं है। यह भी निवेदन किया गया है कि याची ने एक अपील दाखिल करके निष्कासन वाद में पारित निर्णय तथा डिक्री को चुनौती नहीं दिया है और अतएव, एक अपील दाखिल करने का मार्ग अपनाये बिना, याची सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन एक अभ्यापत्ति दाखिल करके सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन मार्ग अपनाने का हकदार नहीं है। प्रत्यर्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि गुणावगुणों पर भी, याची के पास कोई मामला नहीं है क्योंकि वाद पत्र का कोरा पठन यह स्पष्ट कर देता है कि वाद धारा 11(1)(c) एवं (d) के अधीन दाखिल नहीं किया गया था तथा अधिनियम की धारा 14 के अधीन वाद में कार्यवाही नहीं हुई थी। प्रत्यर्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा लिये गये निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि निर्णय में कहीं पर भी यह कथन नहीं किया गया है कि अधिनियम की धारा 14 के अधीन यथा अभिकल्पित विशेष प्रक्रिया अपनाकर निर्णय तथा डिक्री पारित की गयी है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने प्रति शपथ पत्र में किये गये प्रकथनों को भी निर्दिष्ट किया है।

10. प्रत्यर्थी के वरीय विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में निम्नांकित दो निर्णयों को निर्दिष्ट किया है तथा उन पर भरोसा किया है:–

(i) 1979(1) SCC 670 ;

(ii) (2006) 3 BLJR 2359 (Jharkhand)

11. पूर्वोक्त प्रतिद्वंद्वी निवेदनों पर विचार करने पर तथा आक्षेपित आदेश के परिशीलन पर, यह परिलक्षित होता है कि सि॰ प्र॰ सं॰ की धारा 47 के अधीन विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष याची/प्रतिवादी द्वारा मुख्यत: इस आधार पर आवेदन दाखिल किया गया था कि अंतर्निहित अधिकारिता न होने से डिक्री एक अकृतता है और, अतएव, याची द्वारा दाखिल अभ्यापत्ति याची को सुनवाई का युक्तिसंगत अवसर उपलब्ध कराये जाने के उपरांत तथा सम्यक् प्रक्रिया का भी अनुपालन करके निस्तारण किये जाने की आवश्यकता है। जिसका अर्थ यह हुआ कि संहिता की धारा 47 के अधीन दाखिल आवेदन को विविध मामले के तौर पर दर्ज किये जाने की आवश्यकता है और संहिता की धारा 47 के अधीन दाखिल एक आवेदन में पूरी सुनवाई प्रदान किये जाने की आवश्यकता होती है और इसे विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा संक्षिप्त रूप से अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत इस प्रतिपादना को मात्र इस सरल कारण से स्वीकार नहीं किया जा सकता कि याची ने एक निष्कासन वाद में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री से व्यथित तथा असंतुष्ट होकर कोई अपील दाखिल नहीं किया है तथा विधि के अधीन उपलब्ध प्रभावी सांविधिक उपचार का मार्ग अपनाये बिना याची सीधे ही निष्पादन न्यायालय के पास चला गया है तथा अंतर्निहित अधिकारिता के प्रश्न से संबंधित अभ्यापत्ति उठायी है।

12. मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्वृत निर्णयों का परिशीलन किया है। उक्त निर्णयों में प्रगणित सिद्धांत विधि की स्वीकृत प्रतिपादनाएं हैं। तथापि उक्त सिद्धांतों को प्रत्येक मामले के तथ्यों का अवलोकन करते हुए लागू किये जाने की आवश्यकता है। उन मामले में, जिन्हें याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है तथा जिन पर भरोसा किया गया है, पक्षकारों ने अपीलीय प्राधिकार का मार्ग अपनाया था और तत्पश्चात् निष्पादन न्यायालय के समक्ष प्रश्न उठाया गया था, जबकि प्रस्तुत मामले में याची विधि के अधीन उपलब्ध प्रभावी सांविधिक उपचार का मार्ग अपनाये बिना सीधे ही निष्पादन न्यायालय के पास गया है तथा अंतर्निहित अधिकारिता के प्रश्न से संबंधित अभ्यापत्ति उठायी है। अतएव, इस न्यायालय की राय यह है कि याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट तथा भरोसा किये गये निर्णय मामले के वर्तमान तथ्यों एवं परिस्थितियों पर लागू नहीं होते हैं। जहां तक उन निर्णयों का सवाल है, जिन पर प्रत्यर्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया है जिन्हें निर्दिष्ट किया गया है। यह सुस्थापित सिद्धांत हैं कि एक डिक्री निष्पादित करने वाला कोई न्यायालय डिक्री के आगे नहीं जा सकता। अंतर्निहित अधिकारिता न होने से संबंधित प्रश्न याची द्वारा अपीलीय न्यायालय के समक्ष उठाया जा सकता है क्योंकि एक अपील में डिक्री की वैधानिकता एवं वैधता सदैव प्रश्नाधीन की जा सकती है, परन्तु, जैसा कि ऊपर कथन किया गया है, याची मार्ग अपनाये बिना सीधे ही संहिता की धारा 47 के अधीन एक याचिका दाखिल करके निष्पादन न्यायालय के पास चला गया।

13. याची तथा प्रत्यर्थी के भी विद्वान वरीय अधिवक्ताओं ने अंतर्निहित अधिकारिता के प्रश्न से संबंधित मामले के गुणावगुणों के बारे में तर्क दिया है। इस न्यायालय की राय है कि उक्त प्रश्न पर विस्तार से परिचर्चा किये जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह अपील दाखिल करने की दशा में वर्तमान याची के रास्ते मे आ सकता है। तथापि, प्रथम दृष्टया, अभिवाक से यह प्रकट होता है कि वाद धारा 11(b) एवं (c) में अंतर्विष्ट प्रावधानों तक सीमित नहीं था और इसका विशेष प्रक्रिया अपनाकर झारखंड मकान (पट्टा, किराया एवं निष्कासन) नियंत्रण अधिनियम, 2000 की धारा 14 के अधीन विचारण नहीं किया गया था। तथापि, इस तर्क के गुणावगुणों की उपयुक्त फोरम के समक्ष परीक्षा की जा सकती है।

14. इस रिट याचिका में कोई गुण नहीं है। तदनुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

15. पूर्व में प्रदत्त अंतरिम अनुतोष अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ ilkn] U;k;efr

हरीश चंद्र टंडन (218 में)

बिनोद वियानी (845 में)

मेसर्स स्टरलाईट इण्डस्ट्रीज लिमिटेड (852 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (सभी में)

Cr. M.P. Nos. 218, 845 with 852 of 2013. Decided on 8th May, 2013

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420/34/120-B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं षडयंत्र—सामान्य आशय—धन विवाद का सौहार्दपूर्ण समाधान—इसमें कभी भी कोई सार्वजनिक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं होती—समझौते द्वारा विवाद का समाधान कर लिया गया था—कोई दोषसिद्धि अभिलिखित किये जाने की संभावना नहीं होगी—संज्ञान लेने वाला आदेश तथा समूची दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 6 से 9)

निर्णयज विधि.—(2008)4 SCC 582—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

चूंकि एक ही परिवाद मामले से उद्भूत सभी 3 आवेदन एक साथ सुने गये थे, उनका इस सम्मिलित आदेश द्वारा निस्तारण किया जा रहा है।

2. दिनांक 15.12.2000 के आदेश, जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/34/120-B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है, समेत CI केस सं॰ 1111 वर्ष 2000 की समूची दांडिक कार्यवाही को इस आधार पर अभिखंडित करने की इप्सा की जा रही है कि पक्षकारों ने सौहार्दपूर्ण रूप से अपने मौद्रिक विवाद का समाधान करके एक समझौता कर लिया है।

3. परिवादी का मामला यह है कि परिवादी ने मेसर्स पी॰ सी॰ एस॰ इण्डस्ट्रीस लिमिटेड के माध्यम से मेसर्स स्ट्रेलाईट इण्डस्ट्रीज (I) लि॰ के 100 शेयर खरीदे थे। खरीद के बाद उसके पक्ष में शेयरों को अंतरित करने के लिए आवश्यक दस्तावेज जमा कर दिये गये थे परन्तु समय के अनुक्रम में, परिवादी को यह मालूम पड़ा था कि वो शेयर मेसर्स बियानी सिक्यूरिटीज (बंबई) प्रा॰ लि॰ को अंतरित कर दिये गये हैं। तदुपरांत, उसके नाम पर अंशों को अंतरित करने के लिए एक आग्रह किया गया था परन्तु अभियुक्त व्यक्तियों ने उसके आग्रह पर कोई ध्यान नहीं दिया था और इसके बाद एक परिवाद मामला दर्ज किया गया था जिसे CI केस सं॰1111 वर्ष 2000 के तौर पर निबंधित किया गया था, जिसमें 15. 12.2000 के आदेश से याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/34/120-B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दांडिक कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान पक्षकारों को सद्बुद्धि आ गयी थी और तद द्वारा, उन्होंने अपने मौद्रिक विवाद का समाधान कर लिया

था और एक समझौते पर पहुंच गये थे और अंतर्वर्ती आवेदनों-IA सं॰ 1690/13, 1914/13 एवं 1923/13- के माध्यम से एक संयुक्त समझौता याचिका दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा 28.1.2013 का समाधान समझौता संलग्न कर दिया गया है।

5. विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता भी निवेदन करते हैं कि पक्षकारों के बीच मौद्रिक विवाद का समाधान कर लिया गया है।

6. पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ताओं को सुनकर, यह वास्तव में प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच मौद्रिक विवाद वैयक्तिक प्रकृति का होने के नाते कभी भी कोई सार्वजनिक नीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करता है जिसका अंत एक समझौते में हुआ था और अतएव, **2008(4) SCC Supreme 582** में रिपोर्ट किये गये **मदन मोहन एबट बनाम पंजाब राज्य** के मामले में अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में दांडिक कार्यवाही को जारी रहने देना कभी भी उचित नहीं होता है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त मामले में इस तथ्य को ध्यान में रखकर की विवाद, जो शुद्ध रूप से किसी सार्वजनिक नीति को अंतर्ग्रस्त न करते हुए एक वैयक्तिक विवाद था और समझौते के माध्यम से हल कर लिया गया था, अभिनिर्धारित किया था कि <u>यह कदाचित बेहतर है कि ऐसे विवाद में जहां अंतर्ग्रस्त प्रश्न शुद्ध रूप से वैयक्तिक प्रकृति का है, न्यायालय को समान्यत: दांडिक कार्यवाही में भी समझौते के निबंधनों को स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि अभियोजन के पक्ष में किसी परिणाम की कोई संभावना न होने के साथ मामले को बनाये रखना एक ऐसी विलासिता है जिसका अत्यधिक बोझ से लदा न्यायालय, जो वे वास्तव में हैं, वहन नहीं कर सकता और इस प्रकार बचाये गये समय का अधिक प्रभावी एवं अर्थपूर्ण मुकदमों का निर्णय करने में इस्तेमाल किया जा सकता है।</u>

7. इन परिस्थितियों के अधीन, दांडिक कार्यवाही को जारी रहने देने में कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा क्योंकि कोई दोषसिद्धि अभिलिखित किये जाने की कोई संभावना नहीं होगी जब पक्षकारों ने अपने मौद्रिक विवाद का समाधान कर लिया है। जो वैयक्तिक प्रकृति का है और इसमें कोई सार्वजनिक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं है।

8. अतएव, इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/34/120-B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लेने वाले दिनांक 15.12.2000 के आदेश समेत C 1 केस सं॰ 1111 वर्ष 2000 की समूची दांडिक कार्यवाही एतद द्वारा अभिखंडित की जाती है।

9. परिणामत:, ये तीनों रिट आवेदन अनुज्ञात किये जाते हैं।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

अशोक कुमार महतो

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 5566 of 2012. Decided on 9th May, 2013

राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956—धाराएँ 3G(5)—भूमि का अर्जन—अंचल निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर अपर समाहर्ता द्वारा प्रतिकर की राशि स्वत:स्फूर्त अल्पीकरण—याची को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया—आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का स्पष्ट उल्लंघन है—प्रतिकर की समीक्षा/उपांतरण के लिए आवश्यक कार्यवाही अपनाने की स्वतंत्रता के साथ आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.—M/s. Rahul Kumar, Prabhat Singh, For the Petitioner; Mr. A.K. Mehta, For the Respondents; Miss Sweaty Topno, For the Respondent No. 5.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन यह याचिका दाखिल करके राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956 की धारा 3G(5) के अधीन अपर समाहर्ता सह माध्यस्थ द्वारा अपील केस सं॰ 190/11–12 में पारित दिनांक 7.5.2012 के आदेश को अभिखंडित करने का आग्रह किया है जिसके द्वारा उक्त प्राधिकारी ने अपील केस सं॰ 179/11–12 में पारित दिनांक 24.1.2012 के आदेश को वापस ले लिया है तथा तदद्वारा अपील केस सं॰ 179,182, 183, 184,185,186,187,188,189,192, 193,194,195,196,197,198,199,200,201,202,209,215/2011–12 खारिज कर दिया है जिन्हें उसके द्वारा पहले अनुज्ञात किया गया था।

2. याची तथा प्रत्यर्थीगण–राज्य सरकार की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकार की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना। अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों का परिशीलन किया।

3. यह प्रतीत होता है कि सम्यक् प्रक्रिया का अनुसरण करने के उपरांत राष्ट्रीय राजमार्ग–33 के निर्माण के उद्देश्य के लिए याची की जमीन का अधिकरण किया गया था तथा दिनांक 24.1.2012 के आदेश से 15274 रुपये प्रति डिसमील की दर से प्रतिकर की राशि स्वीकृत की गयी थी। बाद में दिनांक 7.5.2012 के आदेश से विद्वान अपर समाहर्ता, रामगढ़ ने अंचलाधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर अपील सं॰ 190/11–12 में याची को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किये बिना स्वत:स्फूर्त रूप से प्रतिकर की राशि की अल्पीकरण का एक आदेश पारित कर दिया था, जिसे परिशिष्ट–1 के माध्यम से पूर्व में स्वीकृत किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्य अपील– अपील सं॰ 179,182, 183, 184, 185, 186, 187, 188, 189, 192, 193, 194, 195, 196, 197, 198, 199, 200, 201, 202, 209,215/2011–12 के साथ अपील सं॰ 190/11–12 की कार्यवाहियां स्वत:स्फूर्त रूप से अंगीकार की गयी थी और याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किये बिना आदेश, परिशिष्ट–3 पारित कर दिया गया था और अतएव, उक्त आदेश स्पष्ट रूप से नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन है।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता अभिलेख से यह इंगित करने की स्थिति में नहीं हैं कि याची को सुना गया था तथा उक्त आदेश पारित करने के पहले अवसर प्रदान किया गया था।

5. पूर्वोक्त पृष्ठभुमि में, परिशिष्ट–3 के माध्यम से संलग्न आदेश से अपील सं॰ 179/11–12 के संबंध में पारित आदेश अभिखंडित करने का आदेश दिया जाता है और यह याचिका तदनुसार अनुज्ञात की जाती है। यह स्पष्ट किया जाता है कि प्रत्यर्थी प्राधिकार प्रतिकर की राशि की समीक्षा/उपांतरण के लिए आवश्यक कार्यवाही कर सकते हैं, यदि विधि के अधीन ऐसा अनुज्ञेय है। जब कभी भी ऐसी कार्यवाही प्रारंभ की जाएगी, प्रत्यर्थी प्राधिकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन करेंगे तथा याची के विरुद्ध कोई प्रतिकूल आदेश पारित करने के पहले सुनवाई का एक अवसर प्रदान करेंगे।

6. पूर्वोक्त संपरीक्षण के साथ यह याचिका निस्तारित की जाती है।

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

हाजी शाह हुसैन बख्श खान एवं पुत्र

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 141 of 2012. Decided on 28th January, 2013.

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948—धारा 3 (1)—गुल उद्योग–स्थापन व्यापक अर्थ वाला शब्द है और यह कारखाना भी सम्मिलित करता है–यह नहीं कहा जा सकता है कि कारखाना अधिसूचना द्वारा आच्छादित नहीं है क्योंकि शब्द ''कारखाना'' का प्रयोग नहीं किया गया है एवं अधिसूचना में स्थापन शब्द का प्रयोग किया गया है–याची की इकाई पूरी तरह से अधिनियम 1948 के प्रावधानों के अधीन आच्छादित है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(1963) 1 LLJ 29—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Satish Bakshi, N. Bakshi, For the Appellant; JC to G.P.-II., For the Statel; In Person, For the Respondent No.2.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में अंतर्ग्रस्त संक्षिप्त किंतु महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या 'गुल उद्योग न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के प्रावधानों के अधीन आच्छादित है।

3. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि याची–अपीलार्थी गुल निर्माण कारखाना है और गुल तंबाकू की मुख्य मात्रा से गठित होता है। याची–अपीलार्थी के अनुसार, यह सत्य है कि अधिनियम की अनुसूची के भाग I के अधीन न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के प्रावधानों के अधीन बीड़ी बनाने वाले कारखाना सहित किसी तंबाकू उद्योग में 'नियोजन' प्रविष्टि है किंतु 1948 अधिनियम के आच्छादन में किसी गुल का कारखाना अथवा निर्माता को सम्मिलित करने के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (a) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना जारी नहीं की गयी है क्योंकि आगे अधिसूचना की आवश्यकता है जैसा ''केंदू'' और ''बीड़ी'' उद्योगों को आच्छादित करने के लिए किया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि गुल कारखाना में कार्यरत कर्मचारियों की न्यूनतम मजदूरी नियत करने के लिए अधिसूचना जारी नहीं की गयी है। यह निवेदन किया गया है कि अनुसूची के भाग I में प्रविष्टि सं॰ 3 किए जाने के बाद भी जब कभी सरकार ने तंबाकू निर्माण कारखाना में कार्यरत कर्मचारियों के लिए न्यूनतम मजदूरी नियत करना चाहा, तब अधिसूचनाएँ जारी की गयी थी। प्रदर्शित करने के लिए, याची–अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने हमें दिनांक 12 दिसंबर, 1995 की अधिसूचना दिनांक 5 अप्रिल, 2005 की अधिसूचना और अंत में दिनांक 13 अगस्त, 2005 जिसके द्वारा केंदू पत्तों के प्रसंस्करण में कार्यरत कर्मचारी के लिए पृथक मजदूरी विहित की गयी है; बीड़ी निर्माण कारखानों के कर्मचारियों के लिए बीड़ी निर्माण कारखाना में विभिन्न नियोजन के लिए पृथक दरों को विहित किया गया है। चूँकि गुल तंबाकू के मुख्य भाग से गठित हो सकता है किंतु गुल कारखाना में कार्यरत कर्मचारियों के लिए राज्य सरकार द्वारा न्यूनतम दर विहित नहीं किया गया है।

4. याची–अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि मद्रास उच्च न्यायालय ने **साशा (ए॰ एस॰ डी॰) बनाम मद्रास राज्य, (1963)1 LLJ 29,** मामले में इस विवाद्यक पर विचार किया है और पाया है कि स्नफ उद्योग के लिए दर नियत करने के लिए और तत्पश्चात अधिसूचना जारी

करने के लिए धारा 9 के अधीन सरकार द्वारा कुछ नहीं किया गया है और इसलिए कमिटि की सलाह पर स्नफ उद्योग में मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी अवैध है और परिणामस्वरुप उस अधिसूचना को अभिखंडित कर दिया। यह निवेदन किया गया है कि संघ ने राज्य सरकार की अधिसूचना पर विश्वास किया है जो प्रयोज्य नहीं है और यह अधिसूचना में भी नहीं है और केवल यह संसूचित करने वाला पत्र है कि गुल उद्योग तंबाकू उत्पाद निर्मित करने वाला उद्योग होने के नाते धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (a) सह–पठित भाग I की प्रविष्टि 3 के अधीन शासित होता है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता और संघ के प्रतिनिधि ने हमारा ध्यान दिनांक 1.4.2011 की सरकारी अधिसूचना की ओर आकृष्ट किया है जिसकी प्रति शपथ पत्र के साथ परिशिष्ट B के रूप में यह दर्शाने के लिए प्रस्तुत की गयी है कि 1948 अधिनियम के अधीन समुचित अधिसूचना जारी की गयी है, विशेषकर धारा 3 (1) (b) के प्रावधानों के अधीन और धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन भी, और अनुसूची में वर्णित दुकानों अथवा किसी स्थापन जो किसी अन्य अधिसूचना के अधीन आच्छादित नहीं है में कार्यरत कर्मचारियों के लिए न्यूनतम मजदूरी विहित किया गया है और, इसलिए, याची उद्योग न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 के भाग I की प्रविष्टि 3 सह–पठित धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (a) के अधीन आच्छादित है।

6. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है और मामले के तथ्यों का परिशीलन किया है। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 की धारा 3 (1) (a) एवं (b) का पठन निम्नलिखित है:–

*3. **U;ure etnjh dk fuèkkj.k**–(1) ;Fkkfpr ljdkj ble bld mijkr miyCèk djk;h x;h jhfr l—*

(a) vulph d Hkkx 1 ,o II e fofufn"V fu;ktu rFkk èkkjk 27 d vèkhu tkjh vfèklpuk }kjk fdlh Hkh Hkkx e tkM x, fu;ktu e fu;kftr depkfj;k dk Hkxr; U;ure etnjh dk fuèkkj.k djxh%

ijUr ;g fd ;Fkkfpr ljdkj vulph d Hkkx II e fofufn"V fdlh fu;ktu e fu;kftr depkfj;k d lEcUèk e bl [kM d vèkhu ij jkT; d fy, U;ure etnjh fuèkkfjr dju d ctk; jkT; d fdlh Hkkx d fy, ;k ij jkT; ;k bld fdlh Hkkx d fy, ,l fu;ktu d fdlh fofufn"V ox ;k oxk d fy, ,lk nj fu;r dj ldrk g(

(b) bl çdkj fu;r U;ure etnjh dk ,l vrjkyk ij iufoykdu djxk] tlk ;g mfpr le>] ,lk vrjky ikp o"kk l vfèkd dk u gk ,o vxj vko';d gk U;ure etnjh l'kkfèkr djxk%

ijUr ;g fd tgk fdlh dkj.k l ;Fkkfpr ljdkj u ikp o"kk d fdlh vrjky e fdlh vulfpr fu;ktu d lEcUèk e Lo; }kjk fu;r U;ure etnjh dk iufoykdu ugh fd;k g] bl [kM dh dkb Hkh ckr bl ikp o"kk dh mDr vofèk d volku d mijkr U;ure etnjh dk iufoykdu dju rFkk vxj vko';d gk] mUg l'kkfèkr dju l fuokfjr dju okyh ugh le>h tk;xh(,o mUg bl çdkj l'kkfèkr fd, tku rd ikp o"kk dh mDr vofèk d volku d rjr igy çofrr U;ure nj çHkkoh jgxhA

अधिनियम, 1948 की धारा 5 न्यूनतम मजदूरी नियत और पुनरीक्षित करने की प्रक्रिया विहित करती है। अधिनियम ने पहले ही धारा 2 के खंड (i) में ''कर्मचारी'' और धारा 2 के खंड (e) में ''नियोक्ता''

को परिभाषित की है। ''अनुसूचित नियोजन'' धारा 2 के खंड (g) में परिभाषित किया गया है जो कहती है कि अनुसूचित नियोजन से अभिप्रेत है, अनुसूची में विनिर्दिष्ट नियोजन अथवा ऐसे नियोजन का भाग निर्मित करने वाली काम की कोई प्रक्रिया या शाखा।

7. दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना से यह प्रतीत होता है कि पहले समस्त कारखानों में समस्त नियोजनों के लिए न्यूनतम मजदूरी विहित की गयी थी जो अधिनियम 1948 की धारा 3 सहपठित अनुसूची का भाग I और II के अधीन वर्ष 2005 की अधिसूचना के अधीन आच्छादित की गयी थी। दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना द्वारा उन न्यूनतम मजदूरी का पुनरीक्षण किया गया है। समस्त कर्मचारियों पर न्यूनतम मजदूरी प्रयोज्य है चाहे वे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के साथ संलग्न अनुसूची के भाग I और II में वर्णित किसी स्थापन में कार्यरत दक्ष, अर्द्धदक्ष अथवा अदक्ष कर्मचारी हों। दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना का पठन दुकानों और स्थापनों जैसा दुकान एवं वाणिज्यिक स्थापन अधिनियम में परिभाषित किया गया है, पर प्रयोज्य के रूप में इस कारण से नहीं किया जा सकता है क्योंकि अधिसूचना में शब्दों ''दुकानों'' अथवा ''स्थापनों'' को उल्लिखित किया गया है जब दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना की भाषा अत्यन्त विनिर्दिष्ट और स्पष्ट है कि इसे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के अधीन जारी किया गया है जिसके प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन राज्य सरकार को न्यूनतम मजदूरी विहित करने की आवश्यकता है। अत: ''कारखाना'' शब्द का प्रयोग नहीं किए जाने और दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना में ''स्थापन'' शब्द का प्रयोग किए जाने के कारण कारखाना को दिनांक 1 अप्रिल, 2011 की अधिसूचना के अधीन आच्छादित नहीं होता नहीं कहा जा सकता है। अन्यथा भी स्थापन व्यापक अर्थ वाला शब्द है और यह कारखाना भी सम्मिलित करता है। अत: याची की इकाई पूर्णत: 1948 अधिनियम के प्रावधानों के अधीन आच्छादित है।

8. जहाँ तक साशा (ए॰ एस॰ डी॰) मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय का संबंध है, उस मामले में विवाद आदेश जारी किए जाने के संबंध में था जिसे प्रक्रिया का अनुसरण करके जारी नहीं किया गया था जैसा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 की धारा 9 के अधीन और स्नफ उद्योग के लिए दरों को पुनरीक्षित करने के लिए धारा 5 के अधीन पारिणामिक अधिसूचना के अधीन विहित किया गया है। उस तथ्यपरक स्थिति में, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 की धाराओं 5 और 9 का आशय स्पष्टत: यह है कि अनुसूचित उद्योगों के कर्मचारियों के लिए न्यूनतम मजदूरी विहित करने के पहले सरकार के पास कमिटि द्वारा सलाह के रूप में विचार करने के लिए आवश्यक सामग्री होनी ही चाहिए।

हमारे समक्ष प्रस्तुत मामला न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 की अनुसूची के भाग I के अधीन आने वाले और आच्छादित विनिर्दिष्ट उद्योग के लिए न्यूनतम मजदूरी का विभिन्न दर विहित करके सामान्य अधिसूचना द्वारा प्रयोज्य न्यूनतम मजदूरी की तुलना में उच्चतर न्यूनतम मजदूरी को विहित करने का मामला नहीं है। 1948 अधिनियम के अधीन आच्छादित समस्त इकाईयों की न्यूनतम मजदूरी और दक्ष, अर्द्धदक्ष अथवा अदक्ष कर्मचारियों के काम के अनुसार न्यूनतम मजदूरी की दर विहित करने के लिए सामान्य अधिसूचना हो सकती है। विशेष उद्योगों के लिए विशेष मजदूरी होने का कारण हो सकता है जिसके लिए भिन्न विचार हो सकता है जो यह पता लगाने के प्रयोजन से अतिरिक्त सामग्री एवं डाटा आवश्यक बना सकती हो कि विनिर्दिष्ट उद्योग के लिए न्यूनतम मजदूरी क्या होनी चाहिए और उस प्रयोजन से सरकार को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के भाग I और II के मुताबिक विनिर्दिष्ट उद्योगों के लिए न्यूनतम मजदूरी पर विचार करने, अधिसूचित करने और समय-समय पर पुनरीक्षित करने की शक्ति दी गयी है। अत: मद्रास उच्च न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं है।

9. मामले के उस दृष्टिकोण में हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अपीलार्थी की रिट याचिका अस्वीकार करने में कोई अवैधता नहीं पाते हैं। तद्नुसार, लेटर्स पेटेन्ट अपील खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Jh pn'k[kj] U;k;efrx.k

गोविन्द राय एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 1027 of 2012. Decided on 9th April, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–जलन उपहतियों के कारण महिला की मृत्यु–अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है–पक्षद्रोही गवाहों ने भी अपीलार्थीगण के विरुद्ध जाने वाले कई तथ्यों को इंगित किया है–मृतका की मृत्यु शत-प्रतिशत जलन उपहतियों के कारण हुई–अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं को देखते हुए न्यायालय दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–प्रार्थना अस्वीकृत। (पैराएँ 3 से 8)

निर्णयज विधि.–AIR 2008 SC 1882; (2002) 9 SCC 366; (2004)6 SCC 175; (2008) 11 SCC 180—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Mithilesh Singh, For the Appellant; Mr. Shekhar Sinha, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह अपील दिनांक 28 फरवरी, 2013 के आदेश द्वारा ग्रहण की गयी है और सत्र विचारण सं॰ 291 वर्ष 2009 के अभिलेखों और कार्यवाहियों को दंडादेश के निलंबन के तर्क का अधिमूल्यन करने के लिए विचारण न्यायालय से मंगाया गया था।

2. इस न्यायालय ने सत्र विचारण सं॰ 291 वर्ष 2009 के अभिलेख और कार्यवाही को प्राप्त किया है। हमने इसका परिशीलन किया है और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 389 के अधीन दंडादेश के निलंबन के लिए दोनों पक्षों के अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है।

3. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजुद साक्ष्य को देखते हुए इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजुद साक्ष्य का विश्लेषण नहीं कर रहे हैं, किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अ॰ सा॰ 4 और 5 द्वारा दिए गए साक्ष्य को देखते हुए इन अपीलार्थीगण–अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। घटना दिनांक 8 और 9 अगस्त, 2009 के रात के दौरान हुई है। अपीलार्थी सं॰ 2 की पत्नी को अपीलार्थी सं॰ 2 के घर में रात में जलाया गया था जहाँ अपीलार्थी सं॰ 1 भी रह रहा था। अ॰ सा॰ 4 और 5 के साक्ष्य को देखते हुए इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। विवाह वर्ष 2007 में संपन्न किया गया था। पक्षद्रोही चश्मदीद गवाहों, जो अ॰ सा॰ 6 और 7 हैं, के साक्ष्य को देखते हुए भी, उन्होंने इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अनेक तथ्यों को इंगित किया है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 8 जो अन्वेषण अधिकारी है और अ॰ सा॰ 1 जो डॉ॰ सी॰ पी॰ सिन्हा है, द्वारा दिए गए साक्ष्य को देखते हुए यह इंगित किया गया है कि मृतका के शरीर पर शत प्रतिशत जलन उपहतियाँ हैं।

4. खिलारी बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 1882, विशेषत: पैराग्राफ 10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है, जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"10. vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU;] (2005)7 SCC 326 e vU; ckrk d lkFk fuEufyf[kr lçf{kr fd;k x;k Fkk%

"7. mPp U;k;ky; d vkn'k dk ljlj ifj'kyu Hkh food dk xj bLreky n'kkrk gA ;fi tekur vkonuk ij vkn'k dk ikfjr djr g, U;k;ky; dk lk{; d foLrr ijh{k.k vkj ekey d x.kkx.kk d foLrr nLrkoth dj.k l cpuk gkxk] fQj Hkh tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky; dk lr"V gkuk pkfg, fd D;k çFke n"V;k ekeyk curk g fdr ekey d x.kkx.kk dh lokxh.k tkp iMrky t#jh ugh gA tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky; dk U;k;i.k rjhd l vkj u fd LokHkkor% viu Lofood dk bLreky dju dh vko';drk gA

8. çFke n"V;k fu"df"kr dju d dkj.kk dk vkn'k e minf'kr dju dh vko';drk g fd tekur D;k çnku fd;k tk jgk Fkk fo'k"kr% tgk vfHk;Dr dk xHkhj vijkèk d fy, vkjkfir fd;k x;k FkkA tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky; dk tekur çnku dju d igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk fuEufyf[kr dkjdk ij fopkj dju dh vko';drk g tk fuEufyf[kr g%

1. nk"kf lf} d ekey e vfHk;kx dh çÑfr vkj nM dh xHkhjrk vkj leFkudkjh lk{; dh çÑfrA

2. xokgk d lkFk NMNkM dju dh ;fDr;Dr vk'kdk vFkok ifjoknh dk èkedku dh vk'kdkA

3. ***vkjki d leFku e U;k;ky; dh çFke n"V;k lif"VA ,l dkj.kk l vlc) dkb vkn'k food d xj bLreky l ihfMr g*** *tk jke xkfoUn mikè;k; cuke ln'ku flg ,o vU;] (2002)3 SCC 598; iju vkfn cuke jkefcykl ,o ,d vU;] vkfn] (2001)6 SCC 338; vkj dY;k.k pn ljdkj cuke jkt'k jtu mQ ili ;kno ,o ,d vU;] JT 2004 (3) SCC 442 e* ***bl U;k;ky; }kjk xkj fd;k x;k gA***** *(tkj fn;k x;k)*

5. रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जायसवाल एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 366, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैरा 3 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*^^, l ekey e tgk vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k Fkk] bl vkiokfnd jkLr dk viuk d fy, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k ugh n'kk;k x;k gA , l ekeyk e lkekU; çFkk nMkn'k fuyfcr djuk ugh g vkj doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA*** *(tkj fn;k x;k)*

6. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, (2004)6 SCC 175, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराओं 6 से 9 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"6. lfgrk dh èkkjk 389 vihy yfcr jgu d nkjku nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur ij vihykFkh dh fuefDr ij fopkj djrh gA tekur vkj nMkn'k d fuycu d chp lfHkUurk gA ***vihy fd, x, vkn'k vFkok nMkn'k d fu"iknu d fuycu dk vkn'k nu d fy, fyf[kr e dkj.kk dk nt dju dh vihyh; U;k;ky; dh vko';drk èkkjk 389 d vko';d vo;ok e l ,d gA*** *;fn og ifjjkèk e g] mDr U;k;ky; vkn'k n ldrk g fd ml tekur ij vFkok Lo; viu cèk ij fueDr fd;k tk,A* ***fyf[kr e dkj.kk dk nt dju dh vko';drk Li"Vr% minf'kr djrh g fd***

çklfxd igyvk ij lkoèkkuhiod fopkj djuk gksxk nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu okyk vkn'k #Vhu rjhd l ikfjr ugh fd;k tkuk pkfg,A

*7. **vihyh; U;k;ky; ;g fu"df"kr dju d fy, fd ekeyk nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur çnku dh vi{kk djrk g] ekey dk oLrijd :i l fuèkkfjr dju vkj dkj.k nt dju d fy, dr0;c} gA** oreku ekey e] nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu d fy, mPp U;k;ky; ij otu Mkyu okyk ,dek= dkj.k vfHk;Dr çR;Fkh dk çnku fd, x, ijky dh vofèk d nkjku Lor=rk d n#i;kx d vfHkdFku dh vuifLFkfr çrhr gkrk gA*

8. fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko u fnukd 24.10.2001 d fu.k; }kjk vfHk;Dr&çR;Fkh dk nk"kh ik;k FkkA çR;Fkh }kjk nkfMd vihy l0 100 DB o"k 2002 nkf[ky dh x;h FkhA ;g rF; fd vihy d yfcr jgu d nkjku vfHk;Dr çR;Fkh ijky ij Fkk] n'kkrk g fd vkjHk e vfHk;Dr çR;Fkh dk nMkn'k d fu"iknu d fuycu dk ykHk ugh fn;k x;k FkkA ;g rF; ek= fd ijky dh vofèk d nkjku vfHk;Dr u Lor=rk dk n#i;kx ugh fd;k Fkk vfuok;r% nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur çnku dk vi{k.kh; ugh cukrk gA mPp U;k;ky; }kjk oLrr% fopkj fd, tku d fy, tk vko';d Fkk og ;g Fkk fd D;k nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur çnku d fy, dkj.k fo|eku FkkA mPp U;k;ky; lgh fl}kr dk nf"V e j[krk çrhr ugh gkrk gA

*9. fot; dekj cuke ujUn vkj jketh çlkn cuke jru dekj t;loky e bl U;k;ky; }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO n0 l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nk"kf lf) vrxLr dju oky ekeyk e] **doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk fn;k tk ldrk gA** mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkn'k bl vko';drk dk ijk ugh djrk gA fot; dekj ekey e vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO n0 l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nMuh; gR;k tl xHkhj vijkèk dk vrxLr dju oky ekeyk e tekur dh çkFkuk ij fopkj dju e **U;k;ky; dk vfHk;Dr d fo#) yxk, x, vkjki dh çNfr] rjhdk ftle vfHkdfFkr vijkèk fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk vkj gR;k dk xHkhj vijkèk dju d fy, nk"kf l) fd, tku d ckn tekur ij vfHk;Dr dk fueDr dju dh okNuh;rk tl çklfxd dkjdk ij fopkj djuk pkfg,A** vk{kfir vkn'k ikfjr djr g, mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k FkkA** (tkj fn;k x;k)*

7. खिलाड़ी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, (2008)11 SCC 180, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैरा सं॰ 4, 6, 12 और 13 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

---

4. fy;k x;k ,dek= nf"Vdk.k ;g Fkk fd erd d 'kjhj ij 'ko io migfr;k u 'kjhj d vud fgLlk ij fofHkUu vk;kek d rhu dV;tu] ,d ,cMM dUV;tu vkj pkj fonh.k t[ek dk lfEefyr fd;k ftUg ykg dh NM l dkfjr ugh fd;k tk ldrk FkkA mudk nf"Vdk.k ;g Fkk fd vKkr geykojk u erd ij migfr;k dk dkfjr fd;kA

---

6. ijLij fojkèkh nf"Vdk.kk ij xkj dju d ckn mPp U;k;ky; u fuEufyf[kr fu"d"kk d lkFk vk{kfir vkn'k }kjk tekur çnku fd;k

---

12. m)r v'k vkj mPp U;k;ky; dk vkn'k n'kkrk g fd çkIfxd igyvk d çfr food dk i.k :i l bLreky vkj fopkj ugh fd;k x;k FkkA

---

*13. vr% vk{kfir vkn'k lik"k.kh; ugh g vkj [kkfjt fd;k tkrk gA çR;Fkh l0 2 dk çnku dh x;h tekur jí dh tkrh gA fofèk d vu#i u, flj l fopkj dju d fy, ekeyk mPp U;k;ky; d ikl okil Hktk tkrk gA***

8. अभिलेख पर इन साक्ष्यों की दृष्टि में और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें ये अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम सत्र विचारण सं॰ 291 वर्ष 2009 में जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश-I, दुमका द्वारा उनको अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं है। दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना में सार नहीं है, अत: इसे एतद् द्वारा अस्वीकार किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

अजय कुमार सिंह

cuke

सी॰ बी॰ आई॰, एस॰ पी॰, धनबाद के माध्यम से एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1765 of 2011. Decided on 9th April, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 420 467, 468 एवं 471—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 13(2) एवं 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल, कूटरचना एवं षडयंत्र–संज्ञान–उपकरणों की खरीद में अभिकथित अनियमितताएँ–संज्ञान लेने वाले आदेश का और अभियोजन मंजूर करने वाले आदेश का भी अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि विभागीय कार्यवाही में यद्यपि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा याची को निंदा का दंड दिया गया है किंतु सुस्पष्ट निष्कर्ष है कि याची की ओर से असद्भाव नहीं था और तद्द्वारा यदि अनुशासनिक प्राधिकारी ने आरोप जो दांडिक अभियोजन का विषय वस्तु है में अपराधिता का कोई तत्व नहीं पाया गया है, याची के विरुद्ध किसी कार्यवाही को जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा–दांडिक अभियोजन की तुलना में विभागीय कार्यवाही में प्रमाण का स्तर लघुतर होता है–किंतु विभागीय कार्यवाही अथवा दांडिक मामलों को केवल उसमें दिए गए साक्ष्य के आधार पर विनिश्चित करना होगा–दांडिक मामले में साक्ष्य की सत्यपूर्णता को केवल उसमें साक्ष्य दिए जाने के बाद आँका जा सकता है–दांडिक मामले को विभागीय कार्यवाही में साक्ष्य अथवा उन साक्ष्यों पर आधारित जाँच अधिकारी की

रिपोर्ट के आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है–दांडिक मामले में अपराधिता अथवा इसकी अनुपस्थिति केवल अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी द्वारा संग्रहित साक्ष्य के आधार पर न्यायालय द्वारा पाया जा सकता है–ऐसा संप्रेक्षण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन का आधार नहीं हो सकता है जब सी॰ बी॰ आई॰ ने आरोप-पत्र दाखिल कर दिया है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 17, 18, 20, 22 एवं 23)

निर्णयज विधि.–(1996) 9 SCC 1; (2011) 3 SCC 581—Discussed; (2012)9 SCC 685; (2007) 14 SCC 667—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Abhay Kumar Singh, Rupesh Kumar Singh, For the Petitioner; Mr. M. Khan, For the C.B.I.; Mr. Rajesh Shankar, For the Informant.

आदेश

यह आवेदन आर॰ सी॰ केस सं॰ a (A) वर्ष 2003 (D) में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 21.4.2006 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467, 468, 471 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (d) के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया है। साथ ही, आदेश जिसके अधीन अभियोजन की मंजूरी दी गयी है भी चुनौती के अधीन है।

2. याची की ओर से किए गए निवेदनों पर आने के पहले परिवादी के मामले पर गौर करने की जरूरत है।

3. सी॰ बी॰ ओ॰ द्वारा सी॰ बी॰ आई॰ के पास उसमें यह अभिकथन करते हुए परिवाद दर्ज किया गया था किसी सी॰ एम॰ आर॰ आई॰, धनबाद के पदधारियों ने एक-दूसरे के साथ और कुछ सामान्य ऑर्डर आपूर्तिकर्ताओं के साथ दुरभिसंधि करके अप्रिल, 1999 और जून, 1999 के दौरान आवश्यकता को विभक्त करके अथवा मूल्यांकित मूल्य को दो लाख रुपयों के भीतर रखके सीमित निविदा के आधार पर अत्यन्त बढ़ायी गयी दर पर वैज्ञानिक उपकरणों फिल्टर पेपर्स, डिजिटल ब्रेयतों और रसायनों को खरीदा और तद्द्वारा उन्होंने सी॰ एम॰ आर॰ आई॰, धनबाद को 50 लाख रुपयों की सीमा तक दोषपूर्ण हानि कारित किया।

4. सी॰ एम॰ आर॰ आई॰ में खरीद रैशनलाइज्ड खरीद प्रक्रिया (आर॰ पी॰ पी॰) और केंद्रीय वित्तीय नियमों द्वारा शासित होती है जिसके अनुसार उपाप्त किए जाने वाले वस्तुओं के कीमत, ब्रांड, विनिर्दिष्टकरण और आपूर्ति के स्रातों से संबंधित सूचना अंतर्विष्ट करने वाला डाटा बेस मेनटेन किया जाना है। समस्त मांग पत्रों को खरीदी जाने वाली सामग्रियों की मात्रा, वर्तमान स्टॉक पोजीशन और अनेक सरकारी एजेंसियों के साथ पहले ही की जा चुकी दर संविदा के बारे में सूचना जैसी पूर्ण सूचना रखने की आवश्यकता थी और खरीद आदेशों को विभक्त नहीं करना था। सीमित निविदा का सहारा लेना था जहाँ वस्तुओं का मूल्यांकित मूल्य दो लाख रुपयों से कम था किंतु अभियुक्तगण अर्थात् तत्कालीन निदेशक, वित्त एवं लेखा अधिकारी, खरीद स्थायी समिति के सदस्यों जिसका याची, भी एक सदस्य है ने आपूर्तिकर्ताओं के साथ दुरभिसंधि करके झूठे, अपूर्ण और विभक्त मांग पत्रों, जिन्हें स्थायी खरीद कमिटि के सदस्यों द्वारा अत्यन्त दोषपूर्ण तरीके से सत्यापित करवाया गया था, पर खरीद प्रक्रिया आरंभ किया और अधिकतर मामलों में सीमित निविदा के आधार पर बढ़ायी गयी दरों पर अभियुक्तगण के फर्मों को खरीद आदेश दिए गए थे।

5. अन्वेषण के दौरान यह पाया गया था कि आपूर्तिकर्ताओं ने सी॰ एम॰ आर॰ आई॰ के अभियुक्त पदधारियों के साथ दुरभिसंधि करके अनेक फर्मों के कूटरचित कोटेशन को प्रस्तुत करवाने का प्रबंध किया।

आपूर्तिकर्ता जिनको ऑर्डर दिए जाने थे, वस्तुओं के प्राधिकृत डीलर/निर्माता कभी नहीं थे। वास्तविक आपूर्तिकर्ताओं को जानबूझकर बाहर रखा गया था। सी॰ एम॰ आर॰ आई॰ को अत्यन्त बढ़ायी गयी दरों पर वस्तुओं की आपूर्ति की गयी थी और वह भी अधिकतर मामलों में यह विनिर्दिष्ट मानकों के मुताबिक नहीं थी और कुछ वस्तुओं को इनकी आवश्यकता के बिना खरीदा गया था। यह भी पाया गया था कि खरीद आदेश पाने में उनकी मदद करने के लिए कुछ अभियुक्त लोक सेवकों को अवैध परितोषण दिया गया था।

6. आरोप-पत्र दाखिल करने पर अभियोजन के लिए मंजूरी दिए जाने पर अपराध का संज्ञान लिया गया था।

7. संज्ञान लेने वाले आदेश तथा अभियोजन की मंजुरी देने वाले आदेश दोनों को चुनौती दी गई है।

8. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अभय कुमार सिंह ने निवेदन किया कि याची जिसका सर्वोत्तम एकेडमिक रिकॉर्ड था को वैज्ञानिक के रूप में सेन्ट्रल माइनिंग रिसर्च इन्स्टीच्युट, धनबाद में नियुक्त किया गया था। समय के क्रम में जब उसे वैज्ञानिक के सीनियर ग्रेड पर प्रोन्नत किया गया था, उसे स्थायी खरीद कमिटि (एस॰ पी॰ सी॰-1) के सदस्यों में से एक के रूप में नियुक्त किया गया था और वह दिनांक 7.8.1997 से दिनांक 19.5.1999 तक सदस्य बना रहा। सी॰ एम॰ आर॰ आई॰ की स्थायी कमिटि का गठन अनेक शाखा स्तर के वैज्ञानिकों द्वारा प्रदान किए गए मांगपत्रों के आधार पर सेन्ट्रल माइनिंग रिसर्च इन्स्टीच्युट के अनेक फैकल्टियों के लिए वैज्ञानिक शोध की अनेक वस्तुओं को खरीदने का निर्णय लेने के लिए और अनुशंसा करने के लिए गठित किया गया है। कतिपय वस्तुओं को खरीदने के लिए जब मांग पत्र प्राप्त किए गए थे, दिनांक 22.4.1999 को एस॰ पी॰ सी॰ 1 की बैठक की गयी थी जिसके द्वारा मांग पत्रों को खरीद कमिटि के सदस्यों द्वारा जाँचा गया था और तत्पश्चात याची ने किसी बैठक में भाग नहीं लिया था और दिनांक 4.5.1999 को अपना त्याग पत्र दे दिया था जिसे दिनांक 19.5.1999 को स्वीकार किया गया था और दिनांक 20.5.1999 को एस॰ पी॰ सी॰ 1 पुनर्गठित की गयी थी और केवल तत्पश्चात निविदा को अंतिम रूप देने, आपूर्तिकर्ताओं को ऑर्डर देने और उनको भुगतान करने का संपूर्ण कार्य किया गया था और तद्द्वारा याची को सेन्ट्रल माइनिंग रिसर्च इन्स्टीच्युट को हानि पहुँचाते हुए उच्चतर दर पर वस्तुओं को खरीदने का जिम्मेदार नहीं कहा जा सकता है, फिर भी याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर संज्ञान लिया गया था यद्यपि याची, इन तथ्यों और परिस्थितियों में, किसी भी अपराध को करता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

9. इस संबंध में आगे निवेदन किया गया था कि बढ़ायी गयी दर पर मांग पत्रों को विभक्त करके कतिपय रसायनों को खरीदने के समरुप प्रकार के अभिकथन पर सी॰ बी॰ आई॰ के पास एक अन्य मामला दर्ज किया गया था जिसे आर॰ सी॰ केस सं॰ 16A वर्ष 2003 के रूप में दर्ज किया गया था। इसका अन्वेषण करने पर, सी॰ बी॰ आई॰ ने अभियुक्तगण में से किसी की ओर से कोई अपराधिता नहीं पाया था और अंतिम फॉर्म दाखिल किया था किंतु यह गौर करना बिल्कुल विचित्र है कि सी॰ बी॰ आई॰ ने आरोप पत्र दाखिल किया है यद्यपि इस मामले में अभिकथन बिल्कुल एक हैं और उसी दिन अर्थात् दिनांक 29.4.1999 को वस्तुओं को खरीदने का निर्णय भी लिया गया था।

10. आगे निवेदन किया गया था कि इन्हीं आरोपों के लिए जो आर॰ सी॰ केस सं॰ 1A वर्ष 2003/D का विषय वस्तु है, याची के विरुद्ध तीन विभागीय कार्यवाही की गयी थी। इसके अतिरिक्त याची के विरुद्ध उन आरोपों के लिए भी विभागीय कार्यवाही की गयी थी जो उस मामले से संबंधित था जिसे सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा आर॰ सी॰ केस सं॰ 16 (A) वर्ष 2003 (D) के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें याची को आरोपों से विमुक्त कर दिया गया था जबकि अनुशासनिक प्राधिकारी ने विभिन्न विभागीय कार्यवाहियों में पारित दिनांकों 11.9.2006, 14.9.2006 और 15.9.2006 के अपने आदेश के तहत एक वर्ष की

अवधि के लिए वेतन के समय मान में एक लघुत्तर चरण तक घटाने का दंड दिया था यद्यपि आरोप जो आर॰ सी॰ केस सं॰ 16 (A) वर्ष 2003 (D) के विषय वस्तु थे जो एक ही और समरुप थे।

11. अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष उन आदेशों को चुनौती दी गयी थी और अपीलीय प्राधिकारी ने यह निष्कर्ष दर्ज करने के बाद कि याची की ओर से असद्भाव अथवा घोर उपेक्षा नहीं हुई है यद्यपि उसकी ओर से लापरवाही प्रतीत होती है, दंड के आदेश को 'निंदा' से प्रतिस्थापित करके उपांतरित कर दिया।

12. इस प्रकार, पूर्वोक्त बुनियादी तथ्यों पर यह निवेदन किया गया था कि एक ओर एक ही और समरुप अभिकथन पर सी॰ बी॰ आई॰ याची, जिसे विभागीय कार्यवाही में आरोपों से विमुक्त कर दिया गया है, सहित अभियुक्तगण में से किसी की ओर से अपराधिता नहीं पाती है किंतु दूसरी ओर सी॰ बी॰ आई॰ ने न केवल याची की ओर से अपराधिता पाया है बल्कि विभागीय कार्यवाही में लघु दंड दिया गया है किंतु अनुशासनिक प्राधिकारी ने स्पष्टत: पाया था कि याची की ओर से असद्भाव अथवा घोर उपेक्षा नहीं है और चूँकि दांडिक तत्व कभी नहीं पाया गया है, **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य, (1996)9 SCC 1** और **राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य, (2011)3 SCC 581)** मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार, जिसमें अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि आरोप, जो सदृश है, को विभागीय कार्यवाही में स्थापित नहीं किया जा सका था जहाँ दोष स्थापित करने के लिए आवश्यक प्रमाण का स्तर दांडिक मामले में दोष स्थापित करने के लिए आवश्यक प्रमाण के स्तर की तुलना में बहुत लघुत्तर है, दांडिक कार्यवाही जारी रखने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए बल्कि इसे अभिखंडित कर देना चाहिए, को दृष्टि में रखते हुए मामला अभिखंडित कर दिया जाए।

13. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री एम॰ खान और सूचक की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश शंकर ने निवेदन किया कि यद्यपि आर॰ सी॰ केस सं॰ 16 (A) वर्ष 2003 (D) में अभिकथन थे कि समस्त अभियुक्तगण ने एक-दूसरे के साथ और आपूर्तिकर्ताओं के साथ दुरभिसंधि करके आवश्यकता को विभक्त करके या मूल्यांकित कीमत को दो लाख रुपयों के भीतर रखकर सीमित निविदा के आधार पर अत्यन्त बढ़ायी गयी दर पर सामग्रियों को खरीदा था किंतु अन्वेषण के दौरान अपराधिता का तत्व नहीं पाया गया था। किंतु, लोक सेवकों की ओर से सामग्रियों की खरीद में त्रुटियाँ पायी गयी थी, जिसके परिणामस्वरुप आपूर्तिकर्ताओं को आधिक भुगतान किया गया था किंतु, यहाँ वर्तमान मामले में अभियुक्तगण की ओर से अपराधिता का तत्व पाया गया था क्योंकि आर॰ सी॰ केस सं॰ 1 (A) वर्ष 2003 (D) के अन्वेषण के क्रम में यह पाया गया था कि उपकरणों, जिन्हें खरीदा गया था, को निम्न स्तर का पाया गया था और कि अभियुक्त आपूर्तिकर्ता ने अपने पक्ष में जारी खरीद आदेशों को पारित करने के बदले में अभियुक्त लोक सेवकों में से कुछ को अवैध परितोषण का भुगतान किया है और कि खरीद से संबंधित प्रक्रिया को पूरी तरह अनदेखा किया गया था जिसके परिणामस्वरुप सी॰ एम॰ आर॰ आई॰, धनबाद को अत्यधिक क्षति कारित की गयी थी।

14. आगे निवेदन किया गया था कि रैशनलाइज्ड खरीद प्रक्रिया के मुताबिक खरीद कमिटि के सदस्यों का कर्तव्य विनिर्दिष्टताओं को जाँचना और उनको विस्तृत बनाना, उपाप्त की जाने वाली प्रत्येक वस्तु की महत्तम और न्यूनतम सीमा नियत करना, उपापन के ढंग और अवधिकालिता को विनिश्चित करना था किंतु याची सहित एस॰ पी॰ सी॰ 1 के सदस्यों ने उपापन के ढंग अथवा इसकी अवधि कालिता के संबंध में अनुशंसा किए बिना मांग पत्रों पर अपना हस्ताक्षर किया यद्यपि आपूर्तिकर्ताओं को लाभ

पहुँचाने के लिए मांग पत्र देने वालों द्वारा मांग पत्रों को विभक्त कर दिया गया था और तद्द्वारा याची को निश्चय ही दोषपूर्ण और अपूर्ण मांगपत्र को कपटपूर्वक एवं गैर ईमानदार रूप से अनुमोदित करता और निविदाओं के विभाजन को और कोटेशन का छल साधन सुकर बनाता हुआ कहा जा सकता है।

15. अत:, इस कारण से जब याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही की गयी थी, उसे आरोपों का दोषी पाया गया था और तद्द्वारा दंड अधिनिर्णीत किया गया था। किंतु, अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दंड उपांतरित किया गया था जिसके द्वारा याची की 'निंदा' की गयी थी जो निश्चय ही दंड के तुल्य है यद्यपि यह लघु हो सकता है किंतु किसी भी स्थिति में याची को विमुक्त किया गया नहीं कहा जा सकता है और यदि विमुक्ति नहीं की गयी थी, याची **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** और **राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** में दिए गए निर्णयों का लाभ नहीं ले सकता है।

16. आगे यह निवेदन किया गया था कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किया गया कोई निष्कर्ष, भले ही जैसा याची के मामले में है कि याची की ओर से असद्भाव नहीं है, शायद ही दांडिक मामले को प्रभावित करेगा जो अन्वेषण के दौरान संग्रहित की गयी सामग्री के आधार पर विनिश्चित किया जाएगा और इसलिए, अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किसी निष्कर्ष का दांडिक मामले पर कोई प्रभाव नहीं होगा। विद्वान अधिवक्ता ने इस संबंध में **राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) बनाम अजय कुमार त्यागी, (2012)9 SCC 685,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

17. पक्षों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि संज्ञान लेने वाले आदेश और अभियोजन की मंजूरी देने वाले आदेश का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि विभागीय कार्यवाही में यद्यपि याची को अपीलीय प्राधिकारी द्वारा 'निंदा' का दंड दिया गया है किंतु सुस्पष्ट निष्कर्ष है कि याची की ओर से असद्भाव नहीं था और तद्द्वारा यदि अनुशासनिक प्राधिकारी ने आरोप, जो दांडिक अभियोजन का विषय वस्तु भी है, में अपराधिता का कोई तत्व नहीं पाया है, याची के विरुद्ध किसी कार्यवाही को जारी रखना **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** और **राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य (ऊपर),** मामलों में दिए गए निर्णयों की दृष्टि में न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा।

18. मैं यहाँ सम्मानपूर्वक कह सकता हूँ कि ऊपर निर्दिष्ट में से किसी में भी यह मामला अभिनिर्धारित किया गया है कि विभागीय कार्यवाही में विमुक्ति स्वयं मेव ही दांडिक मामले में विमुक्ति अथवा दोषमुक्ति की ओर ले जाएगी। मैं इंगित कर सकता हूँ कि जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ ने **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** मामले में और **किशन सिंह बनाम गुरपाल सिंह, (2010)8 SCC 775,** मामले में भी इस बिंदु पर कि क्या विभागीय कार्यवाही में विमुक्ति दांडिक मामले में दोषमुक्ति की ओर ले जाएगी, दो विपरीत दृष्टिकोण पाया, इसने मामले को **राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) बनाम अजय कुमार त्यागी (ऊपर)** मामले में वृहत पीठ को निर्दिष्ट किया जहाँ निम्नलिखित विवाद्यक विचारार्थ आया:–

> *^^D;k foHkkxh; dk;okgh e ,d gh idkj d vkjki ij mldh foefDr d ckotn vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu tkjh j[kk tk ldrk Fkk ;k ugh***।

19. पक्षों में से एक ने **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** के मामले में दिए गए निर्णय पर भारी विश्वास किया। किंतु, माननीय न्यायाधीशों ने **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** के तथ्यों को ध्यान में लेने के बाद पाया था कि माननीय न्यायाधीशों ने **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य (ऊपर)** में किसी प्रतिपादना को कभी नहीं अधिकथित किया था कि विभागीय कार्यवाही

में कर्मचारी की विमुक्ति पर एक ही प्रकार के आरोप अथवा साक्ष्य पर दांडिक अभियोजन अभिखंडित करना ही होगा बल्कि उस मामले में सामने आने वाले विचित्र तथ्यों पर विभागीय कार्यवाही में विमुक्ति पर दांडिक मामला अभिखंडित कर दिया गया था जो माननीय न्यायाधीशों के अनुसार **पी॰ एस॰ राज्या** के मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 23 में किए गए संप्रेक्षण से स्पष्ट था जिसका पठन निम्नलिखित है;–

> *^^;|fi dnh; fuxjkuh vk;kx dh fjikV lfgr leLr rF;k dk mPp U;k;ky; d è;ku e yk;k x;k Fkk] nHkkX;o'k mPp U;k;ky; u nf"Vdk.k viuk;k fd mBk, x, fook|dk ij vfre dk;okgh e fopkj djuk gkxk vkj foHkkxh; dk;okgh e mlh vkjki l vihykFkh dk foeDr dju okyh dnh; fuxjkuh vk;kx dh fjikV vihykFkh d fo#) nkfMd ekey dk lekIr ugh djxhA geu igy gh vfHkfuèkkfjr fd;k g fd bl ekey d fofp= rF;k e vihykFkh d fo#} vkjHk dh x;h dk;okgh dk tkjh ugh j[kk tk ldrk gA vr%] ge mPp U;k;ky; d nf"Vdk.k l lger ugh g tlk mij dgk x;k gA vihy vuKkr dju vkj vk{kfir nkfMd dk;okgh vfHk[kfMr dju vkj ikfj.kkfed vurk"k nu d fy, gekj fnukd 27.3.1996 d vkn'k d fy, ;gh dkj.k gA***

20. इस पर, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह सुनिश्चित है कि विभागीय कार्यवाही में प्रमाण का स्तर दांडिक अभियोजन में प्रमाण के स्तर की तुलना में लघुत्तर है। किंतु साथ ही, यह समान रूप से सुनिश्चित है कि विभागीय कार्यवाही को अथवा दांडिक मामलों को उसमें दिए गए साक्ष्य के आधार पर विनिश्चित करना होगा। दांडिक मामले में साक्ष्य की सत्यपूर्णता को उसमें साक्ष्य दिए जाने के बाद ही आँका जा सकता है और दांडिक मामले को विभागीय कार्यवाही में दिए गए साक्ष्य अथवा उन साक्ष्यों पर आधारित जाँच अधिकारी की रिपोर्ट के आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इस पर माननीय न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर आए कि **विभागीय कार्यवाही में विमुक्ति स्वयंमेव ही दांडिक मामले में विमुक्ति अथवा दोषमुक्ति की ओर नहीं ले जाएगी।**

21. राज्य बनाम कृष्ण मोहन, (2007)14 SCC 667, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय समरुप दृष्टिकोण अपनाता प्रतीत होता है।

22. यहाँ वर्तमान मामले में, पहले ही गौर किया गया है कि यह याची का मामला कभी नहीं है कि याची को आरोपों से विमुक्त कर दिया गया है, बल्कि उसे 'निंदा' का लघु दंड दिया गया है किंतु 'निंदा' का दंड दर्ज करते हुए संप्रेक्षण किया गया है कि याची की ओर से असद्भाव नहीं था। भले ही ऐसा संप्रेक्षण किया गया है यह दांडिक मामले में शायद ही कोई भिन्नता लाएगा क्योंकि दांडिक मामले में अपराधिता के होने या नहीं होने को अन्वेषण के दौरान अन्वेषण एजेंसी द्वारा संग्रहित साक्ष्य के आधार पर न्यायालय को पाना होगा जैसा **राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) बनाम अजय कुमार त्यागी (ऊपर)** के मामले सहित अनेक अवसरों पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है।

23. अत:, ऐसा संप्रेक्षण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने का आधार नहीं हो सकता है जब सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण के बाद अभिकथनों जिन्हें ऊपर उल्लिखित किया गया है को ध्यान में लेते हुए आरोप-पत्र दाखिल किया है और, इस प्रकार, मैं इस मामले में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ, अत: इसे खारिज किया जाता है।